चयनित नेपाली लोककथाओं का हिंदी अनुवाद और विश्लेषण

CHAYANIT NEPALI LOKKATHAON KA HINDI ANUVAD AUR VISHLESHAN

[मिजोरम विश्वविद्यालय, आईजोल के हिंदी विषय में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी (पीएच.डी.) की उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध प्रबंध]

A THESIS SUBMITTED IN PARTIAL FULFILLMENT OF THE REQUIRMENTS FOR THE DEGREE OF DOCTOR OF PHILOSOPHY

कृतिका विश्वकर्मा

KRITIKA BISWAKARMA

MZU REGN. NO: 1900219

Ph.D. REGN. NO.: MZU/Ph.D./1801 of 23.08.2021

हिंदी विभाग

मानविकी एवं भाषा संकाय

DEPARTMENT OF HINDI

SCHOOL OF HUMANITIES AND LANGUAGES

दिसंबर, 2025

DECEMBER, 2025

चयनित नेपाली लोककथाओं का हिंदी अनुवाद और विश्लेषण

CHAYANIT NEPALI LOKKATHAON KA HINDI ANUVAD AUR VISHLESHAN

शोधार्थी
कृतिका विश्वकर्मा
हिंदी विभाग

By
KRITIKA BISWAKARMA
DEPARTMENT OF HINDI

शोध निर्देशक
प्रो. संजय कुमार
SUPERVISOR
PROF. SANJAY KUMAR

मिजोरम विश्वविद्यालय, आईजोल के मानविकी एवं भाषा संकाय के अंतर्गत हिंदी विषय में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी (पीएच.डी.) की उपाधि के लिए अपेक्षित आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु प्रस्तुत शोध प्रबंध

Submitted in partial fulfillment of the requirement of the Degree of Doctor of Philosophy in Hindi of Mizoram University, Aizawl

प्रो. संजय कुमार
वरिष्ठ आचार्य एवं अध्यक्ष
हिंदी विभाग
मिज़ोरम विश्वविद्यालय
आईजोल-796004

मिज़ोरम विश्वविद्यालय, आईजोल
Mizoram University, Aizawl
A Central University
Accredited 'A+' Grade by NAAC in 2025 (3rd Cycle)

Prof. Sanjay Kumar
Senior Professor & Head
Department of Hindi
Mizoram University
Aizawl-796004

Mobile No. - 09402112143; 09774517465; E-mail: sanjaykumarmzu@gmail.com ; Website : www.mzu.edu.in

दिनांक: .12.2025

प्रमाण-पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि **कृतिका विश्वकर्मा** ने मेरे निर्देशन में मिज़ोरम विश्वविद्यालय, आईजोल की **डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी (पीएच.डी.- हिंदी)** की उपाधि हेतु **'चयनित नेपाली लोककथाओं का हिंदी अनुवाद और विश्लेषण'** विषय पर शोध-कार्य किया है। प्रस्तुत शोध कार्य शोधार्थी की अपनी निजी गवेषणा का फल है। यह इनका मौलिक कार्य है। जहाँ तक मेरी जानकारी है, प्रस्तुत शोध-प्रबंध या इसके किसी भी अंश को किसी विश्वविद्यालय या संस्थान में किसी प्रकार की उपाधि हेतु अद्यावधि प्रस्तुत नहीं किया गया है।

मैं प्रस्तुत शोध-प्रबंध को मिज़ोरम विश्वविद्यालय, आईजोल की **डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी (पीएच.डी.- हिंदी)** की उपाधि हेतु मूल्यांकन के लिए प्रस्तुत करने की संस्तुति करता हूँ।

(प्रो. संजय कुमार)
शोध-निर्देशक

हिंदी विभाग
मिज़ोरम विश्वविद्यालय
आईजोल

दिसंबर, 2025

घोषणापत्र

मैं **कृतिका विश्वकर्मा** एतद्द्वारा घोषित करता हूँ कि प्रस्तुत शोध-प्रबंध की विषय-सामग्री मेरे द्वारा किए गए शोध-कार्यों का सुपरिणाम है। इस शोध-सामग्री के आधार पर न तो मुझे और जहाँ तक मुझे ज्ञात है, न किसी अन्य को कोई उपाधि प्रदान की गई है और न ही यह शोध-प्रबंध मेरे द्वारा कोई अन्य उपाधि प्राप्त करने के लिए किसी अन्य विश्वविद्यालय या संस्थान में प्रस्तुत किया गया है। इस शोध-प्रबंध लेखन के दौरान जिन ग्रंथों की सहायता ली गयी है उसे समुचित रूप से उद्धृत किया गया है।

प्रस्तुत शोध-प्रबंध मिज़ोरम विश्वविद्यालय, आईजोल के सम्मुख हिंदी विषय में **डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी (पीएच.डी.- हिंदी)** की उपाधि के लिए प्रस्तुत किया जाता है।

(कृतिका विश्वकर्मा)
शोधार्थी

(प्रो. संजय कुमार)
अध्यक्ष

(प्रो. संजय कुमार)
शोध-निर्देशक

प्राक्कथन

प्राक्कथन

लोक साहित्य की दुनिया उतनी ही प्राचीन है जितना की मानव इतिहास। लोक साहित्य की दुनिया सामूहिक रूप से समाज द्वारा सृजित और संरक्षित होती है। यह मौखिक परंपरा के माध्यम से पीढ़ी-दर-पीढ़ी आगे प्रसारित होती है। यह विधा न केवल पाठकों का मनोरंजन करती है; बल्कि समाज की परम्पराओं, लोक विश्वस, नैतिक मूल्य एवं सांस्कृतिक विरासत को भी बचाए रखती है। लोक साहित्य में लोक-कथाओं का प्रमुख स्थान रहा है। ये कथाएँ प्राचीन काल से ही मानव समाज में प्रचलित रही हैं। नेपाली भाषा में भी लोक साहित्य की एक समृद्ध परंपरा रही है, जिसका संकलन, सम्पादन और प्रकाशन कई विद्वानों ने किया है। लेकिन इसमें से बहुत छोटे हिस्से का हिंदी में अनुवाद अभी तक हो पाया है।

किसी एक भाषा के साहित्य का किसी दूसरी भाषा में अनुवाद केवल भाषा बदलने की प्रक्रिया नहीं है, बल्कि यह एक संस्कृति को दूसरी संस्कृति तक पहुँचने का माध्यम भी है। किसी भी विधा या रचना का एक भाषा से किसी दूसरी भाषा में अनुवाद करने के लिए अनुवादक को स्रोत भाषा के साथ साथ लक्ष्य का ज्ञान भी होना अति आवश्यक है। चूंकि मेरी मातृभाषा नेपाली है। इसलिए मैंने अपने शोध कार्य के लिए ‘चयनित नेपाली लोककथाओं का हिंदी अनुवाद और विश्लेषण’ विषय लेने का निश्चय किया। मुझे लगता है कि मैं इस शोध कार्य के साथ न्याय कर पाऊँगी। इस शोध कार्य का उद्देश्य नेपाली लोक कथाओं में आए नेपाली संस्कृति के मूल्य को उजागर करना है। प्रस्तुत शोध-प्रबंध का विषय है ‘चयनित नेपाली लोककथाओं का हिंदी अनुवाद और विश्लेषण’ है, जिसे अध्ययन की सुविधा के लिए पांच अध्यायों में बाँटा गया है।

प्रस्तुत शोध-प्रबंध का प्रथम अध्यायः ‘नेपाली समाज और नेपाली भाषा सामान्य परिचय’ है। इस अध्याय को दो उप-अध्यायों में बाँटा गया है। पहला उप-अध्याय नेपाली समाज का सामान्य

परिचय है, जिसमें नेपाली समाज का सामान्य परिचय प्रस्तुत करते हुए नेपाली समाज के खान-पान, वेशभूषा, रहन-सहन, पर्व एवं त्योहार, संस्कृति और सामूहिक जीवन-पद्धति, स्त्रियों की दशा आदि का अवलोकन किया गया है। दूसरा उप-अध्याय नेपाली भाषा का उद्भव और विकास है। इस उप अध्याय में नेपाली भाषा के उद्भव एवं विकास की यात्रा को रेखांकित किया गया है।

प्रस्तुत शोध-प्रबंध का द्वितीय अध्यायः 'लोककथा स्वरूप विवेचन' है। इस अध्याय को दो उप-अध्यायों में विभाजित किया गया है। पहला उप-अध्याय 'लोककथा की परिभाषा और स्वरूप' है। इसके अंतर्गत 'लोक' एवं लोककथाओं की परिभाषाओं का वर्णन करते हुए लोककथा के प्रकार, मौखिक परम्परा और तत्त्व आदि पर प्रकाश डाला गया है। इस अध्याय के दूसरे उप-अध्याय में लोककथाओं का वर्गीकरण प्रस्तुत किया गया है।

प्रस्तुत शोध-प्रबंध का तृतीय अध्यायः 'चयनित नेपाली लोककथाओं का हिंदी में अनुवाद' है। इस अध्याय में कुल 29 लोककथाओं का नेपाली से हिंदी में अनुवाद किया गया है। ये लोक कथाएँ दो लोककथा संग्रहों से ली गई हैं। इसमें पहला लोककथा संग्रह पुष्प शर्मा द्वारा संग्रहित 'गोलसिमल' है, जो उपमा प्रकाशन, कलेबुङ, पश्चिम बंगाल से वर्ष 2021 में प्रकाशित हुआ है। इस संग्रह में कुल 14 लोककथाएँ है। वहीं दूसरा लोक कथा संग्रह- 'कथा-संग्रह' (दंत्यकथा) है, जिसे ललितजङ्ग सिजापति ने संग्रहित किया है, इसका प्रकाशन बाबू माधवप्रसाद शर्मा, दूधविनायक, वाराणसी से वर्ष 1999 में हुआ। इस 'कथा-संग्रह' में कुल 15 लोककथाएँ हैं।

प्रस्तुत शोध-प्रबंध का चतुर्थ अध्यायः 'चयनित नेपाली लोककथाओं का विश्लेषण' है। इस अध्याय को छः उप-अध्यायों में बाँटा गया है। इसके अंतर्गत चयनित लोककथाओं का विश्लेषण किया गया है। इस अध्याय का प्रथम उप-अध्याय चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त समाज का विश्लेषण है। इस अध्याय का दूसरा उप-अध्याय 'चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्ति

संस्कृति का विश्लेषण’ है, जिसमें चयनित लोककथाओं के सांस्कृतिक पक्ष का विश्लेष्ण किया गया है। इस अध्याय का तीसरा उप-अध्याय ‘चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त प्रेम का विश्लेषण’ है। इसमें इन लोककथाओं में आएं प्रेम प्रसंगों के स्वरूप का विश्लेषण किया गया है। इस अध्याय का चतुर्थ उप-अध्याय ‘चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त धर्म का विश्लेषण' है जिसमें चयनित नेपाली लोक कथाओं में वर्णित हिन्दू धर्म के प्रति आस्था के भाव को प्रमुख रूप से चित्रित किया गया है। इस अध्याय के पंचम उप-अध्याय में ‘चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त जादू-टोना का विश्लेषण’ है। कुछ नेपाली लोककथाओं में अलौकिक और चमत्कारपूर्ण बातों को प्रमुखता से दिखाया गया है जिससे कथा में रहस्य, रोमांच और रोचकता बनी रहती है। इस अध्याय में इनका भी विश्लेषण किया गया है। इस अध्याय का छठा उप-अध्याय ‘चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त प्रकृति एवं पशु-पक्षी का विश्लेषण’ है। कुछ नेपाली लोककथाओं में प्रकृति एवं पशु-पक्षी का चित्रण मुख्य पात्र के रूप में भी हुआ है। जहाँ उनमें मानवीय गुणों को स्थापित किया गया है जिनके माध्यम से पाठकों को नैतिकता की शिक्षा दी गई है। इस अध्याय में इनका विश्लेषण किया गया है।

प्रस्तुत शोध-प्रबंध का पंचम अध्यायः ‘चयनित नेपाली लोककथाओं के हिंदी अनुवाद की समस्याएँ’ है। इस अध्याय को दो उप-अध्यायों में बाँटा गया है। पहला उप अध्याय शब्दानुवाद की समस्याएँ और दूसरा भावानुवाद की समस्याएँ हैं, जिसमें नेपाली भाषा से हिंदी भाषा में अनुवाद करने की प्रक्रिया में आने वाली समस्याओं पर प्रकाश डाला गया है।

मैं अपने शोध-कार्य की सफलतापूर्वक पूर्णता के लिए सर्वप्रथम ईश्वर और अपने माता-पिता की आभारी हूँ जिनके आशीर्वाद और प्यार के बिना यह कार्य संभव नहीं था। अपने माता-पिता के साथ-ही-साथ मैं अपने आदरणीय शोध निर्देशक प्रो. संजय कुमार, वरिष्ठ आचार्य एवं अध्यक्ष, हिंदी

विभाग, मिजोरम विश्वविद्यालय का भी हृदय से आभारी हूँ, जिन्होंने मुझे हमेशा एक शोध निर्देशक की तरह नहीं, बल्कि एक पिता की तरह ही अपना मार्गदर्शन, स्नेह, अनुशासन और सहयोग प्रदान किया। मैं ईश्वर से प्रार्थना करती हूँ कि उनका यह स्नेह और आशीर्वाद सदैव मेरे ऊपर बना रहे।

मैं हिंदी विभाग के अपने आदरणीय शिक्षकों डॉ. सुषमा कुमारी और डॉ. अमिष वर्मा के प्रति भी हृदय से कृतज्ञता व्यक्त करती हूँ, जिन्होंने एम.ए. से लेकर पीएच.डी. के दौरान मुझे एक विद्यार्थी के रूप में ही नहीं, बल्कि परिवार के एक सदस्य की तरह अपनाया और हर कठिन समय में सही मार्गदर्शन प्रदान किया। मैं अपने विभाग के वरिष्ठ प्रो. सुशील कुमार शर्मा और डॉ. अखिलेश कुमार शर्मा के प्रति भी उनके सहयोग के लिए आभार व्यक्त करती हूँ। मैं हिन्दी विभाग के कर्मचारी श्री राजीव भैया को भी धन्यवाद देती हूँ, जो सदैव सहायता के लिए तत्पर रहते हैं।

साथ ही मैं डॉ. मंजुला कुमारी सिंह मैम और डॉ. खुशबु मौर्या मैम का भी हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ, जिन्होंने हर त्योहार पर हमें अपने परिवार का हिस्सा बनाए रखा। घर से दूर रहते हुए मिजोरम विश्वविद्यालय में उनके इस स्नेह और अपनत्व ने हमें कभी घर की कमी महसूस नहीं होने दी।

इस लंबी शोध-यात्रा में जिन्होंने मुझे हमेशा सहयोग दिया एवं मेरा मनोबल बढ़ते रहे परिवार के उन सभी लोगों के प्रति हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ। मेरे भाई विजय विश्वकर्मा, राहुल विश्वकर्मा, प्रेम विश्वकर्मा, सूरज विश्वकर्मा और बहन सानु विश्वकर्मा, ग्रेसी विश्वकर्मा, साबित्री सोनार एवं मेरी भाभी ऋतू छेत्री, अमृता छेत्री और मेरी भतीजी नाईशा विश्वकर्मा, आशा सोनार के प्रेम, प्रोत्साहन और सहयोग के लिए इन सब का हृदय से आभारी हूँ।

मैं अपनी सहपाठी एवं सखी ताबा याना का विशेष धन्यवाद करती हूँ जो स्कूल से लेकर पीएच.डी. तक हमेशा मेरे साथ रही और शोधार्थी जीवन के हर सुख दुःख में हम एक दूसरे के साथ

रहे। इसके साथ ही मैं हिंदी विभाग के अपने अग्रज दिवेश कुमार चंद्रा, रघुवीर दान चारण, गुरुभाई प्रलय कुमार बारो, पूनम कुमारी, पंखी काकति और सखी ओबिनम सारिंग, स्वीटी बसुमतारी, सुबू यातुंग, कृष्णामोनी सैकिया का भी आभार व्यक्त करती हूँ। आप सभी का साथ, सहयोग और समर्थन मेरे लिए हमेशा अनमोल रहा है, क्योंकि मैंने हर जरुरत के समय आप सभी को अपने लिए खड़ा पाया है। आप लोगों के बिना यह यात्रा इतनी सफल और सुखद नहीं होती।

अंत में, मैं उन सभी का आभार व्यक्त करती हूँ जिन्होंने इस शोध कार्य के दौरान प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में मेरा सहयोग किया।

कृतिका विश्वकर्मा

विषयानुक्रमणिका

चयनित नेपाली लोककथाओं का हिंदी अनुवाद और विश्लेषण

विषयानुक्रमणिका

	पृष्ठ संख्या
प्रमाण पत्र	**I**
घोषणा पत्र	**II**
प्राक्कथन	**III-VIII**
विषयानुक्रमणिका	**IX-XI**
प्रथम अध्याय: नेपाली समाज और नेपाली भाषा : सामान्य परिचय	**1-22**
(क) नेपाली समाज : सामान्य परिचय	
(ख) नेपाली भाषा : उद्भव और विकास	
द्वितीय अध्याय: लोककथा : स्वरूप विवेचन	**23-61**
(क) लोककथा : परिभाषा और स्वरूप	
(ख) लोककथा : वर्गीकरण	
तृतीय अध्याय: चयनित नेपाली लोककथाओं का हिंदी में अनुवाद	**62-236**
चतुर्थ अध्याय: चयनित नेपाली लोककथाओं का विश्लेषण	**237-283**
(क) चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त समाज का विश्लेषण	
(ख) चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त संस्कृति का विश्लेषण	
(ग) चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त प्रेम का विश्लेषण	
(घ) चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त धर्म का विश्लेषण	
(ङ) चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त जादू-टोना का विश्लेषण	
(च) चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त प्रकृति एवं पशु-पक्षी का विश्लेषण	

पंचम अध्याय: चयनित नेपाली लोककथाओं के हिंदी अनुवाद की समस्याएँ **284-301**

(क) शब्दानुवाद की समस्याएँ

(ख) भावानुवाद की समस्याएँ

उपसंहार **302-319**

परिशिष्ट- 1 **320-324**

संदर्भ ग्रंथ सूची

परिशिष्ट- 2 **325-327**

शोधार्थी का जीवनवृत्त

शोधार्थी का विवरण

प्रथम अध्याय

नेपाली समाज और नेपाली भाषा : सामान्य परिचय

(क) नेपाली समाज : सामान्य परिचय

(ख) नेपाली भाषा : उद्भव और विकास

प्रथम अध्याय

नेपाली समाज और नेपाली भाषा: सामान्य परिचय

क. नेपाली समाज: सामान्य परिचय:

नेपाल को एक बहुजातीय एवं बहुभाषी देश माना जाता है। जहाँ भारत की तरह विविधता में एकता दिखाई पड़ती है। हिमालय के गोद में सिस्थिर यह देश अपनी समाज की संस्कृति पांरपरिक रीति-रिवाज एवं धार्मिक विश्वासो और जीवनशैली के कारण पहचाना जाता है। नेपाली जन समुदाय के लोग केवल नेपाल में नहीं बल्कि पुरे विश्व में फैले हुए है। खास करके भारत के पश्चिम बंगाल के दार्जिलिंग, सिलीगुड़ी, उत्तराखंड और पूर्वोत्तर क्षेत्र अरुणाचल प्रदेश, असम, मिजोरम, मेघाल, मणिपुर, नागालैंड, सिक्किम आदि प्रदेशो में सदियों से बसे हुए हैं। नेपाली समुदाय में लगभग 125 जातीय एवं 120 से अधिक भाषाएँ, उपभाषाएँ, बोलियाँ बोली जाती है। बिर्ख खडका डुवर्सेली जी ने अपनी पुस्तक नेपाली साहित्य विमर्श में नेपाली भाषा बोलने वाले राज्य का उल्लेख करते हुए भारत एवं नेपाल में 'नेपाली' शब्द किस संदर्भ में प्रयोग होता है, उस पर प्रकाश डाला है। "यह भाषा आज के इस भूमंडलीकृत युग में संसार के प्रायः सभी कोने में बोली जाती है। मूलतः यह भाषा नेपाल और भारत के उत्तरपूर्व राज्य असम, मणिपुर, नागालैंड, अरुणाचल प्रदेश, मेघालय, सिक्किम, पश्चिम बंगाल तथा भूटान के दक्षिणी भाग में बोली जाती है। यहाँ यह उल्लेख करना अत्यंत प्रासंगिक और आवश्यक होगा कि भारत में 'नेपाली' शब्द से एक भाषा के अलावा एक जाति भी समझी जाती है, जबकि नेपाल में नेपाली एक भाषा के अलावा उस देश की राष्ट्रीयता समझी जाती है।"[1] नेपाली भाषा एक अत्यधिक संरचित भाषा है, जो नेपाली समुदाय की मातृभाषा कहलाती है।

किसी भी समाज का निर्माण का आधार समाज की आवश्यकता और सहयोग से होता है जो समाज की सांस्कृतिक, आर्थिक, धार्मिक, और राजनितिक आदि परिस्थितियाँ पनपती हैं और यही आधार समाज में परिवार नियमों रीति-रिवाज, परंपराओं, विश्वास और अंधविश्वास आदि का पालन ही एक समाज का निर्माण करता है तथा समाज को बांधे रखता है।

नेपाली समाज की आर्थिक व्यवस्था : नेपाली समाज की आर्थिक व्यवस्था को दो वर्गों में बाँट कर देखा जा सकता है पहला जो कृषि, पशु पालन, पर्यटक, विदेश रोजगार पर आधारित है। किसानी एवं पशु पालन प्राचीन काल से ही नेपाली समुदाय की आजीविका का मुख्य स्रोत रहा है जिसमें किसान का आमदनी का स्रोत अन्न एवं सब्जियाँ होती है जैसे धान, मक्का, कोदो आदि तो वही पशुपालन करने वालों के लिए दूध होती है। नेपाली समाज कई जगहों पर्यटकों पर भी निर्भर है जिससे इस समाज को आर्थिक रूप से मदद मिलती है, जैसे कोई पर्यटक किसी स्थान पर ठहरते है या खाने-पीने पर खर्च करते है तो उससे स्थानीय लोगो की आय बढ़ती है। आर्थिक व्यवस्था से संबंधित दूसरा बुद्धिजीवी वर्ग है, जो ऐसे लोगों का समूह है जिसमें शिक्षा, कला तकनीकी आदि के क्षेत्र में कार्य करते हैं जिससे इस समाज की आर्थिक व्यवस्था को प्रभावित करता है। नेपाली समुदाय का सबसे बड़ा योगदान सेना में रहा है जो अपने आप में गर्व की बात है। इस प्रकार नेपाली समाज की आर्थिक व्यवस्था कृषि, श्रम शिक्षा और स्थानीय संसाधनों पर आधारिक दिखाई पड़ती है जिससे आजीविका का आधार कह सकते है परन्तु आज भी इस समाज में बेरोजगार की समस्या दिखाई पड़ती है जो नेपाली समाज के लिए एक बड़ी चुनौती है जिससे एक उचित योजना एवं संसाधनों के माध्यम से संतुलन में लाया जा सकता है।

नेपाली समाज का धर्म : नेपली समाज अपनी प्राचीन संस्कृति और धार्मिक परम्पओं के कारण हिन्दू धर्म से प्रभावित है। जिसमें में आज भी 80 प्रतिशत लोग हिन्दू धर्म को मानते है और 20 प्रतिशत

लोग अन्य धर्म जैसे बौद्ध धर्म, ईसाई धर्म, मुस्लिम धर्म का पालन करते दिखाई पड़ता है। नेपाली समाज में गणेश, शिव-पार्वती, सीता-राम, राधा-कृष्णा सरस्वती आदि देवी देवताओं की पूजा अर्चना करते है, तथा इन देवी देवताओं पर आधारित कई व्रत कथाएँ एवं लोक कथाएँ आदि प्रचलित हैं। और पशुपतिनाथ मनोकामना, गोरखनाथ मंदिर आदि नेपाली समाज का आस्था भाव प्रकट करता है।

इस समाज के भी अपने रीति-रिवाज हैं, जो जीवन के हर के पक्ष में दिखाई पड़ता है जैसे पारिवारिक संस्कार में जन्म विवाह और मृत्यु आदि के अवसरों पर हिन्दू धर्म के अनुसार हर विधियों का पालन किया जाता है। यहाँ भी किसी के मृत्यु के बाद मुखाग्नि दे का हकदार केवल पुरुष ही होते हैं। रमेश पोखरियाल 'निशंक' जी ने एक दिन नेपाल में पुस्तक में भी इसका वर्णन किया है- "हिन्दू धार्मिक मान्यताओं के अनुसार लड़को को ही माँ-बाप का अंतिम संस्कार करके उनके मोक्ष प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त करनेवाला माना है। ग्रामीण भारयीय परिवेश की तरह कन्या माँ-बाप की जिम्मेदारी मानी जाती है और उसके हाथ पीले करना ही परिवार का मुख्य लक्ष्य रहता है।"[2] अर्थात इस से यह भी बता चलता है की नेपाली समाज पंरपरागत रूप से पितृसत्तात्मक यानि पुरुष प्रधान समाज है। यहाँ संपत्ति और वंस पर आधिकार पुरुषों का ही होता है।

इसी तरह हिन्दू धर्म के अलावा नेपाली समुदाय में लगभग 1.5 ईसाई धर्म को मानने लोग दिखाई पड़ते हैं। लोगों का ईसाई धर्म के प्रति आकर्षण का कारण वर्ल्ड क्रिश्चियन डाटाबेस अनुसार देख सकते है "आज नेपाल में 4 लाख से अधिक ईसाई हैं। ऐसा माना जाता है कि नेपाल के लोग गरीबी,मजबूरी,बीमारी के दौरान ईसाई मिशनरियों द्वारा सहायता करने पर ईसाई धर्म की शरण में आए हैं। आज देश में अनेक स्थानों पर चर्च या गिरिजाघरों का निर्माण हुआ है। हाल में आए भूकंम के बाद बड़ी संख्या में लोग ईसाई धर्म की ओर आकर्षित हुए।"[3]

नेपाली समुदाय में बौध्द धर्म का भी प्रभाव दिखाई पड़ता है जिनकी जन जनसंख्या लगभाग 11 माने गये है जिसकी पुष्टि निशंग जी अपनी पुस्तक एक दिन नेपाल में सिध्द करते हैं। "नेपाल राष्ट्र के रूप में बौद्ध और हिन्दू धर्म की संगम स्थली है। भगवान् बौद्ध को हिन्दू अपना अवतार मानते हैं, वही हिंदू धार्मिक स्थलों को बौद्ध आस्था का केंद्र मानते हैं। बौद्ध धर्म तिब्बत एवं बर्मा की ओर से आनेवाले लोगों में अधिक प्रचलित रहा। तिब्बत से आए लोग बौद्ध धर्म के अनुयायी हैं। नेपाल में संदर परंपरागत ढंग से सजे बौद्ध विहार काठमांडू में देखने को मिलते हैं। परंपरागत वेशभूषा में बौद्ध लोग नेपाल में हर स्थान मिल जाएँगे।" [4] वही नेपाली समाज में मुस्लिम धर्म की जनसंख्या लगभग 4 प्रतिशत मानी गई हैं। जो इस्लाम धर्म के रीति-रिवाजों का पालन करते है। इस प्रकार नेपाली मुख्यतः हिन्दू धर्म को मानता है परन्तु कुछ संख्याओं में अन्य धर्म को मानने वाले के आधार पर भी हम नेपाली समाज को बहुधार्मिक समाज के रूप में मान सकते है।

नेपाली समाज में जाति प्रथा: नेपाली समाज एक बहुभाषी, बहुधार्मिक समाज होने साथ-साथ बहुजातीय समाज भी है। नेपाली समाज की जाती प्रथा का मूल आधार हिन्दू वर्ण व्यवस्था है परन्तु धीरे-धीरे इसमें स्थानीय जनजातियों परंपराओं और भौगोलिक परिस्थितियों के चलते अनेक परिवर्तन हो गया है। नेपाली समुदाय की प्रमुख जाती रूप में हम इन जातियों को मान सकते है जिन्हें दो वर्गों में बाँटा कर समझ सकते है जैसे- पहला जातीय समुदाय और दूसरा आदिवासी जनजातीय समुदाय के रूप में देख सकते है।

जातीय समुदाय अंतर्गत, बहुन, क्षेत्रिय, ठकुरी, कमी, दमाई, सार्की, सन्यासी आदि आते हैं इन जातियों को ही वर्ण व्यवस्था के आधार पर बाँटा जाता है और ये अधिक तर हिन्दू धर्म पर आस्था रखते हैं और इस वर्ग के समुदायो का रीति –रिवाज बहुत हद तक एक जैसा होता है।

आदिवासी जनजातीय अंतर्गत नेवर, मगर, गुरुंग, तमांग, राय, लिम्बू, शेर्पा, लेप्चा आदि आते है। इस समुदाय की प्रत्येक रूप से अपनी सांस्कृतिक नृत्य, पारम्परिक गीत, वेशभूषा आदि होती है; जो एक प्रकार से नेपाली संस्कृति का ही प्रतिक है।

नेपाली समाज एक प्रकार अपनी जातीय विविधता से तो समृद्ध है ही परन्तु यह समाज भी जातीय भेदभाव एवं ऊँच-नीच के प्रभाव से वंचित नहीं है। नीची जातियों को मंदिरों, कुँए और धर्मी स्थानों पर प्रवेश करने की अनुमति नहीं दी जाती थी। हलाकि इस प्रकार की भेद-भाव अब बहुत हद तक कम गई है लेकिन आज भी यह समाज अंतरजातीय विवाह को स्वीकार नहीं करता है और कोई भी शुभ काम या संस्कार की विधियों में उन्हें शामिल नहीं किया जाता है। यहाँ तक की वह उनके घर पानी तक नहीं पीते है। वर्तमान समय में समाज के बौध्दिजीवी इस विषय पर कानूनी रूप से सुधर लेन का प्रयास कर रहे है फिर भी पुरे तरीके से समाप्त करने के लिए मानसिक परिवर्तन एवं समाज को जागरूक करना आदि आवश्यक है।

नेपाली समाज का पर्व : पर्व एक उत्सव मनाने का एक ऐसा माध्यम है, जिससे हमारी सांस्कृतिक विरासत का मूल्य बना रहता है और हमें अपने अतीत तथा अपनों से जुड़े रखता है। जैसा कि हम ऊपर चर्चा कर चुके हैं कि नेपाली समाज एक बहुजातीय, बहुभाषिक एवं बहुधार्मिक समाज है। नेपाली समाज की अपनी संस्कृति एवं मान्यताएँ, जो पर्वों के माध्यम से विभिन्न जातियों और जनजातियों द्वारा अपने-अपने रीति-रिवाजों के अनुसार मनाई जाती हैं, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक महत्व को दर्शाती हैं और समाज को एक सूत्र में बाँधे रखती हैं। नेपाली समाज मुख्य रूप से दशैं (दशहरा), तिहार (दीपावली), तीज, माघे संग्राती (मकर संक्रान्ति) आदि पर्वों को बड़े धूमधाम से मनाता है।

दशै (दशहरा) को नेपाली समाज में महापर्व के रूप में मनाया जाता है, जिसमें देवी दुर्गा की उपासना की जाती है। इस पर्व को कुल 15 दिन तक मनाया जाता है। पहले दिन घटस्थापना की

जाती है, जिसमें देवी दुर्गा की प्रतिमा के सामने कलश की स्थापना की जाती है और घर के किसी पवित्र स्थल में मका, धान, जौ और गेहूँ के बीज बोए जाते हैं, जिनसे कुछ दिनों बाद छोटे-छोटे लंबे रेशेदार अंकुर निकलते हैं, जिन्हें जमरा कहा जाता है।

इन दिनों देवी दुर्गा के विभिन्न रूपों में पूजा-अर्चना करके उनकी स्तुति की जाती है। सप्तमी को फूलपाती के रूप में मनाया जाता है, जिसमें पूजाविधि के अंतर्गत बकरे, भैंस आदि की बलि दी जाती है। अष्टमी और नवमी के दिनों में विशेष पूजा की जाती है और दशमी (विजयादशमी) का दिन सबसे महत्त्वपूर्ण होता है। इस दिन माता-पिता या घर के बड़े बुजुर्गों से चावल का टीका लगाकर जमरा को कान या बाल में लगाकर आशीर्वाद दिया जाता है। यह प्रक्रिया पूर्णिमा तक चलती है।

दूसरे मुख्य पर्व के रूप में तिहार (दीपावली) प्रत्येक वर्ष कार्तिक मास के कृष्ण पक्ष के अंत में अमावस्या के दिन मनाया जाता है। यह पर्व पाँच दिन तक चलता है। पहले दिन को काग तिहार के रूप में मनाया जाता है, जिसमें कौवे को भोजन कराया जाता है, क्योंकि नेपाली समाज में ऐसी मान्यता है कि कौवा यमराज का दूत माना गया है और जब काग तिहार के दिन कौवे को भोजन कराया जाता है, तो यह माना जाता है कि वह आशीर्वादपूर्ण संकेत लेकर आता है। वहीं, दूसरे दिन कुकुर तिहार मनाया जाता है, जिसमें कुत्ते को तिलक लगाकर माला पहनाया जाता है और उसके बाद उसे भोजन दिया जाता है, अर्थात कुत्ते की वफादारी के लिए उसकी सराहना और सम्मान किया जाता है। तीसरे दिन गाई तिहार के रूप में मनाया जाता है, जिसमें सुबह गाय की पूजा की जाती है और साथ ही माँ लक्ष्मी की पूजा की जाती है, ताकि घर में सुख और समृद्धि बनी रहे। पूजा के बाद घर की महिलाएँ एक पारम्परिक लोकखेल एवं संस्कृतियों की परंपरा देउसी-भैंलो खेलने जाती हैं, जो राजा बलि की कथा से जुड़ी है। एक बार भगवान विष्णु ने ब्राह्मण का रूप धारण करके राजा बलि से केवल तीन पग

भूमि माँगी। राजा बलि ने सोचा कि तीन पग तो बहुत कम है, इसलिए उन्होंने स्वीकार कर लिया। परन्तु ब्राह्मण ने जब विशाल रूप धारण किया तो पहले कदम से धरती, दूसरे कदम से आकाश को ढक लिया। अब तीसरा कदम कहाँ रखा जाए, यह एक समस्या थी। तब राजा बलि ने अपना सिर आगे किया और उस पर कदम रखने के लिए कहा, जिससे राजा बलि पाताल की ओर धंस गए।

भगवान विष्णु राजा बलि के इस भक्ति भाव से बहुत प्रसन्न हुए, जिसके कारण राजा बलि को यह वरदान मिला कि कार्तिक कृष्णा चतुर्दशी से कार्तिक शुक्ल प्रतिपदा तक नेपाली समाज में देउसी-भैंलो के माध्यम से राजा बलि के भक्ति-भाव की प्रशंसा की जाती है और घर-परिवार में माँ लक्ष्मी की कृपा बनी रहे, इसकी कामना की जाती है।

इसी तरह चौथे दिन गौरु (बैल) की पूजा होती है और पाँचवे दिन भाईटिका (भाई दूज) माना जाता है जिसमें बहने अपने भाइयों को टिका (तिलक) लगाकर उनकी लम्बी आयु की कामना करती है। इस प्रकार चौथे और पाँचवे दिन में लड़के समूह में देउसुरे खेलने जाते है।

नेपाली समाज में तीज मुख्य रूप से महिलाओं का पर्व के रूप में मनाया जाता है। इस पर्व में विशेष रूप से शिव-पार्वती की पूजा-अर्चना होती है, जिसमें विवाहित स्त्रियाँ अपने वैवाहिक जीवन में सुख और शांति बनी रहे, इसकी कामना करती हैं।

तीज के पहले दिन विवाहित महिलाओं को अपने मायके में बुलाया जाता है, जहाँ उनके मनपसंद स्वादिष्ट भोजन (दर) खिलाए जाते हैं। उसके बाद सभी महिलाएँ लाल एवं हरे रंग की साड़ियाँ पहनकर समूह में नाच-गाने करती हैं।

दूसरे दिन विवाहित महिलाएँ पति की दीर्घायु के लिए निर्जला व्रत रखती हैं, और जो कुंवारी लड़कियाँ अच्छे वर की कामना करते हुए व्रत करती हैं। तीसरे दिन महिलाएँ नदियों और तालाबों में

स्नान करके अपना व्रत खोलती हैं तथा सप्त ऋषियों की पूजा करती हैं, जिससे उनकी आत्मा शुद्ध होती है।

माघे संग्राती पर्व नेपाली समाज में मनाया जाता है, जबकि भारत के कई राज्यों में यह कला अलग-अलग नामों से जाना जाता है, जैसे असम में माग बिहू, पंजाब में लोहड़ी, तमिलनाडु में पोंगल आदि। हिंदी में यह पर्व मकर संक्रांति के नाम से भी प्रसिद्ध है। यह पर्व नेपाली समाज में नववर्ष या नए मौसम का स्वागत करने के रूप में मनाया जाता है, जो धार्मिक आस्था और सामाजिक एकता का प्रतीक है।

इस प्रकार नेपाली समाज के ये मुख्य पर्व समाज की धार्मिक विविधता, सांस्कृतिक एकता और पारिवारिक भावनाओं को स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं।

नेपाली समाज की खानपान, वेशभूषा और आभूषण : नेपाली समाज की खानपान सादा और स्वादिष्ट ही नहीं होता बल्कि यह पौष्टिक भी होती है। नेपाली समाज में सबसे प्रमुख और दैनिक भोजन के रूप में चावल, दाल और कोई भी सब्जी होती है। परन्तु इस समाज की अपनी पारंपरिक व्यंजन भी है जो कुछ इस प्रकार है-

ढ़िडो- यह नेपाली समाज का मुख्य पारंपरिक व्यंजन है जिससे बजता,मक्का या कोदो के आटे में पानी मिलकर पकाया जाता है। और खसी को मासु यानि बकरे के मांस के साथ परोसा जाता है।

गुंड्रुक और सिंकी - नेपाली समाज की एक पारंपरिक सब्जी है जो मुख्य रूप से सरसों,मुली या पत्तागोभी के पत्तों से बनाई जाती है इस पारंपरिक सब्जी है जिससे बारिश के मौसम में लहसुन का चौक लगा कर उबाला जाता है और चावल के साथ खाया जाता है।

सेल रोटी- यह चावल के आटे के साथ सूजी, मैदा आदि मिलाकर बनाया जाता है। नेपाली समाज में इस रोटी का अधिक महत्व है जिससे हर त्योहार और पूजा-पाठ में बनाया जाता है जो भागवान को भी भोक लगता है।

मोमो - नेपाली समाज में मोमो लोकप्रिय पकवान के रूप में मानी जाती है जो पुरे विश्व में प्रसिद्ध है और लोग इसे बड़े चाव से भी खाते हैं। अतः नेपाली समाज का खान-पान एक तरह से उनका जीवन शैली का भी बोध करता है।

पारंपरिक पोशाक और आभूषण सांस्कृतिक विरासत की पहचान होती है। उसी तरह नेपाली समाज की भी अपनी पारंपरिक पोशाकें और आभूषण है जिसने समाज की सांस्कृतिक विरासत को बचाए रखा है। इस समुदाय की वेशभूषा विभिन्न जातियों, स्थानों एवं मौसम पर आधारित रहती है तथा इस में मिश्रित परंपरा की झलक दिखाई पड़ती है। यहाँ पुरुष के पारंपरिक पोशाक के रूप में दौरा-सुरुवात पहना जाता है। जो कुर्ता पजामा की तरह होता है जिसमें कुर्ता के ऊपर टांके और गांठो का विशेष डिज़ाइन बना होता है। उसके ऊपर कमर में पटुका बांधी जाती है जो एक प्रकार का लम्बे कपड़ों की पट्टी होती है से इसी के साथ ढाका टोपी भी पहना जाता है जो ढाका के विशेष कपड़ों की बनी होती है। जिससे पुरुष खास पारंपरिक अवसरों पर पहनते है। इसी तरह महिलाओं की भी कई पारंपरिक पोशाकें हैं जैसे गुन्यु-चोली, गुन्यु लंबी स्कर्ट जैसे पोशाक होती है तो वहीं चोली, शरीर के ऊपरी भाग पर फना जाने वाला वस्त्र जिसे ब्लाउज भी कहा जा सकता है गुन्यु-चोली, खासकर ग्रामीण और पहाड़ी इलाको में पहनी जाती है। फ़रिया, यह महिलाओं द्वारा पहनी जाने वाली पारंपरिक घाघरा है जो रंगीन कपड़े से बनती है। साड़ी भी एक प्रकार पारंपरिक पोशाके ही जिससे चोली के साथ पहनी जाती है। नेपाली समाज की जनजातियों की भी अपनी पारंपरिक पोशाके हैं जिसमें नेवार समुदाय के पोशाक काले रंग की साड़ी पर लाल रंग का किनारा बना रहता है। जिसे काले रंग के चोली के साथ

ही पहनी जाती है। वहीं बाक्खू शेर्पा, तमांग और पहाड़ी सामुदाय की पारंपरिक पोशाक है जो एक लम्बा गाऊन की तरह होता है अर्थात इस प्रकार ये अनेक पारंपरिक पोशाके सौंदर्य के साथ-साथ संस्कृति की सादगी उभरकर आती है।

खुखुरी: नेपाली समाज में खुखुरी का बहुत महत्व है यह एक प्रकार का हत्यार है,बहदुरी का प्रतिक है, जिससे नेपाली समाज और नेपाल में राष्ट्रिय हत्यार के रूप में माना जाता है। खुखुरी का प्रयोग रक्षा करने के लिए किया जाता है और साथ ही शुभ कार्य जैसे विवाह आदि में दूल्हें के कमर में बंधा जाता है जो शुभ माना है। खुखुरी अपनी सांस्कृतिक रूप के साथ-साथ अपनी अपनी विशिष्ट डिज़ाइन से प्रसिद्ध है।

आभूषण को केवल शरीर को सजाने और शोभा बढ़ाने वाला तत्त्व नहीं माना जा सकता है ये परम्पराओं का प्रतिनिधित्व करता है जो भावनात्मक एवं व्यक्तिगत से जुड़ा होता है। जैसे मंगलसूत्र, सगाई अंगूठी आदि है। इसी तहर नेपाली समाज में भी आभूषण केवल स्त्रियों की सुन्दरता को नहीं बढ़ता है बल्कि यह भी समाज की परंपरा का प्रतिक के रूप में दिखाई पड़ते है और जिसमें विभिन समुदायों द्वारा पहना जाता हैं,उदाहरन के लिए इन कुछ प्रमुख आभूषणों को देख सकते है-

तिलहरी: तिलहरी दो प्रकार की होती है एक तिलहरी और दूसरा छडके तिलहरी। जो एक सोने का पेंड़ेट होता है यह बस आकर में ही अलग होता है। जिससे मुख्य रूप से हरा और लाल रंग के मानकों की लड़ियाँ होती हैं, और इसके बच सोने का पेंडेंट लगा दिया जाता है, जिससे नेपाली में पोते कहते है। यह प्रत्येक विवाहित महिलाओं का प्रमुख आभूषण माना जाता है, क्योंकि नेपाली समाज में तिलहरी (पोते) मंगलसूत्र के रूप में प्रयोग होता है। जिससे विवाह के समय उसके पति द्वारा पहनाया जाता है। ये अनेक रंग के होते है परन्तु हरा और लाल रंग का मुख्य रूप से प्रयोग होता है। जो एक प्रकार से सुहागन होने की निशानी है।

मारवाड़ी: यह मोटी सोने की बालियाँ होती है जिसे स्त्रियाँ पहनती हैं, नेपाली समाज में इसे पहले के समय में कुंवारी लड़कियाँ भी पहनती थी।

बुलाकी और फूली: नाक में पहनने वाला सोने का आभूषण और बुलाकी बड़ी नथ होती है खासकर पहाड़ी महिलाएं पहनती है।

नौगेड़ी: यह आभूषण सोने के धातु से बना होता है जो गोल-गोल आकार के होते है, जिससे धागों में पिरोकर एक माना बनाया जाता है जिसमें 9 सोने टुकड़े होते है और इसलिये इस आभूषण का नाम नौगेड़ी पड़ा है।

इसी तरह अन्य आभूषणों में मुन्द्री, गदावरी, शिरबन्दी, शिरफूल, चुरा, पाउजु, कल्ली आदि आते है जो नेपाली समाज की सांस्कृतिक और परंपराओं का प्रतिनिधित्व करता है।

नेपाली समाज की स्त्रियाँ: नेपाली परंपरा के अनुसार बेटियों को लक्ष्मी का रूप माना जाता है परन्तु क्या वह समाज को लक्ष्मी के रूप में स्वीकृत है? यह अपने आप में बड़ा प्रसन्न है। क्योंकि यही समाज में अगर किसी स्त्री का बच्चा न हो तो उसे लक्ष्मी से अलक्ष्मी मानते हैं तो वही महिलाएँ मासिक धर्म में होने पर उसे अशुद्ध एवं अपवित्र कह कर दूर रखा जाना तथा इस प्रकार की मान्यताएं और सोच समाज में ज्ञान की कमी को दर्शाता है।

भारतीय समाज की तरह नेपाली समाज एक पुरुष प्रधान समाज है शायद यही कारण है लड़कों को अधिक महत्व दिया जाता है क्योंकि लड़के ही हैं जो परिवार का वंश आगे बढ़ाते हैं और घर का वारिस कहलाते है। तो वहीं लड़कियों को पराया धन माना जाता है। नेपाली समाज में भी लड़कियाँ माँ-बाप के लिए एक जिम्मेदारी होती है जिसका हाथ पिला करना उनका सपना होता है। रमेश पोखरियाल 'निशंक' जी की पुस्तक एक दिन नेपाल में उन्होंने भारतीय पहाड़ी स्त्रियों की तुलना

नेपाल कि पहाड़ी स्त्रियों से करते हुए लिखा है कि "हमारे पहाड़ की तरह नेपाल में भी महिलाएँ इतनी सशक्त और पुरुषार्थी होती हैं कि घर- परिवार को आर्थिक रूप से सुदृढ़ करने के लिए स्वयं भी हाथ बढ़ती हैं। चाहे वह हथकरघा उद्योग में हो, जड़ी-बूटी के क्षेत्र में हो, कृषि के क्षेत्र में हो या मेहनत-मजदूरी के क्षेत्र में, सभी जगह अपने परिवार के लिए मजबूत स्तंभ का कार्य करती हैं। नेपाली के राजनैतिक इतिहास में भी महिलाओं की भूमिका बड़ी सशक्त और महत्त्वपूर्ण रही है। इसका उदाहरण नेपाल की पूर्व राष्ट्रपति श्रीमती विद्या देवी भंडारी संपूर्ण मातृशक्ति के लिए मिसाल हैं। नेपाली की भारतीय महिलाओं की स्थिति हिमालय क्षेत्र के राज्यों की तरह है, जहाँ वे पारिवारिक जिम्मेवारी के साथ खेती-बाड़ी में पूरा योगदान देती हैं।"[5] अर्थात इस कथन से यह सिध्द होता है कि नेपाली समाज की स्त्रीयां भी अर्मनिर्भित होकर जीना पसंद करती हैं। अगर हम आधुनिक समय के संदर्भ में नेपाली समाज की स्त्रियों को देखें तो आज वे बहुत हद तक स्वतंत्र हैं। अब वे घरेलू दायित्वों के साथ-साथ कार्यक्षेत्र में भी सक्रिय भूमिका निभा रही हैं। अंततः नेपाली समाज की स्त्रियाँ भी उसकी संवेदना, शक्ति एवं प्रगति का मूल आधार हैं, जो सही राह व मौका मिलने पर समाज के हर क्षेत्र में सफल हो सकती हैं।

इस प्रकार नेपाली समाज अपने खान-पान, वेष-भूषा, रहन-सहन, पर्व तथा स्त्रियों की दशा-दिशा, अर्थात् अपनी संस्कृति और सामूहिक जीवन-पद्धति के कारण विशिष्ट रूप से पहचाना जाता है। और बदलती परिस्थितियों के साथ इसमें कई बदलाव भी आए हैं, जो कुछ सकारात्मक हैं तो कुछ नकारात्मक भी। सकारात्मक बदलाव में शिक्षा का बड़ा योगदान रहा है, जिससे समाज में एक जागरूकता दिखाई दे रही है, जिसके कारण समाज का विकास और उसकी प्रक्रिया प्रगतिशील बनी रह रही है।

ख. नेपाली भाषा: उद्भव और विकास:

भाषा वह माध्यम है, जिससे मनुष्य अपने भाव एवं विचारों को अभिव्यक्त करता है, और साथ ही दूसरों के भाव और विचारों को भी समझता हैं। जिससे अनेक विद्वानों ने परिभाषित करने का प्रयास किया है जैसे, भोलानाथ तिवारी भाषा को वैज्ञानिक रूप से परिभाषित करते हुए लिखते है कि "निश्चत प्रयत्न के फलस्वरूप मानव के मुख से नि:सृत वह ध्वनी समष्टि भाषा कहलाती है, जिसका अध्ययन और विश्लेषण किया जा सकें हैं।"[6] वही आचार्य देवेन्द्रनाथ शर्मा,भाषाविज्ञान की भूमिका पुस्तक में भाषा शब्द का अर्थ को स्पष्ट करते हुए बतातें हैं। "'भाषा' शब्द संस्कृत के भाष् धातु से निष्पन्न है जिसका अर्थ है व्यक्त वाणी। एक प्रकार से इस धातु के अर्थ में ही भाषा का लक्षण विद्यामान है। व्यक्त वाणी का अर्थ है स्पष्ट और पूर्ण अभिव्यंजना; और वह उच्चरित या वाचिक भाषा से सम्भव है जिसमें सूक्ष्म-से- सूक्ष्म अर्थो के बोधक अनन्त ध्वनी-संकेत हैं। इसीलिए 'भाषा' मनुष्य की वाचिक भाषा के लिए ही संगत है, भाव-बोधन के अन्य माध्यमों के लिए नहीं, और उनके लिए यदि भाषा का प्रयोग होता है तो गौण अर्थ में।"[7] अर्थात भाषा अपने विचारों तथा भावों और वाचिक संप्रेषण का उत्तम माध्यम माना गया हैं।

विद्वानों का मानना है की किसी भी वस्तु या शब्द की सटीक परिभाषा देना अधिक कठिन कार्य है क्योंकि परिभाषा बताते समय तीन दोषों से बचने की आवश्यता होती हैं-अव्याप्ति,अतिव्याप्ति और असम्भव हैं। इस संदर्भ में आधुनिक भाषाविज्ञानियों द्वारा दी गई परिभाषाओं को देना लेना भी उपोयोगी होगा।

हेनरी स्वीट के अनुसार "ध्वन्यात्मक-शब्द द्वारा विचारो का प्रकटीकरण ही भाषा है।"[8]

बाबुराम सक्सेना लिखते है “ जिस ध्वनी-चिन्हों द्वारा मनुष्य परस्पर विचार विनिमय करता है, उसे भाषा कहते हैं।”[9] इस तरह इन अनेक विद्वानों द्वारा दिए गए परिभाषाओं को देखने के बाद यह प्रसन्न उठान स्वाभिक है की भाषा के कितने प्रकार होते है? भाषा मुख्यतः तीन प्रकार के होते है-

(क) मौखिक भाषा; इस प्रकार की भाषा में अपने भाव और विचारों को बोलकर कर व्यक्त किया जाता है। जैसे दो व्यक्तियों में बातचीत।

(ख) लिखित; इसमें भाव और विचारों को लिख कर प्रकट किया जाता है। जैसे, पत्र।

(ग) सांकेतिक; सांकेतिक भाषा में संकेतो या इशारों के माध्यम से अपने विचारों का आदान-प्रदान किया जाता है जैसे रीतिकाल के प्रसिद्ध कवि बिहारीलाल के इस दोहे से समझ सकते हैं-

“कहत नटत रीझत खिझत मिलत खिलत लजियात।

भरे भौन में करत हैं,नैनन ही सों बात।”[10]

भाषा की परिभाषा एवं उसके प्रकार से यह सिद्ध होता है कि भाषा मनुष्यों के बीच एक सेतु का काम करती है, जो लोगों के बीच संवाद स्थापित करके सामाजिक संबंधों को मज़बूत बनाती है और अपनी संस्कृति तथा परम्पराओं के ज्ञान को आगे पीढ़ियों तक पहुँचाती रहती है। संसार में अनेक भाषाएँ एवं बोलियाँ पाई जाती हैं, जिनकी अपनी उत्पत्ति और विकास का इतिहास है। उन्हीं भाषाओं में से एक नेपाली भाषा है, जिसके विकास और उत्थान की लंबी यात्रा है, और इस यात्रा में कई पड़ाव हैं, जिन्हें हम विस्तार से समझने का प्रयास करेंगे।

भारत में ‘नेपाली’ शब्द से एक भाषा के अलावा एक जाति का भी बोध होता है; वहीं नेपाल में ‘नेपाली’ शब्द से एक भाषा के अलावा वहाँ की राष्ट्रीयता का भी बोध होता है। नेपाली भाषा हिंदी भाषा की तरह भारोपीय (आर्य) परिवार की भाषा है और इसे एक समृद्ध भाषा के रूप में जाना जाता

है। नेपाली भाषा बोलने वाले नेपाल के अलावा पूरी दुनिया में कहीं-कहीं मिल ही जाते हैं। खासकर भारत के पश्चिम बंगाल के उत्तरी जिलों, सिक्किम एवं पूर्वोत्तर भारत के आठों राज्यों में नेपाली भाषा बोली और समझी जाती है। भारत में नेपाली भाषा के आगमन के ठोस प्रमाण डॉ. पारसमणि प्रधान के इस प्रसंग में देख सकते है- "सन् 1814-16 के नेपाली युद्ध के पश्चात् सुगौली संधि हुई। उस संधि के अनुसार नेपाल को पश्चमी की काली नदी से पूर्व की तीस्ता नदी तक की निम्न भूमि और पूर्व की मेची नदी से पूर्व नागरीकी गढ़ी पहाड़ समतल सब जमीन ईस्ट इंडिया कंपनी को सौंपनी पड़ी। नेपाली के अधिकार में रहे बड़े भाग में अंग्रजो को जब राजकाज करने का दायित्व लेना पड़ा तो वहाँ के निवासियों की भाषा जानने की जरूरत पड़ी। इस काम के लिए अधिकारीयों को तालीम देने का भार कलकत्ता के फ़ोर्ट विलियम कॉलेज ने लिया। साथ ही सिरामपुर की मिसनरी ने भी नेपाली भाषा में कुछ काम किया "[11]

नेपाली भाषा आज जिस रूप में बोली या लिखी जाती है, इसके पीछे एक लंबी कथा रही है। नेपाली भाषा के उद्भव-विकास पर विभिन्न विद्वानों का मतभेद दिखाई पड़ता है जिससे उनके कथनों द्वारा समझा जा सकता है - इसी संदर्भ में प्रो.आर.एल.टर्नर ने अपनी पुस्तक अ कम्पेरेटिव एंड इंटीमोलोजिकल डिक्सनरी ऑव् द नेपाली लैंग्वेज(लंदन,1931) की भूमिका में उल्लेख किया है- "The proof that nepali is decended from Sanskrit rests upon the fact that many details of its grammatical structure find their explanation only in the corresponding froms of the earlier language, and that much of its vocabulary, allowing for a regular correspondence of sounds between the two languages, is identical with that of Sanskrit."[12]

इसी तरह भाषा के विशेषज्ञो ने भाषा के विकास क्रम को पहाड़ी, शौरसेनी, अपभ्रंस, प्राकृत से होते हुए संस्कृत तक पहुँचने की बात की है। वही ग्रियर्सन नेपाली भाषा को खस प्राकृत से होने का मत व्यक्त करते हुए लिखा है। "भारत के उत्तर-पश्चिम हिंदुकुश पहाड़ के आसपास कश्मीर, कसगढ़, करगर , खोह, खोकिन आदि नाम खस जाति से संबधित होने की वजह से यहाँ के निवासियों में खस जाति के लोग थे।"[13] वहीं बाबुराम आचार्य,राहुल संकृत्यायन और सुनीतिकुमार च्याटुर्जा ने शक,कुशाल,हुण,गुर्जर और खस के एक ही जाती के सगोत्री होने के पक्ष में अपने विचार व्यक्त किए हैं। खस जाति अति प्राचीन जाति है,क्योंकि खस जाति का उल्लेख महाभारत तथा पूरण जैसे प्राचीन संस्कृति साहित्य में पाया जाता है।"[14] महर्षि वेदव्यास ने महाभारत के आदि पर्व में खस जाति का उल्लेख इस प्रकार किया है-

"पौण्डान्, किरयतान्, यवनन्।
सिंहलान् बर्बरान् खसान्।।"[15]

इस तर कुछ भाषाश्स्त्रियों के विद्वानों का यह भी मत है की नेपाली भाषा की उत्पत्ति तथा विकास में खस एवं उसकी भषा के संबध से असहमत है। इसी संदर्भ में सुर्यविक्रम ज्ञवाली का मानना है, कि प्राचीन खस जाति के साथ नेपाली भाषा का कोई संबंध नहीं है। उनके विचार में राजपूताना (चित्तौड) के राजपूतों ने नेपाल (गोर्खा) में राज्य बसाकर राजस्थानी भाषा चलाई थी। नेपाली भाषा राजस्थानी से मिलती-जुलती है।"[16] इस भाषा में नामकरण के संदर्भ कुछ प्रमाणित बाते कुछ इस प्रकार है-

"अठारहवीं शताब्दी के अंत और उन्नीसवीं शताब्दी के पहले दशक में नेपाल राज्य का एकीकरण होने के पश्चात् पहली बार यूरोप के रोम से प्रकाशित कसियानो बेलिगातो की पुस्तक 'अल्फाबेटम्' में खसकुरा, पर्वत तथा गोर्खाली को 'नेपाली' नाम दिया गया। इस पुस्तक की भूमिका में

जोन्स क्रिस्टोफोरस आमाडुटियस ने भारत के विभिन्न क्षेत्रों की भाषा और लिपि का नाम लेते समय नेपाली (नेपालेनसिस्) का नाम भी लिया है। कलकत्ता के फ़ोर्ट विलियम कॉलेज के प्रोफ़ेसर जे.ए. अटोन ने सर्वप्रथम नेपाली भाषा का व्याकरण Grammer of the Nepalese Language लिखा जिसमें नेपाली उदाहरण देवनागरी लिपि में छापे थे। यह पुस्तक सन् 1820 में छपी थी। इस पुस्तक में नेपाली भाषा का नाम व्याकरण के साथ छपता है। नेपाली भाषा का पहला व्याकरण होने के कारण इस पुस्तक का अलग महत्त्व है। सिरामपुर मिसनरी के फ़ादर क्यारे ने भी भारत में प्रचलित भाषाओं का अध्ययन किया और 33 भाषाओं के नमूने पेश किए, जिसमें नेपाली भी है। ग्रियर्सन के मत अनुसार यह कार्य ईस्वी सन् 1816 के आसपास हुआ।"[17]

भाषा एक निर्विवाद विषय है जो समाज द्वारा समाज के लिए ही प्रयोग किया जाता है। जिसकी प्रवृति परिवर्तनशील होती है। जिसे चूडामणि बन्धु ने अपनी भासविज्ञान पुस्तक में स्पष्ट किया है। "जब कोई भाषाभाषी समुदाय अपने पुराने स्थान से हटकर किसी नए भौगोलिक क्षेत्र में पहुँचता है, या किसी दूसरे समाज के साथ सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक या व्यापारिक संबंध स्थापित करता है, तब इन संपर्कों का प्रभाव भाषा पर पड़ता है। देश की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक व्यवस्था में आए बदलावों के साथ-साथ वातावरण में हुए परिवर्तनों ने भी भाषा के ध्वनि–वर्ण, व्याकरण और शब्द–भंडार को प्रभावित किया है। (जब कुनै भाषाभाषी समुदाय कुनै नयाँ भौगोलिक क्षेत्रमा आउँछ, कुनै अर्को समाजसँग सम्बन्ध स्थापित गर्छ वा राजनीतिक, धार्मिक, व्यापारिक वा अन्य कुनै कारणले अर्को भाषाबाट प्रभावित हुन्छ तब भाषिक संरचनामा पनि परिवर्तन हुन्छ । देशको सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक व्यवस्थामा आएको परिवर्तनका साथै वातावरणमा भएको परिवर्तनले पनि भाषाका वर्ण, व्याकरण र शब्दभण्डारलाई प्रभावित पारेको हुन्छ)"[18] नेपाली भाषा के विकास के यात्रा में नाम को लेकर भी कई परिवर्तन और मतभेद दिखाई पड़ता है। जिससे

बिर्ख खडका डुवर्सेली ने भी अपनी पुस्तक नेपाली साहित्य विमर्श में उल्लेख किया है जो कुछ इस प्रकार है।“आधुनिक रूप में पहुँचनें के पहले विभिन्न एतिहासिक कालों में नेपाली भाषा ‘खसकुरा’,पर्वते, ‘पवर्तीय’,गोर्खली तथा ‘गोर्खा’ भाषा के नाम से जानी जाती थी। नेपाली रामायण के रचयिता भानुभक्त आचार्य के काल में यह केवल ‘भाषा’ के नाम से जानी जाती थी।”[19] साथ ही इन्होनें साहित्य अकादमी द्वारा 1884 में प्रकाशित पुस्तक हिस्ट्री ओव् नेपाली लिटरेचर में डॉ.कुमार प्रधान के कथन का भी उल्लेख किया है-“ In a document of the nineteenth century the language is also described as ‘girirajbhash’ or the speech of the king of mountains”[20]

‘नेपाली’ भाषा एवं गोर्खा’ तथा गोर्खली भाषा के नाम की प्रमाणिकता को लेकर कई बाद-विवाद सामने आते है,कोई नेपाली भाषा के नाम को प्रमाणित मनाता है तो कोई गोर्खा भाषा को जिसे इस कथन से भी समझ सकते है। “भाषा के अर्थ में गोरखाली का प्रयोग नेपाली से पुराना है।" अर्थात जो लोग गोरखा भाषा या गोरखाली को विगत 5 वर्षों का मात्र आविष्कार कहते हैं वे गलत धारणा में जीने वालों में से हैं। एतदर्थ, भारत के गोरखे जब गोर्खा भाषा नाम में हीं अपनी भाषा को भारतीय संविधान की अष्टम् अनुसूची में अन्तर्भुक्त करने की मांग करते हैं तब वे भाषा नाम की ऐतिहासिक दृष्टि से सही है। जो इन तथ्यों से अवगत है नेपाली नाम में भाषा मांग करने की ऐतिहासिक भूल को अपने ही समक्ष पाये हैं।”[21] डॉ. मणिकुमार शर्मा कि इस कथन को हिंदी के भाषा विज्ञान के विद्वान भोलानाथ तिवारी जी के इस कथन से प्रमाणित मिलता हैं। “शासकीय स्तर पर गोरखाली भाषा के लिए नेपाली नाम का प्रयोग 1932 के बाद हुआ है।”[22] अर्थात इस कथन कर आधार पर कह सकते है कि नेपाली भाषा के लिए गोर्खा भाषा कहना अधिक सटीक माना जायेगा।

इस प्रकार नेपाली भाषा के इन तमाम उद्भव-विकास के बिन्दुओं में नेपाली भाषा की उत्पत्ति भारोपीय एवं शौरसेनी होते हुए खस ,गोर्खा और नेपाल भाषा का यात्रा तय करता है जिससे यह कहां जा सकता है कि नेपाली भाषा भी परिवर्तनशील की प्रक्रिया में है जो मानव समाज के विकास के साथ-साथ निरंतर आगे बढ़ती चली आ रही है।

निष्कर्ष :

अतः जब हम नेपाली समाज का सामान्य परिचय देखते हैं तो पाते हैं कि यह समाज विविध जातियों, रीति-रिवाज, खान-पान, संस्कृतियों, परम्पराओं और जीवन-शैलियों का समन्वय-स्वरूप झलकता है। इसी सामाजिक एवं सांस्कृतिक विविधता के बीच नेपाली भाषा का उद्भव हुआ, और समय के साथ यह भाषा निरंतर विकास की राह पर चल रही है, जिसे अनेक विद्वानों के मतों से प्रमाणित माना जाता है। विभिन्न राजनीतिक परिवर्तनों, सांस्कृतिक संपर्कों, भौगोलिक परिस्थितियों तथा सामाजिक बदलावों का प्रभाव इसकी शब्द-संपदा, ध्वनि-प्रणाली आदि पर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है, जैसे खस, गोर्खा, नेपाली जैसे शब्दों से इसकी विविध जड़ें उभरती हैं। इस प्रकार आज नेपाली भाषा केवल संचार का माध्यम नहीं, बल्कि नेपाली समाज की सांस्कृतिक पहचान का प्रमुख आधार है। इसलिए समाज की सांस्कृतिक परंपराओं और भाषा की मौलिकता को संरक्षित रखना अत्यंत आवश्यक है। अंततः कहा जा सकता है कि नेपाली समाज और नेपाली भाषा एक-दूसरे के पूरक हैं, और दोनों मिलकर उस राष्ट्र की सांस्कृतिक चेतना तथा ऐतिहासिक निरंतरता को मजबूती प्रदान करते हैं।

संदर्भ सूची:

---

[1] बिर्ख खडका डुवर्सेली,नेपाली साहित्य विमर्श, पृ. 23

[2] रमेश पोखरियाल 'निशंक' एक दिन नेपाल में, पृ. 65

[3] वही, पृ. 67

[4] वही, पृ. 67,68

[5] वही, पृ. 76,77

[6] डॉ.हेतु भरद्वाज, डॉ.रमेश रावत, हिंदी भाषा उद्भव और विकास, पृ. 1

[7] आचार्य देवेन्द्रनाथ शर्मा, दीप्ती शर्मा, भाषाविज्ञान की भूमिका, पृ. 20

[8] वही, पृ.21

[9] वही, पृ. 22

[10] वही, पृ. 19

[11] बिर्ख खडका डुवर्सेली, नेपाली साहित्य विमर्श, पृ. 70,71

[12] वही, पृ .68

[13] वही, पृ. 69

[14] वही, पृ. 69

[15] वही, पृ. 69

[16] वही, पृ. 70

[17] वही, पृ. 70

[18] चूडामणि , भासविज्ञान, पृ. 163

[19] बिर्ख खडका डुवर्सेली, नेपाली साहित्य विमर्श, पृ. 68

[20] वही, पृ.,68

[21] डॉ.मणिकुमार शर्मा, गर्खाभाषानाम(एक समीक्षात्मक दृष्टि) भारतीय परिप्रेक्ष्यमा , पृ.401

[22] वही, पृ. 401

द्वितीय अध्याय

लोककथा : स्वरूप विवेचन

(क) लोककथा : परिभाषा और स्वरूप

(ख) लोककथा : वर्गीकरण

द्वितीय अध्याय

लोककथा : स्वरूप विवेचन

क. लोककथा : परिभाषा और स्वरूप

लोक-कथा को लोक साहित्य की प्रमुख विधा के रूप में देखा जाता सकता है। अतः इस विधा या लोक साहित्य को समझने से पहले 'लोक' शब्द की सरंचना को समझना अति आवश्यक है। 'लोक' शब्द किसी भावुकता या दैनिक पूर्वाग्रहों से निर्मित कोई सामाजिक-मानवीय विमर्श या प्रलाप नहीं है; बल्कि इसकी उपस्थिति उतनी ही प्राचीन है, जितना की मनुष्य स्वयं। 'लोक' शब्द संस्कृत धातु 'लुक्' से बना है, जिसका अर्थ है- देखना, जानना या लोगों का समूह। 'लोक' शब्द को और अधिक स्पष्ट करने के लिए उनसे संबंधित विभिन्न विद्ववानों द्वारा दी गयी की परिभाषाओं को निम्नलिखित रूप में देख सकते हैं।

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने लोक के संबंध में अपने विचार प्रकट करते हुए लिखा है कि ''लोक शब्द का अर्थ जन-पद या 'ग्राम्य' नहीं है; बल्कि नगरों और गाँवों में फैली हुई वह समूची जनता है जिसके व्यवहारिक ज्ञान का आधार पोथियाँ नहीं है। ये लोग नगर में परिष्कृत, रुचि सम्पन्न तथा संस्कृत समझे जाने वाले लोगों की अपेक्षा अधिक सरल और अकृत्रिम जीवन के अभ्यस्त होते हैं और परिष्कृत रुचि वाले लोगों की समूची विलासिता और सुकुमारिता को जीवित रखने के लिए जो भी वस्तुयें आवश्यक होती है उनको उत्पन्न करते हैं।''[1]

डॉ. श्याम परमार के अनुसार ''हिंदी का 'लोक' शब्द 'फोक' का पर्यायवाची है। 'जन' या 'ग्राम' यद्यपि फोक के अर्थ में प्रयुक्त होते हैं। तथापि अपने सीमित क्षेत्र के कारण उन्हें लोक की

व्यापकता के अनुरूप नहीं मानना चाहिए। जन, प्राचीन शब्द है। संस्कृत एवं पाली ग्रंथों में मानव-समाज का बोध जन से ही कराया गया है। इस दृष्टि से जन और लोग में पर्याप्त समानता है; परंतु प्रयोग और परंपरा के प्रचार में आधुनिक फोक की अनुरूपता के लिए लोक ही अधिक उपयुक्त एवं प्रतिबिम्बात्मक है। केवल इतना ही नहीं पूर्व संस्कारों के कारण फोक से कहीं अधिक विशाल स्तर को स्पर्श करता है।"[2] इसी श्रंखला में पाश्चात्य लोक साहित्य के लेखक प्रो. एलेन डंड्स की मान्यता है- "लोक शब्द से तात्पर्य मनुष्यों के किसी भी ऐसे समूह और समाज से हो सकता है जिसमें समानता का कोई एक आधार हो और यह समानता किसी व्यवसाय, भाषा, अर्थ अथवा परम्परा की हो सकती है।"[3]

"The term folk can refer to any group of people who share at least one common factor, it does not matter occupation language or religion but what is important is group formed for whatever reason will have some tradition which it calls its own." अतः इन कथनों से यह सिद्ध होता है कि 'लोक' शब्द अत्यंत प्राचीन है और इनका उल्लेख प्राचीन साहित्य ग्रंथों में भी मिलता है।

लोक और साहित्य का संबंध माँ और संतान की तरह होता है अर्थात् 'लोक' साहित्य को जन्म देता है और साहित्य 'लोक' को पहचान एवं अभिव्यक्ति प्रदान करता है। इस प्रकार लोक और साहित्य किसी भी संस्कृति की आत्मा को जीवित रखने का कार्य करते हैं।

डॉ. रवीन्द्र भ्रमर के अनुसार "लोक साहित्य लोक मानस की सहज और स्वाभाविक अभिव्यक्ति है। यह बहुधा अलिखित ही रहता है और अपनी मौलिक परंपरा द्वारा एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक आगे बढ़ता रहता है। इस साहित्य के रचयिता का नाम प्रायः अज्ञात रहता है। लोक का वाणी जो कुछ कहता सुनता है, उसे समूह की वाणी बनाकर और समूह में घुलमिलकर ही कहता है।

संभवतःलोक साहित्य लोक संस्कृति का वास्तविक प्रतिबिंब भी होता है। अभिजात भाषा, शात्रीय रचना पद्धति और व्याकरणिक नियमों से मुक्त रहता है। लोक भाषा के माध्यम से लोक-चिंता की अकृत्रिम अभिव्यति लोक साहित्य की सबसे बड़ी विशेषता है।"[4]

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी लोकबोध को एक नया ही आयाम देते हुए कहते हैं- "सच पूछा जाय तो कुछ थोड़े अपवादों को छोड़कर सम्पूर्ण देशी भाषा के साहित्य को लोक-साहित्य के अंतर्गत घसीटा जा सकता सकता है।"[5]

इसी संदर्भ में लोक साहित्य के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण योगदान देने वाले डॉ.कृष्णदेव उपाध्याय लिखते है कि "लोक-साहित्य में जनजीवन का जितना सच्चा और स्वाभविक वर्णन उपलब्ध होता है उतना अन्यत्र नहीं। सच तो यह है कि यदि किसी समाज का वास्तविक चित्र देखना अभीष्ट हो तो इसके साहित्य का अध्ययन करना चाहिए। इन लोकगीतों, गाथाओं और कथाओं में मनुष्य के रहन-सहन,आचार-विचार और रीति-रिवाजों का सच्चा चित्र देखने को मिलता है।"[6] अर्थात् मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। जिसका विकास सामाजिक परिवेश में ही होता है तथा अपने व्यक्तित्व का निर्माण करता है। यहां व्यक्तित्व के निर्माण से तात्पर्य व्यक्ति के चरित्र के विकास से है तथा व्यक्ति जिस तरह के समाज में रहता हैं, उसी समाज का प्रभाव उसके विचारों एवं संस्कारों में झलकता है। कृष्णदेव उपाध्याय का यह कथन इसकी पुष्टि करता है- "साधारण जनता जिस शब्दों में गाती है, रोती है, हँसतीं है, खेलती है उन सबको लोक साहित्य के अंतर्गत रखा जा सकता है।"[7]

लोक साहित्य में किसी एक लेखक या रचनाकार की कृति नहीं होती ,बल्कि यह सामूहिक रूप से समाज द्वारा सृजित और संरक्षित होता है। इसे मौखिक परंपरा के माध्यम से पीढ़ी- दर-पीढ़ी आगें बढ़ाया जाता है। इस दृष्टि से लोक- साहित्य का क्षेत्र बहुत विस्तृत हो जाता है जो कुछ इस प्रकार है–

1. लोककथाएँ : लोककथाएँ मौखिक रूप से प्रचलित कथाएँ जो लोक विश्वास, मान्यताएँ और मनोरंजन आदि के साथ-साथ नैतिक शिक्षा भी देती है जैसे– पंचतंत्र, जातक कथाएँ, वीर, कथाएँ, दन्त्य कथाएँ आदि।

2. लोकगीत: यह श्रव्य परम्परा का महत्वपूर्ण भाग है जन्म, विवाह, फसल कटाई, त्योहारों आदि अवसरों पर गाए जाने वाले गीत जैसे–सोहर, विवाह गीत, बाहरमासा, फसल गीत भजन आदि।

3. लोकनाटक: लोकनाटक जनजीवन में प्रचलित नाटक और प्रदर्शन कलाएँ जैसे, नौटंगी, रामलीला, रासलीला, स्वांग।

4. कहावतें और मुहावरे: ये समाज की बुद्धिमत्ता और अनुभवजन्य ज्ञान को संक्षिप्त वसारगर्भित रूप में प्रस्तुत करते हैं।

5. लोकगाथाएँ: इस के अंतर्गत वीरता, प्रेम और संघर्ष से जुड़ीं गाथाएँ आती है जैसे- हीर-राँझा, आल्हा-ऊदल की गाथा।

6. धार्मिक और भक्ति साहित्य: लोक साहित्य में धार्मिक भजन और कथाओं का विशेष स्थान है। जैसे- कबीर, मीरा, सूरदास एवं तुलसीदास के पद।

इस प्रकार लोक साहित्य समाज की मौखिक परंपराओं, जैसे लोककथाओं, लोकगीतों, मुहावरे, कहावते, किस्से-कहानियाँ, धार्मिक आख्यान, नृत्य और नाटक आदि के रूप को अपने अन्दर समेटे रखता है। यह मुख्य रूप से ग्रामीण और सामूहिक जीवन से जुड़ा होता है जिसमें जीवन मूल्यों का प्रतिबिंब दिखाई पड़ता है।

लोक साहित्य के क्षेत्र में 'लोककथा' एक विशद विधा है। इस विधा में जितना काम हुआ है शायद ही लोक साहित्य के किसी दूसरी विधा में हुआ होगा। 'लोककथा' शब्द दो शब्दों से मिलकर

बना है- 'लोक' और 'कथा'। कथा में लोक शब्द जुड़ जाने से वह लोककथा की संज्ञा प्राप्त करता है जिससे एक विशेष अर्थ 'जनकथा' का बोध होता है।

'लोक कथा या जनकथा' का उद्भव उतन ही प्राचीन है जितना की मनुष्य का इतिहास। डॉ. सत्येन्द्र के मतानुसार "अनादि अतीत में ही मनुष्य के जन्म के साथ ही उसमें आश्चर्य, भय और रति का उदय हुआ। ये मानवीय अस्तित्व के अभिन्न तत्त्व थे। इन्ही तीन मौलिक भावावेगी प्रेरणाओं से जहाँ मानव ने अपना विकास किया और मूल आदिम मानस का बीजवपन कर उसमें अंकुरण किया, वहीं उन कल्पनाओं को भी जन्म दिया, जिनसे कहानी का निर्माण होता है।"[8]

श्रीचन्द्र जैन का कथन इस सम्बंध में और अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है- "लोक-कथाएँ इस विराट विश्व में क्षीर-नवीनतम समाई हुई है। इसका जन्म संसार की उत्पति के साथ ही हुआ है तथा इनकी परिधि दुनिया की सीमा के साथ-साथ आदिकाल से बढ़ती जा रही है। जिस प्रकार सूर्य की किरणें सर्वत्र व्याप्त रहती है, उसी प्रकार लोक का कोई भी ऐसा भाग नहीं है जिसके प्रांगण में ये कथाएँ विद्यामान न हों।"[9]

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवदी ने भी लोक कथाओं के महत्व को इंगित करते हुए लिखते हैं कि "लोक- कथाओं का अध्ययन कई दृष्टियों से बहुत महत्त्वपूर्ण है। यद्यपि इस शब्द के प्रयोग के बारे में विद्वानों में मतभेद रहा है, तथापि लोक-कथा शब्द मौटे तौर पर लोक प्रचलित उन कथानकों के लिए व्यवहृत होता रहा है, जो मौखिक या लिखित परम्परा से क्रमश: एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को प्राप्त हो रहे हैं।"[10]

लोक-कथाओं की सटीक परिभाषा को लेकर कई विद्वानों में मतभेद रहा है इसी संदर्भ में डॉ. सत्येद्र ने लिखा है कि "लोक-कथा की सुनिक्षित परिभाषा देने का कोई प्रयास नहीं किया गया है।

सामान्यतः इस शब्द के अंतर्गत समस्त परम्परागत आख्यानों और उनके विभेदों को स्वीकृत किया गया है। लोक-कथा की विशिष्टता यह कि यह परम्परागत होती है। क्रमगत होने के कारण लोक-कथा क्रमशः एक मानव से दुसरे मानव को उपलबध होती है, फलतः इस में मौलिकता का अभाव रहता है। यह परम्परा (अनुश्रूति) विशुद्ध रूप में मौखिक भी हो सकती है, लोक-कहानी सुनी जाती है तथा बार-बार दोहराई जाती है, कभी-कभी कंठस्थ की गई लोक-कथा में नूतन कथक्क्ड़ के द्वारा कुछ परिवर्द्धन एवं परिवर्तन भी कर दिया जाता है।"[11] अर्थात् लोक-कथा समाज के विभिन्न सामाजिक पहलुओं जैसे परंपरागत ज्ञान, विचारधाराए, समस्याएं एवं प्रकृति आदि को प्रतिबिंबित करता है।

डॉ सत्येन्द्र के अनुसार "लोक-कथा की स्पष्ट परिभाषा न देकर विद्वानों ने इसकी विशेषताओं का अधिक उल्लेख किया है।"[12] जिसे कृष्णा उपाध्याय का यह कथन सिद्ध करता है "लोक-कथाओं का सम्यक् अनुसन्धान करने पर उनकी अनेक विशेषताओं का पता चलता है। इन विशिष्टताओं को निम्नलिखित आठ भागों में विभक्त कर सकते है। (1) प्रेम का अभिन्न पुट (2) अश्लील श्रृंगार का अभाव (3) मनुष्य की मूल प्रवृत्तियों से निरन्तर साहचर्य (4) मंगल-कामना की भावना (5) सुख और संयोग में कथाओं का अन्त (6) रहस्य, रोमांच एवं अलौकिकता की प्रधानता (7) उत्सुकता की भावना (8) वर्णन की स्वाभाविकता।"[13] इन विशेषताओं से यह आशय है कि लोककथाएँ केवल मनोरंजन ही नहीं करती; बल्कि समाज के लोक विश्वास तथा मान्यताएँ भी दर्शाती है अर्थात् ये मौखिक परम्परा के माध्यम से पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ती रहती हैं और समाज में सांस्कृतिक, नैतिक एवं ऐतिहासिक मूल्य आदि को सहेजने का काम करती है।

लोक-कथाओं का वर्णन प्रत्यक्ष रूप से ऋग्वेद में भी दिखाई पड़ता है जो कुछ इस प्रकार है- "ऋग्वेद में ऋषि शुन: शेष का प्रसिद्ध आख्यान उपलब्ध होता है।"[14] "अपाला अत्रेयी के आदर्श नारी चरित्र का चित्रण हमें सर्वप्रथम इसी वेद में देखने को मिलता है।"[15] "च्यवन भार्गव और सुकन्या मानवी

की कथा भी बड़ी सुंदर रीति भी इसमें वर्णित है।"[16] ऋग्वेद में लोक कथाएँ सीधे रूप में नहीं बल्कि मिथक, प्रतीक देवी कथाओं और रोपकों कथाओं के रूप में उपस्थित है। इन कथाओं ने आगे चलकर लोक साहित्य में रामायण, महाभारत और पुराणों के लिए आधार के रूप में काम किया है।

वहीं नेपाली साहित्य जगत के लेखक खेमराज नेपाल के अनुसार "लोक कथाएँ मनुष्यों, देवताओं, राक्षसों, परियों, अप्सराओं, भूत-प्रेत, जानवरों, पक्षियों, घास-फूस, पत्तों, नदियों, झरनों पहाड़ों, जड़ों बेहोशी, जादू-टोना आदि की लीलाओं से संबधित रोमांचक और आख्यान तथा उपाख्यान को ही लोककथा कहा जाता है जो युगों से मैखिक परंपरा पर निर्भर है।"[17] अर्थात् कहने का तात्पर्य यह है कि लोक कथाएँ केवल मनुष्य की ही नहीं बल्कि प्रकृति, अलौकिक, शक्तियों और कल्पनाओं से भी जुड़ीं होती है, जो हमारी संस्कृति और लोक जीवन को दर्शाती हैं। जिसे डॉ. सत्येद्र के इस कथन देख सकते है- "लोक-कथाएँ नाना रूपों में लोक-जीवन को लिए हुए हैं। आदिकाल से वे हमारे साथ है। देश में सर्वत्र उसका निर्वाध निवास है। मानव के सुखदुःख, प्रीत-श्रृंगार, वीर-भाव और बैर इन सब ने खाद बनकर लोक-कथाओं को पुष्ट किया हैं। रहन-सहन, रीति-रिवाज, धार्मिक-विश्वास, पूजा-उपासना, इस सबसे कहानी का ठाठ बनता और बदलता रहता है। कहानी मनुष्य के लिए अपूर्ण विश्रान्ति का साधन है।"[18] इसका आशय है कि लोक कथाएँ मनुष्य के अनुभवों, भावनाओं और जीवन मूल्य को अभिव्यक्त करती हैं। अतः एक प्रकार से लोक कथाएँ मानव को ऊर्जा देती हैं इसलिए वे विश्रान्ति का साधन मानी जाती हैं। यहीं कारण है कि डॉ. सत्येद्र लोक गीत की तुलना लोक कथाओं से करते हुए लोक कथा को अधिक महत्व देते है- "लोक-कथा लोक-साहित्य का एक प्रमुख अंग है। यह भी कहना अनुचित न होगा कि लोक-गीत की अपेक्षा लोक-कथा की व्यापकता अधिक है । ऐसे हजारों गीत हैं जिसमें कथाएँ गुम्फित रहती है।"[19]

इस प्रकार लोक कथाओं कि अनेक परिभाषाओं को समझने के बाद आगे हम लोक कथाओं के स्वरूप को विस्तार से समझने का प्रयास करेगें। लोक साहित्य में किसी भी गद्य विधा को समझना हो तो उसके स्वरूप को समझना अति आवश्यक होता है, क्योंकि कोई भी विधा के स्वरूप को जाने बिना इसके ठीक-ठीक व्याख्या नहीं कर सकते। लोक कथाओं का अध्ययन करना साहित्यिक दृष्टि से नहीं; बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टि से भी अत्यन्य महत्वपूर्ण है।

I. लोककथा के तत्त्व: साहित्य की प्रत्येक विधा की सरंचना में कुछ तत्वों का योग होता है जो रचना को प्रमाणिक बनाने में सहायक होते है। लोक कथाओं में भी कुछ ऐसे समान्य तत्त्व है जैसे कथानक, पात्र, संवाद, भाषा-शैली आदि; परन्तु श्रीचन्द्र जैन ने इसे साहित्यिक विधाओं को भिन्न बताते हुए लिखा है- "जिस तरह लोक कवि साहित्यिक कवि से भिन्न हैं। जिन्हें हम एक नहीं मान सकते हैं, उसी प्रकार लोक-कहानी साहित्यिक कहानी में बहुत अंतर है। लोक-कथा के कतिपय तत्त्व आज की साहित्यिक कहानी में पाए जा रहे है अथवा यह कहना भी गलत नहीं होगा कि कई कहानियाँ लोक कथा से प्रभावित होती चली आ चुकी है। लोक-कहानी का लोक-तत्त्व आज की कहानी में विशेषतः मुखर है।"[20] अर्थात् यहाँ कहानी से तात्पर्य लोक कथाओं से है जो साहित्यिक कहानी से प्रभावित है।

II. मौखिक परम्परा : मौखिक शब्द का अर्थ ऊपर दी गई परिभाषाओं से स्पष्ट है। जहाँ किसी भी गीत और कथाओं को बोलकर या गाकर एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक आगे बढ़ाया जाये तथा बिना लिखित रूप भी संस्कृतियों एवं इतिहास को सुरक्षित रह कर आगे बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई जाएं वहीं मौखिक परम्परा कहलाती हैं। जिसे यह कथन सिद्ध करता है "लोक कथाएँ लोक संस्कृति की संरक्षिका है। इसमें एक ओर लोक-मानस विविध रूपों में प्रत्तिबिम्बित होता है ओर दूसरी लोक संस्कृति के समस्त उपकरण मुखरित हुए है। वस्तुतःकिसी प्रदेश की सांस्कृतिक चेतना के अध्ययनार्थ

लोक-कथाओं को अनुशीलन अनिवार्य माना गया है।"[21] अर्थात् लोक कथाएँ ऐसी कथाएँ होती हैं जिसमें समाज की मान्यताओं, विश्वास एवं मूल्य तथा अनुभवों का समावेश होता है।

III. क्षेत्र एवं भाषा का प्रभाव : लोक साहित्य की रचना उसके क्षेत्र एवं भाषा के प्रभाव से अछूती नहीं रह सकती। ठीक इसी प्रकार लोक कथाएँ उस विशेष क्षेत्र सामाजिक, ऐतिहासिक, भौगोलिक और सांस्कृतिक परिवेशों से जुड़ीं होती हैं, जैसे उदाहरण के तौर पर नेपाली लोक कथा संग्रह गोलसिमल के 'रोँगीत र रोँगनू' कथा के इस कथन से समझ सकते है "प्राकृतिक संसाधनों और समृद्ध जल स्रोत से भरपूर सिक्किम के दो बड़े और लम्बें-लम्बें जल स्रोत पहाड़ियों के बीच बसे हुए हैं। इन दो जलस्रोत के नाम रोंगीत (रंगगित) और रोंगनु (टीस्टा) था। रोंगनु (टीस्टा) नदी ने पहुनरी, हिमनद, जेमू हीमनद, छोल्हामु सरोवर, गुरुदोगर सरोवर, आदि सभी स्थानों के जलस्रोत को अपने अन्दर समेटे हुए बैठा था।"[22] इस लोक कथा में प्राकृतिक संसाधनों के रूप में सिक्किम राज्य में प्रचलित नदियों के का वर्णन किया गया है जिसमें क्षेत्र प्रभाव के साथ-साथ नदियों के नामों में भी भाषाई प्रभाव झलकता है।

IV. लोककथा के प्रकार : लोक कथाएँ संस्कृति की धरोहर होती है। अगर हम भारतीय संस्कृति की बात करे तो यहाँ धर्म, भाषा, खान-पान, वेशभूषा, रीति-रिवाजों में विविधता होते हुए भी एक संगठित संस्कृति का बोध कराती है। जो भारत को 'विविधता में एकता' वाली संस्कृति का रूप प्रदान करती है। ठीक इसी प्रकार लोककथाओं के अंतर्गत अनेक प्रकार के कथाएँ आती है जहाँ विभिन्न

क्षेत्रों, जातियों, पौराणिक, अलौकिक रूपों आदि का अधिक वर्णन होता है। जो केवल मनोरंजन नहीं; बल्कि समाज की संस्कृति, परम्परा आदि का मार्मिक चित्रण प्रस्तुत करती है। जो कुछ इस प्रकार है–

1. पौराणिक लोक कथाएँ : पौराणिक लोक कथाओं में किंवदंती से संबंधित या उसकी प्रकृति का वर्णन किया जाता है। जैसे की नेपाली लोक कथा संग्रह गोलसिमल के सुम्निमा और पारुहाङ की कथा के इस कथन में देख सकते है- "किरात समाज में पारुहाङ और सुम्निमा को शिव, पार्वती का प्रतीक माना जाता है तथा आज भी किरात समाज में यह प्रचलित एवं लोक विश्वास है कि परुहग और सुम्निम, शिव पार्वती के रूप में धरती पर जन्में है। किरात राई समाज में सुम्निमा को प्रकृतिपुत्री मानी गई है और साथ ही इस जोड़े की पूजा अर्चना भी की जाती हैं। इस आस्था और विश्वास के प्रतिरूप के कारण लेक्सेपमा में स्थित शिव मंदिर के प्रवेशद्वार की दिवार पर सुम्निमा और परुहग की चित्र बना हुआ मिलता हैं।"[23] अर्थात् सुम्निमा और पारुहाङ नमक पात्र के माध्यम से स्क्किम के किरात राई समाज में यह प्रेम-प्रसंग बहुत प्रसिद्ध है जिसमें पौराणिक मान्यताएं दिखाई पड़ती है तथा आज भी लेक्सेप में स्थिर शिव मंदिर के प्रवेशद्वार के सामने सुम्निमा और पारुहाङ की तस्वीर लगी हुई है। जिन्हें वहाँ के स्थानीय लोग उन्हें शिव-पार्वती का प्रतीक मानते है। जिससे पौराणिक लोक कथा एवं किंवदंती से संबंधित मान सकते है।

2. पशु पक्षी की लोक-कथा: इस प्रकार की कथाओं में पशु- पक्षियों को पात्र बनाकर नैतिक मूल्यों का संदेश देने का प्रयास किया जाता है। स्टैण्डर्ड डिक्शनरी ऑफ फोकलोर में फेबल की परिभाषा इस प्रकार दी गई है- "फेबिल एक लघु पशु कथा है जिसमें फेबिल द्वारा सदाचार की शिक्षा दी जाती है। इसके पात्र पशु होते है, जो मानव-वाणी बोलते हैं एवं मानवत् आचरण करते हुए अपनी पाशविक सहज प्रवृतियों को प्रदर्शित करते रहते हैं। इन कथाओं का उदेश्य सदाचार न्याय निति आदि विषयक शिक्षाएँ देना हैं।"[24]

3. प्रेम लोक-कथाएँ : लोक कथाओं में प्रेम की कोई सीमा नहीं होती है। यहाँ स्त्री-पुरुष, पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, नदी-नाले, फुल-पत्ती आदि के बीच प्रेम दिखाया जाता है तथा इन प्रतीकों के माध्यम से प्रेम में आने वाले कठिनायों, समर्पण और त्याग का वर्णन भी किया गया है। उदाहरण के तौर पर डॉ सत्येन्द्र की यह कथन देख सकते है- "लोक-कथाओं में निरुपित प्रेम तत्त्व के सम्बन्ध में यह विशेषत: उल्लेखित है कि यहाँ पशु-पक्षी, पादप-पुष्पादी प्रेम की विशद अभिव्यंजना में संलग्न होते दिखाई देते हैं। इस प्रेम की चर्चा के वक्ता एवं श्रोता कई कहानियों में पशु-पक्षी हैं एवं पुष्प भी है। 'केतकी की कहानी', 'चमेली की कथा', 'लाल गुलाब का फूल' ऐसी ही रसीली कथाएँ है। किसी कहानी में तोता किसी प्रेमिका के पत्र को लेकर प्रेमी के पास जाता है तो कोई मैना अपनी रति व्यथा को सुगना (शुक) से कहते लगती है। इस संदर्भ में पशु-पक्षियों की कथाएँ उल्लेखनीय है। 'धरती और आसमान की शादी' में जो प्रेम की कसम बताई गई है, वह प्राकृतिक उपकरणों की प्रेम व्यथा को प्रकट करती है।"[25]

4. धर्म लोक-कथाएँ: धर्म पर आधारित अधिकतर लोक कथाएँ मिथक मानी जाती है तथा धार्मिक लोक कथाओं के बारे में कहा जाता है कि ये किसी युग में घटित होती है और समाज इसके देवी-देवताओं, उदारता एवं वीरों और धार्मिक विश्वासों आदि को स्पष्ट करती है। अर्थात् धार्मिक लोक कथाओं का उद्देश्य किसी भी धर्म तथ्य को स्पष्ट करना होता है। ये कथाएँ कई प्रकार के होते है जिन्हें हम डॉ. सत्येन्द्र के इस विचार में देख सकते हैं- "धर्म गाथाएँ चार प्रकार की हो सकती है– 1. विश्व निर्माण की व्याख्या करने वाली। 2. प्रकृति के इतिहास की विशेषताओं की व्याख्या करने वाली। 3. मानवीय सभ्यता के मूल की व्याख्या करने वाला। 4.समाज तथा धार्मिक प्रथाओं के मूल अथवा पूजा के इष्ट के स्वभाव तथा इतिहास की व्याख्या करने वाली।"[26]

5. लोक कथाओं में मानवीकरण : 'लोक कथाएँ' लोक साहित्य का एक ऐसी विधा है जहाँ मानवीकरण कूट- कूट के भरा होता है। लोक कथाओं में मनुष्यों के गुणों एवं भावनाओं को गैर- मनुष्यों

जैसे पशु-पक्षी, प्रकृति, देवी-देवता और वस्तुओं के माध्यम से कथाओं में जीवंतता और समझ पैदा करती है। जो कथा को समझने में आसानी प्रदान करती है। निर्जीव वस्तुओं के व्यवहार को मानवीय समझ और अनुभव से जोड़ते है जैसे- आक के 'रोंगनु और रोंगीत' की कथा वर्णित है " रोंगनु और रोंगीत संसार के सबसे महान प्रेमी जोड़ा था लेकिन दोनों एक दुसरे से दूर थे। एक का उद्गम स्थल उत्तरी हिमालय की गोद में था तो दुसरे का पश्चिम हिमालय की गोद में इसलिए दोनों का मिलना असम्भव सा था। दोनों न मिल पाने के करण हमेशा दु:खी रहते थे। कभी- कभी रोंगनु दूत के रूप में साँप को भेज कर और रोंगीत दूत के रूप में पक्षी को भेज कर एक दुसरे की हाल-चाल पूछ लिया करते थे और एक दिन दोनों प्रेमियों ने एक होने का निर्णय लिया और दो प्रेमी जोड़े एक होकर जन्म-जन्म के साथ बहने की कसम लेना चाहते है।"[27] अर्थात् यहाँ दो नदियों का मानवीकरण करके उसके बीच प्रेम-प्रसंग का वर्णन किया गया है जो स्थानी लोक कथा के रूप में प्रसिद्ध है।

6. लोक-कथाओं में सौंदर्य बोध: सौंदर्य शब्द को कोई निश्चित रूप में परिभाषित करना कठिन है क्योंकि सुन्दरता का आयाम सब की दृष्टि में अलग-अलग हो सकते है यह पूरी तरह से देखने वाले व्यक्ति पर आधारित माना जाता है। लोक कथाओं में सौंदर्य बोध केवल कहने और सुनने में ही सीमित नहीं हैं; बल्कि यह एक ऐसा पहलू है जो समाज संस्कृति, संवेदना और लोकमानस के मूल्य रूपी सौंदर्य को प्रस्तुत करती हैं। लोककथा में सौंदर्य का बोध स्वच्छ रूप तथा जीवन के अनुभवों से उत्पन्न होता है पाश्चात्य विद्वान प्लेटो के अनुसार " मनुष्य की गति सुंदर वस्तुओं से सुंदर मनोभावों की ओर, सुंदर मनोभावों से सुंदर जीवन की ओर और ललित जीवन से परिपूर्ण सुंदरता की ओर बढ़ती है।"[28] वहीं जमीरमन का विश्वास है कि "सुंदरता प्रायः मदिरा से भी अधिक बुरी हैं, क्योंकि यह सौन्दर्यता और दशर्क दोनों को मन्दोमत्त कर देती है।"[29] चाल्र्स रीड के शब्दों में – "सौंदर्य शक्ति है और मुस्कान उसकी कृपाण है।"[30] सौंदर्य के सम्बन्ध में इन विचारों देखते हुए यह कह सहते है कि संसार में जितने

भी जीवित प्राणी है सभी में सौंदर्य प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में विद्यमान रहता है और यह कहना भी गलत नहीं होगा की सौंदर्य ही है जो इस पुरे जगत में मानव, प्रकृति एवं वस्तुओं आदि के सौंदर्य को बचाए रखा है चाहे वो लोककथा के माध्यम से हो या साहित्य के अन्य विधाओं के माध्यम से हो। यह अभावों से परिचित नहीं होने देता। राधिकारमण प्रसाद सिंह के मतानुसार "हूस्न की रविश बदलती है, हूस्न की कशिश नहीं बदलती। रस के लिबास बदलते है, रस की प्यास नहीं बदलती। इश्क की राह बदलती है, इश्क की चाह नहीं बदलती है और शायरी के टेकनीक लाख बदलें,शायरी की मांग नहीं बदलती।"[31] कहने का तात्पर्यं यह है कि समय के साथ सौंदर्य को देखने का ढंग बदलता रहता है; परन्तु सौंदर्य की प्रति आकर्षण वहीं रहता है सौंदर्य के बदलते ढंग को स्वीकार हुए करते हुए डॉ. सत्येन्द्र स्पष्ट करते है कि "लोक कथाओं में अंकित सौंन्दर्य चिरंतन शिवत्व की कल्पना को साकार बनाता है इसमें उदात्त रेखाओं का बाहुल्य है और रंगों की विविध दमक में मानवीय आकर्षण का विशुद्ध प्रलोभन है। आभूषणों के उल्लेख से सौन्दर्यानुभूति धूमिल नहीं हो पाई है रमणीयता के इस आकर्षण में विविधि प्रदेशों की रम्य मान्यताएँ भी व्यंजित हुई है।"[32] लोक कथाओं में सौंदर्य का चित्रण अनन्त और दिव्य भावनाओं को जीवंत करता है। इसमें आदर्श भावनाएँ, कल्पनाएँ और मानवीय आकर्षण का सुंदर मिश्रण होता है। यह क्षेत्रीय परंपराओं को भी उजागर करता है जैसे कि सुनकेशरी कथा में दिखाई पड़ता है। इस प्रकार की लोक कथाएँ परम्परा और आधुनिकता के बीच संतुलन को बनाएं रखने का प्रयास करती है। लोक कथाओं का स्वरूप जनमानस की भाषा भावनाओं एवं जीवन के अनुभवों से जुड़ा होता है इन में काल्पनिक पात्र के माध्यम से मनोरंजन के साथ-साथ सामाजिक मूल्य एवं लोक जीवन की झलक भी दिखाई पड़ती है जो समाज के आम जनता की आस्था, विश्वास, मान्यताएँ आदि पीढ़ी दर पीढ़ी मौखिक परम्परा के माध्यम से आगे बढ़ रहा है।

ख. लोककथा वर्गीकरण : लोक साहित्य में लोक-कथाओं का प्रमुख स्थान रहा है। यही कारण है कि ये कथाएँ चिर काल से ही मानव समाज में प्रचलित हैं। लोक-कथाओं की व्यापकता की बात करे तो इसकी शाखाओं का रूप इतना विस्तृत है कि इसे समेट पाना मुश्किल हो जाता है। इसलिए भी इसके वर्गीकरण की और अधिक आवश्कता हो जाती है। यह प्रक्रिया हमें कथाओं के बहूआयामी रूपों को समझने में मदद करती है। इस सम्बंध में विभिन्न विद्वानों के मत निम्नलिखित हैं -

लोक कथाओं के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण विद्वान् मानें जाने वाले डॉ.कृष्णदेव उपाध्याय ने वण्र्य विषय की दृष्टी से लोक-कथाओं का विभाजन निम्नलिखित छः वर्गो में किया है -

1. उपदेश-कथा
2. व्रत कथा
3. प्रेम कथा
4. मनोरंजन कथा
5. सामाजिक कथा
6. पौराणिक कथा।"[33]

उपदेश-कथा : कृष्णदेव उपाध्याय स्वयं इस वर्गीकरण के आधार को समझाते हुए लिखते है कि "लोक साहित्य में कथाएँ उपलब्ध होती है उनमें अधिकांश प्रथम वर्ग से ही सम्बन्ध रखती है। लोक कथाओं का प्रधान उद्देश्य उपदेशात्मक होता है। उपदेश की इस प्रवृत्ति को इन कथाओ की आत्मा समझनी चाहिए। पंचतंत्र तथा हितोपदेश की समस्त कथाएँ इसी कोटि के अंतर्गत आती है।"[34] यहाँ हितोपदेश से तात्पर्य वे कल्याणकारी कहानियाँ है जो उपदेशों से भरी रहती हैं।

व्रत कथा : व्रत कथाएँ किसी देवी-देवता, साधु-संत और पाप-पुण्य आदि पर आधारित होती है। इसमें भक्तों की श्रद्धा, तपस्या और विश्वास से फल की भी चर्चा होती है। "इन व्रत के सम्बन्ध में अनेक कहानियाँ प्रचलित है। व्रजमण्डल में सत्यनारायण तथा गणेश जी की कथा का बड़ा प्रचार है।"[35]

प्रेम कथा : प्रेम कथाओं में केवल मनुष्य ही नहीं बल्कि, प्रकृति एवं पशु-पक्षी आदि को आधार बनाकर प्रेम प्रस्तुत किया जाता है। जिसमें माँ का पुत्र के लिए वात्सल्यपूर्ण प्रेम होता है तो वही बहन भाई में प्रेम कितना अकृत्रिम होता है। पति-पत्नी का प्रेम दृढ़ और स्वाभाविक होता है अर्थात् सच्चा प्रेम, समाज की बंदिशों तथा पारिवारिक विरोध या भाग्य के विरोध के बावजूद निस्वार्थ प्रेम के रूप में उभरकर सामने आता है- "लोक-कथाओं में जो दाम्पत्य प्रेम उपलब्ध होता है वह नितान्त पवित्र और शुद्ध है, काम-वासना की उसमें गंध भी नहीं पायी जाती।"[36]

मनोरंजन कथा : इस प्रकार की लोककथाएँ जादू-टोना, अप्सराओं एवं परलौकिक आख्यानों पर आधारित होती है। जो मनोरंजन साथ-साथ नैतिक शिक्षा भी देती है यहीं कारण है की इन्हें बालक बड़े प्यार से सुनते है। जैसे- पंचत्रण आदि की कहानियाँ बच्चे बड़े चाव से सुनते है।

सामाजिक कथा: सामाजिक लोक कथाएँ समाज में प्रचलित रीति-रिवाज, मान्यताओं एवं परम्पराओं को दर्शाती हैं इन कथाओं में राजा के न्याय की कथा, बहु-विवाह तथा बाल-विवाह आदि का उल्लेख पाया जाता है। इस प्रकार की कथाओं को ही लोक कथाओं के श्रेणी में रखा जाता है।

पौराणिक कथा : पौराणिक लोक कथाओं के अंतर्गत उन कथाओं को रखा जाता है जो प्राचीन धार्मिक ग्रंथो, देवी-देवताओं, मिथक एवं लोक विश्वासों पर आधारित होती है। जैसे- रामायण, महाभारत, सत्य हरिश्चन्द्र की कथाएँ आदि पौराणिक कथाएँ समाज में बड़ी लोकप्रियता रही है।

इस प्रकार डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय ने लोककथाओं के विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए इस छ भेदों में वर्गीकृत किया है।

डॉ. सत्येन्द्र के अनुसार 'लोक' के गद्य साहित्य में चार दृष्टिकोण दिखाई पड़ता है जो कृष्णदेव उपध्याय के द्वारा उल्लिखित छ : श्रेनियों में किया जा सकता है। जैसे –

1.मनोरंजन अथवा मन-बहलाव का,

2.शिक्षा अथवा उपदेश का इसी के अंतर्गत व्रत-विषयक कहानियाँ भी रखी जा सकती हैं,

3.व्याख्या का, और

4.वाणी–विलास का।

इन चार दृष्टिकोण के आधार पर डॉ. सत्येन्द्र ने लोक कथाओं का वर्गीकरण कुछ इस प्रकार प्रस्तुत किया है

1. गाथाएँ
2. पशु-पक्षी सम्बंधित कथाएँ
3. परी की कथाएँ
4. विक्रम की कहानियाँ
5. बुझौबल संबंधी कहानियाँ
6. निरीक्षण गर्भित कहानियाँ
7. साधु-पीरों की कहानियाँ
8. कारण निर्देशक कहानियाँ"[37]

इस प्रकार गाथाओं के अंतर्गत धर्मगाथा, लोकगाथा एवं वीरगाथा की कथाएँ आती है। पशु-पक्षी सेसम्बंधित कथाएँ दो प्रकार की होती है, पहला- जिससे कोई न कोई शिक्षा दी जाती है तथा

दूसरी- जिसमें केवल मनोरंजन होता है। इसी तरह परियों की कथाओं को कई वर्गों में बाँटा जा सकता है। इनमें एक वर्ग वह है जो परियों से, अप्सराओं से, दिव्य कन्याओं और कुछ विद्याधारियों से सम्बंधित है। उदाहरण के तौर पर 'वेजान नगर की कहानी, सपना को प्रेम, पक्षीपशाक धारी राजकुमार1। वहीँ दूसरा वर्ग जिसमें दानवों से सम्बंध रखता हैं। तीसरे वर्ग में डायन, जादू और चमत्कारों की कहानियाँ आती है।

विक्रम की कहानियों में वीर नायक का चरित्र दिखाई पड़ता है जो दो प्रकार के होते है पहला इतिहास पुरुशाश्रित जिसमें 'वीर-विक्रमजीत' की कहानियाँ प्रधान मानी जाती है। वहीँ दूसरा अनैतिहासिक पुरुशाश्रित जिसमें किसी भी राजा के लड़के या अन्य व्यक्ति के पराक्रम की कथाएँ होती है।

इसी तरह बल से संबंधी कहानियों के भी दो रूप है। इसमें पहला वो है जिसमें कुछ समस्याओं तथा नीति की बातें तथा परीक्षण करने का उदेश्य होता है। तो वहीँ दूसरा समस्याएँ और पहेलियाँ शर्त के रूप में आता है। इन्हें हल कर देने पर विशेषता मिल जाती है। वहीं निरीक्षण गर्भित कहानियाँ स्वभाव, धर्म आदि से सम्बन्धित होती है अर्थात् इन कहानियों को चुटकुलों के रूप में भी देखा जा सकता है। साधु-पीरों की कथाओं में अनेक प्रकार के साधुओं, सिद्धों तथा पीरों के माध्यम से संकट-निवारण करने तथा पुत्र-धन आदि प्रदान करने के चमत्कारों का उल्लेख रहता है। वहीँ कारण निर्देशक कहानियों के अंतर्गत व्यापार का कारण प्रकट किया जाता है।

डॉ. कृष्णलाल हंस ने निमाड़ी लोक कथाओं को आधार बनाकर लोक कथाओं को आठ भागों में वर्गीकृत किया जो कुछ इस प्रकार है –

1.धर्मगाथाएँ

2.पशु-पक्षी सम्बन्धित कहानियाँ

3.परियों और अप्सराओं के सम्बन्धित कहानियाँ

4.जादू की कहानियाँ

5.वीरता विषयक कहानियाँ

6.साधु-फकीरों की कहानियाँ

7.एतिहासिक कहानियाँ और

8.विविध कहानियाँ"[38]

डॉ. कृष्णलाल हंस के अनुसार धर्मगाथाओं में देवी-देवताओं, व्रत, धर्म तथा चमत्कारों से जुड़े आख्यान प्रस्तुत किए जाते हैं। जो धर्म के प्रति आस्था उत्पन्न करते हैं। पशु-पक्षी से सम्बन्धित कहानियों में जैसे शेर, लोमड़ी, खरगोश, तोता, मोर आदि को पात्र बनाकर इनका मानव-सदृश रूप में प्रस्तुत किया जाता है। परियों और अप्सराओं से सम्बन्धित कहानियों को कृष्णलाल हंस ने कल्पनात्मक, रहस्यमयी आकर्षक और नैतिक शिक्षा देने वाली कहानियाँ मानी है। वहीं जादू की कहानियों में अलौकिक घटनाओं, जैसे- जादू-टोना परियों, राक्षस आदि की कथाएँ पाई जाती है। इस प्रकार की कथाएँ कल्पना और रोमांच से भरपूर होती है।

वीरता विषयक कहानियों में वीर योद्धाओं और राजाओं के बलिदान की कहानी होती है। ये कथाएँ वीरता और प्रेरणा का स्रोत मानी जाती है। साधु-फकीरों की कथाएँ मानव के प्रतीक के रूप में त्याग, शांति, धर्म आदि को दर्शाती है। वहीं एतिहासिक कहानियों में एतिहासिक घटनाओं व राजाओं के युद्धों का वर्णन किया जाता है- इनमें महाराणा प्रताप की कथाएँ, पृथ्वीराज चौहान की कथाएँ। अतः डॉ. कृष्णलाल हंस ने विविध कहानियों का तात्पर्य यह बताया है कि लोककथाएँ केवल मनोरंजन का साधन नहीं; बल्कि ये समाज, संस्कृति, परम्परा, प्रेम, धर्म आदि में मानव मुल्य दर्शाती है।

श्री मोहनकृष्णा दर ने वैज्ञानिक दृष्टिकोण से लोक-कथाओं का विभाजन इस प्रकार किया है–

1. "उपदेश-कथा
2. व्रत कथा
3. प्रेम कथा
4. मनोरंजन कथा
5. सामाजिक कथा
6. पौराणिक कथा।"[39]

श्री मोहनकृष्णा दर के द्वारा किया गया यह वर्गीकरण कृष्णादेव द्वारा किए गए वण्र्य विषय की दृष्टि के वर्गीकरण के बहुत निकट है। क्योंकि दोनों विद्वानों द्वारा प्रस्तुत वर्गीकरण में विषयवस्तु, संरचना एवं समाज को देखने का दृष्टिकोण में एकरूपता दिखाई पड़ती है। इनके सम्बन्ध में यह कहना भी गलत नहीं होगा कि इन्होंनें लोककथाओं को बड़े ही व्यवस्थित ढंग से वर्गीकृत करने का सफल प्रयास किया है जिससे उनकी विविधता और उदेश्य दोनों स्पष्ट रूप से सामने आते है।

डॉ॰ दिनेशचन्द्र सेन ने बंगाल की लोक-कहानियों के आधार पर लोक कथाओं को चार भागों में विभक्त किया है:-

1. "रूप कथा (supernatural tales)
2. हास्य कथा (Humurous tales)
3. कथा व्रत (Religious tales)
4. गीत कथा (Nursery tales)"[40]

डॉ. दिनेशचन्द्र सेन ने लोक-कहानियों के रूप में लोक कथाओं को इन चार वर्गों में वर्गीकृत करते हुए कथाओं की प्रकृति और उदेश्य को प्रस्तुत किया है। रूप कथाओं में अलौकिक तत्वों पाए जाते हैं। जिसमें देवी-देवता, भूत-प्रेत, जादू-टोना और रहस्मयी आदि कथाएँ प्रचलित है। इन कथाओं का उदेश्य ही चमत्कार एवं रहस्य को प्रकट करना होता है। हास्य कथाओं के अंतर्गत वे कथाएँ आती है जिसमें व्यंग्य प्रमुख रहता है। इसी व्यंग्य के माध्यम से पाठकों का मनोरंजन किया जाता है।

कथा व्रत कथाओं में अधिकतर कथाएँ आस्था और पूजा-पाठ से जुड़ी होती है। इसमें किसी विशेष व्रत का, देवी-देवता की पूजा अर्चना और लोक धार्मिक परम्पराओं का वर्णन मिलता है। इन कथाओं का उदेश्य नैतिक शिक्षा और धार्मिक अनुशासन को बढ़ावा देना है। इसी श्रेणी में गीत कथाओं में लयबद्ध तत्वों का प्रयोग किया जाता हैं। जो बच्चों के लिए अधिक मनोरंजनपरक होता है क्योंकि इसकी भाषा सरल और कल्पनात्मक होती है।

डॉ. सत्या गुप्त ने खड़ी बोली की लोक कथाओं को सात वर्गों में विभाजन इस प्रकार किया है–

1.“धार्मिक कथाएँ

2.एतिहासिक कथाएँ

3. अलौकिक कथाएँ

4.सामाजिक कथाएँ

5.निति कथाएँ

6. हास्य कथाएँ

7.पशु-पक्षी समन्धीत कथाएँ”[41]

डॉ. सत्या गुप्त ने भी धार्मिक कथाओं के अंतर्गत देवी-देवताओं एवं भक्ति भावनाओं से संबंधित कथाओं को रखा है। वहीं एतिहासिक कथाएँ किसी ऐतिहासिक घटनाओं तथा राजा की वीरता को आधार बनाकर रची गयी है। वहीँ अलौकिक कथाओं के अंतर्गत जादू-टोना, भूत-प्रेत, परलोक की बातें आदि आती है जो यथार्थ से परे होती है। सामाजिक कथाएँ समाज की परम्परा, रीति -रिवाजों एवं परिस्थितियों और मानवीय सम्बन्धों को दर्शाती है। इसी तरह नीति कथाओं में नैतिक शिक्षा की बारे में बताया जाता है। जहाँ इन कथाओं का उदेश्य बुराइयों के प्रति अच्छाई की जीत को दर्शाना है।

हास्य कथाएँ लोगों का मनोरंजन करती है। इन कथाओं में हास्य-व्यंग्य वाली बातें होती है। पशु-पक्षी संबंधित कथाओं में जानवरों को मानवीकरण रूप में प्रस्तुत किया जाता है तथा ये कथाएँ अधिकतर बाल-लोकथाएँ होती है।

इसी श्रंखला में श्री गणेश चौबे ने भोजपुरी कथाओं को आधार बनातें हुए लोक कथाओं को 13 रूपों में विभाजित किया है –

1. "सृष्टि कथाएँ
2. देवताओं आदिमानवों, राक्षस-प्रेतों की कथाएँ
3. चमत्कार की कथाएँ
4. साहस की कथाएँ
5. ठगी और धोखे की कथाएँ
6. जाति विषयक कथाएँ
7. पशु-पक्षी एवं पौधों की कथाएँ
8. व्रत-त्यौहार की कथाएँ

9. हाजिर जवाबी एवं चालाकी की कथाएँ

10. ऐतिहासिक अनुश्रुतियाँ

11. कहावतों की उत्पति कथाएँ

12.पहली कथाएँ

13.यौन संबंधित कथाएँ।"[42]

सृष्टि कथाओं में संसार की शुरुआत कब और कैसे हुई, से सम्बन्ध रखने वाली कथाएँ आती है। देवताओं आदिमानवों एवं राक्षस-प्रेतों की कथाओं के अंतर्गत देवी-देवताओं, आत्मा, राक्षस वर्ग से जुड़ी कथाएँ होती है। वहीं चमत्कार की कथाओं में चमत्कारी घटनाओं वर्णन होता है। जहाँ दिव्य शक्ति, वरदान या जादुई घटना का वर्णन होता है। वही साहस की कथाओं में वीरता एवं पराक्रम की झलक दिखाई पड़ती है। दूसरी ओर ठगी और धोके की कथाओं में किसी को चतुराई एवं चालाकी से ठगने की थीम पर आधारित होती है साथ ही इसमें व्यंग्य और हास्य का भी पुट पाया जाता है। जाति विषयक कथाओं में जाति प्रथा एवं उसके उद्भव पर प्रकाश डाला जाता है। पशु-पक्षी एवं पौधों की कथाओं में जानवरों, पेड़-पौधे और लताओं को पात्र बनाकर नैतिकता का संदेश दिया जाता है।

व्रत-त्यौहार संबंधित कथाओं में अनेक प्रकार के धार्मिक पर्वो, व्रतों और संस्कार को मान्यता देते हुए कथा बुनी जाती है। इसके अलावा हाजिर जवाबी एवं चालाकी की कथाओं में अपने विवेक, तर्क और चतुराई से किसी भी समस्या का हल निकाल लेने जैसी कथाएँ शामिल होती है जो हास्य और शिक्षा देने वाली होती है। एतिहासिक अनुश्रुतियाँ किसी एतिहासिक घटना पर आधारित होती है जो लोक परम्परा के अंतर्गत भी आती है। कहावतों की उत्पति समबन्धित कथाओं इसमें कथाओं में इनकी उत्पति कैसे औ क्यों हुई, इस पर आधारित होती है। वहीं पहली कथाओं का माध्यम से पहली होती है जिससे सुननेवालों का ज्ञानवर्धन होता है। यौन संबंधित कथाओं में मानवीय यौवन एवं

व्यवहार से सम्बन्धी दृष्टिकोण को दर्शाया जाता है जहाँ ये कथाएँ समाज में चेतना और आईना के रूप में उभर कर सामने आती हैं।

श्रीचन्द्र जैन ने कथाओं के किसी विशिष्ट तत्त्व को अपनाकर उसके कथानक के आधार पर उसको दो रूपों में विभक्त किया है- सरल कथाएँ एवं जटिल कथाएँ है। जिसमें पात्र विशिष्टता को आधार बनाकर मानकर लोक –कथाओं को निम्नलिखित रूप प्रस्तुत किया गया है-

1 "पशु-पक्षियों की कहानियाँ।

2.देवी-देवताओं की कहानियाँ।

3. परी-अप्सराओं की कहानियाँ।

4.भूत-प्रेतादी की कहानियाँ।

5. कीट-पतंगादि की कहानियाँ।

6.वृक्ष-पुष्पादी की कहानियाँ।

7.राजा-रानी, राजकुमार आदि की कहानियाँ।

8.स्त्री-पुरुषों की कहानियाँ।

9.साधु-महत्मा आदि की कहानियाँ।

10.चोर-डाकू आदि की कहानियाँ।

11.प्रकीर्ण।"[43]

पशु-पक्षियों की कहानियों में वे लोक कथाएँ आती है जिसमें पशु-पक्षियों को मानव के रूप में तथा उसके गुणों आदि के साथ प्रस्तुत किया जाता है। इस तरह की कथाओं में पंचतंत्र की कथाओं को शामिल किया जा सकता है। वही देवी-देवताओं की कहानियों में लौकिक, दिव्य शक्ति आदि जैसे लोकमान्यता पर आधारित लोक कथाओं का वर्णन होता है जो धार्मिक आस्था से जुड़ी होती है। इसी

तरह परी-अप्सराओं की कथाओं में जादुई काल्पनिक पात्र होते हैं जिसमें अप्सराओं, परियों के माध्यम से शारीरिक सौंदर्य का वर्णन किया जाता है तो भूत-प्रेतादि की कहानियों में डरावनी लोक कथाएँ आती है जिसमें डायन, चुड़ैल, भूत-प्रेत आदि पात्र होते है।

कीट-पतंगादि की कहानियों में मधुमक्खी, तितली, चींटी, मक्खी-मच्छर आदि को पात्र बनाकर कथा रची जाती है। यह कथाएँ अधितर बच्चों के लिए होती है जिसके माध्यम से उन्हें नैतिक शिक्षा दी जाती है। वहीँ वृक्ष-पुष्पादि की कहानियाँ प्रकृति एवं पर्यावरण पर आधारित होती है। जहाँ पेड़-पौधे, फूल आदि पात्र होते हैं जो मनुष्य की तरह व्यवहार करते है। दूसरी ओर राजा-रानी, राजकुमार की कहानियों में राजा महाराजाओं की कथाएँ आती है। ये कथाएँ राजनीति और कुटनितियों पर आधारित होती है। स्त्री-पुरुषों की कहानियों में स्त्री-पुरुषों के बीच के प्रेम संघर्ष, बलिदान और पारिवारिक संबंध आदि को उजागर किया जाता हैं। इसके साथ ही इसमें स्त्रियों की स्थिति एवं उनके अधिकार से सबंधित कथाओं भी वर्णन किया जाता है।

साधु-महात्मा आदि की कथाएँ साधु-संत, फकीर, ऋषि, मुनि आदि पर आधारित होती है जिसमें भक्ति, त्याग, तपस्या, करुणा आदि आध्यात्मिक गुणों पर बल दिया जाता है। वहीँ चोर-डाकू आदि की कहानियाँ चोर, डाकू, लुटेरों पर केन्द्रित होती है। इस तरह की कथाओं में पाठक या श्रोता सामाजिक सच्चाई के प्रति आकर्षित होते हैं जिससे पाठकों को हृदय परिवर्तन की प्रेरणा मिलती है। वहीँ दूसरी ओर प्रकीर्ण कथाओं में वे कथाएँ आती है जिसमें विशेष पात्र वर्ग नहीं आते; बल्कि अनेक प्रकार के पात्र प्रस्तुत किए जाते है। इस प्रकार इसके अंतर्गत पात्रों की विशेषताओं के माध्यम से लोककथाओं का यह वर्गीकरण उसके स्वरूप को ही नहीं; बल्कि लोककथाओं के विविधतापूर्ण जीवन मूल्य को भी स्पष्ट करता है।

इस प्रकार प्राचीन आचार्यों ने लोक कथाओं को दो प्रमुख श्रेणियों में बाँटा है जो कुछ इस प्रकार है–

1. कथा– इस विधा के अंतर्गत कवि कल्पना की प्रधानता होती है। इसका उद्देश्य काल्पनिक होता है जैसे: बाणभट्ट की कादम्बरी और दण्डी का दशकुमारचरित्।

2. आख्यायिका - इस वर्ग में वे कथाएँ आती हैं जिनका मूल आधार ऐतिहासिक इतिवृत्त होता है। यह सच्ची घटनाओं पर आधारित होता है जैसे: बाण का हर्षचरित। आनंदवर्धन ने इन कथाओं के तीन भेदों का उल्लेख किया है–

"1.परिकथा

2.सकल कथा

3.खंड कथा"[44]

परिकथा वे कथाएँ है जिसमें केवल घटनाओं का उल्लेख पाया जाता है; परन्तु इसमें रस तथा भावनात्मकता का अभाव रहता है। वहीं अभिनव गुप्त ने परिकथा में ऐसे वृत्तांतों का समावेश आवश्यक माना है जिसमें वर्णन की विचित्रता पाई जाती है। इसी तरह सकल कथा में बीज (प्रारम्भ) से फल पर्यंत तक की समस्त कथा का सन्निवेश उपलब्ध होता है। हेमचन्द्र ने इस कथा को चरित का नाम दिया है और उदाहरण के रूप में 'समरादित्य कथा" का उल्लेख किया है। वहीँ आख्यायिका का अंतिम प्रकार खंड कथा एक देश या घटना प्रधान होता है।

इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि ये कथाएँ केवल एक साधारण कहानी नहीं है इसके विभिन रूप, उद्देश्य और प्रभाव के आधार पर इनको विभिन्न वर्गों में बाँट कर समझने का प्रयास किया गया है।

हरिभद्राचार्य ने कथाओं का एक नया वर्गीकरण प्रस्तुत किया है जिसमें मौलिकता पायी जाती है। इनके अनुसार कथाओं के निम्नांकित चार भेद है:

क) “अर्थ कथा

ख) काम कथा

ग) धर्म कथा

घ) संकीर्ण कथा।”[45]

इस प्रकार अर्थ कथाओं में धन-संपत्ति या भौतिक लाभ से संबंधित कथाएँ होती है तो वहीं काम कथाओं में प्रमुख रूप से प्रेम और श्रृंगार का वर्णन दिखाई पड़ता है। दूसरी ओर धर्म कथाएँ धार्मिक आख्यानों एवं धार्मिक शिक्षा के आदर्शों पर संबंधित होती है। वहीँ इसके अंतिम भेद संकीर्ण कथाओं का विषय व्यापक नहीं होता; बल्कि स्थानीय, घरेलू या फिर व्यक्तिगत अनुभव से जुड़ा होता है।

‘लोक-कथा विज्ञान’ पुस्तक में भी वर्गीकरण के विभिन्न रूपों की चर्चा करते हुए उसकी व्यापकता की बात कहीं गई है। जहाँ लिखा गया है कि ‘दिघ निकाय के ब्रह्माजालसुत्त’ में एक स्थान पर कथाओं के निम्नस्थ भेद का उल्लेख किया गया है-

1.राजा कथा

2.चोर कथा

3.महामात्र कथा

4.सेना कथा

5.भय कथा

6.युद्ध कथा

7.अन्नकथा

8.पान कथा

9.वस्त्र कथा

10.शयम कथा

11.माला कथा

12.गंध कथा

13.ज्ञाति कथा

14.यान कथा

15.ग्राम कथा

16.निगम कथा

17.नगर कथा

18.जनपत कथा

19.स्त्री कथा

20.पुरुष कथा

21.शूर कथा

22.विशिखा कथा (बाजार की गप्पें)

23.कुम्भ स्थान कथा (पनघट की कहानियाँ)

24.पर्व प्रेत कथा (गये-गुजरों की कहानियाँ)

25.निरर्थक कथा

26.लोकाख्यायिका

27.समुद्राख्यायिका।"[46]

इन लोककथाओं के वर्गीकरण में विद्वानों ने लोक कथाओं को उनके विषय, उद्देश्य एवं स्वरूप के आधार पर बाँटा है जिससे यह पता चलता है कि लोकथाएँ केवल मनोरंजन का साधन ही नहीं; बल्कि इसके अंतर्गत जीवन की विविध रूप जैसे सामाजिक, संस्कृति और परम्परा के रूप, राजनैतिक, जीवन, धार्मिक मान्यताएँ, आर्थिक समस्याएँ, स्त्री-पुरुष आदि से संबंधित विषयों का वर्णन किया जाता है।

श्रीचन्द्र जैन अपनी पुस्तक में कतिपय विद्वानों के लोक-कथाओं का वर्गीकरण को प्रस्तुत किया है जो कुछ इस प्रकार है–

"1.जादू टोना, जादू की छड़ी, जादू की अंगूठी, जादू का डंडा, जादू की खाट आदि।

2.शाप तथा वरदान।

3.जड़ी बूटी।

4.फूल(पुष्प)

5.जटा का लम्बा केश।

6.विशिष्ट वेशभूषा।

7.अस्त्र-शस्त्र।

8.वाहन।

9.संकेत।

10. विशेष काजल।

11. विशिष्ट सुगन्धित पदार्थ।

12.खिलौना।

13. विशिष्ट मिठाई।

14. विशिष्ट मनोरंजन साधन (चोपड़, हूत, शिकार आदि)

15.तंत्र मंत्रादि।

16.चित्र आदि।

17.विविध।"[47]

इस प्रकार अनेक विद्वानों ने लोक कथाओं का वर्गीकरण करते समय उन साधनों को ध्यान में रखा जो कथा में प्रधान पात्र के रूप में उभर कर आते है या किसी खास लक्ष्य को प्राप्त करते है। इन साधनों का उपयोग इसलिए भी किया जाता है क्योंकि कथानक में रहस्य, मनोरंजन, चमत्कार और रोचकता की भावना बनी रहे। इन्हीं साधनों के माध्यम से लोककथाएँ रोचक बनती है; परन्तु ये कथाएँ संख्या, विषय व पात्र आदि के दृष्टि से इनका वर्गीकरण सटीक रूप से नहीं हो सकता। "इस प्रकार की कथाओं में सारंगा, स्द्य्वच्छ, लन-दमयंती, हातिमताई आदि की कहानियाँ मिलती है।"[48]

इस रीति से लोक कथाओं की कोई एक जाति, भाषा एवं रंग-रूप नहीं होता। इसे किसी भी जाति के लोग किसी भी भाषा में कह-सुन सकते है ठीक इसी तरह जैसे हम भारत के संदर्भ में आदिवासी लोक कथाओं की बात करें तो आदिवासियों की संख्या करोड़ो में है जो अपने समृद्ध एवं सुखद अतीत को भुलाकर अब वे वन-पर्वतों में रह रही हैं। इन्हें प्रकृति से बहुत प्यार है और प्रकृति को ईश्वर मान कर उसकी आराधना करते हैं- "इनकी हजारों एसी मान्यताएँ हैं जिसमें भारतीय संस्कृति से प्रभावित हुई है। इसके देवी-देवता भी एक बड़ी संख्या में हैं जो इन्हें कष्ट के क्षणों में सुख-शांति प्रदान करते हैं।

प्रकृति की सुंदरता आदिवासियों की आँखों में रात-दिन झूमती है। जो अवकाश के विषाद समय ये अपने परिवार के साथ मनोविनोद करते हुए जीवन की विषमताओं के काले चित्र खींचते हैं।

कभी-कभी भूत-प्रेतों की कथाएँ सुनकर अपने परिवार के सदस्यों एवं सहयोगियों को चकित कर देते हैं।"[49]

आदिवासियों की कथाओं में उनके जीवन के सुख और दुःख का चित्रण होता है इसमें इनके समाज के पुराने रिति-रिवाजों और धार्मिक विश्वासों का रहस्य का पता चलता हैं जैसें- संसार की सृष्टि कैसे हुई? मनुष्य का जन्म कैसे हुआ? धरती पर पेड़ की उत्पति किस प्रकार हुआ? आकाश कैसे चरों ओर फेला हैं? नाव पानी पर कैसे चलती हैं? सूर्य, चन्द्रमा, तारे और जुगनू सहसा कैसे चमकने लगे? कुत्ता इंसान के साथ कैसे रहने लगा? आदि ऐसी हजारों रोचक और रहस्यमय कहानियाँ आदिवासियों में कहीं सुनी जाती हैं जिनमें आदिवासी समाज के लोक विश्वास और प्रकृति के साथ गहरा संबंध दिखाई पड़ता है ।

डॉ सत्येन्द्र के मतनुसार "ये कथाएँ वैदिक साहित्य से भी प्रभावित है तथा विभिन्न भारतीय दर्शनों से भी इनका सम्बन्ध दिखाई देता है सत साहचर्य के कारण वृक्ष-पुष्प, पशु-पक्षी, नदियां-नाले, छोटे-बड़े पर्वत आदि इन कथाओं के अभिन्न अंग बन गए हैं। बड़े-बड़े वृक्ष इन आदिवासियों के साथ नाचते-गाते हैं और विभिन्न रूप-रंगों के पशु-पक्षी इनके साथ भोजन करते हैं और सुख-दुःख की घड़ियों में साथी बनाते हैं।"[50] आदिवासियों की कथाओं की इन्हीं विषय को बनाकर श्रीचन्द्र जैन ने आदिवासी लोक कथाओं को कुछ इस प्रकार वर्गीकरण का किया है –

1.सृष्टि की कथाएँ।	2. देवी-देवताओं की कथाएँ।
3.पशु-पक्षी की कथाएँ।	4. वृक्ष एवं पुष्पों की कथाएँ।
5.भूत-प्रेतों की कथाएँ।	6. जादू-टोना विषयक कथाएँ।
7. अन्धविश्वासों की कथाएँ।	8. त्यौहारों की कथाएँ।
9.खाद्य पदार्थों की कथाएँ।	10. शिकार की कथाएँ।

11.चोरों की कथाएँ।	12. ठगों की कथाएँ।
13.साहुनकारों की कथाएँ।	14. साँपों की कथाएँ।
15.युद्धों की कथाएँ।	16. जड़ी-बुटियों की कथाएँ।
17.राक्षसों की कथाएँ।	18. परियों की कथाएँ।
19.राजा-रानियों की कथाएँ।	20. आभूषण की कथाएँ।
21.ऐतिहासिक कथाएँ।	22. प्रेम कथाएँ।
23.हास्य कथाएँ।	24. मनोरंजन कथाएँ।
25. प्रतिशोध की कथाएँ।	26. विवाह की कथाएँ।
27.विद्रोह की कथाएँ।	28. अत्याचार की कथाएँ।
29.मूर्खो की कथाएँ।	30. धूर्तो की कथाएँ।
31.बालक-बालिकाओं की कथाएँ।	32. यात्राओं की कथाएँ।
33.भविष्यवाणी से सम्बध्द कथाएँ।	34. स्वपनों की कथाएँ।
35.साधु-संतों की कथाएँ।	36. शाप-वरदान की कथाएँ।
37.नारी कथाएँ।	38. दस-दासियों की कथाएँ।
39.न्याय सम्बन्धी कथाएँ।	40. बुद्धि परीक्षा विषयक कथाएँ।
41.कहावतों की कथाएँ।	42. बलिदान कथाएँ।
43.विविध।" [51]	

आदिवासी की सृष्टि पर आधारित कथाओं को विशेष लोकप्रिय और मनोरंजन माना गया है इन कथाओं में धरती, मनुष्य, जाति, सूर्य-चन्द्र, तारे, पेड़-पौधे मदिरा, खनिज पदार्थों और अन्य जीवों आदि की उत्पत्ति से सबंधित कथाएँ पाई जाती हैं। जिससे ये पता चलता है कि ये वनवासीयों ने आपनी

मौलिक कल्पना के सहारे इन उत्पत्ति- कथाओं को निर्मित किया जो विविध पौराणिक कथाओं से प्रभावित हैं।

देवी-देवताओं की कथाएँ अधिक तर मान्यताओं पर आधारित होती है इसमें आदिवासी देवी-देवताओं से सबंधित कथाएँ होती हैं जिसमें आस्था और चमत्कारों से जोड़ी कथाएँ होती हैं। पशु पक्षी की कथाओं में जीव-जंतु के माध्यम से माध्यम से नैतिक शिक्षा दी जाता हैं वहीं वृक्ष एवं पुष्पों की कथाओं में पेड़-पौधे फूल-पत्ती अर्थात् प्रकृति से जुड़ी पौराणिक एवं धार्मिक मान्यताओं वाले कथाएँ पाई जाती हैं भूत-प्रेतों की कथाएँ आत्माओं और अलौकिक शक्तियों से संबंधित भ्यावित और रहस्यमयी घटनाओं पर आधारित कथाएँ होती हैं।

इसी प्रकार जादू-टोना विषयक कथाएँ इनमें तंत्र-मंत्र और जादू के प्रयोगों से जुड़ी कथाएँ होती हैं। जो आदिवासी समाज के मान्यताओं पर आधारित होती है । अंधविश्वासों की कथाएँ जो इन समाज के अज्ञानी विश्वासों और परंपराओं को दर्शाया जाता है। त्योहारों की कथाएँ में विभिन्न आदिवासी त्योहारों की उत्पत्ति, परंपरा और मान्यताओं की झलक दिखाई पड़ता है तो वहीं खाद्य पदार्थों की कथाएँ खाद्य सामग्री की उत्पत्ति और उसके महत्व से जुड़ी होती हैं । शिकार की कथाएँ शिकार से जुड़े अनुभव और जानवरों से संघर्ष की होती हैं ।

चोरों और ठगों की कथाएँ लगभग एक जैसे ही होती है जिसमें धोखा और अपराध से जुड़ी रोचक या नैतिक शिक्षाओं वाली कथाएँ होती हैं। साहूकारों की कथाएँ इन कथाओं में साहूकारों की लालच, न्याय-अन्याय और शोषण के प्रसंग वाले कथाएँ पाएं जाते हैं। साँपों की कथाएँ नाग-नागिन या साँपों से जुड़ी किंवदंतियाँ जो भय, भक्ति या चेतावनी देने वाली कथाएँ हैं।

युद्धों की कथाएँ , आदिवासी समुदायों के संघर्ष, वीरता, बलिदान और आपसी युद्धों की पर आधारित कथाएँ हैं। जड़ी-बूटियों की कथाएँ इसमें औषधीय पौधों, उनकी खोज और उपयोग से जुड़ी पारंपरिक तर की कथाएँ पाई जाती हैं। राक्षसों और परियों की कथाएँ शक्ति, अत्याचार और उनके पराजय,और अच्छाई और बुराई के संघर्ष को दर्शाती हैं तो वहीं परियों की कथाएँ कल्पनालोक की सुंदर, चमत्कारी और जादुई शक्तियों वाली स्त्रियों (परियों) से जुड़ी होती हैं। राजाओं और रानियों के शासन, वीरता, संघर्ष, न्याय या प्रेम से संबंधित कथाएँ पाई जाती हैं। आभूषणों की कथाएँ

आभूषणों की कथाएँ आदिवासी समाज में कई प्रकार के आभूषण होते है और ये कथाएँ इन्हीं गहनों, और उनके महत्व, एवं आवश्यकताओं से जुड़ी होती हैं। ऐतिहासिक कथाएँ इतिहास की वास्तविक घटनाओं पर आधारित या उनसे प्रेरित कहानियाँ हैं वहीँ प्रेम कथाएँ प्रेम, समर्पण, बलिदान या प्रेम में आई बाधाओं पर आधारित मार्मिक कथाएँ होती हैं। हास्य कथाएँ मनोरंजन और हँसी पैदा करने वाली कथाएँ, जिनमें व्यंग्य या मज़ाक होता है और मनोरंजन कथाएँ सिर्फ आनंद देने वाली कहानियाँ जिनमें कोई नैतिक शिक्षा नहीं होती हैं। प्रतिशोध की कथाएँ अपमान या अन्याय का बदला लेने वाली गाथाएँ, जिनमें साहस और दृढ़ता का चित्रण होती है। विवाह की कथाएँ विवाह से जुड़ी रस्मों, प्रेम-विवाह, विरोध या पारिवारिक संघर्षों की कहानियाँ होती है वहीं शासन अन्याय और अत्याचारों की कथाओं में अत्याचारी शासक, सामंत या किसी व्यक्ति के द्वारा कमजोरों अन्याय करने के विरुद्ध खड़े हुए नायकों की साहसिक कथाएँ होती है। मूर्खों और धूर्तों की कथाओं में यें कथाएँ हास्य व्यंग्य के माध्यम से नैतिक शिक्षा देती है। बालक कथाओं में बच्चों के साहस, चतुराई, और मासूमियत की कहानियाँ होती हैं। यात्रा कथाओं में यात्रा के दौरान हुई घटनाओं, चमत्कारों या अनुभवों की कथाएँ पाई जाती है। भविष्यवाणी से सम्बन्धित कथाओं में पूर्व संकेतों, स्वप्नों या ज्योतिषीय भविष्यवाणियों पर आधारित कथाएँ होती हैं। इसके साथ ही स्वप्नों की कथाएँ भी इन भविष्यवाणी

कथाओं से मिलती-जुलती कथाएँ है जहाँ सपनों के माध्यम से भविष्य या रहस्य का संकेत देने वाली कथाओं का वर्णन होता है।

साधु-संतों की कथाएँ धार्मिक चरित्रों, तपस्वियों या आध्यात्मिक व्यक्तित्वों पर केंद्रित कथाएँ होती हैं और वहीं शाप-वरदान की कथाएँ किसी के श्राप या वरदान से जीवन में आए परिवर्तन को दर्शाने वाली कथाएँ होती हैं। नारी कथाओं में नारी शक्ति, संघर्ष, त्याग, मातृत्व या समाज में भूमिका को दर्शाने वाली कथाएँ है। दास-दासियों की कथाओं में सेवकों, गुलामों या दासियों के जीवन, कष्ट और संघर्ष की कहानियाँ हैं। बुद्धि परीक्षा विषयक कथाएँ बुद्धिमत्ता और चालाकी के ज़रिए समस्या समाधान की कहानियाँ होती हैं ।

कहावतों की कथाएँ समाज प्रचलित कहावतों को समझाने या उनके मूल को दर्शाने वाली कथाओं का चित्रण पाया जाता हैं। बलिदान कथाएँ अपने समाज, परिवार या सिद्धांतों के लिए प्राणों का त्याग के लिए प्रेरणा देने वाली कथाएँ होती हैं। विविध कथाएँ वे कथाएँ है जो किसी एक निश्चित वर्ग में नहीं आतीं; लेकिन सांस्कृतिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण होती हैं।

इस प्रकार यह वर्गीकरण यह दर्शाता है कि आदिवासी लोककथाएँ केवल लोकविश्वास नहीं; बल्कि जीवन की विविध सच्चाइयों, कल्पनाओं और मान्यताओं का जीवंत दस्तावेज़ है। इन कथाओं के माध्यम से सामाजिक, नैतिक, धार्मिक और ऐतिहासिक चेतना का भी विस्तार होता है। ये कथाएँ उनकी परम्पराओं का और लोक विश्वास का अमूल्य ज्ञान का भंडार हैं।

निष्कर्ष : निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि लोक साहित्य में लोकथाओं का स्थान अत्यंत महत्पूर्ण है। ये लोककथाएँ केवल मनोरंजन का साधन नहीं बल्कि समाज के लोक विश्वास, लोक मान्यताएं, अनुभव, भावनाएं एवं कल्पनाओं का सजीव चित्रण हैं। जो सदियों से पीढ़ी दर पीढ़ी मौखिक

रूप में चला आ रहा हैं। ये लोक कथाएँ किसी लेखक या कवि द्वारा नहीं लिखी जाती है। इन लोककथाओं की उत्पति की बात करे तो इसका का स्रोत गाँव, बस्ती, पर्व त्यौहार आदि में पाया जाता है। जिससे हमारी दादी-नानी अन्य लोग कहानी के रूप में प्रस्तुत करते हैं। लोककथा की इतिहास को देखे तो संसार की सृष्टि के साथ ही लोक कथाओं का जन्म हुआ। जिन्हें अनेक विद्वानों ने अपनी परिभाषाओं एवं शोध से सिद्ध भी किया है। लोक कथाओं की विशेषताओं को बताते हुए विद्वानों ने इसके विभिन्न आयामों का वर्णन किया हैं जिसमें लोककथाओं के आधारभुत तत्त्वों को संक्षेप रूप में स्पष्ट करने का प्रयास किया गया है जिससे यह पता चलता है कि लोक कथाओं में भी कुछ ऐसे समान्य तत्त्व है जो हिंदी साहित्य के अन्य विधाओं में भी विद्यमान रहते है। लोककथाओं की विभिन्न स्वरूपों से यह ज्ञात होता है की लोकथाएँ किसी भी समाज की सामूहिक स्मृति नहीं होती है; बल्कि ये समाज की परम्परा, रीति-रिवाज, देवी-देवताओं की भक्ति, आराधना, जातीय संबंध, स्त्री-पुरुष, संघर्ष आदि की प्रस्तुति होती है। ये कथाएँ लोक मान्यताओं एवं उनके विश्वासों को व्यक्त करती हैं।

इस प्रकार विद्वानों ने लोककथाओं का वर्गीकरण करते समय मुख्यतः कथ्य, उदेश्य, पात्र, क्षेत्र और सामाजिक संदर्भो को ध्यान में रखा हैं। इसलिए इन विद्वानों द्वारा कियें गये वर्गीकरण में कई जगह पर समानताओं के साथ-साथ भिन्नताएं भी दिखाई पड़ती हैं।

मुख्य रूप से कृष्णदेव उपाध्याय ने अपनी पुस्तक 'लोक-साहित्य की भूमिका' में लोक कथाओं को वण्र्य विषय की दृष्टी से 'छ' वर्गों में वर्गीकृति किया गया हैं जो कुछ इस प्रकार हैं-उपदेश-कथा, व्रत कथा, प्रेम कथा, मनोरंजन कथा, सामाजिक कथा ,पौराणिक कथा। श्री मोहनकृष्णा दर ने इसी 'छ' वर्गों को वैज्ञानिक दृष्टिकोण का रूप देते हुए विभाजन प्रस्तुत किया है। इन दोनों विद्वानों का वर्गीकरण एक जैसा हैं; परन्तु इनका आधार भिन्न है। ठीक इसी तरह का अनुकरण कर अनेक विद्वानों ने लोकथाओं का वर्गीकरण किया हैं जिसमें कुछ न कुछ सामान्य तत्व दिखाई पड़ता हैं चाहे वह डॉ.

कृष्णदेव उपाध्याय श्री मोहनकृष्णा या सत्येन्द्र आदि इन सभी विद्वानों ने किशी न किसी रूप में कथ्य, उदेश्य, पात्र, क्षेत्र आदि को आधार बनाया हैं इससे यह स्पष्ट होता है की लोकथाओं का क्षेत्र बड़ा होने के कारण इसे एक दृष्टिकोण के आधार पर वर्गीकृति नहीं किया जा सकता हैं।

अंतः इन विद्वानों के आधार पर लोकथाओं का वर्गीकरण किया जाएं तो इसे मुख्यतः 'छ' वर्गो में बंटा जा सकता है जो लगभग सभी विद्वानों के वर्गीकरण में सामान रूप से दिखाई पड़ता है-

1.उपदेश की कथाएँ

2.व्रत की कथाएँ

3.धर्म की कथाएँ

4.प्रेम की कथाएँ

5.पशु-पक्षी की कथाएँ

6.मनोरंजन कथाएँ

लोक कथाओं के यह 'छ' वर्ग को अधिकतर विद्वानों के दृष्टि में महत्वपूर्ण दिखाई पड़ते हैं। लगभग सभी विद्वानों द्वारा किये गये वर्गीकरण में इनको स्थान दिया गया है। अतः इन 'छः' वर्ग को प्रमाणित माना जा सकता है। इस प्रकार लोक कथाओं के विभिन्न आयामों एवं स्वरूपों के माध्यम से हमें लोककथाओं के वर्गीकरण को समझने में मदद मिलती है तथा इस वर्गीकरण से यह भी स्पष्ट होता हैं कि लोक-कथाएँ केवल कहानी नहीं है; बल्कि यह लोकजीवन और लोक संस्कृति का प्रमुख आधार भी हैं।

संदर्भ सूची :

[1] आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, हिंदी साहित्य की भूमिका, पृ. 82

[2] डॉ. श्याम परमार, भारतीय लोक-साहित्य, पृ. 3

[3] ऐलेन डंड्स, इन्टरप्रिंटिंग फोकलोर, पृ. 112

[4] आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, हिंदी साहित्य की भूमिका, पृ. 86

[5] आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी, हिंदी साहित्य की भूमिका, पृ. 86

[6] डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय, लोक-साहित्य की भूमिका, पृ. 25

[7] डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय, लोक-साहित्य की भूमिका, पृ 11

[8] श्रीचद्र जैन,प्राक्कथन :डॉ.सत्येन्द्र ,लोक-कथा विज्ञान, पृ 4

[9] वही, पृ 19

[10] वही, पृ 10

[11] वही, पृ 31

[12] श्रीचद्र जैन, प्राक्कथन :डॉ.सत्येन्द्र, लोक-कथा विज्ञान, पृ. 30

[13] डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय, लोक-साहित्य की भूमिका, पृ. 134

[14] वही , पृ. 128

[15] वही , पृ. 128

[16] . वही , पृ .128

[17] खेमराज नेपाल, नेपाली लोक साहित्यको रूपरेखा (नेपाली से हिंदी में अनूदित), पृ. 129

[18] श्रीचद्र जैन, प्राक्कथन : डॉ. सत्येन्द्र , लोक-कथा विज्ञान, पृ 29

[19] वही, पृ. 29

[20] वही, पृ. 70

[21] वही, पृ .29

[22] पुष्प शर्मा ,गोलसिमल, पृ. 51

[23] वही पृ. 47

[24] श्रीचद्र जैन, प्राक्कथन : डॉ. सत्येन्द्र, लोक-कथा विज्ञान, पृ 31

[25] वही, पृ. 196,197

[26] वही, पृ. 34

[27] पुष्प शर्मा, गोलसिमल, पृ. 47

[28] श्रीचद्र जैन, प्राक्कथन : डॉ. सत्येन्द्र, लोक-कथा विज्ञान, पृ 166

[29] वही, पृ .185

[30] वही, पृ .185

[31] वही, पृ. 185

[32] वही, पृ 185

[33] वही, पृ. 186

[34] कृष्णा उपाध्याय, लोक साहित्य की भूमिका, पृ 131

[35] वही, पृ. 131

[36] वही, पृ. 132

[37] वही, पृ. 132

[38] श्रीचद्र जैन, प्राक्कथन : डॉ.सत्येन्द्र, लोक-कथा विज्ञान, पृ 49

[39] वही, पृ. 49

[40] वही, पृ. 50

[41] कृष्णा उपाध्याय, लोक साहित्य की भूमिका, पृ 133

[42] श्रीचद्र जैन, प्राक्कथन : डॉ. सत्येन्द्र, लोक-कथा विज्ञान, पृ 50

[43] वही, पृ. 50

[44] वही, पृ. 50, 51

[45] कृष्णदेव उपाध्यय, लोक संस्कृति की रूपरेखा, पृ. 264

[46] श्रीचद्र जैन, प्राक्कथन : डॉ. सत्येन्द्र, लोक-कथा विज्ञान, पृ.

[47] वही, पृ. 53

[48] वही , पृ. 54

[49] वही , पृ. 49

[50] वही, पृ .52

[51] वही, पृ. 52

तृतीय अध्याय

चयनित नेपाली लोककथाओं का हिंदी में अनुवाद

तृतीय अध्याय

चयनित नेपाली लोककथाओं का हिंदी में अनुवाद

इस अध्याय में चयनित कुल 29 लोककथाओं का नेपाली से हिंदी में अनुवाद किया गया है। ये चयनित लोक कथाएँ दो लोककथा संग्रहों से ली गई हैं। इसमें पहला लोककथा संग्रह पुष्प शर्मा द्वारा संग्रहित 'गोलसिमल' है, जो उपमा प्रकाशन, कलेबुङ, से वर्ष 2021 को प्रकाशित हुआ है। इस संग्रह में कुल 14 लोककथाएँ है। वहीं दूसरा लोक कथा संग्रह- 'कथा-संग्रह (दंत्यकथा) है, जिसे ललितजङ्ग सिजापति ने संग्रहित किया है, इसका प्रकाशन बाबू माधवप्रसाद शर्मा दूधविनायक वाराणसी से वर्ष 1999 में हुआ। इस 'कथा-संग्रह' में कुल 15 लोककथाएँ हैं, जो निम्नलिखित हैं-

1. ओर्ल न ओर्ल सुनकेशरी मैयाँ (उतरों न उतरों प्रिय सुनकेशरी)
2. स्वर्ग जाने सिँढी (स्वर्ग जाने वाली सीढ़ी)
3. सुम्निमा र पारुहाङ (सुम्निमा और पारुहाङ)
4. रोँगीत र रोँगनू (रोँगीत और रोँगनू)
5. उत्तिस र गुराँसको प्रेम कथा (उत्तिस और गुराँस की प्रेम कथा)
6. गोलसिमल… गोलसिमल (गोलसिमल... गोलसिमल)
7. आतेकको बाँसुरिको धुन (आतेक कि बाँसुरि की धुन
8. पाण्डा किङ्को मोहभङ्ग (पांडा किंग का मोहभंग)
9. सुनौलो रेशमी मजेत्रो (सुनेरी रेशमी मजेत्रो)
10. आँकको रुखको जन्म (आक के वृक्ष के रूप में पुनर्जन्म)

11. बिहेको प्रस्ताव (विवाह का प्रस्ताव)

12. पोशाकधारी राजकुमार- 1 (पक्षीपशाक धारी राजकुमार 1)

13. पोशाकधारी राजकुमार- 2 (पक्षीपोशाक धारी राजकुमार 2)

14. बुढो बाबु फाल्ने थोत्रे डोको (बूढ़े पिता को फेंकने वाला पुराना डोका)

वहीं दूसरा लोक कथा संग्रह- 'कथा-संग्रह'(दंत्यकथा) है। जिससे ललितजङ्ग सिजापति ने संग्रहीत किया हैं, इसका प्रकाशन बाबू माधवप्रसाद शर्मा, दूधविनायक, वाराणसी से वर्ष 1999 में हुआ। इस 'कथा-संग्रह' में कुल 15 लोककथाएँ हैं, जो इस प्रकार हैं-

1. जिउंदो मानिस (जीवित आदमी)
2. कुक्कुरलाई मासु पैचों (कुत्ता को उधार मांस)
3. धर्म र पाप कहाँ छ (धर्म और पाप कहा है)
4. चार रत्न (चार रत्न)
5. जस्तालई तस्तै (जैसे को वैसा)
6. वित्त-रोगको औषधि (आंतरिक रोग की औषधी)
7. लौभी र छट्टू (लालची और छट्टू)
8. देख्ने अन्धो (देखने वाला अन्धा)
9. निंद्रा साधन, काल भोजन स्त्रिया ताड़न स्वस्ति महाराज! (निंद्रा साधन,काल भोजन स्त्रिया ताड़न स्वस्ति महाराज!)
10. सिञ्चा-धुञ्चा (सींचा-धुंचा)
11. तोरी फुल्यो गाउँ, ज्वाइं मेरो नाऊँ (सरसों फूल गाँव , जमाई मेरा नाम)
12. ज्ञानबाट फाइदा (ज्ञान से लाभ)

13. चट्टू-छट्टू-उपरचट्टू (चट्टू- छट्टू-उपरट्टू)

14. चोर कुन हो (चोर कौन है)

15. सपनाको प्रेम (सपनों का प्रेम)

इन सभी 29 लोककथाओं का नेपाली से हिंदी में अनुवाद आगे प्रस्तुत है:

1. उतरों न उतरों प्रिय सुनकेशरी (ओर्ल न ओर्ल सुनकेशरी मैयाँ)

नीचे उतर आओ,

प्रिय सुनकेशरी

विवाह का मुहूर्त बीत ... रहा है।

एक देश में एक राजा रहते थे, जिनके तीन पुत्र और एक बहुत ही सुंदर पुत्री थी, जिसका नाम सुनकेशरी था। यह नाम उसके अनोखे सोने जैसे बालों की वजह से पड़ा था। पूरे राज्य में उसे प्रिय सुनकेशरी कहकर पुकारा जाता था। राजमहल में उसके बहुमूल्य सुनहरे बालों की रोज़ गिनती की जाती थी, ताकि यह पता चल सके कि कहीं उसके कोई बाल न खो गए हों। इस तरह महल में उसके स्वर्ण-समान केशों की बातें अक्सर चलती रहती थीं।

एक दिन सुनकेशरी अपनी सहेलियों के साथ नदी में स्नान करने गई। स्नान के दौरान उसके सिर से एक सोने का बाल नदी में कहीं बह गया। यह देखकर वह बहुत घबरा गई और सहेलियों से बोली, सुनो, सहेलियों, मेरा एक स्वर्ण केश खो गया है, कृपया इसे ढूंढने में मेरी सहायता करो। सहेलियां भी परेशान हो गईं और उस खोए हुए बाल को तलाशने लगीं, लेकिन वह कहीं भी न मिला। चिंतित होकर सुनकेशरी महल की ओर वापस लौट आई। शाम को वह अपनी माता के पास घबराते-घबराते पहुंची और सारी घटना उन्हें सुनाई।

सुनकेशरी की बात सुनकर उसकी माँ चिंता में पड़ गई। उसने तुरंत दरबार में एक बैठक बुलाई और सिपाहियों को खोए हुए स्वर्ण केश को ढूंढने के लिए भेज दिया। पर सिपाही भी वह बाल न ढूंढ सके। अब माँ की चिंता और बढ़ गई। वह सुनकेशरी को समझाते हुए बोली, प्रिय सुनकेशरी, तुम्हें अपने बाल खोने नहीं चाहिए थे, पर अब तो तुमने एक बाल खो ही दिया है, इसलिए तुम्हें इसकी सजा तो भुगतनी पड़ेगी। अब जो व्यक्ति उस खोए हुए केश को ढूंढकर लाएगा, तुम्हारा विवाह उसी से कर दिया जाएगा; यही तुम्हारी सजा होगी।

माँ ने सुनकेशरी के पिता से यह बात कही कि वे पूरे राज्य में घोषणा कर दें: जो भी सुनकेशरी का खोया हुआ बाल ढूंढकर लाएगा, उसी से उसकी शादी कर दी जाएगी।

सुनकेशरी बहुत डरी-हुई और घबराई हुई थी, इसलिए उसने इस शर्त को चुपचाप मान लिया। उसकी माँ की बात के अनुसार राज्य में ढोल, नगाड़े और याली बजाकर यह बात सबको सुना दी गई कि जो भी प्रिय सुनकेशरी का खोया हुआ बाल ढूंढकर लाएगा, उसी से उसकी शादी होगी।

इस खबर से राज्य में बड़ी हलचल मच गई और सभी लोग नदी के किनारे जाकर बाल तलाशने लगे, लेकिन किसी को वह बाल नहीं मिला। अंत में संयोग से सुनकेशरी के मंझले भाई को ही उसका खोया हुआ स्वर्ण केश मिल गया। अब माँ के दिए वचन के हिसाब से सुनकेशरी की शादी उसी भाई से होने की बात तय हो गई और लंबा-सा संघर्ष खत्म होकर यही संभावना दिखने लगी।

राज्य की घोषणा के मुताबिक राजकुमारी सुनकेशरी का विवाह उसके मंझले भाई के साथ ही तय हो गया। दरबार में शादी की तैयारियाँ शुरू हो गई। इस फैसले से सुनकेशरी बिलकुल खुश नहीं थी। वह अपने ऊपर बना रहे यों डर और दुख से असहाय महसूस कर रही थी और दिन-बे-दिन खोई-खोई-सी रहती थी।

सुनकेशरी बहुत डरी-हुई और घबराई हुई थी, इसलिए उसने माँ के उस आदेश को चुपचाप स्वीकार कर लिया। फिर वही हुआ जो राज्य में तय हुआ था: ढोल, नगाड़े और याली बजाकर पूरे राज्य में यह घोषणा कर दी गई कि जो भी प्रिय सुनकेशरी का खोया हुआ बाल ढूंढकर लाएगा, उसी से उसकी शादी कर दी जाएगी।

यह सुनकर पूरे राज्य में हलचल मच गई और सभी लोग नदी के किनारे खोए हुए बाल की तलाश में निकल पड़े। लेकिन कोई भी वह बाल न ढूंढ पाया। आखिरकार, संयोग से सुनकेशरी के मंझले भाई को ही उसका खोया हुआ स्वर्ण केश मिल गया। अब माँ के दिए वचन के हिसाब से सुनकेशरी की शादी उसी के भाई से होने की बात तय हो गई। इस तरह लंबे संघर्ष के बाद यही संभावना सामने आई कि सुनकेशरी का विवाह उसी भाई के साथ होगा।

राज्य की घोषणा के मुताबिक राजकुमारी सुनकेशरी का विवाह उसके ही मंझले भाई के साथ तय हो गया। दरबार में शादी की तैयारियाँ शुरू हो गई। इस फैसले से सुनकेशरी बिलकुल भी खुश नहीं

थी। वह अपने ऊपर रही बीत रहीं घटनाओं से असहाय महसूस कर रही थी और दुःख में आकुल–व्याकुल हो रही थी।

तभी एक कौवा उसके सामने आया और उसने दुखी सुनकेशरी से पूछा, "प्रिय, तुम इस तरह विरह और व्यथा में क्यों छटपटा रही हो? दुखी मत रहो।" कौवे ने उसे एक कदंब का बीज दिया और सलाह दी, "नदी के किनारे जाकर इस बीज को मिट्टी में बो दो। अपने साथ एक मोटा धागा, कुछ तिल, चावल और एक छोटी सी खुरपी भी ले जाना। बीज बोने के बाद तुरंत वापस आते हुए बार-बार कहती जाना-'बढ़–बढ़, कदंब, जल्दी बढ़।'"

विपत्ति में फंसी सुनकेशरी के पास उस समय कौवे के सुझाए उपाय के अलावा कोई दूसरा रास्ता नहीं था। उसने कौवे के दिए निर्देश के अनुसार नदी के किनारे जाकर कदंब का बीज बो दिया। जैसे ही उसने बीज बोया, उसी जगह से एक छोटा-सा पौधा निकल आया। अब वह हर रोज़ उस पौधे के पास जाती और बोलती, "बढ़–बढ़, कदंब, जल्दी बढ़।" कुछ ही दिनों में कदंब का पौधा बहुत बड़ा और विशाल वृक्ष बन गया।

फिर एक दिन सुनकेशरी उसी वृक्ष पर चढ़कर रहने लगी। उसके रहने से वृक्ष और भी तेज़ी से बढ़ने लगा। अंत में वृक्ष इतना ऊँचा हो गया कि सुनकेशरी उसकी चोटी तक पहुँच गई और वहीं टिककर रहने लगी। उधर महल में विवाह का मंडप तैयार किया गया क्योंकि विवाह का मुहूर्त हो चला था। सुनकेशरी को साज-श्रृंगार करके दुल्हन बनाने के लिए उससे खोजा जाने लगा परन्तु सुनकेशरी कहीं नहीं मिल रही थी। महल के कोने-कोने में सुनकेशरी को खोजा जाने लगा लेकिन उसका कहीं पता नहीं चल पा रहा था। अंत में जब सुनकेशरी महल में नहीं मिली तो सुनकेशरी के पिता उसे खोजते हुए नदी के किनारें जा पहुँचते है तब उन्होंने देखा की एक कदम के विशाल वृक्ष के उपर कुछ सोने की तरह चमकता हुआ कोई वस्तु दिखाई पड़ रहा था जिससे सुनकेशरी के पिता को संदेह हुआ कि कहीं पेड़ के ऊपर सुनकेशरी तो नहीं है। सुनकेशरी के पिता जैसे-जैसे पेड़ के ओर बड़े वे स्पष्ट होने लगे

की वह उनकी ही बेटी सुनकेशरी है। जो विवाह से बचने के लिए कदम के पेड़ पर चढ़ कर बैठीं है। सुनकेशरी के पिता जैसे ही वृक्ष के पास पहुँचे तो उन्होंने वृक्ष के ऊपर अपनी बेटी सुनकेशरी को देखते ही पिता ने उसे नीचे उतरने का आग्रह किया, परन्तु प्रिय सुनकेशरी ने भी तुरंत मना कर दिया है। पिता ने दोबारा प्यार भरे स्वर में कहा-

उतरों न उतरों प्रिय सुनकेशरी

विवाह का मुहूर्त बीत ... रहा है।

ऊपर से प्रिय सुनकेशरी बोली -

उत्तर तो जाती पिता जी,परन्तु मैं आपको अपना ससुर नहीं मान सकती! आप मेरे ससुर नहीं हो सकते!'' ऐसी पीड़ादायक विलाप सुनकर प्रिय सुनकेशरी के पिता को अपने ही बेटी का विवाह अपने ही दुसरे बेटे से करने के निर्णय पर पछतावा होता है और इसी पछतावे भाव से कहते है धिक्कार है, मुझ जैसे पिता पर कहकर नदी में कूदकर अपनी जान दे देते हैं।

इतने में सुनकेशरी की माँ भी अपने बेटी को ढूँढते- ढूँढते वहीं आ पहुंच जाती है। माँ ने कहा- उतरो न उतरो प्रिय सुनकेशरी विवाह का मुहूर्त बीत... रहा है।

सुनकेशरी ने कहा उतर तो जाती माँ पर क्या करूँ अप मेरी सास ठहरी ,मैं आपको सास नहीं मान सकती।

यह बात सुनते ही माँ को भी अपने निर्णय पर पछतावा होता है जिसके कारण वह भी कहती है- धिक्कार है मेरी जैसी निर्दय माँ पर जो अपने ही कलेजे के टुकडें के समान बेटी को उसी के अपने सगे भाई के साथ विवाह करने को कह रही हूँ मुझे भी जीने का कोई अधिकार नहीं है कह कर उसी नदी में कूद कर अपनी जान दे देती है।

दरबार में तीनों भाई सोचने लगे कि माता–पिता बहन को ढूँढने निकले थे, अभी तक लौटकर क्यों नहीं आए। बहुत समय बीत जाने पर भी माता–पिता लौट नहीं रहे थे, तो सुनकेशरी का बड़ा भाई उसे खोजने के लिए घर से निकल पड़ा। वह भी सुनकेशरी को ढूँढता-ढूँढता उसी स्थान पर पहुँच गया जहाँ उसके माता-पिता भी उसे तलाशते हुए पहुँचे थे। बड़े भाई ने ऊपर पुकारकर कहा:

"उतर ना, उतर जाओ प्रिय सुनकेशरी, विवाह का मुहूर्त बीतता-बीतता खत्म हो रहा है।"

ऊपर से सुनकेशरी बोली, "उतर तो जाती हूँ मेरे प्रिय भाई, पर आप मेरे ज्येष्ठ भाई ही ठहरे; मैं आपको 'जेठ' नहीं मान सकती।"

बड़े भाई ने मन ही मन सोचा, "धिक्कार है ऐसे भाई पर, जो अपनी ही बहन की शादी उसी भाई से कराने जा रहा था। इस पाप का भागी बनने से तो अच्छा है कि मैं इस नदी में कूदकर अपना प्राण त्याग दूँ।" ऐसा सोचकर वह भी नदी में कूद गया और अपना जीवन समाप्त कर दिया।

इसके बाद सुनकेशरी का मंझला भाई, जिससे उसका विवाह होने वाला था, उसे ढूँढता हुआ वहीं तक आ पहुँचा। मंझले भाई ने सुनकेशरी से बोला-

"कृपया नीचे उतर आओ, प्रिय बहन; घर और सभी तुम्हारी ही राह देख रहे हैं।"

हे! प्रिय सुनकेशरी, आप क्या पेड़ से नीचे उतरेंगी? यह पुकारते हुए मंझले भाई ने ऊपर देखा। सुनकेशरी बोली, "उतर तो जाती हूँ, भैया, पर आप पति बनकर रहेंगे, यह कैसे मान लूँगी?" जब भाई ने बहन के मुँह से यह बात सुनी, तो उसे एहसास हुआ कि वह कितना गहरा पाप करने वाला है। बहन का पति बनकर जीने से तो मर जाना ही बेहतर है। "मेरे जैसे भाई को इस तरह जीने का कोई अधिकार नहीं," यह भाव सोचकर वह भी नदी में छलांग लगा देता है और अपना प्राण त्याग देता है।

अंत में सुनकेशरी का सबसे छोटा भाई, उसे ढूँढता हुआ कदम्ब के विशाल पेड़ के नीचे पहुँचता है और ऊपर देखकर बोलता है, “दीदी! मैं भी आपके साथ इस पेड़ पर रहना चाहता हूँ।” सुनकेशरी बोली, “बाबू, तुम ऊपर नहीं आ सकते, क्योंकि यहाँ भूख–प्यास लगने पर तुम्हें खाने के लिए कुछ नहीं मिलेगा। इसलिए तुम वापस महल चले जाओ।”

पर भाई सुनकेशरी की बात मानने से इनकार कर देता है। जब वह बार–बार जिद करने लगता है, तो सुनकेशरी ऊपर से एक रस्सी उतारती है और कहती है, “बाबू, इस रस्सी के सहारे इस पेड़ पर चढ़ जाओ और इसी रस्सी से तुम चोटी तक पहुँच जाना।”

अब भाई अपनी बहन के कहने के अनुसार रस्सी के सहारे कदंब की चोटी तक पहुँच जाता है और सुनकेशरी के साथ वहीं रहने लगता है। पर अगले दिन सुबह होते ही भाई बोलने लगा-

“दीदी, मुझे भूख लगी है,”

भाई ने कहा। यह सुनकर सुनकेशरी ने उसके पास जो थोड़े-से तिल और चावल बचे थे, उन्हें उसे दिए और सावधानी से कहा, “बाबू! इस तिल–चावल को खाते समय संभलकर खाना, इसका एक भी दाना जमीन पर न गिरे। ध्यान से खाना।”

पर भाई छोटे-से हाथों से चीज़ों को संभाल ही न सका; कुछ दाने उसके नाज़ुक हाथ से जमीन पर गिर गए। उन्हीं गिरे हुए दानों को देखते ही देखते कई सैकड़ों गाय और भैंसों की उत्पत्ति हो गई, मानो स्वयं उसी जमीन से जीव उभर आए हों।

थोड़ी देर बाद भाई फिर बोला, “दीदी, मुझे नींद आ रही है।” सुनकेशरी ने उसे अपनी गोद में ही सोने को कहा। जब उसकी नींद खुली, तो उसने कहा, “दीदी, मुझे प्यास लगी है।” सुनकेशरी के

पास एक छोटी खुरपी थी, जिसमें उसने कदंब के पेड़ में बचा हुआ थोड़ा-सा जल रखा था। उसने खुरपी से वही पानी निकालकर भाई को पिलाया, जिससे उसकी प्यास पूरी तरह बुझ गई।

भाई ने जब पेड़ से नीचे देखा तो सैकड़ों गाय और भैंस घास में चरती हुई दिखाई दीं। उसे आश्चर्य हुआ और वह अपनी बहन से पूछा, "दीदी, ये सब गाय–भैंस यहाँ से कहाँ आ गईं?" सुनकेशरी मुस्कुराकर बोली, "बाबू, अभी कुछ देर पहले तुम्हारे हाथ से गिरे हुए तिल और चावल से ही ये सैकड़ों पशु उत्पन्न हो गए हैं। मैंने तुमसे तो संभलकर खाने को कहा था, मगर तुमने ध्यान नहीं दिया। देखो, अब समस्या हो गई, न?"

भाई ने सोचकर कहा, "दीदी, हमें अब पेड़ से नीचे उतर आना चाहिए। नीचे जाकर मैं गाय–भैंस चराऊँगा और आप गोबर साफ करते हुए घर का काम देखेंगी। जब मैं दिन में गाय चराने ले जाऊँगा, तब आप मेरे लिए माड़–चावल बनाकर रखना।" सुनकेशरी अपने भाई की बात से सहमत हो गई और दोनों भाई–बहन पेड़ से उतर आए। अब वे दोनों पशुपालन के माध्यम से साधारण जीवन व्यतीत करने लगे।

भाई दिन में गायों को चराने जंगल जाता और सुनकेशरी घर पर रहकर रसोई–घर–काम देखती। सुनकेशरी का रूप इतना अद्भुत था कि वह हमेशा इसी डर में रहती थी कि कोई उसे अपहरण न कर ले। इसीलिए वह अपने चेहरे पर कालिख रखकर अपनी सुंदरता छिपाती रहती, ताकि कोई उसे पहचान न सके। एक दिन किसी मायावी राक्षस को उसकी मोहित कर देने वाली खूबसूरती के बारे में पता चल गया, जिससे सुनकेशरी और भी सावधान हो गई।

फिर एक दिन किसी दूसरे देश के राजकुमार को भी सुनकेशरी की सुंदरता के बारे में सुनने–देखने का अवसर मिला। उत्सुक होकर उसने वेश बदलकर सुनकेशरी के पास जलरूप याचक बनकर

आना ठाना और उससे अपने हाथों से जल पिलाने की विनम्र याचना की। सुनकेशरी तैयार हो गई और उसके हाथों में जल डालकर पीने लगी ही थी कि राजकुमार ने चुपके से उसी जल को उसके चेहरे पर फेंक दिया। जल से कालिख धुल गई और सुनकेशरी की सच्ची सुंदरता खुलकर सामने आ गई। राजकुमार उसके रूप पर मोहित हो गया और उसे बहला-फुसलाकर अपने देश ले जाने में सफल हो गया।

शाम को जब भाई गाय चराकर घर लौटता है, तो देखता है कि चूल्हा बुझा पड़ा है और माड़–चावल भी नहीं बना है। फर्श पर केवल काला रंग और काला पानी बिखरा पड़ा है, मानो सुनकेशरी के चेहरे से घिसी हुई कालिख वहीं उतर आई हो। इतना देखकर भाई घबरा जाता है और चिल्लाता है, "दीदी… दीदी…" पर कोई उत्तर नहीं आता।

वह फिर से जोर–जोर से "दीदी… दीदी" कहकर आसपास भाग-दौड़ करता है, लेकिन दीदी का न कहीं अंदर ही नज़र आती है और न आस-पास किसी से कोई जानकारी मिलती है। अंत में वह एकाकी बैठकर जोर-जोर से रोने लगता है और भगवान से विनती करता है, "हे प्रभु, मेरी बहन मुझे कैसे मिलेगी? मेरी मदद कीजिए।"

इसी बीच अचानक उसके सामने वह गाय आती है, जिसे वह रोज चराता था। गाय नज़दीक आकर पूछती है, "बालक, क्या हुआ? तुम इस तरह पीड़ा में क्यों रो रहे हो?" भाई बताता है, "मेरी प्रिय दीदी सुनकेशरी कहीं गुम हो गई है। मैं बहुत ढूँढ चुका हूँ, लेकिन उसका कहीं पता नहीं चलता, इसलिए रो रहा हूँ।"

गाय मुस्कुराकर बोलती है, "बस, बालक, अब रोने की ज़रूरत नहीं। मेरी पीठ पर बैठ जाओ और बताओ कि मेरी पीठ पर कितने बाल हैं। जब तुम गिन लोगे, तो मैं तुम्हें तुम्हारी दीदी के पास पहुँचा दूँगी।" भाई लंबे समय तक गाय की पीठ पर हर एक बाल गिनता रहता है। जैसे ही वह अपना

सिर उठाकर देखता है, तो पाता है कि गाय अब एक सुन्दर महल के पास खड़ी है – वही महल जहाँ उस राजकुमार का निवास था, जिसके साथ सुनकेशरी ले जाई गई थी।

भाई गाय की पीठ से उतरता है और महल की सीढ़ी पर बैठकर सोचने लगता है कि अब दीदी को कैसे बुलाएँ। उतने में ऊपर के बरामदे में सुनकेशरी अपने केश झाड़ रही होती है। अचानक आँगन में उसका कंघा गिर जाता है और भाई की नज़र उतरते हुए कंघे पर पड़ती है। उसी क्षण उसे सुनकेशरी की आवाज़ सुनाई देती है, जो काग से कह रही है, "हे काग, नीचे जाकर मेरा कंघा ले आओ।"

काग तुरंत उत्तर देता है, "प्रिय सुनकेशरी, तुम अपने भाई से कह दो वह नीचे से कंघा लेकर दे दे।" यह बात सुनकर सुनकेशरी दुखी स्वर में बोलती है, "अगर मेरा भाई यहाँ होता, तो वह निश्चय कंघा लेकर लौट आता, पर दुख इस बात का है कि मेरा भाई मेरे साथ नहीं है।" नीचे बैठा भाई यह सब सुनकर तुरंत कंघा उठाता है और दौड़कर ऊपर पहुँच जाता है।

सुनकेशरी अपने भाई को देखकर आश्चर्य और खुशी से भर जाती है और पूछती है, "बाबू, तुम यहाँ तक कैसे पहुँचे?" भाई पूरी कथा क्रम से, लगभग विस्तार से सुनाता है। इतना सुनने के बाद सुनकेशरी यह निर्णय लेती है कि वह अपने भाई को अब कभी बिछड़ने नहीं देगी और दोनों भाई-बहन मिलकर सुख–शान्ति से अपना जीवन व्यतीत करने लगते हैं।

सुनाने वाले को फूलो की माला

सुनने वालो को सोने की माला

यह कथा वैकुंठ चला।।

2. स्वर्ग जाने वाली सीढ़ी (स्वर्ग जाने सिँढी)

उत्तर दिशा में एक विशाल थालीनुमा पर्वत, दरामदीन, फैला हुआ था, जिसके चारों ओर श्रृंखलाएँ और ऊँचे गगनचुंबी पर्वतों का घेरा था। इन पर्वतों की गोद में एक छोटा-सा सुंदर गाँव बसा था। दरामदीन के निवासी अत्यंत सौभाग्यशाली थे। उन्हें कभी खाने-पहनने की कमी न होती थी, इसलिए वे ईश्वर-भक्ति में लीन रहते।

गाँव में बघसिंह मंडल नामक महान संत रहते थे। जप-तप, साधना और दैवी गुणों से वे सम्मानित थे। लंबी तपस्या से प्रसन्न होकर उनके इष्टदेव ने दर्शन देकर वर माँगने को कहा। बघसिंह ने प्रार्थना की, "मेरे गाँववालों को परिश्रम न करना पड़े, न खाने-पिणे की कमी हो।" देव ने वरदान दे दिया। इसी कारण गाँव हमेशा समृद्ध रहा। वहाँ की उपजाऊ भूमि साल भर अन्न उगाती, दीवारें लिपतीं और बर्तन बनते।

बघसिंह गाँववालों व संतानों को सांसारिक मोह से मुक्त कर स्वर्ग भेजना चाहते थे। उन्होंने सभी को बुलाया और स्वर्ग जाने वाली सीढ़ी बनाने की योजना बनाई। गाँववासियों ने उनका मान रखते हुए समर्थन किया। उत्साह से भरे वे मिट्टी के हंडे तैयार करने लगे। लोभ और अलौकिक दर्शन की कामना से दिन-रात कार्य चला। जल्दी ही हंडों के ढेर लग गए। सीढ़ी बनानी शुरू की। ऊपर दो साहसी कारीगर पहुँचे, नीचे अन्य सामग्री दे रहे थे। लग रहा था, स्वर्ग नजदीक है। शाम से पहले कार्य पूरा करने की ठानी। बादलों में घिर चुके ऊपरी कारीगरों को नीचे कुछ न दिखा।

नीचे वालों को भ्रम हुआ कि स्वर्ग आ गया। ऊपर वालों ने चिल्लाया, "कोंग्बिन्यांतंग!" अर्थात् 'दो लंबी-लंबी छड़ियाँ भेजो।' पर नीचे 'तोड़ दो' सुनाई दिया। वे आश्चर्यचकित: "ये विशाल सीढ़ी तोड़ने को कह रहे?" पुष्टि के लिए पूछा, "सीढ़ी तोड़नी है?" ऊपर से फिर "कोंग्बिन्यांतंग!" पर

नीचे 'तोड़ो, नष्ट करो' लगा। निश्चित होकर उन्होंने डंडों से नीचे हंडे तोड़ने शुरू किए। देखते-देखते गगनचुंबी स्वर्ग-सीढ़ी धराशायी हो गई। मिट्टी के टुकड़े ढेर बन गए। बघसिंह का स्वर्ग-स्वप्न चूर-चूर।

लेप्चा लोक में यह कथा आज भी जीवंत है। दारमदिन के फैलावदार रास्ते पर मिट्टी के हंडे के मलबे बिखरे हैं, मानो इतिहास साक्षी बन प्रमाणित कर रहा हो।

3. सुम्निमा और पारुहाङ (सुम्निमा र पारुहाङ)

हिमालय की रचना के बाद सृष्टिकर्ता को एक नई चिंता हुई। उन्हें लगा कि यह विशाल, सुंदर पर्वत श्रृंखला व्यर्थ न जाए। इसलिए उन्होंने हिमखंडों से सबसे पहले एक युवक गोकोपी और एक युवती संत सुरुख की सृष्टि की। दोनों का विवाह कराया, और इनसे एक परम सुंदरी कन्या का जन्म हुआ, जिसका नाम सुम्निमा रखा गया।

हिमालय भले ही भव्य और शांत था, पर सुम्निमा अकेलेपन से व्याकुल हो उठी। वह वीरान स्थान छोड़कर वृंदावन के एकांत जंगल में पहुँची। प्रकृति-पुत्री बनकर वह पशु-पक्षियों, वृक्षों, हवा और जल के साथ खेलती-कूदती बड़ी हुई। धीरे-धीरे वह इनकी भाषा समझने लगी। वन की रानी बन वह स्वतंत्र जीवन व्यतीत करने लगी। प्रकृति के आलिंगन में घुलमिलकर वह एक नवयौवन सुंदरी युवती बन गई।

एक दिन जंगल भ्रमण में सुम्निमा को शिकारी-सा प्रतीत होने वाला एक नवयुवक दिखा, जो आकाश से उतरकर धरती पर विचर रहा था। उसकी वृष-जैसी बलिष्ठ, सुगढ़ देह देखकर सुम्निमा मोहित हो गई। वह पारुहाङ था। पहली नज़र में ही सुम्निमा उसके प्रति प्रेमाकर्षण से भर गई, पर उसके बाद पारुहाङ कहीं नज़र न आया। सुम्निमा ने उसे खोजा, पर सफलता न मिली।

फिर उसके मित्रों से पता चला कि पारुहाङ हवा के साथ धरती पर आता और उड़कर चला जाता है। प्रेम में डूबी सुम्निमा के लिए हर पल कष्टसाध्य हो गया। वह पागल-सी हरकतें करने लगी। जीव-जंतु मित्र दुखी होकर वायु से प्रार्थना करने लगे कि वह पारुहाङ को सुम्निमा की व्यथा बताए।

वायु ने आश्वासन देकर पारुहाङ तक बात पहुँचाई और सुम्निमा के सौंदर्य का गुणगान किया। पारुहाङ प्रसन्न हुआ, पर कुरूप होने का भय था। फिर भी वह सुम्निमा के पास पहुँचा।

उसके लावण्यपूर्ण रूप पर पारुहाङ मोहित हो गया, पर मन में संदेह जगा – क्या अप्सरा-सी सुम्निमा मेरे जैसे कुरूप से बंधन स्वीकार करेगी? वही हुआ। सुम्निमा ने पारुहाङ का कुरूप चेहरा देखा तो उसके पैरों तले ज़मीन खिसक गई। प्रेम केवल उसके बलिष्ठ शरीर से था, चेहरा देखते ही घृणा जागी। पारुहाङ अपमानित हो आकाश लौट गया। स्वाभिमान-भंग से क्रोधित वह प्रतिशोध की ठानने लगा।

वृंदावन की सभी नदियों, नालों, झरनों, कुओं और तालाबों का जल सुखाने की कुचेष्टा में वह पृथ्वी पर लौटा। अपनी शक्तियों से सब जल शोषित कर दिया। वृंदावन में भयंकर सूखा पड़ गया, चारों ओर हाहाकार मच उठा।

वृंदावनवासी इस अचानक विपत्ति से चकित थे। पशु-पक्षी प्यास से व्याकुल हो उठे, किंतु आकाल का कारण किसी को न पता चला। पारुहाङ बदले की आग में तृप्त था; उसने जादू-टोने से सुम्निमा के घमंड को चूर करने हेतु वृंदावन का सारा जल सुखा दिया था। सुम्निमा सदमे में पहुँच गई। जलाभाव से पेड़-पौधे सूखने लगे, जीव-जंतु भटकने लगे। दिन बीतते ही सुम्निमा की दशा और बिगड़ती गई; वह बेसुध पड़ी रहने लगी।

पक्षी यह दृश्य सहन न कर सके। एक-एक कर जल की तलाश में उड़ चले। लहँ◌ाचे के कोटर में एक पक्षी को थोड़ा जल मिला, किंतु उसने स्वयं पी लिया। दूसरे ने कर्कला के पत्ते पर जल लाकर सुम्निमा को पिला दिया। पीनेवाले जल से सुम्निमा और बीमार पड़ गई। सभी चिंतित होकर सोचने लगे कि उसे कैसे बचाएँ। जीव-जंतु वैद्य खोजने लगे। उल्लू को बुलाया गया। उसने पंचांग देखी

तो ज्ञात हुआ कि कर्कला के जल में जादू था। उल्लू बोला, “उसे ठीक करने वाला आकाशवासी है – पारुहाङ।”

जीव-जंतु आकाश की ओर बढ़े। रास्ते में वायु से अनुनय किया। वायु ने पारुहाङ को सुम्निमा की दयनीय दशा बताई। पारुहाङ को अपनी भूल का बोध हुआ। वह शीघ्र पृथ्वी पर लौटा और जड़ी-बूटियों व तंत्र-मंत्र से सुम्निमा की जान बचाई। दोनों ने अपनी भूल स्वीकार की। सुम्निमा के हृदय में पारुहाङ के प्रति प्रेम जागा। अंततः दोनों का विवाह हुआ।

उनसे पाँच संतानें हुईं: बाघ, मनुष्य, भालू, तेंदुआ और कुत्ता। ये सभी मिल-जुलकर रहने लगे। किरात समाज में पारुहाङ-सुम्निमा को शिव-पार्वती का रूप माना जाता है। सुम्निमा को प्रकृति-पुत्री कहकर पूजा जाता है। लेक्सेप शिवमंदिर के द्वार पर उनके चित्र बने हैं, जो इस आस्था के प्रतीक हैं।

4. रोँगीत और रोँगनू (रोँगीत र रोँगनू)

लोककथाओं के अनुसार, माता पार्वती के हृदय से प्रस्फुटित होकर बहने वाली तीस्ता नदी को 'त्रि-स्रोता' कहा जाता है, अर्थात् तीन धाराओं वाली नदी। इसका उद्गम छोल्हामु झील से होता है, जो हरा और नीलम रंग की जलधारा 'रोंगनु' के नाम से प्रसिद्ध है। प्राचीन काल में कंचनजंगा की गोद में बसा इंद्रीकील पर्वत इंद्र का गुप्त किला माना जाता था। इस पर्वत को दिव्य वरदान प्राप्त था, क्योंकि किरातेश्वर महादेव ने संसार की इस सबसे मनोहर तपोभूमि में कठोर तपस्या की थी।

सिक्किम की प्राकृतिक संपदा और जलस्रोतों से समृद्ध भूमि में दो प्रमुख नदियाँ पहाड़ियों के बीच बसी थीं-रोंगीत (रंगीत) और रोंगनु (तीस्ता)। रोंगनु ने पहुनरी हिमनद, जेमू हिमनद, छोल्हामु सरोवर, गुरुदोंगर सरोवर आदि सभी जलस्रोतों को अपने आगोश में समेट रखा था। एक दिन रोंगनु अपने प्रियतम रोंगीत से मिलने की मनोकामना लिए पहाड़ की तलहटी में प्रतीक्षा कर रहा था।

रोंगीत भी रांछाप छू, रंगीत और रिंग्यौ छू से जल एकत्र कर पश्चिम सिक्किम की अलकांतर पहाड़ियों से निकलते हुए हिमालय की गोद से उतर रही थी। वह शुभ मुहूर्त की प्रतीक्षा में तीस्ता से मिलने को आतुर थी। रोंगनु और रोंगीत संसार के सबसे अनन्य प्रेमी युगल थे, किंतु दोनों एक-दूसरे से विमुक्त थे। एक का उद्गम उत्तर हिमालय से, तो दूसरे का पश्चिम हिमालय से-इसलिए उनका मिलन असंभव-सा प्रतीत होता था। दूरी के कारण दोनों सदा उदास रहते। कभी रोंगनु सर्प को दूत बनाकर, तो रोंगीत पक्षी को भेजकर एक-दूसरे की कुशलक्षेम पूछते।

एक दिन दोनों प्रेमियों ने एकाकार होने का संकल्प लिया। उन्होंने जन्म-जन्मांतर तक एक साथ बहने की प्रतिज्ञा की और अलगाव की कसम तोड़ी। कंचनजंगा से अपनी कामना पूर्ण करने का

आशीर्वाद मांगा। लेक्सेप के किरातेश्वर महादेव मंदिर में पारुहाङ और सुम्निमा की स्मृति में पूजा-अर्चना की, ताकि उनका प्रेम गहन, दीर्घायु और अमर हो जाए।

एक दिन रोंगीत अत्यंत गंभीर और भावुक हो रही थी, किंतु जैसे ही उसे स्मरण हुआ कि उसकी दीर्घ प्रतीक्षा अब समाप्त होने वाली है, वह आनंद से गद्गद हो उठी। रोंगनु से मिलने को उत्सुक और उल्लसित होकर वह प्रसन्नचित्त मन से विशेष परिधान धारण कर सज-संवरकर हिमालय के अन्तिम छोर से प्रस्फुटित हुई। तीव्र गति से एक पक्षी की पीठ पर सवार होकर वह अपने गंतव्य की ओर प्रस्थित हुई।

दूसरी ओर रोंगनु ने संचित आभूषण धारण कर सज-धजकर हिमालय के उद्गम स्थल पर प्रकट हुई। उसने अपनी सुखद यात्रा अपने दूत सर्प की पीठ पर आरंभ की। सर्प ने सीधा मार्ग त्यागकर घुमावदार पथ चुना और रोंगनु को समय से पूर्व ही गंतव्य पर उतार दिया। अब रोंगनु अपने प्रियतम रोंगीत की प्रतीक्षा में लीन थी।

वहीं पक्षी की तीव्र उड़ान के बावजूद रोंगीत समय पर न पहुँच पाई। कारण था कि पक्षी ने सीधा रास्ता न अपनाकर ऊपर-नीचे, आगे-पीछे, दाएँ-बाएँ इधर-उधर भटकते हुए यात्रा की, जिससे विलंब हो गया। अंततः कठिनाई से पहुँचकर रोंगीत ने देखा कि उसकी प्रेमिका लंबे समय से उसका इंतजार कर रही है। पुरुषत्व के बावजूद समय पर न पहुँच पाने पर रोंगीत लज्जित और लघ्नाशय से भरी हुई थी। रोंगनु को इतना इंतजार कराने पर वह रूठी भी हुई थी।

फिर भी रोंगनु ने रोंगीत को सांत्वना देते हुए कहा, "रोंगीत, तुम समय पर न पहुँचीं, इसलिए हमें एक समझौता करना होगा।" रोंगनु ने पूछा, "क्या?" रोंगीत ने उत्तर दिया, "आज इस पावन प्रेम-

मिलन के अवसर पर हम दोनों एक-दूसरे पर कभी क्रोध न करने का संकल्प लें।" इतने विलंब के बावजूद रोंगनु ने रोंगीत को आलिंगन में भरकर वचन दे दिया।

आज भी दक्षिण सिक्किम के मल्लिन रबर वन के आसपास इंद्रकील त्रिवेणी के रूप में गहरा हरा रंगधारी 'रोंगनु' और गहन नीलवर्ण 'रोंगीत' का प्रणय-मिलन अत्यंत मनोरम दृश्य प्रस्तुत करता है। ये दोनों महान प्रेमी युगल परस्पर प्रेमालिंगन में बंधकर एक लय, एक लहर और एक प्रवाह में एक साथ बहते हैं। प्रेमास्थल पेशोक से नीचे झांकें तो पहाड़ की जड़ पर हरे परिधान में सजी प्रेमिका और नील वस्त्र में अलंकृत प्रेमी युगल-रंगीन तीस्ता नदी के साक्षात् स्वरूप में-दर्शन पाते हैं। आज भी इंद्रकील त्रिवेणी की पवित्र भूमि स्वर्गीय अनुभूति प्रदान करती हुई रोंगीत-रोंगनु प्रेम की साक्षी बनी निरंतर बह रही है।

5. उत्तिस और गुराँस की प्रेम कथा (उत्तिस र गुराँसको प्रेम कथा)

एक दिन अचानक सुरीली और रोज्जा की भेंट हो गई। सुरीली की एक झलक मात्र से ही रोज्जा के हृदय में उसके प्रति प्रेम की ज्वाला प्रज्वलित हो उठी। यह सौभाग्यपूर्ण घटना गुराँस के लिए अत्यंत आश्चर्यजनक थी। मन ही मन गुराँस सोचने लगा, "सुरीली तो उत्तिस की संतान है-लंबी काया, सुडौल अंग और अप्रतिम सौंदर्य की स्वामिनी। उसकी शालीन सृष्टि और मनोहर मुखमंडल के कारण वह मूल्यवान वृक्षों में सर्वश्रेष्ठ गिनी जाती है।" गुराँस ने इस शालीन सौंदर्य को अपने आत्मा में बसा लिया था।

सुरीली से भेंट रोज्जा के लिए किसी सौभाग्य से कम न थी, किंतु उसके मन में भय भी था-कहीं वह मुझे अप्रिय न समझे। "मैं तो बोने वंश का पुत्र हूँ; मेरा शरीर गठानों और छिलकों से आच्छादित है, और मैं कीचड़ में भी सुखी रहता हूँ।" किंतु दोनों के आत्मिक मिलन से पूर्व ही रोज्जा अनजाने में उत्तिस के जंगल में खड़ा हो गया। वास्तव में, वह अपने पिता गुराँस के साथ सुरीली के पिता से विवाह प्रस्ताव रखने आया था।

आज फिर जब रोज्जा और सुरीली की नयनों की टकरी हुई, तो सुरीली दौड़कर गुराँस के पास आई। इशारे से रोज्जा और गुराँस को घर के अंदर ले गई। अंदर जाते हुए सुरीली बार-बार रोज्जा को देखकर मुख फेर लेती। रोज्जा को उत्तिस के घर (जंगल) की देखभाल करने वाली परम सुंदरी सुरीली के सान्निध्य में कुछ क्षण बिताने की इच्छा हो रही थी; वह इस मनोहर वन में प्रवेश का अवसर खोज रहा था। किंतु द्वार पर ही उसे प्रवेश निषेध कर दिया गया।

कई वर्षों की प्रतीक्षा के पश्चात गुराँस ने उत्तिस से मन की बात खुलकर कह डाली: "महोदय! शुभ कार्य के लिए शुभ प्रस्ताव लेकर आया हूँ। आपकी पुत्री का चेहरा ही नहीं, शारीरिक बनावट भी अति सुंदर है। यदि वह हमारे खानदान में आ जाए, तो मेरे वंश का उद्धार हो सकता है। आने वाली पीढ़ियाँ कद-काठी में ऊँची, सुंदर और हृष्ट-पुष्ट जन्म लेंगी। महोदय, आपसे विनती है-आपकी पुत्री का हाथ मेरे पुत्र के लिए मांगता हूँ।"

गुराँस की बात सुनते ही उत्तिस को क्रोध की ज्वाला भड़क उठी। वंश की मर्यादा, शान-शालीनता पर उसे अत्यधिक घमंड था। घृणा और अशिष्टता से भरे स्वर में उसने जवाब दिया, "क्या तुमने कभी अपने इस छोटे कद और कुरूप रंग को देखा है? कहाँ तुम्हारा गठों में उलझा, मुड़ा-तुड़ा बोना शरीर, और कहाँ मेरी लंबी काया-वाली सुडौल पुत्री! कैसे सोच लिया कि तुम्हारा बेडौल पुत्र मेरी बेटी के साथ सुंदर जोड़ी बनेगा? मैं अपनी सुकुमारी, कोमल पुत्री को किसी ऐरे-गैरे से विवाह नहीं दूँगा।"

उत्तिस के घमंडपूर्ण उत्तर से गुराँस खिन्न हो गया। इस अपमान ने उसके स्वाभिमान को गहरा आघात पहुँचाया। लड़खड़ाते हुए वह उठा और उत्तिस को कठोर शब्दों में उत्तर दिया, "अच्छा हुआ महोदय, आपने मेरी आँखें खोल दीं। आपकी पुत्री निश्चय ही भाग्यशाली है, जो किसी सौभाग्यशाली वर को प्राप्त होगी।" कुछ क्षण शांत रहकर गुराँस ने निवेदन किया, "महोदय, अशिष्टता के लिए क्षमा चाहता हूँ। वसंत ऋतु के आरंभ पर अपनी पुत्री को एक बार मेरे बगीचे में अवश्य भेजें, ताकि वह स्वयं आँखों से मेरे पुत्र का वास्तविक रूप देख ले। उसके बाद जैसा आप चाहें-मेरा पुत्र उसे आँख उठाकर भी न देखेगा। यदि यह शर्त मंजूर हो, तो मैं वचन निभाने का आश्वासन देता हूँ, और मेरा पुत्र भी इसका पालन करेगा।"

उत्तिस ने उच्च स्वर में कहा, "तुम्हारी शर्त मंजूर है। वसंत का आगमन होते ही मेरी सुरीली गुराँसवन की यात्रा करेगी-यह मेरा वचन है।" इस प्रकार गुराँस और उत्तिस के बीच समझौता हो गया, और दोनों ने अपने वचनों व शर्तों पर अटल रहने का संकल्प लिया।

द्वार पर पिता की प्रतीक्षा में खड़ा रोज्जा ने जिज्ञासु होकर पूछा, "अंदर क्या हुआ पिताजी? बताइए न।" पिता की झलकती लाल आँखें, अपमान से सिकुड़ी गर्दन और झुकी निगाहें देखकर उसे ज्ञात हो गया कि मनोकामना अपूर्ण रही। निराश पिता-पुत्र अपने वन की ओर लौट पड़े।

रोज्जा को चिंता ने रातभर आगोश में जकड़ रखा; नींद न आई। सदा सबेरे उठने वाला वह आज देर से जागा। बगीचे में खड़ा होकर बाहर निहारने लगा और घोर संन्यास में सुरीली का राह देखने लगा। उसके बगीचे के दूसरी ओर बसे उत्तिस के वन पर सुबह सूर्य की कोमल सुनहरी किरणें पड़ रही थीं। वैशाख के रंग में रंगकर वह वन अतीव रमणीय लग रहा था-जिसे देखने वाला देखता ही रह जाए। कारण था उसमें वास करने वाली सुंदरी प्रियसी, जिसने उसे उसके लिए सर्वथा विशिष्ट बना दिया।

वैशाख के प्रथम सप्ताह के साथ वसंत का आगमन हुआ। सुरीली ने शुभ मुहूर्त देखकर पिता का आशीर्वाद ग्रहण किया और गुराँस के वन की ओर प्रस्थित हुई। जाते समय पिता ने पुनरावृत्ति की, "बेटी, मेरी शर्त का मान रखना। गुराँस के वन में खो जाना, जल्दी लौटना, कुल की रक्षा करना-अब यह तुम्हारे हाथ में। मानहानि न हो, बहकावे में न पड़ना।" सुरीली ने विश्वास दिलाया, "ठीक है पिताजी, ध्यान रखूँगी।" किंतु मन ही मन बोली, "पिताजी! यदि लौटने में विलंब हुआ तो समझना मैं गुराँस वन की रानी बनकर खिल रही हूँ। जल्दी लौटी तो भी माँ से मिलकर पीड़ा अपनाकर घर-त्याग करूँगी।"

प्रदूषणरहित शुद्ध रंग, मनमोहक रूप, निश्चल मुस्कान-प्रकृति की सर्वोत्तम सृष्टि थी सुरीली! वर्षों बाद गुराँस वन पहुँचकर उसका मन आत्मविभोर हो उठा। उसे अनुभव हुआ कि सच्ची सुंदरता

शरीर से नहीं, आत्मा से होती है। सुरीली अपनी बड़ी सुंदर आँखों और घुमावदार ओठों से गुराँस की सौंदर्य परख रही थी। मन में उसकी सुन्दरता समेटकर प्रेम समर्पित कर चुकी थी। वर्षों से फूलोंसे-फैला, हरा-भरा गुराँस वन-गुराँस ने भी महसूस किया कि उसके भीतर पनपता प्रेम सर्वत्र बिखरा है। यह देख सुरीली भी भावविभोर हो गई।

रोज्जा ने कहा, "मेरी पवित्र भूमि में आपका स्वागत है।" अतिथि-सत्कार में कोई कमी न रखी। अधीरता और दुःख पर संयम रखकर एकाग्र रहा। दोनों प्रेमी आलिंगनबद्ध हो गए। गुराँस-उत्तिस की शर्तें, शपथें क्षण भर भूल गए। अगली सुबह विदा देते हिले पहुँचकर सुरीली बोली, "मैं तुमसे प्राणों से भी अधिक प्रेम करती हूँ। मुझे स्वीकार करो, हमारे प्रेम को विवाह का रूप दो। मैं तुम्हारे वंश की पुत्रवधू बनने को तत्पर हूँ।"

रोज्जा एकाएक द्रविड़ चट्टान-सा कठोर हो गया। हृदय के आघात प्रेम को दबाते हुए बोला, "सुरीली! तब हालात अलग थे, अब अलग हैं। पिता के आदेश का पालन बाध्यता है। आपके पिता को दिया वचन निभाना ही एकमात्र विकल्प।" भावुक होकर कहा, "मैं तो इयाम्टे, पुन्के जाबो वृक्ष। पिताजी ने मेरा पिचका रूप ही देखा। उन्हें नहीं पता, मेरे भीतर सृजन का ईश्वरीय आशीर्वाद भरा है। तुम्हें न पाने का सोचकर मैं मरणासन्न था; आत्महत्या का भी ख्याल आया। किंतु तुम्हें मूल रूप न दिखाए मरना संभव न था। पिता निराशा-अपमान से बीमार हो मृत्यु को प्राप्त हुए। मृत्यु-शय्या पर उन्होंने वचन लिया-उत्तिस को दिया वचन मैं ही निभाऊँगा। हमारा प्रेम अधूरा रहा। कहाँ तुम-लंबी-चौड़ी, सौम्य सुंदर काया धनी; और कहाँ मैं-पिचका इयाम्टे गुराँस! उत्तिस की परम सुंदरी कन्या को प्रेम करने की गुस्ताखी नहीं कर सकता।"

सुरीली की अप्सरागामिनी सुंदरता सर्वत्र छाई थी। मनमोहक सुंदरी के समक्ष रोज्जा की शिकायतें सुनाई गईं। काल्पनिक सपना समाप्त, साक्षात् हकीकत सामने-फिर भी वह अप्राप्य! आघात प्रेम और अनुनय से भी द्रविड़ मन न पिघला।

सुरीली ने पिता उत्तिस के कठोर नियमों, समाज के बंधनों, निर्भरता और नियंत्रण को त्याग दिया। पूर्णतः टूटकर वह टूटे हृदय को थामे घर की ओर बढ़ी। ईश्वर को पुकारते हुए बोली, "हे प्रभु! अगले जन्म में मुझे रोज्जा की प्रेमिका बनने का वरदान दे। मुझे ऐसे देश में जन्म दे, जहाँ प्राकृतिक सौंदर्य के साथ पेड़-पौधे, फूल-पत्तियाँ उन्मुक्त रह सकें।" समाज, इतिहास और भावी पीढ़ी को समझने पर उसे घृणा-सी अनुभूति हुई।

घर पहुँच पाती इससे पूर्व रास्ते के दूसरे छोर पर पहुँचकर पहाड़ी भाग में कीचड़-सनी बर्फ की भयानक धारा ने उसे घेर लिया। हृदय में रोज्जा के प्रति प्रेम उमड़ रहा था। अगले जन्म में एक ही देश, एक ही वेषभूषा में जन्म की प्रार्थना दोहराते हुए वह झावम्मई पैहोमा में कूद पड़ी। धारा ने उसे जकड़ लिया; कीचड़ में विलीन हो गई। अपूर्ण प्रेम, खिलखिलाती आशा और मनोकामना संग उसकी अकाल मृत्यु हो गई।

बेटी की असमय मृत्यु से उत्तिस आत्मग्लानि, पश्चाताप और पाप बोध से नष्ट हो गया। आज भी जहाँ पैहो जाता है, वहाँ उसके वंशज पैहो के किनारे जंगल सृजित कर तैनात रहते हैं। लोकविश्वास प्रचलित है- वे पैहो रोकते हैं, वंशजों की रक्षा करते हैं। ताकि सुरीली-सी अकाल मृत्यु न हो, कोई प्राणी अपूर्ण प्रेम में आत्महत्या न करें।

6. गोलसिमल... गोलसिमल !! (गोलसिमल…गोलसिमल!!)

यह कई वर्ष पहले की बात है। एक गाँव में एक छोटा-सा, सुखी परिवार रहता था। परिवार में माता-पिता और उनकी एक साल की छोटी बेटी थी। पिता का नाम सनमान और माता का नाम सानी था। कई पूजा-अर्चना तथा तीर्थयात्रा के बाद ईश्वर के वरदान के रूप में उनकी पुत्री जन्मी थी। माता-पिता ने उसका नाम सिमलचरी रख दिया, क्योंकि वह सिमल की तरह गोल- मटोल चेहरे और सिमल की भुवाज जैसे कोमल शरीर वाली थी।

सनमान अपनी बेटी को प्यार से "गोलसिमल" कहकर पुकारता था, और उसकी माँ उसे केवल "सिमल" कहकर बुलाती थी। उसी वर्ष सनमान के गाँव में भयंकर अकाल पड़ा, जिसके कारण खेत सूख गए। इसी सूखे ने कृषि भूमि को बर्बाद कर दिया। फसलें नष्ट हो गईं, गाँव वाले अकाल से बचने के लिए गाँव छोड़कर पलायन कर गए। परंतु सनमान और सानी अपना पुराना, पुश्तैनी घर छोड़कर कहीं जाना नहीं चाहते थे।

धीरे-धीरे हालत बद से बदतर होती गई। अकाल के सूखे ने कृषि भूमि को बंजर भूमि में बदल दिया। अब शाम और सुबह खाने के लाले पड़ने लगे। एक वक्त का खाना भी नसीब नहीं हो पा रहा था। इतना ही नहीं, नल का पानी भी सूख गया था। अब उस गाँव में जीना मुश्किल होता जा रहा था। इस तरह एक पूरा वर्ष बीत गया।

एक दिन सानी घास काटने के लिए पहाड़ों में गई और फिर कभी वापस लौटकर नहीं आई, क्योंकि पहाड़ से गिरने के कारण उसकी मृत्यु हो गई थी। जब शाम को सनमान लकड़ी बेचकर घर

लौटा और सानी को न पाया, तो वह पूरी तरह टूट गया। एक ही पल में यह सुखी परिवार बिखर गया। अब सिमल, बिन माँ की, अनाथ हो गई थी।

सनमान पर भी दुखों का पहाड़ टूट गया, जिसे सहन कर पाना बहुत कठिन हो चला। परंतु वह अपनी बेटी के प्यार में इतना बंधा हुआ था कि मर भी नहीं सकता था। एक दिन सनमान ने अपनी बेटी को सीने से लगाकर खूब रोना शुरू कर दिया। सानी के बिना वह पागल सा होने लगा, और छोटी सी सिमल भी अपनी माँ के बिना मानो सदमे में चली गई हो। ऐसी स्थिति में सनमान पूरी तरह लाचार था- न तो वह बेटी को अकेले छोड़ सकता था और न ही वह अपने साथ काम पर ले जाने की हालत में था।

सिमल अपनी माँ की याद में रोती रहती थी और अपने पिता को एक पल के लिए भी अपने से अलग नहीं रहने देती थी। ऐसी अवस्था में अपनी बेटी को छोड़कर बाहर कमाने जाना सनमान के लिए बहुत मुश्किल हो चला था। इसलिए सनमान ने फैसला किया कि वह अपनी बेटी के लिए दूसरी माँ लाएगा, जो उसे माँ का प्यार दे सके और वह खुद गाँव से बाहर जाकर कुछ पैसे भी कमा सके।

सनमान ने अपने फैसले के अनुसार कुछ ही दिनों में सिमल के लिए "दूसरी माँ" यानी अपनी दूसरी विवाह करके लाई। दूसरी शादी के बाद सनमान और उसकी दूसरी पत्नी ने आपस में सलाह-मशविरा करके यह तय किया कि अब वह पैसा कमाने के लिए परदेश जाएगा।

घर से निकलते हुए सनमान ने अपनी दूसरी पत्नी को बुलाकर कहा- "मेरी बेटी गोलसिमल भगवान के आशीर्वाद के द्वारा जन्मी एकमात्र संतान है। मेरी बेटी मेरे दिल का टुकड़ा है। गोलसिमल को तुम भी अपनी बेटी ही समझना। जब तक मेरा घर न लौटने तक तुम उसका ख्याल रखना, सनी! और गोलसिमल को खाने में हर रोज़ चावल और दूध देना।"

यह कहकर उसने भंडारघर में रखा धान और गौशाला में बंधी लैनु गाय की ओर संकेत किया, ताकि उसकी दूसरी पत्नी समझ जाए कि यही दोनों चीजें उनकी जीविका का सहारा हैं।

सनी ने मीठे स्वर में सनमान को उत्तर दिया "आप निश्चिन्त होकर जाए मैं गोलसिमल की अच्छे से ख्याल रखूंगी।" जाते हुए सनमान ने अपनी बेटी गोलसिमल को बुलाकर समझाया- "बेटी! मैं परदेश जा रहा हूँ। तुम छोटी माँ के साथ खुशी से रहना। मैं जल्दी ही वापस आऊँगा, तब हम बाप-बेटी एक साथ रहेंगे-ठीक है?"

फिर सनमान ने अपने से ही पूछा- "तुम्हें शहर से क्या लाना चाहिए, बेटी?" गोलसिमल अपने पिता की इन बातों से खुश होते हुए बोली- "पिताजी, मुझे इन्द्रेनी रंग वाली फ्रॉक, टिका और माला चाहिए!" पिता के परदेश जाने के बाद गोलसिमल अब पूरी तरह अनाथ हो गई। सौतेली माँ का व्यवहार भी गोलसिमल के प्रति बदल गया। अब वह गोलसिमल पर यातनाएँ देने लगी, जिसके कारण इस अबोध बालिका पर दुखों का पहाड़ टूट गया।

गाय भी खलिहान में भूख और प्यास से तड़पती रही, पर सौतेली माँ ने न उसे घास दी, न चारा, न पानी- जिसके कारण गाय की मृत्यु हो गई।

सौतेली माँ के लिए गोलसिमल एक बोझ थी। इस बोझ से छुटकारा पाने के लिए वह चाल चलती है। जब गोलसिमल सो रही होती, तो उसी समय का फायदा उठाकर सौतेली माँ सभी खिड़कियों और दरवाज़ों में ताला लगाकर घर को बाहर से बंद कर देती है और उसमें आग लगा देती है। जिसमें गोलसिमल जल जाती है। इतना करने पर भी उस निर्मम, पापिनी सौतेली माँ को चैन नहीं आता। वह क्रूरता से गोलसिमल के आधा जले हुए शरीर को उठाकर झाड़ियों के बीच पानी में फेंक देती है।

गोलसिमल बहुत देर तक तड़पती रहती है और वहीं उसकी मृत्यु हो जाती है। और तुरंत ही गोलसिमल को पक्षी के रूप में नया जन्म मिलता है।

गोलसिमल ने एक छोटी-सी पक्षी को बिना पंख के ज़मीन पर पड़ा देखा। यह देखकर पक्षिरानी ने जंगल के सभी पक्षियों को बुलाया और सभी ने मिलकर गोलसिमल को अपना-अपना एक-एक पंख दान कर दिया। देखते ही देखते वह रंग-बिरंगे पंखों से सुसज्जित, सुंदर और कलात्मक शरीर वाली एक पक्षी बन गई। गोलसिमल की इस सुंदरता को देखकर पक्षियों ने उसका नाम "संुचरी" रख दिया, पर उसे अपना पुराना नाम "गोलसिमल" ही ज़्यादा पसंद था। इसलिए वह खुद को "गोलसिमल... गोलसिमल..." कहकर पुकारती रहती थी।

गोलसिमल ने पक्षियों को हज़ारों बार धन्यवाद देते हुए कहा- "आप लोगों ने मुझे नया जीवन दान में दिया है। मैं सदा अपने कुल और वंश के बच्चों की ऋणी रहूँगी, जिन्होंने मेरे नग्न शरीर की लज्जा को छिपाने के लिए अपने अनमोल और सुंदर पंख दिए। इसके लिए भगवान को भी लाख-लाख धन्यवाद करती हूँ। मैं सम्पूर्ण विहग-कुल को किसी भी विपत्ति आने से पहले सतर्क रहने की चेतावनी दूँगी। अगर देश में कभी अकाल पड़े, तो मैं सुकाल की खबर पहले ही दे दूँगी, ताकि अब कोई इस देश में अकाल-मृत्यु और भूख से न मरे।" इतना कहकर वह विजन वन की ओर उड़ चली।

सनमान ने परदेश जाकर खूब पैसा कमाया और अब वह परदेश से घर लौट रहा था। वह अपनी बेटी से मिलने के लिए बड़े उत्साह से भरा हुआ था और रास्ते में कल्पना करते हुए सोच रहा था कि वह अपने हाथों से अपनी बेटी को माला पहनाएगा और टीका लगाएगा। यह सोचकर ही वह मन-ही-मन बहुत खुश हो रहा था।

गोलसिमल को रास्ते से बुलाकर गले लगाने का सपना लेकर सनमान घर की ओर दौड़ा। इतने में ही रास्ते में गाँव वालों ने उसकी दूसरी पत्नी की सारी करतूतों के बारे में बताया कि किस प्रकार उसने गोलसिमल को निर्ममता से मार डाला।

जब सनमान घर के आँगन में पहुँचा, तो वह ऐसे गिर पड़ा, मानो किसी भयानक प्रलय में दब रहा हो। एक तरफ गौशाला में मृत गाय पड़ी थी, तो दूसरी ओर कुत्तों और बकरियों के केवल कंकाल बचे थे। ये सब देखकर सनमान सन्न पड़ गया।

गोलसिमल के नन्हे हाथों की चाँदी की चूड़ियाँ जले हुए घर के राख के ढेर पर चमक रही थीं। और उसकी बेटी का जला हुआ शरीर पानी की सतह पर पड़ा था। सनमान को यह समझ ही नहीं आ रहा था कि यह सब सपना है या हकीकत।

सनमान के कानों में फिर गाँव वालों की बातें गूँजीं कि उसके परदेश जाने के बाद उसकी दूसरी पत्नी ने गोलसिमल को नरक-जैसा जीवन दिया। यह बात सुनते ही सनमान जमीन पर एक बार फिर गिर पड़ा। इस घोर पीड़ा और पश्चाताप से सनमान कई दिनों तक उसी गौशाला में बेहोश पड़ा रहा।

एक दिन शाम के समय सनमान ने घर के पास सिमल के पेड़ से "गोलसिमल… गोलसिमल…" की आवाज़ निकलती हुई एक पक्षी की आवाज़ सुनाई पड़ी। इस आवाज़ को सुनते ही सनमान आचानक उठ खड़ा हुआ, अपनी झोली से टीका-माला निकालकर सिमल के पेड़ के पास जा पहुँचा और उस टीका-माले को उसी पक्षी के गले पर फेंककर उसे पहना दिया।

सिमल की तरह गोल चेहरे और भुवादार, रंग-बिरंगे, चिकने पंखों वाली गोलसिमल के गले में टीका-माला अत्यंत सुंदर लग रहा था। सनमान को अब पूरी तरह से विश्वास हो गया कि उसकी बेटी

का ही पुनर्जन्म इस पक्षी के रूप में हुआ है। अब सनमान संतुष्ट होकर फिर से कृषि कार्य में लग गया। और गोलसिमल ने भी सनमान के खेत में ही अपना घोंसला बना लिया और फसलों की देखभाल करने लगी, जिसके कारण सनमान का खेत हरा-भरा हो उठा।

उस गाँव में जब फसलों, यानी धान को काटकर उसकी ढेर लगाई जाती है और दाही करके उसे भंडारघर में रखा जाता है, तो यदि गोलसिमल अपने नाम की आवाज़ सुनाती है, तो ऐसा विश्वास है कि भंडारघर अनाज से भर जाता है।

आज भी लोक-विश्वास है कि जहाँ-जहाँ घरों में आग लगती है, वहाँ गोलसिमल पहले ही पहुँचकर घर के लोगों को अपनी आवाज़ से जगाकर चेतावनी दे देती है। अगर जंगलों में आग लगने की संभावना होती है, तो वहाँ भी गोलसिमल अपनी आवाज़ से जंगली पशु-प्राणियों और पेड़-पौधों को सतर्क कर देती है, ताकि पशु-प्राणी सुरक्षित स्थान में चले जाएँ। इसलिए गोलसिमल जंगल में दिन-रात तैयार रहती है और पेड़-पौधों की रक्षा हो सके, इसलिए वह जंगल-जंगल चिल्लाती हुई उड़ती रहती है।

वह जहाँ भी जाती है, उस देश में अकाल भाग जाता है और अच्छे दिन आ जाते हैं। बंजर भूमि उपजाऊ बन जाती है और फसलें लहराने लगती हैं।

यह लोककथा नेपाली लोक-विश्वास में अनेक नामों से प्रचलित है- कोई इसे “सानी की सिमल कथा” कहता है, तो कोई “सनमान के गोलसिमल की कथा”, तो कोई “पक्षियों की सुंचरी की कथा”। क्योंकि यह एक मन को छूने वाली कहानी है, जिसे आज भी लोग पढ़ते हैं, तो वह मधुर, मार्मिक और अजीब-सी लगती है।

गोलसिमल के प्रति आज भी लोगों में गहरी आस्था नज़र आती है। नेपाली समाज की अपनी कृषि-परम्परा है, और उसका आधार है। इसलिए सुकाल लाने वाली गोलसिमल को मानने की परम्परा युगों से इस समाज में प्रचलित दिखाई देती है। आज भी सुंचरी, गोलसिमल के नाम से जानी जाती है, अपने पिता द्वारा दिए गए नाम पर चलती है और कहानी सुनाती है कि कैसे वह एक मनुष्य से एक पक्षी के रूप में पैदा हुई थी।

आज भी गोलसिमल नेपाली संस्कृति में धन की देवी और धन-लक्ष्मी के रूप में पूजनीय है। आज भी गोलसिमल विशेष रूप से धान के खेतों की रक्षा करती है। गोलसिमल की संतान प्रत्येक घर के धान के खेतों में घोंसला बनाकर उनकी रक्षा करने के लिए तैयार रहती है।

ये पक्षी दिन भर गुप्तवास में रहकर खेतों की रक्षा करते हैं, और शाम होते ही अपने घोंसलों से बाहर निकल आते हैं। अगर कोई देर रात खेत में आपदा आने वाली होती है, तो ये पक्षी पहले ही चेतावनी दे देते हैं। अभी भी सर्दियों के मौसम में गोलसिमल देश के सुदूर दृश्यों से दिल दहला देने वाली लय में "गोलसिमल… गोलसिमल…" कहती हुई उड़ती है।

इस प्रकार, पक्षियों के कुल की प्रिय पक्षी सुंचरी के द्वारा सर्वत्र लोगों की रक्षा होती देखकर सभी पक्षी उस पर गर्व करने लगते हैं और कहते हैं कि हमारे एक-एक पंख से ही सही, किसी पुण्य कार्य में वह उपयोग हुआ है, यही हमारे लिए परम आनंद है।

7. आतेक की बाँसुरि की धुन (आतेकको बाँसुरिको धुन)

एक समय की बात है, आतेक गौशाला में काम कर रहा था। घर पर बूढ़ी माँ को नैन्सी के भरोसे छोड़कर आतेक लेकाली-खर्क की ओर चला गया था। लगभग एक महीना हो गया था।

लेकाली-खर्क में आतेक को शाम होते ही अकेलापन और परायापन महसूस होने लगा। आतेक को जब नींद आती, तो वह अपनी बाँसुरी, पुनतानगपलित (चार आँखों वाली बाँसुरी) निकालकर बजाने लगता।

यह उस समय की बात है जब एक दिन दोपहर को बहुत सनाटा छाया हुआ था। तभी आतेक एक पेड़ की छाँव के नीचे बैठकर चार आँखों वाली बाँसुरी को अपनी बाँहों में दबाए सुस्ता रहा था।

जब बारिश की छोटी-छोटी बूंदें आतेक के चेहरे पर पड़ीं, तो वह जल्दी से उठ खड़ा हुआ और उसने देखा कि रात हो चुकी है और उसे पता भी नहीं चला था। उस सुबह जिन गायों और भेड़-बकरियों को चरने के लिए छोड़ा था, उनमें से गाय तो अपने गौशाले में पहुँच चुकी थीं, पर भेड़-बकरियाँ अभी तक नहीं लौटी थीं।

आतेक ने अपनी बाँसुरी बजाकर भेड़-बकरियों को ख़लिहान में लौटने का संकेत दिया। इस बाँसुरी की धुन के संकेत से भेड़ तो वापस आ गईं, लेकिन बकरियाँ अभी तक नहीं लौटी थीं। तो आतेक ने ऊँचे स्वर में सीटी बजाई और बकरियों को बुलाया। बहुत देर की कोशिश के बाद आख़िरकार बकरियाँ भी अपने स्थान पर लौट आईं।

सोने से पहले आतेक ने खिड़की से बाहर झाँका, तो उसने देखा कि गौशाले के ठीक उलटी दिशा में, जहाँ बकरियों को रखा गया था, वहाँ आतेक ने एक विचित्र, भयानक और डरावनी आकृति इधर-उधर घूमती हुई देखी।

आतेक को यह अजीब प्राणी हिममानव की तरह लगा, और वह यह कहकर अकेले ही बड़बड़ाने लगा। जब आतेक छोटा था, तो वह अपने पिता के साथ लुक्रीन ताल मान के किनारे पशुओं को चराने जाता था। उसी समय उसने बकरियों के सिर को फाड़कर खाने वाले ऐसे ही भयानक हिममानव को देखा था। आतेक के पिता ने उसे धीरे-से बताया था कि उसका नाम 'सोक्पा' है। यह बात आतेक को जब हिममानव को देखते ही याद आ गई।

अब आतेक को अकेले रहने में डर लगने लगा था। जैसे-जैसे दिन गुज़र रहा था, वैसे-वैसे उसका डर भी बढ़ता जा रहा था। वह सोचने लगा कि अगर मैं इसी तरह डरता रहा, तो यहाँ रहना मुश्किल हो जाएगा। ऐसी स्थिति में आतेक ने यह तय किया कि वह उस जगह को एक सप्ताह के बाद छोड़ देगा।

आतेक ने मन-ही-मन सोचा-ठंड बढ़ रही है। अब पेड़ के ऊपर चढ़ना भी कठिन हो रहा है और लगातार बारिश भी हो रही थी। बर्फ से ढकने के बाद ज़मीन की घास भी घने जंगल में बदल चुकी थी। दो महीने पहले पशुओं को चराने के लिए आतेक के साथ उसके दो साथी-कटुस और गुर्मित-भी आए थे, पर वे उस जंगल से घर वापस नहीं गए और आज तक उनका कोई पता नहीं चल पाया है कि उन्हें अजगर ने लपेट लिया या साँप ने काट लिया। अब आतेक अकेला रह गया था, और वह फिर सोचने लगा कि क्या मेरा शरीर इतना काम का बोझ अकेले झेल पाएगा?

आतेक के मन में फिर एक बार जिज्ञासा उठी कि वह एक बार खिड़की से झाँककर देखे। और जब उसने देखा, तो बकरियाँ अपने घर में इधर-उधर भटकती हुई थीं और भेड़ें अजीब ढंग से कराएँ-कराएँ की आवाज़ कर रही थीं। "संर्यक्-संर्यक्" सी आवाज़ आ रही थी। इस आवाज़ को सुनते ही नीचे बैठी गाय और भैंस जल्दी से उठ खड़ी हो गईं, तो वहीं बकरियाँ डर के मारे चिल्लाने लगीं। आतेक का शिकारी कुत्ता उछल-उछलकर भौंकने लगा।

उसने अपने शिकारी कुत्ते को फटकारते हुए पूछा-"क्या हुआ, स्यान्डो?" आतेक के इतना पूछते ही उसका शिकारी कुत्ता स्यान्डो उस भयंकर आकृति की ओर झपटता हुआ भौंकने लगा, लेकिन वह आकृति इतनी भयानक थी कि कुछ ही देर में स्यान्डो-जो सामान्य समय में भेड़ियों का पीछा करता था-अब अपनी पूँछ को छिपाते हुए बिस्तर के नीचे छिप गया।

आतेक ने अपने कान सतर्क रखे और वह सावधानी से अंदर के कमरे में दाखिल हुआ और सोने का प्रयास करने लगा, लेकिन उसे नींद नहीं आई। उसका सारा शरीर पसीने से भीग गया था। एक तरफ उसका दिल जोर-जोर से धड़क रहा था।

आतेक एक बहादुर लड़का था, जो कभी डरता नहीं था, लेकिन आज उस भयानक आकृति को देखकर वह बहुत भयभीत हो गया था। अर्थात पशु भी डर के कारण छटपटाकर भागने की कोशिश कर रहे थे।

आतेक ने एक छोटी-सी टारच जलाई और दो बुझे हुए लकड़ी के टुकड़ों को जोड़कर आग जला ली। दिन भर की थकान के बावजूद उसने अपने डर को दूर करने के उद्देश्य से बाँसुरी बजाने लगा।

बाँसुरी की तेज धुन से वातावरण गूँज उठा और बाहर का शोर कुछ शांत हो गया। पशु भी अब शांत हो गए। इसी बीच आतेक की नींद आ गई। सुबह होते ही आतेक पशुओं के ख़लिहान में पहुँच गया।

उसके मन में कल रात की घटना को लेकर अनेक सवाल उठ रहे थे। फिर भी वह अपना नित्यकर्म समाप्त करके अपने पशुओं को चराने के लिए जंगल की ओर निकल पड़ा। गायें चरने के लिए जंगल के अंदर घुस गईं, तो भेड़ें घास की तलाश में चल पड़ीं। वहीं बकरियाँ पहाड़ पर चढ़ने लगीं, भैंस आहाल में घुस गईं और अन्य गायें वहीं आस-पास चरने लगीं।

दोपहर में थोड़ा-सा विश्राम करने के बाद आतेक अंगड़ाई लेते हुए उठ खड़ा हुआ। शाम को घर लौटने से पहले बाँसुरी बजाकर उसने सभी पशुओं को बुलाया। सभी पशु तो लौट आए, लेकिन जो गायें जंगल की ओर गई थीं, वे अभी तक नहीं लौटी थीं। इससे पहले जब भी आतेक बाँसुरी बजाकर उन्हें बुलाता था, तब गायें उसके पास पहुँच जाती थीं, लेकिन आज उनका कोई पता नहीं चल रहा था।

आतेक भी उन्हें ढूँढते हुए जंगल की तरफ गया और वहाँ पहुँचकर उसने जोर से बाँसुरी बजाई, जिससे पूरा जंगल काँप उठा, पर गायों का कहीं कोई निशान नहीं मिला। आतेक सीटी बजाता हुआ उन्हें अपने गौशाले में लौटने का आदेश देता हुआ उनकी खोजबीन करता रहा।

बहुत देर के बाद पहले एक-दो और फिर सारी गायें लौट चुकीं थीं। अब पूरा अँधेरा भी हो चला था, इसलिए आतेक जल्दी से अपनी झोपड़ी में वापस चला आया। झोपड़ी में घुसते ही उसने मशाल जला दी और बड़े-बड़े लकड़ी के टुकड़ों को जोड़कर उसने एक बड़ी आग जलाई। फिर उसी आग के पास बैठकर हाथ सूखाने लगा।

अचानक आतेक के गर्दन में गर्म, भाप भरी हवा का एहसास हुआ। आतेक एकदम डर गया और अपना डर दूर करने के लिए फिर से बाँसुरी बजाना शुरू कर दिया। उसके ठीक सामने एकदम से एक विकराल छायादार आकृति खड़ी थी। देखते-देखते वह छायादार भयानक आकृति आतेक की आँखों के सामने धीरे-धीरे एक भयानक सोक्पा के रूप में बदल गई। आतेक को वह उसी हिममानव की तरह डरावना लगा, जिसे उसने बचपन में देखा था।

उसके घुटने उलटे थे, पैरों की उँगलियाँ टेढ़ी-मेढ़ी, नाखून बहुत लम्बे-लम्बे थे और शरीर काले, लंबे बालों से ढका हुआ था। आँखें बाहर की ओर निकली हुई थीं और आँखों के पुतलियों के चारों ओर आग की लपटें घूम रही थीं। कान कंधे तक झूल रहे थे और उसका बड़ा-सा होठ ठुड्डी तक लटक रहा था। छाती भी बहुत विचित्र थी-उसके बड़े-बड़े स्तन नाभि तक झूल रहे थे, और मुँह में दो लम्बे-लम्बे दाँत झाँकते हुए वह मुँह खोलकर ठिठियाता हुआ मुस्कुरा रहा था।

बचपन में आतेक ने वन-झक्री, सोक्पा और हिममानव की कथाएँ सिर्फ सुनी थीं, लेकिन आज उसने जैसी कल्पना की थी, ठीक उसी तरह के प्राणी को अपने सामने देखकर उसके होश उड़ गए। आतेक लगातार बाँसुरी बजाता रहा, इसी कारण वह थक-कर चूर-चूर हो गया था, पर फिर भी वह रुका नहीं। कभी उसे नींद आ जाती, कभी उसके हाथ से बाँसुरी गिर जाती, लेकिन वह बाँसुरी बजाना नहीं छोड़ता था। इस तरह आतेक को यह पता तक नहीं चला कि कब वह भयानक प्राणी वहाँ से चला गया।

अगले दिन भी आतेक डरते-डरते पशुओं को चराने ले जाता है। अधिक चिंता के कारण उसका शरीर सुस्त और ढीला-ढाला हो गया था, इसलिए आज उसे बाँसुरी बजाकर गाय-भैंसों को बुलाने का साहस नहीं हो रहा था। पशु अभी भी नहीं लौटे थे। अब आतेक सोचने लगा कि मैं मर भी जाऊँ या मारा भी जाऊँ, लेकिन आज बाँसुरी नहीं बजाऊँगा। कोई मारे भी तो मारे, खाए भी तो खाए-

यह कहकर उसने सीटी बजाकर पशुओं को बुलाया, पर पशु नहीं लौटे। जब पशु नहीं लौटे, तो आतेक ने बाँसुरी बजाने का निर्णय किया।

उसने बाँसुरी को अपने होठ तक ले जाते ही वह विशाल, विकराल आकृति वाला प्राणी फिर दिख गया। उस भयानक प्राणी का दिगंबर रूप देखकर आतेक असमंजस में पड़ गया। बाँसुरी अचानक उसके हाथ से छूटकर ज़मीन पर गिर गई। फिर उस भयानक प्राणी ने एक ही झटके में उस बाँसुरी को ज़मीन से उठाया, अपने हाथ से आतेक के हाथ में पकड़ाकर उसके होठों से लगा दी। डरा और सहमा हुआ आतेक बाँसुरी बजाने लगा।

अब बाँसुरी बजाने का यह क्रम दिन-रात ऐसे ही चलता रहता था। अगर किसी दिन आतेक बाँसुरी बजाना बचा भी लेता, तो वह भयानक आकृति वाला जीव बाँसुरी को अपने होठ पर रखकर खुद बजाने की कोशिश करता। और जब वह बाँसुरी बजाने में असफल होता, तो वह फिर बाँसुरी को आतेक के होठ पर रखकर बजाने का इशारा करता। आतेक अब इस जीव से परेशान हो चुका था। वह इस भयानक जीव से छुटकारा पाने की कोई तरकीब सोचने लगा। इतने में वह जीव आतेक की नक़ल करने लगा-आतेक को बैठा देखकर वह भी बैठ गया, आतेक खड़ा हुआ तो वह भी खड़ा हो गया, और जब आतेक ने अपना पैर फैलाया, तो उसने भी अपना पैर फैला लिया। अब यह भयानक प्राणी बहुत ढिठ हो चुका था।

आतेक ने गुस्से में कहा-चाहे मैं मर भी जाऊँ, पर अब से न बाँसुरी को हाथ भी लगाऊँगा, न सीटी बजाकर पशुओं को बुलाऊँगा। आतेक को उस भयानक प्राणी से छुटकारा पाने का एक तरीका सूझा, और वह जल्दी-से साल के पेड़ की तलाश में जंगल में घुस गया।

आतेक पूरे दिन जंगल में रहा और साल की बड़ी-छोटी लकड़ियाँ एकत्र करके उनका ढेर बनाता रहा। बाँसुरी न बजाने का संकल्प लेने वाला आतेक के सामने वह राक्षसी जीव आज भी आ खड़ा हुआ और अपनी नक़ल करते हुए आतेक से बाँसुरी बजाने का इशारा करने लगा।

राक्षसी जीव आतेक को इशारा कर ही रहा था कि आतेक ने जंगल से इकट्ठा की गई लकड़ियों में आग लगा दी। आग की लपटें बहुत तेजी से जल रही थीं। आतेक ने अपने खलिहान से एक कटोरी घी लाकर अपने शरीर में मलना शुरू किया और दूसरी ओर उसने एक कटोरी घी उस राक्षसी जीव के सामने रख दी। अब राक्षसी जीव भी आतेक की नक़ल करते हुए अपने शरीर पर घी का लेप लगाने लगा।

राक्षसी जीव सिर से लेकर पैर तक घी से लथपथ हो गया और उसका पूरा शरीर घी से भीग चुका था। अब आतेक ने एक जलता हुआ आग का चुंगुल उठाया और अपने पैर के बाल जलाने लगा। ऐसा करते हुए आतेक को देखकर उस राक्षसी जीव ने भी एक जलता हुआ लकड़ी का टुकड़ा उठाकर अपने शरीर को जलाने लगा। जैसे-ही वह लकड़ी का टुकड़ा उस राक्षसी जीव के शरीर पर पड़ा, उसका भयानक शरीर जलने लगा। वह भयंकर चीख निकालकर चीखने लगा। उसकी चीख से सारा जंगल गूँज उठा और काँप उठा।

इसके बाद वह राक्षसी जीव भयभीत होकर बर्फीले पहाड़ों की ओर भाग गया और फिर उसे कभी नहीं देखा गया। आज भी सिक्किम के लेप्चा समुदाय में शाम-सुबह सीटी बजाना या बाँसुरी बजाना नहीं किया जाता। यदि किसी ने अनजाने में बजा भी दिया, तो उसे वह राक्षसी जीव दिखाई दे जाएगा-ऐसा लोक-विश्वास है।

लेप्चा समुदाय में इस प्रकार की भी मान्यता है कि जंगल में रहने वाले वनमानव, वन-झक्री, हिममानव, सोक्पा आदि को चिढ़ाना, अर्थात उन्हें क्रोध नहीं दिलाना चाहिए, बल्कि उनकी पूजा-अर्चना करके उनका सम्मान करना चाहिए, ताकि वे लोगों को परेशान न करें। इस प्रकार इस कथा में आतेक को परेशान करने वाला राक्षसी जीव भी हिममानव ही था-ऐसा विश्वास लेप्चा समुदाय में प्रचलित है।

8. पांडा किंग का मोहभंग (पाण्डा किङ्को मोहभङ्ग)

बहुत पहले की बात है। सिक्किम के राजा ने अपने दरबार में एक सभा रखी, जिसमें स्थानीय पशुओं को बुलाकर यह विचार-कल्पना की गई कि देश के अनेक पशुओं में से कौन सा पशु सिक्किम का राजपशु बनाया जाना चाहिए। सभा द्वारा यह निर्णय लिया गया कि राजपशु चुनने के लिए प्रतियोगिता कराई जाएगी। पूरे देश में ढोल-नगाड़े बजाकर यह सूचना सार्वजनिक की गई। पशुओं के समाज में इस सूचना से हलचल और उत्साह का माहौल बन गया। सभी पशु इस प्रतियोगिता में भाग लेने के लिए उत्सुक थे।

सिक्किम के जंगल के सभी प्रकार के प्रतिभागियों को एक-एक करके सिक्किम की राजधानी गांगटोक के बुलबुले राजकीय चिड़ियाघर में बुलाया गया। इसी अवसर पर पांडा परिवार के प्रतिनिधि

के रूप में लाल पांडा, अर्थात पांडा किंग के बेटे को भी राजपशु प्रतियोगिता में भाग लेने के लिए आमंत्रित किया गया था।

पांडा किंग उत्तरी सिक्किम में युमथाई के पास डीग्गो-गंपा के जंगल से राजधानी गांगटोक आ रहा था। उसे डर और लज्जा भी महसूस हो रही थी, लेकिन मन कहीं न कहीं खुशी से गदगद भी हो रहा था। राजधानी में पशुओं को जाँचने के लिए पशु-वैद्य और विशेषज्ञों को बुलाया गया था, जो पशुओं के शारीरिक बनावट, हाव-भाव, शील-स्वभाव, रूप-गुण, स्वास्थ्य, बल, बुद्धि और कुछ शारीरिक परिश्रम करवाकर उन्हें परखेंगे। इसके बाद यह सार्वजनिक कर दिया गया कि पशु-विशेषज्ञों द्वारा चुने गए पशुओं को राजा द्वारा पसंद आने पर ही अंतिम निर्णय लिया जाएगा।

राजधानी के जूलॉजिकल पार्क में, स्थायी चिड़ियाघर के सामने विस्तृत मैदान में पशुओं की प्रदर्शनी और चयन के लिए एक मंच तैयार किया गया था। सभी पशुओं को बारी-बारी से अपने कौशल, क्षमता, ताकत, दक्षता, रूप, प्रतिभा आदि को प्रदर्शित करने के लिए मंच पर लाया गया।

ये पशु बहुत डरे और सहमे हुए थे, क्योंकि ये कभी अपने जंगल से बाहर नहीं निकले थे। जब उन्हें अचानक जंगल से बाहर आना पड़ा, तो उनके भीतर डर, घबराहट और अपनी सुरक्षा को लेकर चिंता साफ झलक रही थी, कभी-कभी आक्रमणकारी भाव भी दिखाई देते थे। बहुत परिश्रम और प्रयास से विशेषज्ञों ने पहले बार-बार प्रदर्शित न किए गए पशुओं को मंच पर लाने का सबसे कठिन कार्य पूरा किया। अंत में पांडा परिवार से पांडा किंग नाम के एक पांडा को मंच पर लाया गया।

यह लाल पांडा काफी सौम्य लग रहा था, क्योंकि उसके शरीर की बनावट ऐसी थी, मानो उसने कोई मोटी कला पहन रखी हो। उसके चारों ओर लाल रंग की पूँछ पर काले-सफ़ेद निशान भी थे। उसके पैरों के पंजों और पेट पर तानी हुई चमकीली त्वचा उसकी खूबसूरती में चार-चाँद लगा रही

थी। उसकी लंबी, मोटी और घने बालों वाली घुंघराली पूँछ टिमटिमा रही थी, जो बहुत ही सुंदर और सुरुचिपूर्ण लग रही थी।

जो दर्शक पशु-प्रदर्शनी देखने के लिए इंतज़ार कर रहे थे, वे किंग पांडा के रंग-रूप और लचीलेपन की प्रशंसा करते हुए ताली बजाकर उसका स्वागत कर रहे थे। पांडा भीड़ में दर्शकों की "वाह! वाह! बहुत खूब!" की आवाज़ें सुनकर और भी लज्जित तथा घबराया हुआ हो गया और डर के मारे गोली की तरह गोल होने लगा। "फायरफॉक्स! फायरफॉक्स! बेव ब्राउजर, वन बिल्ली!" जैसे नारे लगाकर दर्शक उत्सुकता से चिल्लाने लगे।

राजपशु चयन समिति के विशेषज्ञ और निर्णायक भी किंग पांडा की प्राकृतिक सुंदरता से बहुत प्रभावित हुए। जंगल के पेड़ों की शाखाओं पर आराम करने वाला किंग पांडा पानी से दूर रहता था और ठंड से बचने तथा गर्म रहने के लिए अपने शरीर को सोलोडोलो, गोल आकार बनाकर सिकोड़कर रखता था। मंच पर भी किंग पांडा ने अपना सिर छाती पर, नाक को अपने पिछले पंजों के बीच छिपाकर खड़ा हो गया। उसने अपनी लंबी, मोटी, रोएँदार पूँछ को चारों ओर फैलाकर एक गर्म बिस्तर बना लिया और वहीं सो गया। उस विचित्र और रोमांचक दृश्य को देखकर हर कोई आश्चर्यचकित हो रहा था।

यह दृश्य देखने के बाद किंग पांडा को अन्य पशुओं ने मंच से उतारकर एक छोटे से बगीचे में ले जाया और उसे रखे जाने के लिए बाँस, निम्बा, पराग और कोमल बेंत के टुकड़े खाने के रूप में दिए गए। अपने मनपसंद स्वादिष्ट भोजन को देखकर पांडा किंग ललचाई नज़रों से उसकी ओर देखने लगा। किंग पांडा का हाव-भाव और आकर्षक सुंदरता के कारण सभी उसे पसंद करने लगे थे।

अंत में किंग पांडा के हस्त-पुष्ट शरीर, भव्य सुंदरता और अनूठी चाल-ढाल होने के कारण समिति के विशेषज्ञ और निर्णायकों ने उसे राजपशु की उपाधि से सम्मानित किया। अर्थात राजा भी किंग पांडा के चरित्र से इतना आकर्षित था कि उसने समिति द्वारा लिए गए निर्णय को स्वीकार कर लिया।

किंग पांडा को अचानक अपने भाग्य पर गर्व होने लगा और उसे अपना भविष्य उज्ज्वल लगने लगा, जिसके कारण वह अत्यंत आत्म-विभोर अनुभव कर रहा था। किंग पांडा को राजपशु की उपाधि से सम्मानित करने के लिए राजा स्वयं मंच पर उपस्थित हुए। पांडा को बड़े सम्मान के साथ मंच पर लाया गया। राजा ने उसके मनमोहक शरीर को चूमा, प्यार से सहलाते हुए उसे स्वर्ण का मुकुट पहनाया और उसे राजपशु घोषित कर दिया।

इस तरह पांडा परिवार के लिए किंग पांडा को राजपशु के रूप में बड़ी मान-मर्यादा प्राप्त हुई। उसके लिए एक विशेष पिंजरा बनाया गया और उसकी देखभाल के लिए एक पशुरक्षक तथा पहरेदार भी नियुक्त किया गया। उसे बड़े सम्मान के साथ राजा के महल के बगल वाले एक चिड़ियाघर में ले जाया गया।

अब किंग पांडा को लगने लगा कि उसका जीवन सुख, शांति और विलासिता से भरपूर होगा। वह मन-ही-मन बहुत खुश हो रहा था। राजपशु चुने जाने के बाद उसे राजशाही खानपान मिलने लगा और उसकी विशेष देखभाल भी शुरू हुई। अच्छे और स्वादिष्ट भोजन से वह हस्त-पुष्ट, चिकना और स्वस्थ बनता जा रहा था। किंग पांडा इस शान-ओ-सौकत में अपने घर, परिवार, दोस्तों और रिश्तेदारों को पूरी तरह भूल गया।

उसने मन-ही-मन सोचा—"मैं तो एक शाही पशु हूँ, राजपशु से सम्मानित हूँ। मेरा नाम किसी साधारण पशुओं के साथ नहीं लिया जा सकता। मैं तो ठहरा एक राज-पशु। जंगल के दरिद्र पशुओं के साथ खाना-पीना और घूमना मुझे शोभा नहीं हूँ। मेरा जीवन उनकी तरह नहीं है। डरते-भागते, कापते हुए बाँस के टुकड़े ढूँढ़कर खाने वाले दरिद्र पांडा—फिर वह अपने आप में ही बड़बड़ाने लगा—अब तो मेरे जीवन में खूब मौज-मस्ती, आराम और खुशियाँ ही खुशियाँ हैं।" ऐसा कहकर वह अपने आप पर बहुत गौरवित और घमंडी महसूस करने लगा।

कुछ दिनों तक चिड़ियाघर में बहुत चहल-पहल रही, पर धीरे-धीरे चिड़ियाघर का वातावरण बिगड़ने लगा। अब किंग पांडा की देखभाल करने वाले सेवक भी गायब रहने लगे थे। जैसे-तेसे ही दिन कट रहे थे कि एक दिन पांडा को पता चला कि उस जंगल में अकेला नहीं है जो पिंजरे में कैद है। उसके जैसे अनेक पशु और भी थे, जिनकी स्वतंत्रता पूरी तरह समाप्त हो चुकी थी। वे अपनी मर्जी से न तो घूम-फिर सकते थे, न खेल-खुद कर सकते थे, और न ही अपनी मर्जी से जंगल में चर सकते थे। इन पशुओं की हालत इतनी खराब थी कि उन्हें गंदे, बदबूदार और मक्खियों से भरे पिंजरों में रहना पड़ रहा था। वर्षों से कैद होने के कारण उनकी दयनीय दशा हो गई थी; उनके शरीर में केवल साँस बची थी।

कुछ दिनों के बाद किंग पांडा की भी वही दशा होने लगी। उसे भी किसी गंदे, बदबूदार पिंजरे में डाल दिया गया और उसके देखभाल करने वाले सेवक भी अब दिनभर गायब रहने लगे।

अब किंग पांडा को अपने परिवार के सदस्यों, दोस्तों और रिश्तेदारों की बहुत याद आने लगी। उस जगह को वह याद करता, जहाँ वह स्वतंत्र और स्वच्छ जीवन जीते हुए उछल-कूद करते हुए आनंद से दिन-रात व्यतीत करता था। वह दिन-रात अपने भाई-बहनों और दोस्तों के साथ बिताए उन दिनों को याद करता, कि कैसे वह अपने दोस्तों को चिढ़ाकर लड़ भी लेता था। ऐसी सब बातों को

याद करके किंग पांडा दुखी हो गया और उसे अपने राजपशु बनने के बाद जो व्यवहार उसने अपने परिवार और दोस्तों के साथ किया था, उसके लिए बहुत पछतावा होने लगा।

एक शाम किंग पांडा के एक सेवक ने उसे पिंजरे से धक्का मारकर बाहर निकाल दिया, गले में रस्सी बांधकर उसे खींचते हुए जंगल में ले जाकर छोड़ दिया। किंग पांडा वहीं हरी घास में लेट गया। इतने में ही मौके का फायदा उठाकर एक तेंदुए ने अचानक उस पर हमला कर दिया। किंग पांडा एक ही क्षण में जमीन पर गिर पड़ा और मृतावस्था में पहुँच गया।

अधमरे अवस्था में किंग पांडा को उसके पांडा दोस्तों ने तेंदुए के हमले से बचाया और उसे वहाँ से भागने में मदद भी की। घायल पांडा किंग अपने दोस्तों के सहयोग से अपने जंगल तक पहुँचने में सफल रहा। उसने अपने परिवार और दोस्तों को कृतज्ञतापूर्ण नज़रों से देखकर उन्हें धन्यवाद किया। किंग पांडा ने मन-ही-मन अनुभव किया कि दूसरों द्वारा प्रशंसा और सम्मान मिलने से अपने घर, परिवार, दोस्तों और सन्तान को भूलना नहीं चाहिए और न ही उनकी तिरस्कार करना चाहिए।

अब किंग पांडा उस पिंजरे, तेंदुए और अन्य जंगली जानवरों से मुक्त हो चुका था। वह अपने परिवार और दोस्तों के बीच खुशी से रहने लगा।

इस तरह सिक्किम में वर्तमान में भी किंग पांडा को राज्यपशु का दर्जा प्राप्त है। लेकिन पांडाओं को एक बड़े मैदान में खुला छोड़ दिया जाता है, जहाँ उनकी देखभाल भी नियमित रूप से की जाती है।

9. सुनेरी रेशमी मजेत्रो (सुनौलो रेशमी मजेत्रो)

मकरध्वज बारिया असम की गारो जनजाति के मुखिया थे। आदिवासी समुदाय में उनका बहुत सम्मान किया जाता था, क्योंकि वह गाँव के सबसे अमीर और गुणी व्यक्ति थे। जब भी गाँव वालों पर कोई संकट आता था, मकरध्वज बारिया खुले दिल से गाँव वालों की मदद करते थे; इसलिए गाँव वाले उनका बहुत सम्मान करते थे।

मकरध्वज बारिया की पत्नी का नाम श्यामल सुन्दरी था। वह भी एक संभ्रांत परिवार की इकलौती संतान थी। मकरध्वज बारिया और श्यामल सुन्दरी की इकलौती संतान थी, जिसका नाम सुनौली था। वह अपने पिता की तरह सुन्दर, सुशील, गुणी और दयालु थी। उसके सुनहरे रंग के केश होने के कारण उसका नाम सुनौली रखा गया था।

सुनौली को बचपन से ही नृत्य करने में बहुत रुचि थी, और नृत्य में सुनौली का मुकाबला करने वाला कोई नहीं था। चाहे बरसात का मौसम हो या भारी बारिश, तब भी वह अथक नृत्य करती रहती थी। सुनौली की इस प्रतिभा को देखकर अनेक युवक उससे प्रेम-प्रस्ताव लेकर आए, पर सुनौली ने किसी का प्रेम-प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया। कई अमीर युवक भी सुनौली से शादी करना चाहते थे, पर उसने किसी से भी शादी करने से इंकार कर दिया, क्योंकि वह अपने बचपन के दोस्त भैरू से प्रेम करती थी। सुनौली और भैरू उनके गाँव की पाठशाला में नृत्य-प्रशिक्षण के दौरान मिले थे। सुनौली, भैरू और अन्य बाल-सखा मिलकर नृत्य करके प्रतियोगिताओं में पुरस्कार जीते थे। और उसी दौरान सुनौली और भैरू ने कसम ली थी कि शादी वे केवल एक-दूसरे से ही करेंगे; और यदि किसी कारण वह शादी न हो पाई तो वे जीवन-भर प्रेमी-प्रेमिका के रूप में ही रहेंगे। दोनों ने यह वादा एक-दूसरे से किया। इसी प्रकार कई साल बाद अंत में उनकी शादी हो ही गई।

गारो समाज में मातृसत्तात्मक प्रथा थी। गारो जनजाति की रीति-रिवाजों के अनुसार बेटी को ही घर की वंशधर, संतान और उत्तराधिकारी माना जाता था; और लड़के-लड़की की शादी के बाद लड़का लड़की के घर आकर रहता था। सुनौली और भैरू की शादी के बाद भी, रिवाज के अनुसार भैरू सुनौली के घर में आकर उसके परिवार के साथ रहने लगा।

अब सुनौली के माता-पिता भी बूढ़े हो रहे थे। एक दिन मकरध्वज ने सुनौली को बुलाया और अपनी सारी सम्पत्ति—घर, खेत आदि—उसे सौंप दिया। उसकी माँ ने भी अपने बहुमूल्य संदूक से बहुत सारे सुन्दर कपड़े और आभूषण निकालकर बेटी को सौंपे।

अंत में माँ ने कुछ मंत्रों का उच्चारण करते हुए वह सुन्दर रेशमी मजेत्रो निकाला। उस मजेत्रो में नीले, हरे, लाल और सोने के रंग-बिरंगे रत्न जड़े हुए थे। सुनौली ने उस रेशमी मजेत्रो को देखते ही कहा, "माँ, दीजिए, मैं इसे ओढ़कर देखूँ, पहनने पर कैसी लगती हूँ।"

तभी माँ ने जोर से चिल्लाते हुए कहा, "रुको, श्याम-सुन्दरी! इसे अभी हाथ मत लगाओ," और उसे अपनी ओर खींच लिया। फिर वह सुनौली से कहती है कि यह रेशमी मजेत्रो कोई साधारण वस्त्र नहीं है; आज से कई वर्ष पहले देवी माँ ने आशीर्वाद के रूप में स्वयं मेरी नानी को यह रेशमी मजेत्रो दिया था। तब से अब तक यह रेशमी मजेत्रो हमारे परिवार के लिए एक अमूल्य उपहार के साथ-साथ हमारी रक्षा करते हुए चला आ रहा है। यह रेशमी मजेत्रो चार पीढ़ियों से हमारा खानदानी मजेत्रो है, जिसकी आज भी चमक कम नहीं हुई है। अब यह तुम्हारी ज़िम्मेदारी है कि इसे हमेशा संभालकर रखना; और एक बात याद रखना, बेटी, इसे बिना मंत्र के कोई न छुए, नहीं तो अनर्थ हो जाएगा।

इसके बाद सुनौली की माँ ने उसके कानों के पास जाकर कुछ मंत्रों की दीक्षा दी और उस रत्न-जड़ित रेशमी मजेत्रो को सुनौली को ओढ़ा दिया। जैसे ही माँ ने उस रेशमी मजेत्रो को ओढ़ाया, सुनौली अप्सरा की तरह दिखने लगी। कुछ दिनों बाद सुनौली के माता-पिता का निधन हो गया। जिसके बाद सुनौली बहुत दुखी और दुर्बल हो गई।

सुनौली के पति भैरू ने उसे दुखी देखकर हमेशा उसे खुश रखने का प्रयास किया। वह उसे मेले, बाज़ार और कई तरह के उत्सव-पर्वों में लेकर जाने लगा, ताकि उसका मन बहल सके। दिन-प्रतिदिन भैरू के प्रयास से सुनौली पूरी तरह ठीक हो गई और अब भैरू के साथ खेती-बाड़ी और गाय-बैल की देखभाल करने लगी।

सुनौली ने अपनी माँ द्वारा दिए गए रेशमी मजेत्रो को बहुत सावधानी से सुरक्षित स्थान पर रखा था। केवल खास अवसर पर ही सुनौली मंत्रों का उच्चारण कर, मोर के पंख से जल छिड़ककर उस रेशमी मजेत्रो को निकालती और ओढ़ती थी। उसके बाद इसे सूरज में सुखाकर फिर से ध्यान से सन्दूक में रख देती थी।

उसी वर्ष लगातार मूसलधार वर्षा होने लगी थी। एक दिन अचानक धूप निकल आई तो सुनौली ने वह रेशमी मजेत्रो धूप में सूखने के लिए बाहर फैला दिया। उधर भैरू अपने काम में व्यस्त था, पर सुनौली ने उसे पहले ही आगाह कर दिया था कि चाहे कितनी भी मूसलधार वर्षा या तेज हवा हो, उसे उस रेशमी मजेत्रो को कभी नहीं छूना चाहिए। लेकिन सुनौली ने भैरू को यह रहस्य नहीं बताया था कि उसे यह वस्त्र क्यों नहीं छूना चाहिए।

सुनौली के माता-पिता के गुज़र जाने के बाद उसे नदी में मछली ढूँढने जाने का बहुत अरसा हो चुका था, क्योंकि लगातार बारिश के कारण वह नदी तक जा नहीं पा रही थी। इसलिए जब आज धूप निकली, तो सुनौली जाल लेकर झींगा और मछली ढूँढने के लिए नदी की ओर चल पड़ी।

आसमान में तेज धूप चमक रही थी और बारिश होने की कोई संभावना नहीं दिख रही थी। पर जैसे-ही सुनौली नदी में पहुँचकर कुछ ही मछलियाँ इकट्ठी कर रही थी कि देखते ही देखते आकाश में काले बादल छा गए, बिजली कड़कने लगी और तेज बारिश भी शुरू हो गई। जितनी तेजी से बिजली कड़क रही थी, उतनी ही तेजी से बारिश भी बरस रही थी।

सुनौली ने जो रेशमी मजेत्रो घर के बाहर सूखने के लिए रख दिया था, अब वह गीला होने लगा। तब भैरू ने ज़ोर से आवाज़ लगाकर सुनौली को बुलाना चाहा, पर बारिश की आवाज़ इतनी तेज थी कि भैरू की आवाज़ सुनौली तक पहुँच ही नहीं पाई। अंततः जब सुनौली दौड़ती-दौड़ती घर पहुँची तो उसने देखा कि भैरू ने उस सुन्दर रेशमी मजेत्रो और अन्य महँगे कपड़ों को खराब न होने देने के लिए उन्हें अंदर लाने के लिए उठाना शुरू कर दिया था। जैसे ही भैरू ने उस रेशमी मजेत्रो को उतारने के लिए हाथ बढ़ाया, तब तक सुनौली आँगन में पहुँच गई और भैरू को रोकने के लिए आवाज़ दी, पर फिर भी बारिश की तेज धार के कारण उसकी आवाज़ भैरू तक नहीं पहुँची।

जैसे ही भैरू ने उस रेशमी मजेत्रो को छुआ, देखते ही देखते वह मजेत्रो भैरू को चुम्बक की तरह अपनी ओर खींच लिया और भैरू का शरीर उससे चिपक गया। उसके बाद धीरे-धीरे भैरू का मानव-शरीर दूसरे प्राणी की आकृति में परिवर्तित होने लगा। कुछ क्षणों के बाद भैरू हरे-नीले, सुनहरे पंखों वाले पक्षी के रूप में परिवर्तित हो गया; उसके शरीर में अनेक पंख निकल आए थे।

यह दृश्य देखकर सुनौली भैरू को बचाने के लिए आगे बढ़ी, तो उसने अपने पति भैरू को मोर के रूप में पाया। सुनौली विलाप करने लगी, जिसके कारण वह भी मंत्र जपना भूल गई। उसने भैरू के शरीर से उस रेशमी मजेत्रो को बलपूर्वक खींचने की कोशिश की। जैसे ही उसने उस मजेत्रो को छुआ, उसकी शरीर-आकृति भी बदलने लगी। अंत में सुनौली भी एक सुन्दर मोरनी में परिवर्तित हो गई। पर सुनौली के शरीर में भैरू की तुलना में कम पंख निकले, क्योंकि रेशमी मजेत्रो का केवल कुछ हिस्सा ही उसके शरीर पर पहुँच पाया था।

अब भैरू भी मोर के रूप में पुनर्जन्म पाने के बाद अपने ढेर-सारे रंग-बिरंगे पंखों के साथ छम-छम कर नाचने लगा। भैरू के शरीर पर अलग-अलग रंगों के पंख चमक रहे थे, मानो रेशमी मजेत्रो में जड़े रत्न ही चमक रहे हों। वहीं सुनौली के पंखों में भैरू के पंखों जैसी चमक नहीं थी। इस प्रकार दोनों मोर और मोरनी के रूप में परिवर्तित हो गए।

आज भी यह लोक-विश्वास है कि जब भी बरसात का मौसम शुरू होता है, बारिश के साथ आकाश में काले बादल छा जाते हैं या इन्द्रधनुष निकल आता है और रिमझिम-रिमझिम बारिश की बूँदें गिरती हैं, तब सुनौली और भैरू मोर-मोरनी के रूप में नाचते हैं।

गारो समाज के स्थानीय लोग आज भी यदि धूप और बारिश एक साथ होने लगे या इन्द्रधनुष दिख जाए, तो वे अपने सुखाए गए कपड़े तुरंत उतारते नहीं हैं। इसी वर्षा को वे "अमृतवर्षा" कहते हैं और उसमें स्नान करके अपने शरीर को सोने के समान चमकीला बनाकर उस अमृतवर्षा में डूबना चाहते हैं।

10. आक के वृक्ष के रूप में पुनर्जन्म (आँकको रुखको जन्म)

सदियों पुरानी कथा है। एक गाँव में एक अमीर व्यक्ति था, जो अपनी अत्यंत सुंदर कन्या के साथ एक आलीशान महल में रहता था। कन्या के लावण्यपूर्ण रूप और अच्छे स्वभाव के कारण गाँव, कस्बों और शहरों के साथ-साथ देश-विदेश से भी कई युवक उस सुंदर कन्या के लिए विवाह का प्रस्ताव लेकर आते रहते थे। परंतु कन्या ने किसी का भी प्रस्ताव स्वीकार नहीं किया, क्योंकि वह एक "मंदार" नामक युवक से प्रेम करती थी।

परंतु यह प्रेम काफी विचित्र और रहस्यमय था, क्योंकि कन्या जिस युवक से प्रेम करती थी वह केवल रात को ही उससे मिलने आता था और सुबह होने से पहले ही वह लौट जाता है। युवक कभी दिन में उस कन्या से मिलने नहीं आता था और इस बात पर कन्या ने कभी ध्यान या विचार ही नहीं किया था।

इसी तरह कई वर्ष बीत गए। एक दिन कन्या ने अपने प्रेमी को आमंत्रित करते हुए कहा कि वह दोपहर में उसके घर आए और उसके पिता से उनकी शादी की बात करें। लेकिन युवक ने कोई उत्तर नहीं दिया। कन्या के बार-बार पूछने पर वह कुछ बहाने बनाकर उस बात को टाल देता।

अब कन्या को भी शंका होने लगी। अंततः एक दिन उसने मौका देखकर और हिम्मत जुटाकर अपने पिता के सामने उसके अनूठे प्रेम की व्यथा विस्तारपूर्वक सुनाई। पिता ने कन्या की प्रेम-व्यथा सुनकर सहानुभूति व्यक्त की और बेटी को सांत्वना देते हुए उसके प्रेमी को खोजने का वादा किया।

अब कन्या के पिता ने उस युवक को ढूँढकर अपनी बेटी के सामने लाने का निश्चय किया। वह युवक इन सब बातों से अनजान रहता और हमेशा की तरह रात्रि को अपनी प्रेमिका से मिलने

आता और सुबह होने से पहले ही चला जाता। कन्या के पिता ने उसे टटोलने के लिए अपने कुछ नौकरों को उसके पीछे भेज दिया, ताकि यह पता लगाया जा सके कि वह रात भर किधर-किधर जाता है।

एक रात, मंदार जब कन्या से मिलकर लौट रहा था, तभी कन्या के पिता ने उसका पीछा करना शुरू किया। मंदार ने रास्ते में एक बड़ी नदी पार करने के बाद सीधे-सीधे पहाड़ की ओर चढ़ना शुरू किया। वह अनेक छोटे-छोटे गाँवों और बस्तियों को पीछे छोड़ता हुआ एक बहुत घने जंगल की ओर बढ़ता जा रहा था। कुछ ही देर बाद वह अचानक दौड़ने लगा और आखिरकार नदी के स्रोत के पास विश्राम करती हुई बड़ी तालाब में छलांग लगा दी।

कुछ ही क्षणों में वह तालाब से बाहर आया, अपने शरीर को सुखाकर तालाब के तट पर खड़ा हो गया और दोनों हाथ जोड़कर मूर्ति की तरह स्थिर हो गया। फिर वह देखते ही देखते कुछ ही पलों में अपने शरीर को एक विचित्र, अनूठी आकृति में बदलता हुआ दिखने लगा। जैसे ही सुबह होने वाली थी, मंदार हाथ-पैर फैलाकर खड़ा हो गया—उसके हाथ-पैर पेड़ की साख़ों में, बाल और शरीर के रोएँ अनगिनत पत्तियों में, कान और नाक फलों में, आँखों की पलकें और होंठ फूलों के गुच्छों में बदल गए। इस प्रकार देखते ही देखते मंदार पूरी तरह से एक वृक्ष के रूप में परिवर्तित हो गया।

कन्या के पिता इस घटना को देखकर आश्चर्य और हेरान होकर वहीं खड़े रह गए। वे एकदम से स्थिर हो गए थे, मानो उनका शरीर जड़ हो गया हो। बहुत देर बाद उन्हें होश आया, फिर भारी मन और गहरी चिंता के साथ वे अपने भवन की ओर चल पड़े।

इस घटना के बाद कन्या के पिता को न दिन में चैन था, न रात में नींद। जैसे-ही रात होती, उसे वही चिंता सताने लगती कि उसकी बेटी शायद उस वृक्ष-स्वरूप मंदार से मिलने गई होगी, और इसी चिंता में वह पूरी रात बिना नींद के जागता रहता।

अब कन्या के पिता को एक तरकीब सूझी। उसने उस रहस्यमयी वृक्ष को काटने का निश्चय किया और अपने मन-ही-मन सोचा कि *"न रहेगा बाँस, न रहेगी बाँसुरी।"* कन्या के पिता ने उस मंदार से जुड़े रहस्य को अपनी बेटी को नहीं बताया और उसे मंदार ढूँढने का बहाना बनाकर कुछ लकड़हाड़ों के साथ हथियार व जरूरी सारा सामान लेकर उस जगह पहुँचा, जहाँ वह पेड़ खड़ा था। जब तक वे वहाँ पहुँचे, शाम हो चुकी थी। कन्या के पिता ने मशाल जलाई और लकड़हाड़ों ने कुल्हाड़ी से उस वृक्ष की जड़ से काटना शुरू कर दिया।

जब लकड़हाड़ों ने पेड़ पर पहला वार किया, तो पेड़ के सारे पत्ते सिकुड़कर गोल आकार में बदलकर एक ही जगह पर जमा हो गए। वृक्ष से एक अजीब प्रकार की साँस लेने जैसी ध्वनि सुनाई दे रही थी। किसी को भी यह अंदाजा नहीं था कि उस चमत्कारी और रहस्यमय पेड़ का क्या रहस्य था, जिसने सभी को हैरान कर दिया था। लकड़हाड़ों को उस वृक्ष को काटने में बहुत मुश्किल हो रही थी, फिर भी वे लगातार काटते ही जा रहे थे।

आश्चर्य यह था कि पेड़ को काटने पर जो भी टुकड़े निकल रहे थे, वे जमीन पर न गिरकर आसमान की ओर जाकर लटक रहे थे। फिर भी लकड़हाड़ों ने बिना रुके उस पेड़ को काटना जारी रखा। अंत में, रात होने से पहले अत्यंत मेहनत के बाद वह पेड़ जमीन पर गिर ही गया।

जब उस वृक्ष की ऊपरी शाख को जड़ से काटकर अलग किया गया, तो उसके छोटे-छोटे टुकड़े जमीन पर गिर पड़े। उसी पेड़ का एक छोटा टुकड़ा पिता की आँख में जा लगा और उस टुकड़े

से एक सफ़ेद पानी निकलकर उनकी आँखों में जा गिरा, जिससे कन्या के पिता को जबरदस्त चोट लगी और उनकी आँखों की रोशनी चली गई। इसके बाद कन्या के पिता को बहुत पछतावा हुआ।

वृक्ष के सारे टुकड़े ज़मीन पर इधर-उधर बिखरे पड़े थे। अब पेड़ पूरी तरह से काटा जा चुका था। कुछ उस पेड़ के छोटे-छोटे टुकड़े तेजी से उड़कर आकाश की ओर जाकर विलीन हो गए, जबकि ज़मीन पर पड़े टुकड़ों में से कुछ से छोटे-छोटे पौधे उगने लगे।

दूसरी ओर, मंदार की प्रतीक्षा में कन्या अपनी खिड़की से बाहर झाँक रही थी। इतने में उस पेड़ का एक टुकड़ा आकर उसके कान से टकराकर काँच की तरह सिर में चला गया और वह तुरंत बेहोश हो गई। उसके बाद वह कभी भी पूरी तरह से होश में नहीं आई और कुछ दिनों बाद उसकी मृत्यु हो गई। इस प्रकार कन्या और मंदार की लंबी प्रेमकथा अधूरी रह गई और दोनों की मृत्यु के साथ इस प्रेम-प्रसंग को निर्वाण-सा विश्राम मिला।

कन्या के भवन के इर्द-गिर्द, जहाँ भी पेड़ के टुकड़े बिखरे पड़े थे, वहाँ से विभिन्न रंगों के छोटे-छोटे पौधे उग आए। उनमें आँक, पलांस, सिउंडी, च्वां, करबीर जैसे पेड़ उगे। उनमें से आँक का पेड़ अत्यंत सुंदर और मनमोहक ढंग से विकसित हुआ। उसकी बड़ी-बड़ी मुलायम और मोटी पत्तियाँ एक-दूसरे से टकराते हुए झूम रही थीं। उन पत्तियों को तोड़ने पर सफ़ेद दुधिया रस निकलता था। दूर से देखने पर उसका तना और पत्तियों की छाल राख जैसी, मखमल जैसी मुलायम, सफ़ेद रोएँ वाली लगती थी। उसकी फैली हुई शाखाओं पर सुंदर घंटियों के आकार वाले, सफ़ेद, बैंगनी और प्याजी रंग के धब्बेदार फूलों के गुच्छे लटक रहे थे और उसी शाख में मुड़े-मुड़े फल के दाने लटके हुए थे। उन फलों के भीतर से सफ़ेद, भूवाँदार, पके हुए बीज मिलते थे।

आँक के पेड़ की अपनी मौलिक और धार्मिक विशेषताएँ हैं। इसके तने, पत्तियों और जड़ों में औषधीय गुण और अंतरिक विष-प्रतिकारक पदार्थ भी पाए जाते हैं। अधूरे प्रेम और फिर अलग हुए प्रेमियों की दुर्दशा को सुधारने, पति-पत्नी के बीच के विवादों को सुलझाने और बहुविवाह जैसे अशुभ ग्रह-दोषों को दूर करने के लिए "वृक्ष-विवाह" की परम्परा देखी जाती है। इसीलिए इस आँक के वृक्ष को विशेष लाभकारी पेड़ों में गिना जाता है—ऐसी ही लोकमान्यता प्रचलित है।

जिस पेड़ को काटा गया था, वह एक **आओ जनजाति** के **चोंगली उप-कबीले** के पोंगेन खंड से संबंधित '**संगवार**' नामक वृक्ष की सनातन-संस्कृति से संबंधित है। अतः इस वर्ग के समुदाय के लोग उस प्रजाति के पेड़ों से बनी मेज, कुर्सी, पलंग, सोफा आदि का उपयोग नहीं करते। आज भी जब किसी प्रजाति का ऐसा पेड़ मिलता है, तो लकड़हारे उसे काट देते हैं, पर उसकी लकड़ी को जलाऊ ईंधन के रूप में या फर्नीचर बनाने के लिए काम में नहीं लेते।

इसी वृक्ष से उगने वाले विशेष पेड़, जैसे आँक, को घर के आस-पास लगाया जाता है या काटकर दूसरी जगह रोपा जाता है। इस प्रकार 'संगवार' से उत्पन्न शाखा-प्रशाखाओं के साथ-साथ उस वृक्ष की टहनियों—जैसे पलांस, सिउंडी, करवीर, च्वां, कदम—को भी नेपाली समाज में औषधी के रूप में उपयोग करने की प्रथा प्रचलित प्रतीत होती है।

इसीलिए आज भी विवाह से पहले किसी भी नकारात्मक ग्रह को दूर करने की दृष्टि से वृक्ष-विवाह करने की प्रथा प्रचलित है। साथ ही एक लोकविश्वास यह भी है कि अगर आँक के पेड़ का दुधिया सफ़ेद रस किसी की आँख में चला जाए, तो आँखों की रोशनी जाती रहती है। यही लोक-मान्यता भी प्रचलित है।

11. विवाह का प्रस्ताव (बिहेको प्रस्ताव)

एक समय की बात है। एक राजा की दो रानियाँ थीं, जिनके नाम थे **देवयानी** और **तारकेश्वरी**। राजा ने एक ही दिन दोनों से विवाह किया था। बड़ी रानी देवयानी थी, जो बहुत गुणवान और दयालु थी, जबकि छोटी रानी तारकेश्वरी अधिक दूष्ट और लालची स्वभाव की थी। देवयानी की इकलौती पुत्री थी, जिसका नाम **सुरुचि** था, जो अपनी माँ की तरह दयालु एवं गुणी थी। तारकेश्वरी की भी एक पुत्री थी, जिसका नाम **ललितारानी** था; ललितारानी का स्वभाव भी उसकी माँ की तरह ही था।

तारकेश्वरी एक चतुर, बुद्धिमान और बहुत महत्वाकांक्षी स्त्री थी। वह राज्य की सत्ता अपने हाथ में लेने के लिए कई तरीके और बहाने सोचती रहती थी। राजा भी छोटी रानी से ही ज्यादा प्रेम करते थे। तारकेश्वरी को देवयानी "फूटी आँख" नहीं सुहाती थी। एक दिन तारकेश्वरी ने राजा के सामने यह प्रस्ताव रखा कि देवयानी और सुरुचि को राजमहल से निकालकर नौकरों के रहने वाले घर में भेज दिया जाए। राजा में तारकेश्वरी के प्रस्ताव को अस्वीकार करने का साहस नहीं था। छोटी रानी के षड्यंत्र में फँसकर राजा ने देवयानी और सुरुचि को महल के बाहर बने एक छोटे से घर में रहने का आदेश दे दिया।

इतना करने के बाद भी तारकेश्वरी को चैन नहीं मिला, और जैसे-जैसे दिन बीतते गए, उसके मन में देवयानी और उसकी बेटी सुरुचि के प्रति घृणा का भाव और भी गहरा होता चला गया।

तारकेश्वरी ने सुरुचि को महल में उपस्थित होने का आदेश दिया और उससे कहा, "कल से तुम्हें रोज राजमहल के सभी पशुओं को चराने के लिए वन में ले जाना होगा।" देवयानी अपनी सौतन

की साजिश से अच्छी तरह वाकिफ थी; इसलिए देवयानी अपनी बेटी की रक्षा के लिए अपने पति, अर्थात राजा, के सामने गुहार लगाने के लिए महल पहुँच गई। पर राजा छोटी रानी के इशारों पर नाचता था; इसलिए उसने देवयानी की बातों को अनसुना कर दिया।

देवयानी निराश होकर लौट आई। घर आकर उसने अपनी बेटी सुरुचि को बुलाकर कहा, “सुनो, पुत्री, जब भी तुम रोज पशुओं को चराने के लिए वन जाओगी, तो वहाँ जाकर उन्हें चरने के लिए छोड़ देना और खुद एक सुरक्षित स्थान खोजकर बैठ जाना, और शाम होने से पहले ही घर लौट आना।” सुरुचि अपनी माँ की कही बातों का पालन करते हुए तड़के सुबह पशुओं को चराने के लिए जंगल जाती और शाम होने से पहले ही घर लौट आती थी।

एक दिन सुरुचि ने जिन पशुओं को चरने के लिए छोड़ा था, उन्होंने लौटने में देर कर दी, जिसके कारण सुरुचि को घर लौटने में देर हो रही थी। जैसे ही पशु लौटे, सुरुचि उन्हें लेकर जल्दी-जल्दी घर की ओर चल पड़ी। जैसे-जैसे सुरुचि घर की ओर बढ़ रही थी, उसे ऐसा लग रहा था कि कोई उसका पीछा कर रहा हो। वह पीछे मुड़कर देखने से भी डर रही थी; इसलिए तीव्र गति से घर की ओर चलती रही और आख़िरकार घर पहुँच गई।

अगले दिन भी सुरुचि उसी तरह पशुओं को लेकर शाम के समय घर लौट रही थी कि उसे फिर महसूस हुआ कि कोई उसका पीछा कर रहा है, और उसे ऐसा लग रहा था कि शायद कोई जंगली जानवर उसे मार देगा। इसी डर से वह जल्दी से एक पेड़ पर चढ़ गई।

पेड़ बहुत विशाल और फैला हुआ था। सुरुचि पेड़ की चोटी पर चढ़कर बैठ गई और वहीं से चारों दिशाओं पर नज़र दौड़ाने लगी, लेकिन वहाँ उसे किसी जंगली जानवर का नामो-निशान भी नहीं दिख रहा था। इसलिए वह धीरे-धीरे पेड़ से नीचे उतर आई। फिर भी उसके मन में कहीं न कहीं यह डर

बसा हुआ था कि कोई उसका पीछा कर रहा है। सुरुचि घर पहुँचने के बाद भी डरी और सहमी हुई रहने लगी।

अगली सुबह थके हुए मन और शरीर के साथ वह फिर पशुओं को लेकर जंगल की ओर चराने के लिए निकल पड़ी। पर आज भी उसे ऐसा ही प्रतीत हो रहा था, मानों उसका कोई पीछा कर रहा हो। सुरुचि ने हिम्मत करके पीछे देखा, तो उसे कोई नज़र नहीं आया; लेकिन उसने यह सुना कि कोई धीमी आवाज़ में उसे पुकारते हुए कह रहा है—"हे सुंदर राजकुमारी! क्या तुम मुझसे शादी करोगी?"

यह अजीब-सी आवाज़ सुनकर सुरुचि बहुत घबरा जाती है, और वहाँ से पशुओं को लेकर जल्दी-जल्दी घर की ओर बढ़ने लगती है। घर पहुँचते ही घबराई, डरी हुई और सहमी बेटी को देखकर माँ भी हैरान चकित होकर पूछती है, "क्या हुआ, बेटी? इतनी डरी-सहमी सी क्यों लग रही हो? रास्ते में कुछ अनर्थ हो गया है क्या?" माँ को अब लगने लगा कि उसकी सौतन तारकेश्वरी ने ही अपनी बेटी के साथ कुछ बुरा किया होगा। उसने बहुत पता लगाने की कोशिश की, लेकिन उसे कुछ भी पता नहीं चला।

रात में सुरुचि ने अपनी माँ को उस घटना के बारे में विस्तार से बताया, जिसके कारण वह डरी-सहमी सी घर पहुँची थी। माँ ने पूरी घटना सुनने के बाद कहा, "बेटी, अभी तुम सो जाओ; इस विषय में हम कल सुबह बात करेंगे।" देवयानी ने अपनी बेटी के सिर को चूमते हुए उसे सहलाया और कहा, "सो जाओ… सो जाओ, बिटिया रानी।"

अगले दिन सुबह देवयानी ने अपनी बेटी सुरुचि से कहा, "यदि आज भी तुम्हें जंगल से लौटते समय रास्ते में महसूस हुआ कि कोई तुम्हारा पीछा कर रहा है, तो तुम एक बार ज़रूर ज़मीन की ओर

देखना; या फिर यदि तुम्हारे सामने वही शादी का प्रस्ताव रखे, तो उत्तर देना और कहना, 'कल सुबह तुम मेरे घर आना; तभी मैं तुमसे शादी करूँगी।'"

सुरुचि ने घबराते हुए कहा, "माँ, मुझे तो डर लग रहा है। उस जगह पर कोई नहीं दिखाई देता, सिर्फ आवाज़ सुनाई पड़ती है और न ही उस आवाज़ देने वाले को मैं पहचानती हूँ, न ही कभी उसे देखा है। ऐसे मैं उससे शादी के लिए 'हाँ' कैसे कर दूँ, माँ?"

माँ ने गंभीरतापूर्वक कहा, "मेरी प्रिय बेटी, हम जिस तरह का जीवन जी रहे हैं, यह नर्क से भी बदतर है। हम जिस कष्ट, पीड़ा और दुःख के दिनों से गुज़र रहे हैं, इससे अधिक कठिन जीवन और क्या हो सकता है, बेटी?" अपनी माँ की बात सुनकर सुरुचि भावुक हो गई। माँ ने फिर कहा, "तुम अपनी आँखें बंद करके उस आवाज़ का प्रस्ताव स्वीकार करो; भगवान तुम्हारी रक्षा अवश्य करेंगे। सोचो कि यह हमारी मदद के लिए ही हो रहा है। विश्वास करो, ईश्वर हमारे ऊपर अवश्य दया करेंगे।"

सुरुचि जंगल पहुँची, और शाम होते-होते आज भी वही आवाज़ आई—"सुरुचि, क्या तुम मुझसे विवाह करोगी?" लेकिन आज की आवाज़ गहरी निराशा, दर्द और पीड़ा से भरी थी। जैसे ही सुरुचि ने आवाज़ सुनी, वह रुक गई। उसने पीछे मुड़कर देखा, तो उसे हर जगह सन्नाटा छाया हुआ था। सुरुचि को डर लगने लगा और वह हड़बड़ा रही थी; उसे कहीं छुपने का मन हो रहा था। लेकिन उतने में उसे अपनी माँ द्वारा कही गई बात का ध्यान आ गया।

सुरुचि को फिर वही आवाज़ सुनाई पड़ी—"क्या तुम मुझसे विवाह करोगी?" तो सुरुचि ने उत्तर दिया, "विवाह? हाँ, मैं तुमसे विवाह करने के लिए तैयार हूँ। परन्तु तुम्हें कल सुबह मेरे घर आना होगा।"

अगली सुबह माँ और बेटी दोनों जल्दी उठ गईं। सुरुचि उठते ही दरवाज़े की ओर दौड़ी और दरवाज़ा धीरे-धीरे खोला, लेकिन वहाँ कोई नहीं दिखाई पड़ा। फिर किसी को न देखकर सुरुचि इधर-उधर देखने लगी। इतने में वहाँ एक अजीब घटना घटी। सुरुचि ने जैसे ही दरवाज़ा बंद करने की कोशिश की, उसे महसूस हुआ कि दरवाज़े के नीचे कुछ है। जब उसने नीचे की ओर देखा, तो वह दंग रह गई, मानों उसका ज़बान बंध गया हो, क्योंकि दरवाज़े के नीचे एक विशाल अजगर कुंडली मारकर बैठा था। यह अजगर कोई और नहीं, बल्कि वही प्राणी था, जिसने सुरुचि से विवाह का प्रस्ताव रखा था। यह देखते ही सुरुचि बेहोश हो गई।

कुछ समय बाद सुरुचि होश में आई तो उसने सबसे पहले अपनी माँ को चिलाते हुए बुलाया। देवयानी भी घर के अंदर से दौड़ती हुई दरवाज़े के पास पहुँची। उस भयानक और विशाल अजगर को देखकर दोनों माँ-बेटी आश्चर्य-चकित हो गईं। अजगर ने विनम्र स्वर में देवयानी को नमस्कार कहते हुए कहा, "मुझे कल सुरुचि ने घर आने का निमंत्रण दिया था। हे प्रिय देवयानी रानी, आपकी सुपुत्री राजकुमारी सुरुचि ने कल मेरे विवाह के प्रस्ताव को स्वीकार करके मुझसे विवाह करने का वचन दिया था; इसलिए मैं आज आपके घर में उपस्थित हूँ।"

यह सुनते ही देवयानी बड़ी असमंजस में पड़ गई। उसे तो लग रहा था कि उसकी पुत्री के लिए कोई सुंदर राजकुमार आएगा, पर उस भयानक अजगर की बातें सुनकर उसे एक धक्का-सा लग गया। अब वह सोचने लगी कि *"कैसे मैं अपनी फूल-सी कोमल राजकुमारी का विवाह इस भयानक अजगर से कर दूँ? हे भगवान, यह कैसी विडंबना है!"* देवयानी अब दुविधा में पड़ गई—एक तरफ उसकी रानी होने की दायित्व थे, जिसके कारण वह अपने वचन से नहीं मुकर सकती थी, तो दूसरी तरफ माँ का कर्तव्य था।

देवयानी ने अपने मन-ही-मन सोचा कि सुरुचि भी तो एक राजकुमारी है, इसलिए उसका भी कर्तव्य है कि अपने वचन का पालन करे। अगर उसने किसी से विवाह करने का वचन दिया है, तो उसे अपना वचन निभाना चाहिए। इसी आधार पर विवाह करने का निर्णय लिया गया, और उसी दिन सुरुचि का विवाह अजगर के साथ कर दिया गया। देवयानी इस विवाह से बिलकुल खुश नहीं थी; उसके लिए यह एक जटिल परिस्थिति थी, जिसे स्वीकार करना उसके लिए बहुत कठिन था।

जब यह सब घटनाएँ घट रही थीं, तो कनसूत्ले नामक नौकर वहीं मौजूद था, और उसने सारी घटना देवयानी की सौतन तारकेश्वरी को जाकर सुना दी। यह सुनते ही तारकेश्वरी का निर्दयी मन खुशी से झूम उठा। वह सोचने लगी की अब कुछ ही देर में यह समाचार भी आएगा की सुरुचि को अजगर ने निगल लिया और इस तरह बेटी के मृत्यु के सदमें से देवयानी की भी मृत्यु हो जाएगी। तारकेश्वरी ये सोच कर ही अधिक प्रसन्न होते हुए वह देवयानी और सुरुचि की दुर्दशा देखने के लिए महल से बहार आती है।

दूसरी ओर, देवयानी अपनी बेटी को सुरक्षित रखने के लिए भगवान से प्रार्थना करते हुए रात बिताती है। अगली सुबह देवयानी डरी-सहमी हालत में जब सुरुचि का दरवाज़ा खटखटाया, तो एक अत्यंत सुंदर युवक ने दरवाज़ा खोला। यह देखकर देवयानी आश्चर्यचकित हो जाती है।

युवक ने तुरंत आगे बढ़कर देवयानी से कहा, "मैं आपको बता नहीं सकता कि आज मैं कितना खुश हूँ। आप लोगों ने और मुझे अभिशाप से मुक्त कर दिया। आप लोगों का जो योगदान है, उसका आभार कैसे व्यक्त करूँ? मेरे पास शब्द ही नहीं हैं।"

युवक ने देवयानी को पूरी कथा सुनाई—कि किस प्रकार एक दिन जब वनदेवता से उसकी लड़ाई हुई, तब क्रोध में आकर उन्होंने मुझे अजगर बन जाने का श्राप दे दिया, और मैं उसी दिन एक

युवक से अजगर बन गया। मैंने वनदेव से बहुत प्रार्थना की कि इस श्राप से मुक्त कर दें, पर अब यह संभव नहीं था। अंत में उन्होंने मुझे इस श्राप से मुक्त होने का एक उपाय बताया: यदि मेरे साथ किसी राजकुमारी विवाह हो जाए, तो मैं इस श्राप से मुक्त हो सकता हूँ और फिर से मनुष्य का जीवन पा लूँगा। इसी तलाश में मैं कई वर्षों से उस वन में भटक रहा था। अंत में एक दिन मैंने अचानक सुरुचि को वन में देखा, तो मुझे लगा कि यह अवश्य ही कोई राजकुमारी होगी। फिर मैंने सुरुचि के बारे में जाँच-पड़ताल की, तो पता चला कि सुरुचि वास्तव में एक राजकुमारी है। इसलिए मैंने उसके सामने विवाह का प्रस्ताव रखा, और उसके प्रस्ताव स्वीकार करने पर ही मैं आज वनदेव के श्राप से मुक्त हो पाया हूँ।"

यह सब सुनकर देवयानी बहुत खुश हो गई और ईश्वर को धन्यवाद देने लगी। सुरुचि को युवक के पीछे प्रसन्न मुद्रा में खड़ा देखकर देवयानी खुशी से गदगद हो उठी।

इस विचित्र, रहस्यमय और अनूठी घटना से राजमहल में देखते-देखते हलचल मच गई। राजा भी अपनी ही द्वारा अपमानित ठहराई गई पुत्री का भाग्य इस तरह बदलता देखकर आश्चर्यचकित रह गया। वही रानी देवयानी बहुत खुश थी, इसलिए वह अपनी बेटी और जमाई के साथ राजमहल चली गई, ताकि वे राजा से आशीर्वाद ले सकें।

राजमहल में उस नवयुवक को देखने के लिए उत्सुक महल के सभी कर्मचारी, गाँव वाले और बूढ़े-बजुर्गों की एक बड़ी भीड़ जमा हो गई। लेकिन राजा की दूसरी पत्नी तारकेश्वरी और उसकी बेटी ललितारानी ईर्ष्या और क्रोध में खुद को कमरे में बंद कर लेते हैं।

अब तारकेश्वरी भी चाहती है कि अपनी बेटी ललितारानी को भी सुरुचि की तरह भाग्यशाली बनाया जाए। उसने उपाय सोचते हुए ललितारानी से कहा, "सुनो, बेटी! सुरुचि एक ऐसी लड़की है,

जिसे हम सब नफरत करते हैं, पर आज वह रानी बनकर महल में चली गई। अगर तुम भी सुरुचि की तरह भाग्यशाली बननी हो, तो तुम्हें कल से गायों को चराने के लिए जंगल में जाना होगा।"

अपनी माँ की यह बात सुनते ही ललितारानी एकदम चिल्ला उठी, "नहीं, माँ! मैं जंगल में गाय चराने नहीं जाऊँगी; मुझे डर लगता है। घर में इतने नौकर-चाकर होते हुए आप मुझे क्यों गाय चराने के लिए भेज रही हो, माँ?" माँ ने कठोर स्वर में सिर्फ इतना कहा, "यह मेरा आदेश है कि तुम्हें कल से जंगल जाकर गाय चरानी होगी। और एक बात कान-खोलकर सुन लो: यदि जंगल में कोई तुम्हें विवाह का प्रस्ताव दे, तो तुम उसे स्वीकार कर लेना और उसे तुरंत अपने घर में ले आना।"

अपनी माँ का आदेश सुनकर ललितारानी भयभीत होकर रोने लगी और कहने लगी, "मुझे जंगल मत भेजो, माँ!" लेकिन तारकेश्वरी ने अपनी बेटी की एक न सुनी। अतः ललितारानी दुखी होकर गाय चराने के लिए जाने लगी। कई दिन बीत गए, पर किसी ने ललितारानी के सामने कोई विवाह-प्रस्ताव नहीं रखा।

अब पूरे जंगल में उस तरह के अजगर की तलाश होने लगी, पर कोई अजगर का पता नहीं चला। तब तारकेश्वरी ने महल के नौकरों को बुलाकर उन्हें अजगर खोजकर महल में लाने का आदेश दिया। आख़िरकार एक अजगर मिल ही गया; उसे पकड़कर महल में लाया गया, और उसी दिन तारकेश्वरी ने अपनी बेटी ललितारानी का विवाह उस अजगर से करा दिया।

शादी की रात ही ललितारानी को सुरुचि की तरह अजगर के साथ जबरन एक कमरे में बंद कर दिया गया। अब तारकेश्वरी बेसब्री से सुबह होने की प्रतीक्षा करने लगी। सुबह होते ही उसने सबसे पहले ललितारानी के कमरे का दरवाज़ा खटखटाया, लेकिन दरवाज़ा नहीं खुला। अंत में नौकरों को बुलाकर दरवाज़ा तोड़ा गया। तारकेश्वरी ने देखा कि ज़मीन पर अजगर बेहोश पड़ा है, लेकिन

ललितारानी वहाँ नहीं है। तारकेश्वरी घबराकर चिल्लाने लगी। उसकी चीख सुनकर महल के सभी लोग वहीं जमा हो गए। राजा भी घबराते हुए आये, तो पता चला कि ललितारानी को अजगर ने निगल लिया है और अब वह अजगर के पेट में है। महल के एक व्यक्ति ने कहा कि यदि ललितारानी अभी भी जीवित है, तो वह उसे बाहर निकाल सकता है।

राजा के आदेश पर उस आदमी ने अजगर की गर्दन फाड़ दी और ललितारानी को बाहर खींच लिया। ललितारानी भयभीत और घबराई हुई अपनी माँ की ओर दौड़कर गले लग गई। अंत में उस अजगर को भी मार दिया गया।

तारकेश्वरी ने कहा, "जैसी करनी, वैसे भरनी।" इस तरह राजा की दूसरी पत्नी तारकेश्वरी को अपनी सौतन और उसकी बेटी पर कुरूर्ता, घृणा और ईर्ष्या के परिणामस्वरूप एक भयानक स्थिति का सामना करना पड़ा। यह घटना यह प्रतीत कराती है कि किसी का भाग्य अपनी मनमानी से छीना नहीं जा सकता। जिसे यह प्रतीत होता है कि किसी की भाग्य अपनी ताकत से छिनी नहीं जा सकरी। तारकेश्वरी राजा और ललितारानी को देवयानी और सुरुचि की ईमानदारी, दयालु सदाचार और भाग्य के सामने घुटने टेकने पड़े और अजगर के साथ-साथ तारकेश्वरी और ललितारानी इच्छा की भी मौत हो गई।

12. पक्षी पोशाक धारी राजकुमार- 1 (पक्षीपोशाकधारी राजकुमार-1)

बहुत पहले की बात है, एक गाँव में एक खुशहाल परिवार रहता था। गोपालन इनका मुख्य पेशा था। परिवार में माता-पिता सहित उनकी तीन बेटियाँ थीं, जिसमें बड़ी बेटी का नाम सुनपारी, दूसरी का मोनपारी और तीसरी का नाम जुनपारी था। इन तीनों बहनों में अद्भुत प्रेम और सामंजस्य को देखकर माता-पिता ने भी इनका विवाह न करने का निर्णय लिया।

अपने माता-पिता की मृत्यु के बाद तीनों बहनें मिलकर गोपालन कर अपना जीवन व्यतीत करने लगती हैं। बड़ी बहन सुनपारी दूध, खोया, घी और चूरपी बनाकर बाजार में बेचती थी। वहीं दूसरी मोनपारी पशुओं के लिए घास काटने और गायों को चराने, गोबर फेंकने का काम करती थी और छोटी बहन खाना बनाने और अपनी बहनों को खिलाने में व्यस्त थी। इन बहनों का आजीविका का साधन गोपालन ही रह गया था। तीनों बहनों के पास अनेक गायें थीं, लेकिन उनमें से एक गोबू नाम की कामधेनु गाय थी। एक दिन तीनों बहनों ने तय किया कि वे अपनी सारी गायों को बेच देंगी, केवल गोबू कामधेनु को रखकर।

एक दिन गोबू घास चरने के लिए वन में गया था, लेकिन वह दोबारा लौटकर नहीं आया। गोबू कामधेनु के खो जाने से घर में अफरा-तफरी मच जाती है। सुनपारी अपने लिए कुछ नाश्ता लेकर गोबू कामधेनु को ढूँढने घाटी की तरफ चली जाती है, लेकिन उसका कहीं पता नहीं चल पाया। गोबू कामधेनु को ढूँढते-ढूँढते सुनपारी लंबी यात्रा के बाद थककर रास्ते के किनारे आराम करने के लिए बैठ जाती है।

इतने में एक सफेद रंग का पक्षी आकर उसके सामने बैठ जाता है और कहता है, "सुनो सुनपारी, यदि तुम मुझे जौ के आटे की रोटी दोगी तो मैं तुम्हें एक शुभ समाचार सुनाऊँगा। या फिर तुम मुझे मांस के कुछ टुकड़े दोगी तो मैं तुम्हें दुगनी खुशी और शुभ समाचार सुनाऊँगा जो तुम्हें बहुत अच्छी लगेगी।" पक्षी अंत में फिर कहता है, "अगर तुम मुझसे विवाह करती हो तो मैं तुम्हें जीवन भर शुभ समाचार सुनाता रहूँगा।"

पक्षी की यह बात सुनते ही सुनपारी को एकदम से गुस्सा आया और उसने अपने मन ही मन में सोचा कि यह कैसा अजीब पक्षी है! विवाह? भला एक पक्षी के साथ कौन विवाह करता है। कैसी अजीब बातें कर रहा है? सुनपारी नीचे से एक पत्थर उठाकर उस पक्षी पर मारा, जिससे वह पक्षी उड़ गया। सुनपारी पूरे दिन गोबू कामधेनु को खोजते-खोजते परेशान रही, फिर वह असहाय होकर घर लौट जाती है।

अगले दिन दूसरी बहन मोनपारी भी ठीक अपनी बड़ी बहन की तरह अपने लिए भोजन लेकर गोबू की खोज में निकलती है। मोनपारी भी गोबू की तलाश करते-करते घर से बहुत दूर निकल गई थी। थकी हुई मोनपारी को अब भूख-प्यास भी लगी थी, इसलिए वह एक चौराहे में आराम करने के लिए सो जाती है। तभी वहाँ वही सफेद पंख वाला पक्षी आया और मोनपारी से भी वही सवाल किया जो सुनपारी से किया था। गोबू को खोने की पीड़ा और थकान से परेशान होकर, मोनपारी ने पक्षी को एक लकड़ी के टुकड़े से मार भगाया। पक्षी उड़ते हुए आकाश की ओर चला गया। अंत में मोनपारी भी हार मानकर घर लौट जाती है।

तीसरे दिन छोटी बहन जुनपारी गोबू को खोजने के लिए घर से निकलती है और वह अपनी दोनों बहनों से कहती है, "जब तक गोबू को नहीं खोज लेती तब तक मैं घर नहीं लौटूंगी, अब तो मैं गोबू को लेकर ही घर लौटूंगी।" जुनपारी भी उसी घाटी में जा पहुँची जहाँ सुनपारी गोबू को खोजने के

लिए गई थी। अब वह भी गोबू को खोजते-खोजते थक गई थी, इसलिए कुछ समय विश्राम करने के लिए पेड़ के नीचे बैठ गई।

कुछ समय तक विश्राम करने के बाद जुनपारी ने अपने घर से लाए खाने की पोटली को खोली जिसमें रोटी, खोया और मांस के कुछ टुकड़े थे। जुनपारी बस खाना खाने ही वाली थी कि उतने में वह सफेद पक्षी उड़ता हुआ जुनपारी के पास आकर बैठा। जुनपारी को उस पक्षी के रंग-रूप और मनुष्य की तरह बोलता देखकर वह सफेद पक्षी अत्यंत सुंदर लगा।

पक्षी ने जुनपारी से भी वही सवाल किया जो सुनपारी से किया था, "सुनो जुनपारी, अगर तुम मुझे बिना जूठा किए रोटी दोगी तो मैं तुम्हें एक खुशी की खबर सुनाऊँगा। यदि तुम मुझे खोया दोगी तो मैं तुम्हें वही बात कहूँगा जो तुम्हें अच्छी लगे। अगर इनके अलावा तुम मुझसे शादी करोगी तो मैं तुम्हें जीवन भर शुभ समाचार ही सुनाता रहूँगा। क्या तुमको मेरी यह शर्त मंजूर है?"

पक्षी की बातें सुनकर जुनपारी को यह होश ही नहीं रहा कि वह गोबू को खोजने के लिए घर से निकली थी। अब वह पक्षी के साथ जीवन बिताने का सपना देखने लगी। जुनपारी ने पक्षी की हर माँग को पूरा करने का वचन दिया और पक्षी के कहे अनुसार वह उसके पीछे-पीछे चलने लगी। पक्षी ने जुनपारी से फिर कहा, "मैं तुम्हारी सहायता करूँगा, बस तुम वैसा ही करना जैसे मैं कहता हूँ।"

पक्षी ने जुनपारी से एक गुफा में प्रवेश करने के लिए कहा। उस गुफा का पहला प्रवेश द्वार लाल था और दूसरा आंतरिक प्रवेश द्वार सुनहरा था। इन दोनों द्वारों से गुजरने के बाद एक विशाल शंख से बना हुआ द्वार था। उसे भी पार करने के बाद एक और रत्नों से जड़ा हुआ द्वार था। उस द्वार को खोलकर जब जुनपारी ने अंदर प्रवेश किया तो वहाँ एक अत्यंत सुंदर शयनकक्ष था। वह शयनकक्ष भी

आभूषणों से सुसज्जित था। जुनपारी ने उस शयनकक्ष को बड़े प्यार से छुआ और उसके छूते ही वह शयनकक्ष एक सुंदर सिंहासन में परिवर्तित हो गया, जिसमें वह सफेद पक्षी आकर बैठ जाता है।

पक्षी ने जुनपारी से कहा, "तुम्हारा गोबू बहुत पहले ही एक राक्षसनी खा चुकी है। अब जो गाय मर चुकी है, उसकी तलाश में परेशान क्यों होना? वह तुम्हें नहीं मिलने वाली है।" फिर पक्षी जुनपारी से कहता है, "तुम यहीं की स्वामिनी बनकर रह जाओ।"

जुनपारी ने भी सोचा, सफेद पक्षी अत्यधिक आकर्षक है और उसका व्यवहार भी मनुष्य जैसा है, मैं उसका प्रस्ताव क्यों स्वीकार न करूँ? जुनपारी ने उस सफेद पक्षी से विवाह करने का फैसला किया और अंत में दोनों ने विवाह कर लिया और दोनों खुशी-खुशी से जीवन बिताने लगे।

13. पक्षी पोशाक धारी राजकुमार- 2 (पक्षीपोशाकधारी राजकुमार-2)

एक सफेद पोशाकधारी पक्षी राजकुमार दिन भर पक्षी का स्वरूप लिए उड़ता फिरता था और जैसे ही रात होने लगती थी वह एक सुंदर नवयुवक राजकुमार का रूप धारण कर लेता था। परन्तु इस रहस्य के बारे में जुनपारी को कोई खबर नहीं थी। वह दिन भर राजमहल के काम-काज और देखभाल में व्यस्त रहती थी और जैसे ही रात होती है वह थककर गहरी नींद में सो जाती है।

राजमहल के खेल मैदान पर एक बड़ा खेल प्रदर्शन आयोजित कराया जा रहा था जिसको देखने के लिए जुनपारी भी आई हुई थी। उसका पसंदीदा खेल घुड़सवारी अभी होना बाकी था। अब धीरे-धीरे अँधेरा हो चला था इसलिए खेल के मैदान में चारों ओर रोशनी के लिए मशालें जलाई जाने लगीं जिसके कारण खेल मैदान रोशनी से चमकने लगा था। उस खेल मैदान में घुड़सवारी देखने के लिए विशाल भीड़ इकट्ठा हुई थी, जुनपारी भी उसी भीड़ में जाकर शामिल हो गई।

जुनपारी की नज़र एक नवयुवक पर पड़ी जो घोड़े पर सवार था। दर्शकों के वाह-वाह से पूरा खेल मैदान गूंज रहा था। नवयुवक देखने में बड़ा दिलचस्प था। उसने साफ-सुथरे सफेद कपड़े पहने हुए थे। उस अपार भीड़ में भी उस नवयुवक घुड़सवार की नज़र भी जुनपारी पर टिकी थी तथा जुनपारी को भी वह नवयुवक अत्यंत ही पसंद आया। खेल समाप्त होने से ठीक पहले ही जुनपारी महल की ओर लौट आती है। जुनपारी महल की तरफ लौटती ही रही होती है रास्ते में एक वृद्ध महिला भेंट हो जाती है।

वृद्ध बुढ़िया ने जुनपारी से प्रश्न किया, "आज की खेल प्रदर्शन में सबसे सुंदर युवक कौन था? और युवतियों में सबसे सुंदर कौन थी?" जुनपारी ने उत्तर दिया, "युवक की बात करें तो एक घुड़सवार युवक बहुत ही अच्छा लगा जिसने सफेद पोशाक पहनी हुई थी जो दिखने में हष्ट-पुष्ट और सुंदर भी था, लेकिन युवतियों में मुझे कोई सुंदर नहीं दिखी।"

वृद्ध बुढ़िया ने कहा, “उस खेल मैदान में सभी युवतियों में से तुम सबसे सुंदर थी और तुम्हें पता है जो सुंदर युवक घुड़सवारी कर रहा था वह और कोई नहीं बल्कि तुम्हारा पति है। तुम्हें पता भी है?” वृद्ध बुढ़िया जुनपारी के पास आकर बोली, “अगर तुम्हें अपने पति के सुंदर युवक वाला रूप अच्छा लगता है तो तुम्हें मेरी बात माननी होगी। जब तुम्हारा पति शाम को घर से बाहर जाने के लिए तैयार होता है तो तुम उसके पीछे जाकर दरवाजे के पीछे छुप जाना और जैसे ही वह अपना सफेद पक्षी पोशाक उतारकर दूसरी पोशाक पहन लेता है तो तुम तुरंत उस सफेद पक्षी पोशाक को ले जाकर अग्नि में जला देना।”

वृद्ध बुढ़िया के कहे अनुसार कर जुनपारी ने शाम होते ही अपने पति का पीछा करते हुए दरवाजे के पीछे छुप जाती है, जैसे ही उसने अपनी सफेद पक्षी पोशाक को अपने शरीर से अलग किया। उसने देखा कि वह तो वही नवयुवक है जो दोपहर को घुड़सवारी में था और उसे बहुत पसंद भी आया था। अब यह दृश्य देखकर जुनपारी अत्यंत आनंद महसूस करने लगी थी परन्तु उसने अपने पति को ऐसा प्रतीत नहीं होने दिया कि उसको सब कुछ पता चल गया है।

अगले दिन फिर जुनपारी वृद्ध बुढ़िया के कहे अनुसार दरवाजे के पीछे छुप जाती है और जैसे ही उसका पति सफेद पक्षी पोशाक उतारकर वह राजकुमार के वेश धारण कर लेता है और जुनपारी से छुपकर घोड़े पर बैठकर खेल मैदान की ओर निकल जाता है ठीक उसी वक्त जुनपारी दरवाजे के पीछे से निकलकर उस सफेद पक्षी पोशाक को आग में जला देती है।

अगले दिन जब राजकुमार सुबह उठकर अपना सफेद पक्षी पोशाक ढूंढने लगा और उसको जैसे ही पता चला कि जुनपारी को उसके पक्षी पोशाक धारण करने का रहस्य पता चल गया तो वह दंग रह जाता है। इतने में जुनपारी कहती है, “हे श्रीमान, आप तो इतने सुंदर हो फिर क्यों यह पक्षी पोशाक धारण किए हुए है?” नवयुवक ने जुनपारी को उत्तर देते हुए विन्रमतापूर्वक अपनी वेदना कह सुनाई, “मुझे भी यह सफेद पक्षी पोशाक धारण करना बिल्कुल अच्छा नहीं लगता है बल्कि मुझे भी

मेरा यही रूप प्रिय है परन्तु मैं बेबस हूँ। क्योंकि एक समय की बात है एक राक्षसनी ने मुझे बंदी बना लिया था। मैं किसी तरह उसके चंगुल से भाग निकला था और उस राक्षसनी से बचने के लिए ही मैंने इस पोशाक को धारण किया था परन्तु आज तुमने मेरा सब किए कराए पर पानी फेर दिया है। तुम्हें भी उस राक्षसनी ने अपने वश में कर लिया है, अब हम एक साथ नहीं रह सकते। हाय! मुझे फिर से राक्षसनी बंदी बना लेगी।"

युवक के ऐसा कहते ही कुछ ही क्षण में आकाश की ओर से काला मैला भयानक तूफान आया और देखते ही देखते उस तूफान की भयानक आँधी ने नवयुवक को भी अपने साथ उड़ा ले गया। दरअसल उसी तूफान के साथ राक्षसनी छुपकर आई थी क्योंकि उस समय नवयुवक ने अपना सफेद पक्षी पोशाक उतार रखा था। यह भयानक दृश्य देखकर जुनपारी की आँखें खुली की खुली रह गईं क्योंकि वह राक्षसनी कोई और नहीं बल्कि जो उसे दोपहर को मिली थी वही वृद्ध महिला थी जिसने उसे अपने पति का सफेद पक्षी पोशाक जलाने के लिए कहा था।

जुनपारी उस तूफान की आवाज़ की दिशा का अनुसरण करते हुए एक बौद्ध मठ के सामने जा पहुँचती है। उस मठ के द्वार पर एक युवक लोहे के जूते और उसी जूतों की माला पहने खड़ा था। वह युवक और कोई नहीं था बल्कि जुनपारी का पति राजकुमार था। राजकुमार ने जुनपारी को देखते ही पहचान लिया था और उसे कहने लगा, "जब तक यह लोहे के जूते टुकड़े-टुकड़े नहीं हो जाते, तब तक मैं इस मायावी राक्षसनी के चंगुल से मुक्त नहीं हो सकता। और यही नहीं मुझे इस हालत में रोज उस विशाल कटोरे में पानी भरना होता है। हे जुनपारी, यदि तुम मुझसे वास्तव में प्रेम करती हो तो तुम्हें मेरे लिए सौ पक्षियों के पंख खोजकर लाने हैं और मेरे लिए एक पक्षी पोशाक तैयार करके मुझे इस भयानक कष्ट से मुक्त करो।"

राजकुमार की यह बात सुनकर जुनपारी बहुत भावुक हो जाती है और दिन-रात एक करके पक्षी पोशाक बनाने में लगी है और इस तरह उसने एक महीने के भीतर एक बहुत सुंदर सी पक्षी पोशाक

तैयार कर दी। जुनपारी ने जैसे ही उस पक्षी पोशाक को राजकुमार को पहनाया वह फिर से एक सुंदर पक्षी के रूप में परिवर्तित हो गया। यह दृश्य देखते ही राक्षसनी बेहोश हो जाती है। इस तरह राजकुमार और जुनपारी वहाँ से भागकर अपने महल पहुँच जाते हैं।

इस प्रकार आज भी कुछ नेपाली समाज में इस लोककथा को लोगों के बीच काफी मान्यता मिली हुई है। लोग अपने घर परिवार और गाँवों की रक्षा के लिए चील, कबूतर, मोर आदि पक्षियों के रंग-बिरंगे पंखों से बने कपड़े और सजावट की वस्तुएँ रखते हैं क्योंकि अगर आपके घर में पक्षियों के पंख रखते हैं तो वे आपकी रक्षा करेंगे तथा किसी के द्वारा किया जादू एवं बुरी नज़र का प्रभाव भी नहीं पड़ता है, ऐसी लोक मान्यता प्रचलित है।

14. बूढ़े पिता को फेंकने वाला पुराना डोका (बुढो बाबु फाल्ने थोत्रे डोको)

एक समय की बात है, एक गाँव में एक बूढ़ा आदमी रहता था। उसका एक ही बेटा था। उसने अपने बेटे का बहुत अच्छी तरह से पालन-पोषण किया था और वह उसका एकमात्र बूढ़ापे का सहारा था। बेटे की शादी-ब्याह की जिम्मेदारियों से भी मुक्त हो चुके थे तथा उन्होंने अपने पिता होने का कर्तव्य निभाने के बाद पूरी संपत्ति अपने बेटे के नाम कर दी और वह संतुष्ट होकर अपने बेटे-बहू के साथ रहने लगते हैं। पिता बहुत बूढ़े हो चुके थे। उन्होंने खेत और गौशाला में जाना बंद कर दिया था। अब उनकी हालत ऐसी हो चुकी थी कि उनको बाहर-भीतर करने के लिए भी अपने पोते का सहारा लेना पड़ता था। पिता का वृद्ध शरीर भी अत्यंत क्षीण हो गया था। कुछ ही दिनों में जो बूढ़े पिता लड़खड़ाते हुए आँगन तक आ जाते थे अब वे बरांडे तक भी पहुँचने में असमर्थ थे। ऐसे ही दिन बीतता रहा और उनका खाना-पीना सब विस्तार में होने लगा। वे कोई भी काम स्वयं नहीं कर पाते थे और इतने में उनको लगातार खाँसी भी होने लगी थी।

बेटे को अपने बूढ़े पिता से परेशानी होने लगी थी। और कहता था, कितना खस्ता रहता है। न कोई हिल-डुल और न तो इधर-उधर जाता है बस दिन भर खाता रहता है और बिस्तर में पड़ा रहता है। खाना कम दो तो शिकायत करता है और ज्यादा देते हैं तो बिस्तर खराब करता है। इनका पूरा शरीर दूसरों पर निर्भर है ये कैसा फसाद है। बेटा को लग रहा था कि पिता तो कुछ ही दिनों में मर जाएंगे। लेकिन जैसे-जैसे दिन बीतता गया पिता का शरीर स्वस्थ और मजबूत हो रहा था। यह सब देखकर बेटा परेशान हो उठा, हे ईश्वर यह बूढ़ा और कितने दिनों तक जीवित रहेगा, यह कितनी लंबी आयु लेकर आया है? इनका और कोई काम तो नहीं है बस पूरे दिन भूख लगी रहती है। इनको काल भी नहीं आती है। अगर किसी दिन मेरा दिमाग फिर गया तो मैं इस बूढ़े को किसी पहाड़ से नीचे फेंक दूंगा। मेरे ऐसे करने से उनको भी मुक्ति मिल जाएगी और हम भी शांति से रह पाएंगे।

यह सोचकर बूढ़े का बेटा अपनी पत्नी से कुछ बड़बड़ाने लगता है। उसने अपने मन में सोचा हुआ विचार अपनी पत्नी को कह सुनाया। बहू ने सुनते ही उस प्रस्ताव को खुशी-खुशी स्वीकार कर लिया क्योंकि वह भी अपने ससुर की देखभाल करते-करते तंग आ चुकी थी। अब पति-पत्नी ने आपस में फैसला करने के बाद पिता को बाहर घुमाने के बहाने से बूढ़े के पास जाकर मीठे स्वर में बोले, "हे पिताश्री, आप और कितने दिनों तक ऐसे बिस्तर में पड़े रहेंगे। चलिए आज मैं आपको देवीस्थान मंदिर और तारेभीर की देवी तथा डाँडा देउराली के दर्शन करा लाता हूँ और साथ ही घूमना भी हो जाएगा।" बूढ़े पिता यह बात सुनते ही खुश हो जाते हैं और अपने बेटे को पूरे मन से आशीर्वाद देते हैं। अब बेटा अपने पिता को एक लकड़ी धोने वाली डोको में बिठाकर अपने सिर पर लादे घर से निकल जाता है। बूढ़े पिता अपने बेटे के कुविचार से अनजान मन ही मन में बहुत खुश हो रहे थे कि उसका बेटा उसे देउराली देवी के दर्शन करने ले जा रहा था। लेकिन बेटे का मनसा तो अपने बूढ़े पिता को पहाड़ की चोटी से नीचे फेंकना था। अपने दादा जी को डोको में ले जाता देख उसका बेटा और बूढ़े पिता का प्यारा पोता डल्लू भी अपने पिता के पीछे-पीछे चल देता है।

डल्लू अपने पिता से पूछता है, "पिता जी आप दादा जी को कहाँ ले जा रहे हैं?" उसके पिता ने उत्तर दिया, "मैं तुम्हारे दादा जी को घुमाने ले जा रहा हूँ।" डल्लू ने पूछा, "कहाँ घुमाने ले जा रहे हैं दादा जी को?" उसके पिता ने कहा, "उस पहाड़ के पास ले जा रहा हूँ।" डल्लू ने फिर प्रश्न किया, "तो क्या हम दादा जी को मंदिर नहीं ले जाएंगे?" डल्लू के पिता ने अपने बेटे से कहा, "तुम चुप रहो, हम मंदिर भी चलेंगे।"

अब पहाड़ की चोटी ज्यादा दूर नहीं थी। बेटा भी थक चुका था जिसके कारण उसके कदम भी डगमगाने लगे थे। बूढ़े पिता का पोता भी अपने पिता के पीछे-पीछे चलता जा रहा था। लाचार बूढ़े पिता कान से भी कम सुनते थे और आँखें भी कमजोर हो चुकी थीं। उसको दूर-दूर तक कोई खबर नहीं

थी कि उसका खुद का बेटा उसे पहाड़ की चोटी से फेंकने जा रहा है। बूढ़े पिता बार-बार आकाश की ओर देखकर हाथ दोनों जोड़कर खुद से कह रहे थे कि मैं कितना भाग्यशाली हूँ मेरा बेटा कितने प्यार से मुझे मंदिर दर्शन करने ले जा रहा है। धन्य है हे ईश्वर मेरे जैसा पुत्र ईश्वर सभी को दे। बूढ़े पिता ने पूरे रास्ते अपने बेटे को आशीर्वाद देता रहा। लेकिन बूढ़े पिता को यह नहीं पता था कि उसका ही बेटा उसका काल बनकर उसे पहाड़ से फेंकने की तैयारी कर रहा था। इतने में बूढ़े पिता के पोते डल्लू ने कहा, "आप यह क्या कर रहे हैं पिता जी? क्यों दादा जी को आप इस पहाड़ से फेंकना चाह रहे हैं? क्या आप इस डोको को भी दादा जी के साथ फेंक देंगे? पिता जी आप भले ही दादा जी को इस पहाड़ से नीचे गिरा दीजिए परन्तु आपसे निवेदन है कि इस डोको को मैं अपने पास रखना चाहता हूँ।"

पिता ने बेटे की ऐसी बातें सुनकर उससे पूछा, "तुम क्या करोगे इस पुराने डोको का? यह बहुत पुराना हो चुका है अब इसका कोई काम नहीं है।" वह फिर से पूछता है, "तुम क्या करोगे इस पुराने डोको का?" बेटे ने पिता को उत्तर दिया, "क्या करोगे मतलब है पिता जी! यह डोको मुझे भी भविष्य में काम आने वाला है। जिस तरह आप इसमें दादा जी को रखकर पहाड़ से गिराने के लिए लेकर आए हैं, ठीक उसी तरह आप भी जब बूढ़े हो जाएंगे तो मैं भी आपको इसी डोको में रखकर पहाड़ से नीचे गिरा दूंगा। इसलिए कह रहा हूँ कि अगर आप अभी इस डोको को दादा जी के साथ ही फेंक देंगे तो आप जब बूढ़े हो जाएंगे तो मेरे पास तो डोको नहीं रहेगा तो मैं आपको पहाड़ से कैसे फेंकूंगा।"

बेटे की ऐसी बातें सुनकर उसके पैरों तले जमीन खिसक गई। उसे पहले तो अपने कानों पर यकीन नहीं हुआ तो उसने फिर एक बार अपने बेटे से पूछा, "क्या कहा तुमने?" बेटे ने उत्तर दिया, "अपने सुना नहीं पिता जी मैंने क्या कहा? मैंने यह कहा कि जिस प्रकार आपने अपने दादा जी को बहला-फुसलाकर पुराने डोको में रखकर उनसे झूठ कहा कि आप उनको देवीस्थान, देउराली मंदिर के दर्शन करने के लिए ले जा रहे हैं, कहकर घर से निकल लाए हैं और अब आप इस पहाड़ से दादा जी

को गिराने जा रहे हैं। तो आप जब बूढ़े हो जाएंगे मैं आपको भी इसी तरह बहला-फुसलाकर डोको में रखकर इसी पहाड़ से फेंक दूंगा। इसलिए आपको इस डोको को फेंकने से मना कर रहा हूँ।"

जब एक छोटे से बालक जो उसका खुद का संतान है उसके मुँह से ऐसी अनोखी बातें और उसकी चतुर बुद्धि को देखकर उसकी आँखें खुल गई थीं, अक्ल का ताला भी खुल गया। अंत में उसको यह अहसास हुआ कि हम जैसा फल लगाएंगे वैसा ही फल हमें मिलेगा, उसको यह बात समझने में देर नहीं लगी। इस घटना के बाद वह अपने पिता को उसी डोको में लादे घर लौट जाता है। अब वह अपने पिता से बहुत प्यार करने लगा था और उनका मान-सम्मान के साथ सेवा भी करने लगा था।

इस तरह बच्चे भी माता-पिता क्या करते हैं यह देखकर ही सीखते हैं। अगर माता-पिता अच्छे कर्म करते हैं तो बच्चे भी संस्कारी बनते हैं, लेकिन वहीं अगर माता-पिता ही गलत राह चलते हैं तो उसका असर बच्चों पर भी पड़ता है। अर्थात जैसा बोओगे, वैसा काटोगे।

नेपाली समाज में आज भी यह लोकविश्वास है कि यदि कोई भी लकड़ी धोने वाली डोको अगर पुरानी हो जाए तो उस डोको से घर का नजर उतारकर उसे मिट्टी में एक गड्ढा करके दफना देते हैं और उसके ऊपर एक पौधा लगा देते हैं। अगर उस पुराने डोको को घर में ही रखेंगे तो कुछ अशुभ होता है, ऐसी लोक मान्यता प्रचलित है।

15. जीवित आदमी (जिउंदो मानिस)

एक दिन एक आदमी एक हाथी को पानी पिलाने के लिए जंगल के तालाब में ले जा रहा था। उसी समय यमराज भी धरती पर घूमते-घूमते उसी जंगल में आ पहुँचे। उसे यह देखकर बहुत आश्चर्य हुआ कि इतने बड़े हाथी को एक छोटा आदमी कैसे अपने वश में करके उसको इशारों पर नचा रहा है। यमराज बहुत देर तक खड़ा होकर आदमी और हाथी का तमाशा देखता रहा।

जब हाथी को पानी पिलाने के बाद आदमी ने उसे ले जाकर जंगल के एक पेड़ से बाँध दिया। यमराज ने हाथी को एकांत पाकर उसके सामने जाकर पूछा, "हे गजराज! आप तो पहाड़ जैसे बड़े दिखते हो और न ही आप में बल की कमी है, फिर ऐसा क्या कारण है कि आप एक छोटे आदमी के इशारे पर कुत्ते की तरह चलते हो? अगर तुम चाहो तो एक ही झटके में उस फल के कीड़े के समान आदमी को मारकर आप स्वच्छंद होकर जंगल में अपनी जाति के पशुओं के संग घूमकर जीवन व्यतीत कर सकते हो।"

हाथी ने यमराज को उत्तर दिया, "हे यमराज, आप कह तो सही रहे हैं लेकिन मनुष्य फल के कीड़े के समान होते हुए भी अपनी बुद्धि से बड़े-बड़े जानवरों को अपने वश में कर सकते हैं। यमराज जी, आपको कोई अनुभव नहीं है क्योंकि आपका पाला हमेशा से मरे हुए इंसानों से पड़ा है इसलिए आपने उन्हें बलहीन ठान लिया है। अगर किसी दिन आपका कोई जीवित व्यक्ति से पाला पड़ेगा तो उसके बुद्धिबल का अनुभव होगा आपको।"

यमराज चुपचाप यमलोक की ओर लौट जाता है। एक दिन अचानक उसको हाथी द्वारा कही गई बात याद आती है। उसने तुरंत अपने दूतों को बुलाकर पृथ्वी से एक जीवित व्यक्ति लाने का

आदेश दिया। यमदूत पृथ्वी लोक पहुँचे तो उन्होंने देखा कि एक कायस्थ व्यक्ति पलंग पर बैठकर लिख रहा है। तो यमदूतों ने तय किया कि उसी कायस्थ व्यक्ति को यमलोक ले जाया जाए। जब कायस्थ लिखते-लिखते उसी पलंग में सो जाता है तो चार यमदूत उसे पलंग के साथ ही उठाकर यमलोक की ओर चल पड़ते हैं।

आधे रास्ते में अचानक कायस्थ की आँखें खुलीं तो उसने खुद को यमदूतों के बीच पाकर वह दंग रह जाता है। कायस्थ ने यमदूतों से हाथ जोड़कर पूछा, "मुझे कहाँ ले जा रहे हो? मैं तो अभी मरा भी नहीं हूँ।" एक यमदूत ने उत्तर दिया, "हमारे महाराज यम ने हमें एक जीवित व्यक्ति को लाने का आदेश दिया है और संयोग से हमें तुम मिल गए इसलिए तुम्हें हम यमलोक ले जा रहे हैं।"

उनकी ऐसी बातें सुनकर कायस्थ एकाएक परेशानी में पड़ गया। परन्तु कायस्थ ठहरा चतुर जात, उसने तुरंत अपनी बुद्धि दौड़ाने लगा। एकाएक उसकी बुद्धि ने एक उपाय सुझाया। जो कमल और कागज पड़ी थी उसे उसने एक तरह का पत्र लिखा।

नियमपालक, विष्णु से – यमराज को शुभकामनाएं! इसके उपरांत मुझे यह पता चला है कि आप जीवित व्यक्तियों को यमलोक दिखाने की अभिलाषा रखते हैं? ईश्वरीय नियम के अनुसार मनुष्य को मृत्यु के बाद ही यमलोक दिखाया जाता है। इस नियम में हस्तक्षेप न हो इसलिए मैं ही स्वयं कायस्थ का रूप धारण करके आपकी इच्छा पूरी करने के लिए यहाँ आ रहा हूँ। यह बात मैं सबके सामने नहीं कह सकता था इसलिए पत्र लिख रहा हूँ। आप वैकुंठ की ओर चलो, मैं आपको वहीं मिलूँगा। पहले मैं यहाँ कुछ व्यवस्था करके वैकुंठ आता हूँ और किसी को पता न चले कि मैं यहाँ आया हूँ। शुभम्।*

यमपुर पहुँचते ही दूतों ने कायस्थ को यम के सामने खड़ा किया और मौका पाते ही कायस्थ ने तुरंत वह पत्र यम को दे दिया। यम ने जैसे ही वह पत्र पढ़ा उसके तो होश उड़ गए। उसने तुरंत सभी लोगों को बाहर निकलने का आदेश दिया और कायस्थ के सामने यम डर के मारे घुटनों से काँप रहे थे। कायस्थ ने यम को हुकुम दिया और कहा, "विलंब न करो, आप शीघ्र ही वैकुंठ जाओ।"

यमराज ने कायस्थ को अपने सिंहासन पर बैठाया और सभी दूतों को उसकी बात मानने का आदेश दिया और स्वयं वैकुंठ की ओर प्रस्थान किया। कायस्थ को यमपुर का राज्य मिला था। अब सभी पर रोब जमाने लगा और नर्क में दंड भोगने वाले पापियों को छुट्टी दे दी गई और नए नियम लागू किए गए।

उधर यमराज हाँफते-दौड़ते हुए वैकुंठ में हाजिर होता है। यमराज को ऐसे भागते-दौड़ते आता देखकर भगवान विष्णु को बहुत आश्चर्य हुआ। पूछा, "यम, आज ऐसी क्या कमी पड़ी थी कि तुम इस तरह भागते-दौड़ते आ रहे हो?"

यम ने उत्तर दिया, "हे प्रभु, आपने मुझे मानव रूप में वैकुंठ पहुँचने का आदेश दिया था इसलिए मैं यहाँ उपस्थित हुआ हूँ। अब आपके आदेश सिर आँखों पर! इस दास से एक बार गलती हो गई। मैं माफी चाहता हूँ।" यमराज इतना कहकर हाथ जोड़कर खड़ा हो गया।

विष्णु भगवान को आश्चर्य हुआ, फिर वे बिना कुछ पूछे उन्होंने ध्यानमग्न दृष्टि से अपनी ओर देखा तो उन्हें सारी बात समझ में आ गई। अब भगवान विष्णु हँसने लगे। "यम, तुमने अपने दूतों को जीवित मनुष्य को लाने का आदेश दिया था न ताकि तुम उसका बुद्धिबल देखना चाहते थे। संयोगवश तुम्हें मनुष्यों में सबसे चतुर कायस्थ मिल गया। और उसी ने तुम्हें यहाँ भेजा है। अब पता चला कि नियमों का उल्लंघन करना तथा जीवित व्यक्ति को वश में करना कितना मुश्किल है?

ईश्वरीय नियम के अनुसार मनुष्य को सबसे बुद्धिमान जीव बनाया गया है। मनुष्य केवल जानवरों पर ही शासन कर सकता है।"

अंत में भगवान विष्णु यम से कहते हैं, "तुम यमलोक जाओ और उस व्यक्ति को सम्मानपूर्वक विदा करो।" यमराज लज्जित होकर यमलोक लौटते हैं और मन ही मन में सोचते हैं कि हाथी की बात बिल्कुल सही थी। जीवित व्यक्ति को वश में करना बहुत कठिन है। अब यमराज मौन होकर उस कायस्थ व्यक्ति को आदर के साथ जहाँ से उसे उठाकर लाया गया था वापस वहीं छोड़ दिया गया। इसलिए मनुष्य का बोलबाला है।

16. कुत्ता को उधार मांस (कुक्कुरलाई मासु पैचों)

किसी गाँव में चतुरावती नाम की एक बुढ़िया रहती थी। बुढ़िया का जैसा नाम था वैसा उसका काम भी था। चतुरावती बुढ़िया अपनी चतुराई से उड़ते हुए बाज को मार गिराती थी। लेकिन जितनी चतुर चतुरावती बुढ़िया थी उतना ही लंठ और उल्लू उसका बेटा था। उसमें सोचने समझने की शक्ति बहुत कम थी। वह कहीं भी कुछ भी बोल देता था। इसी वजह से गाँव वालों ने इसका नाम ग्वाडे रख दिया था जिसका मतलब महामूर्ख होता है। एक वर्ष की बात है चतुरावती बुढ़िया ने मकर संक्रांति के दिन सुबह अपने बेटे ग्वाडे को दस रुपया देते हुए कहा, "बेटा सुना है कि आज आगले गाँव में बकरी काटने वाले हैं, जाओ और बकरी का अच्छा हिस्सा वाला मांस लेते आओ। रुपया त्योहार का दिन है, हो सके तो जल्दी आना।" ग्वाडे अपनी माँ से दस रुपया लेकर घर से निकल जाता है। चतुरावती भी मांस बनाने के लिए मसाले तैयार करने लगती है।

ग्वाडे आगले गाँव से जाकर बकरी का मांस लेकर घर की तरफ जैसे ही लौटता है उसके हाथ में मांस की पोटली जो रुमाल में बंधी हुई थी उसे देखकर एक कुत्ता भी उसके पीछे पड़ जाता है। ग्वाडे ने एक दो बार उस कुत्ते को भगाने की कोशिश की परन्तु मांस की गंध पाकर वह उसके पीछे ही लगा रहा। ग्वाडे जिधर-जिधर जाता है कुत्ता भी उसके पीछे-पीछे चला जा रहा था। अंत में कुत्ते को अपने पीछे बार-बार आता देख ग्वाडे को उसके प्रति दया उत्पन्न हो जाती है। ग्वाडे ने एक जगह पर खड़े होकर कुत्ते से कहा, "मैं समझ गया बाबू तुम मेरे पीछे नहीं इस मांस के पीछे पड़े हो परन्तु मैं भी लाचार हूँ क्योंकि यह मांस मुझे मेरी माँ ने भेजा है लाने के लिए इसलिए मैं तुम्हें नहीं दे सकता। लेकिन फिर भी मुझे तुम्हारे ऊपर दया आ रही है, काश तुम्हारे पास भी पैसे होते तो तुम इस तरह किसी से आस नहीं लगाते। मैं तुम्हें उधार में मांस के चार टुकड़े दे रहा हूँ, शाम तक तुम मुझे इस मांस का उधार चुका देना। ऐसा करने पर मुझे भी माँ से डाँट नहीं सुननी पड़ेगी और तुम्हें भी मांस खाने को मिल जाएगा।"

ग्वाडे ने मांस की पोटली खोली और मांस से चार टुकड़े कुत्ते के सामने फेंक दिए और कुत्ते ने झट से उन चार टुकड़े मांस को खाकर समाप्त कर दिया। उसके बाद कुत्ता फिर दया भाव से ग्वाडे की तरफ देखने लगा। ग्वाडे को उस पर दया आई और उसने कुत्ते को कुछ और मांस के टुकड़े दिए। उन मांस के टुकड़ों को भी उसने जल्दी खा लिया। अब कुत्ता फिर से ग्वाडे की तरफ देखने लगा। कुछ देर तक ऐसे ही चलता रहा और अंत में कुत्ते ने सारा मांस खा लिया।

अब ग्वाडे को खाली रुमाल लेकर आते देख चतुरावती बुढ़िया गुस्से से आगबबूला हो गई। ग्वाडे ने रुआँसा होकर अपनी माँ को सब घटना कह सुनाया, "मुझे उस कुत्ते पर बहुत दया आई इसलिए मैं अपने आप को नहीं रोक सका। लेकिन माँ कुत्ते बैमान नहीं होते हैं। वह इस उधारी को जरूर चुकाएंगे।" अब चतुरावती बुढ़िया भी क्या ही करती, बड़बड़ाते हुए चुप हो गई।

बगल के घर में मांस बन रहा था जिसकी खुशबू से गाँव के सभी कुत्ते एक झुंड हो गए थे। उधर बकरी का मांस भी पूरा बिक चुका था और वो व्यक्ति दिन भर की मेहनत से थककर चूर गया था। उसने बकरी का मांस बेचकर मिले पैसे को इकट्ठा करके एक चमड़े के थैले में रख लिया और वह खुद एक तरफ बैठ गया। यह सब दृश्य वह कुत्ता देख रहा था जिसे ग्वाडे ने पूरा मांस दे दिया था। अब जैसे ही उस व्यक्ति का ध्यान पैसे वाले चमड़े के थैले से हटा, कुत्ते ने मौके का फायदा उठाकर वह थैला लेकर भाग जाता है। उस कुत्ते के लिए अब ग्वाडे भगवान के समान हो गया था क्योंकि उसने उसे मांस खाने को दिया था। कुत्ते ने थैले की खाल उधेड़कर, एक दो हड्डी के टुकड़े खाने की आशा में महाजन ग्वाडे के घर का रास्ता पकड़ लेता है।

शाम हो चला था। घर के अंदर सभी अपने काम में लगे हुए थे, किसी का भी कुत्ते की तरफ ध्यान नहीं गया। कुत्ते ने ग्वाडे के आँगन में बैठकर वहीं पैसे के थैले को नोचने लगा। थैले से पैसे रुपये गिरकर आँगन में इधर-उधर बिखर गए थे। सुबह जब ग्वाडे ने बाहर आँगन में आकर देखा कि कुत्ते ने पूरे आँगन में पैसे फैला दिए हैं, यह देखकर वह ताज्जुब कर गया। फिर वह दौड़ते हुए अंदर गया और अपनी माँ को बुला लाया। कुत्ते की यह हरकत देखकर माँ भी दंग रह जाती हैं। ग्वाडे अपनी माँ से कहता है, “मैंने आपसे कहा था न माँ कि कुत्ते की जात कभी बैमान नहीं होती है। बेचारे ने कहीं से पैसे लाकर उधार चुकाया होगा। आप तो मुझ पर खामखा क्रोधित हो रही थीं।”

चतुरावती बुढ़िया को सारी बातें समझने में देर नहीं लगी। अब तो उसे इस बात का डर था कि कहीं उसका मूर्ख बेटा पूरे गाँव में ढिंढोरा न पीट दे इसलिए उसने एक उपाय सोचा। उसने अपने बेटे से कहा, “बाबू, कुत्ते ने तो पैसे दे दिए हैं लेकिन सभी पैसे अभी कच्चे हैं। इन्हें गड्ढा खोदकर दफनाना होगा फिर ये कुछ दिन बाद पककर तैयार हो जाएंगे।”

माँ की यह बात सुनकर ग्वाडे हैरान हो जाता है। माँ उसके सामने ही सारे पैसे को एक गड्ढा खोदकर उसमें गाड़ देती है फिर घर के काम-काज में लग जाती है। ग्वाडे भी निश्चिंत होकर घर से बाहर निकल जाता है। जैसे ही ग्वाडे घर से निकलकर बाहर जाता है चतुरावती बुढ़िया सभी पैसे को गड्ढे से निकालकर अपने बक्से में रख देती है। ग्वाडे को इस बात से अंजान था लेकिन चतुरावती बुढ़िया को इतना करने पर भी संतुष्टि नहीं मिली क्योंकि उसे पता था कि उसका बेटा मूर्ख है, अब तक तो उसने सारे गाँव में ढिंढोरा पीट दिया होगा। चतुरावती बुढ़िया इसके लिए भी उपाय सोचने लगी।

कुछ ही देर बाद ग्वाडे घर आता है और माँ से कहता है, “माँ हमारे पैसे कोई चुरा न ले इसलिए हमें गाँव के दो-चार लोगों को दिखा देना चाहिए। अगर थोड़े-बहुत पैसे पककर तैयार हो गए हैं तो उन्हें भी सन्दूक में रख देते हैं।” माँ ने बेटे की बात पर सहमति जताते हुए कहा, “बेटा तुम इस द्वार पर

पहरेदारी करना। मैं सभी पैसे को गड्ढे से निकालकर घर के अंदर वाले आँगन में सुखा देती हूँ और जब ये पैसे सूख जाएंगे तो गाँव के दो-चार लोगों को दिखा देती हूँ।"

ग्वाडे भी माँ की बात से सहमत हो गया। अब माँ रसोईघर में जाकर दरवाजा बंद कर लेती है और चूल्हे के पास बैठकर फुरौला पकाने लगती है। फुरौला जैसे ही पक जाते हैं चतुरावती बुढ़िया ने उन सारे फुरौला को चुपके से जाकर ग्वाडे के आगे फेंक दिया। ग्वाडे आसमान की ओर से फुरौला को बरसते देख आश्चर्यचकित होकर चारों तरफ दौड़ते हुए फुरौला इकट्ठा करने लगता है। थोड़ी देर बाद रसोई से चतुरावती बुढ़िया नीचे उतरती है और ग्वाडे से पूछती है, "यह तुम क्या उठाकर-उठाकर मुँह में रख रहे हो?" ग्वाडे ने उत्तर दिया, "माँ देखो आज कैसी आश्चर्य की बात है, आकाश से गर्म-गर्म फुरौला की बारिश हो रही है।" माँ ने भी हैरान होने का दिखावा करते हुए कहती है, "हमारे भाग्य पर खुश होकर देवता यह वर्षा करवा रहे हैं।" माँ ने ग्वाडे से फिर कहा, "इस बारे में किसी को मत बताना नहीं तो कुछ अनहोनी हो जाएगी।"

अब ग्वाडे को अगर कोई बार किसी को न कहने को कहा जाए तो उसके मन में हलचल होने लगती है और वह खुद को रोक नहीं पाता है। वह पूरे गाँव में जाकर ढिंढोरा पीटने लगा कि मेरे घर में फुरौला की वर्षा हुई और साथ ही कुत्ते द्वारा ऋण चुकाने की बात भी उसने एक-दो करके सारे गाँव वालों को बता देता है जिसके कारण गाँव के लोग चतुरावती बुढ़िया के घर पर इकट्ठे होने लगते हैं।

अब बकरी का मांस बेचने वाले व्यक्ति के पास भी इस बात का समाचार पहुँच चुका था कि किसी कुत्ते ने पैसे से भरा चमड़े का थैला ग्वाडे के आँगन में ले जाकर रख दिया है। एक दिन वह व्यक्ति अपनी बकरियाँ चराने के लिए खेत की ओर जा रहा था तब उसे रास्ते में ग्वाडे मिल जाता है। व्यक्ति ने ग्वाडे से कहा, "बाबू, जिस दिन मैंने बकरी का मांस बेचा था उसी दिन मेरे ५०० रुपए रखे हुए चमड़े का

थैला खो गया। यदि तुमको इसके बारे में कोई भी जानकारी हो तो मुझे अवश्य बताना, मैं तुम्हारा सदा आभारी रहूँगा।"

ग्वाडे वैसे तो था एक मूर्ख लड़का लेकिन उस व्यक्ति की बात सुनते ही उसके मन में लालच का भाव उत्पन्न होता है और वह व्यक्ति को उत्तर देता है, "भैया ऐसी खास बात मैं खाली हाथ कैसे कह दूँ? अगर हाथ में कुछ मिल जाए तो मैं इस खास बात को बताने के लिए तैयार हूँ।" व्यक्ति ने तुरंत अपने कमर से पाँच रुपये का नोट निकालकर ग्वाडे के हाथ में रख दिया। ग्वाडे रुपये देखकर बहुत प्रसन्न होता है और सारी घटना बिना कुछ छुपाए ही विस्तार से व्यक्ति को बता देता है।

अब ग्वाडे की बातें सुनकर व्यक्ति ने गाँव के चार लोगों को बुलाया और ग्वाडे ने उनके सामने भी बिना कुछ सोचे-समझे सारी बातें गाँव वालों के आगे विस्तार से कह सुनाई। व्यक्ति अब उन गाँव वालों और ग्वाडे को साक्षी के रूप में लेकर चतुरावती बुढ़िया के आँगन में पहुँचा और कहता है, "बुढ़ी अम्मा जी, मकर संक्रांति के दिन मेरा चमड़े का थैला, जिसमें ५०० रुपए थे, वो गायब हो गया था। आपका बेटा ग्वाडे कह रहा है कि अगले दिन की सुबह एक कुत्ता मेरा ५०० रुपए वाला चमड़े का थैला लेकर आपके आँगन में बैठा था। उस थैले का क्या हुआ? अगर मुझे मेरा रुपए का थैला मिल जाता है तो मैं आपको भी 5-10 रुपए दे दूंगा।"

व्यक्ति की बातें सुनकर चतुरावती बुढ़िया घबराने लगती है और फड़फड़ाते हुए कहती है, "मैंने कोई कुत्ता-उत्ता नहीं देखा है। कैसी पागलों जैसी बातें कर रहे हो? यहाँ कोई कुत्ता पैसे का थैला लेकर नहीं आया है। मेरे सामने ऐसी बातें मत करो, मुझे बिल्कुल अच्छा नहीं लगता है। मुझ जैसी बुढ़िया को ऐसे परेशानी करना अच्छी बात नहीं है।"

व्यक्ति कहता है, "अरे अम्मा जी, आपके बेटे ने स्वयं ही पाँच लोगों के आगे स्वीकार किया था कि कुत्ता यहाँ मकर संक्रांति के दिन पैसे का थैला लेकर आया था। भला आपके बेटे को इतना बड़ा झूठ बोलकर क्या लाभ मिल सकता है। आप लोग तो मेरे अपने हैं इसलिए मुझे झगड़ा करना या कोर्ट-कचहरी जाना सही नहीं लगता है। अम्मा जी जल्दी से मेरे पैसे मुझे लौटा दीजिए क्योंकि मुझे बकरियों को चराने के लिए खेत ले जाना है।"

व्यक्ति की ऐसी बातें सुनकर चतुरावती बुढ़िया ने ग्वाडे की तरफ देखते हुए कहा, "मेरे पास कोई पैसे-वैसे नहीं है। तुम गाँव वालों के सामने ऐसी झूठी अफवाह क्यों फैला रहे हो? मुझे लगता है तुम्हारे जैसा मूर्ख बेटा पैदा होने से अच्छा होता कि मैं बाँझ ही रह जाती। अगर तुम्हारा स्वभाव ऐसा ही रहा तो तुम एक दिन बड़ी मुसीबतों में फँस जाओगे।"

माँ की बातें सुनकर ग्वाडे को गुस्सा आ गया और कहने लगा, "माँ आप कैसे भूल सकती हो? याद कीजिए यह उस दिन की ही तो बात है जब कुत्ता पैसे का थैला लेकर हमारे घर के आँगन में आया था और मैं आपको बुलाकर यह भी कहा था कि देखिए माँ कुत्ते कितने इमानदार होते हैं। आज सुबह ही कर्ज चुकाने के लिए आ गया है। और फिर क्या आपने यह नहीं कहा था कि अभी रुपये कच्चे हैं?"

बेटे की ऐसी बातें सुनकर चतुरावती बुढ़िया के होश उड़ गए और लाल-लाल आँखों से देखते हुए उसे कहा, "अरे मूर्ख, तुमने कभी देखा है भला किसी कुत्ते को कर्ज लौटते हुए? कहाँ हैं रुपये दिखाओ अगर तुम सच बोल रहे हो तो वरना मैं ऐसे झूठ बोलने वाले व्यक्ति का चेहरा भी नहीं देखना चाहती हूँ।"

ग्वाडे ने माँ से कहा, “कल जब आकाश से फुरौला की बारिश हो रही थी तो आप दरवाजा बंद करके रुपये नहीं सुखा रहे थे? आप मुझे बेवकूफ बना रही हो।”

ग्वाडे की ऐसी बातें सुनकर सभी गाँव वाले पेट पकड़-पकड़कर हँसने लगे और ग्वाडे आश्चर्य से गाँव वालों की ओर देखने लगा।

17. धर्म और पाप कहा है (धर्म र पाप कहाँ छ)

भद्रपुर नमक नगर में करुणाकांत नाम का एक ब्राह्मण रहता था। करुणाकांत बहुत दयालु, धार्मिक एवं गुरुभक्त था। करुणाकांत अपने गृहस्थी जीवन में प्रवेश करने के बाद भी अगर उनके जीवन में कोई परेशानी या संका होती थी तो वे तुरंत गुरु के पास जाकर उसका समाधान निकाल आते थे। एक दिन करुणाकांत ब्राह्मण अपने दैनिक जीवन कार्य के लिए आवश्यक सामग्री खरीदने के लिए बाजार जा रहा था। रास्ते में एक मुसलमान कसाई को एक गाय को मारते हुए ले जाते देखा। गाय को ऐसे निर्दयता के रूप में मरता देख करुणाकांत को गाय पर बहुत दया आई और उस मुसलमान व्यक्ति के पास जाकर पूछा, "अरे भाई, क्यों इस बेचारी गाय को इतना मार रहे हो? और इसे कहाँ से ले आए हो और कहाँ ले जा रहे हो?"

कसाई ने उत्तर दिया, "महोदय मैं एक कसाई हूँ बाबू जी। मेरी आजीविका ही गोमांस बेचना है और इस गाय को मैंने दूसरे गाँव से पाँच रुपये में खरीदकर लाया हूँ। मांस बेचकर जो मुनाफा होता है, उससे अपने बच्चों का पेट भरता हूँ।"

कसाई की ऐसी बातें सुनकर करुणाकांत के मन में उसके प्रति दया का भाव उत्पन्न हुआ। अब करुणाकांत असमंजस में पड़ गया लेकिन कुछ ही देर में उसको एक उपाय सूझी। उसने गाय के प्राण बचाने का निश्चय करके मुसलमान व्यक्ति से कहा, "अरे भाई सुनो, इस गाय को तुम मुझे बेच दो। तुम इसे पाँच रुपये में खरीद लाए थे न, मैं तुम्हें इसके दस रुपये दूंगा। तुम्हारा कोई नुकसान भी नहीं होगा। क्या सोचते हो भाई, तुम्हें मंजूर है तो कहो।"

कसाई ने प्रसन्नता से उत्तर देते हुए कहा, “बाबू जी जिसमें मुझे अपना नफा और मूल पैसे मिल रहे हैं, मैं क्यों न बेचूँ। मैं तो और अधिक प्रसन्नता से बेचने के लिए तैयार हूँ।” करुणाकांत ने मुसलमान व्यक्ति को दस रुपये देकर उस गाय को खरीद लिया। और दोनों अपने-अपने घर लौट जाते हैं।

अगले दिन करुणाकांत फिर कुछ रुपये लेकर बाजार की ओर जा रहा था और रास्ते में उसकी उसी मुसलमान कसाई व्यक्ति से मुलाकात हो जाती है। और अब उसके पास दो गायें थीं। यह देखकर करुणाकांत के मन में अजीब सी सिहरन हो उठी। उसने हड़बड़ाते हुए कसाई से पूछा, “आज इन दो गायों को लेकर कहाँ जा रहे हो?”

कसाई ने उत्तर दिया, “जय हो महाराज, कल आपने तो मेरी सारी चिंता समाप्त कर दी। आपकी कृपा से मुझे कल दस रुपया मिला जिसके कारण मैं आज उसी कीमत पर दो गाय खरीद पाया हूँ और इसमें मुझे दुगना फायदा होगा।”

उसकी ऐसी बातें सुनकर ब्राह्मण के होश उड़ गए। फिर कुछ देर बाद ब्राह्मण ने करुणा स्वर में कहा, “आज भी तुम इन गायों को दुगने दाम में मुझे बेच दो।” और ब्राह्मण ऐसे कहते हुए बीस रुपये निकालकर मुसलमान व्यक्ति को देता है और कहता है कि अब इनकी जान बख्श दो। तुम आज के बाद पशुओं की हत्या मत करना। कोई दूसरा काम कर लेना, अगर जरूरत पड़े तो मैं तुम्हें ऋण भी दे सकता हूँ।

मुसलमान व्यक्ति ने उत्तर दिया, “बाबू जी यह काम मैं सदियों से करता चला आ रहा हूँ और अभी से नहीं, हमारे दादा-परदादा के समय से यह काम हमारे यहाँ करते आ रहे हैं। यूँ ही हम इस काम को नहीं छोड़ सकते हैं। परन्तु इस व्यापार से भी अधिक फायदा वाला व्यापार मुझे मिल जाता है तो मैं इस व्यापार को छोड़ सकता हूँ।”

मुसलमान व्यक्ति की यह बातें सुनकर करुणाकांत के मन को संतुष्टि मिली। उसने बीस रुपये में उन दो गायों को खरीद लिया और घर की तरफ लौट गया। मुसलमान व्यक्ति ने पाँच रुपये से ही दो दिन में २५ रुपये कमा लिए थे जिसके कारण वह थोड़ा हैरान होकर घर लौट गया। अब मुसलमान व्यक्ति मन ही मन में सोचने लगा, इस व्यापार में तो मुझे अधिक फायदा मिल रहा है तो मैं क्यों छोड़ूँ!

तीसरे दिन फिर करुणाकांत कुछ रुपये लेकर बाजार की ओर जा ही रहा था कि रास्ते में फिर उसी मुसलमान व्यक्ति से भेंट हुई और आज तो उसके पास चार गायें देखकर करुणाकांत को बहुत दुःख हुआ। अब करुणाकांत से रहा नहीं गया और उसने मुसलमान व्यक्ति से कहा, "अरे भाई, कल मैंने तुम्हें इतना समझाया था और आज तुम दोबारा गाय लेकर आ गए। लगता है तुम्हें मेरी बातें समझ में नहीं आई। तुम आज चार गाय लेकर आ गए। तुम्हारा हृदय इतना कठोर कैसे हो सकता है?"

कसाई ने उत्तर दिया, "ब्राह्मण जी आपका कहना भी बिल्कुल ठीक है, परन्तु मुझे कोई अन्य काम ही नहीं मिला जो इस काम से अधिक लाभदायक हो। जब तक मुझे इससे लाभदायक काम नहीं मिलता, इस काम को नहीं छोड़ सकता, यह मेरी प्रतिज्ञा है। आपकी कृपा से मुझे इन दो दिनों में जो लाभ हुआ है उसके लिए मैं सदा आपका आभारी रहूँगा तथा इस उपकार को कभी नहीं भूल सकता हूँ।"

कसाई की ऐसी बातें सुनकर बेचारे ब्राह्मण जी एक पल के लिए सन्न हो गए और अपने आप को भी गोहत्या का सहायक समझने लगते हैं। अब जब उनके पास कोई विकल्प नहीं रहा तो वे अपने गुरु के पास गए। गुरु ने करुणाकांत को ऐसे अचानक आते देखकर उन्होंने आने का कारण पूछा। करुणाकांत ने सारी घटना गुरु जी को कह सुनाई और गुरु जी से प्रश्न किया, "क्या मैंने उस कसाई को लाभ कराकर कोई अनर्थ किया है? अब मुझे भी गोहत्या का पाप चढ़ेगा, इसलिए मुझे मेरे पाप का प्रायश्चित करना होगा। गुरु जी अब आप ही मुझे प्रायश्चित करने का मार्ग बताइए, क्या हो सकता है?"

गुरु जी ने कहा, “बालक तुमसे वास्तव में पाप हुआ है। किसी भी दुष्ट व्यक्ति, दुष्टकर्म या दुष्टबुद्धि आदि का साथ देना तथा सहना भी पाप है। जो होना था सो हो गया। अब इस पाप से मुक्त होने का एक उपाय है। इस पत्थर को किसी एक पेड़ के नीचे दफना देना और तुम स्वयं उस पेड़ की चोटी पर रहना। जब इस पत्थर से कोई पौधा न निकल जाए, तभी तुम्हारे पाप का प्रायश्चित होगा।” बालक ने गुरु जी से पूछा, “जब मैं इस पाप का प्रायश्चित कर लूँगा तब मैं फिर कहाँ जाऊँ?”

गुरु जी के कहे अनुसार बेचारा करुणाकांत पत्थर लिए जंगल जाता है और उस पत्थर को एक पेड़ के नीचे गाड़ देता है और फिर उसी पेड़ के ऊपर रहकर रोज उस पत्थर पर पानी डालकर उस पत्थर की सेवा करने लगा। चार-पाँच वर्ष बीतने के बाद भी उस पत्थर से कोई पौधा नहीं निकला और न ही पत्थर टस से मस हुआ। करुणाकांत का जीवन दिन-रात ऐसे ही कट रहा था। अब उसे बहुत अफसोस होने लगा था और ऐसे ही एक दिन जब मध्य रात हो चला था तब उस जगह चार चोर सहसा आकर पेड़ के नीचे गपशप करने लगते हैं। उसमें से एक चोर बोला, “भाइयों हम ऐसे ही छोटे-मोटे चोरी कब तक करते रहेंगे। इस तरह तो हमारा गुजरा नहीं चलेगा। आज हो सके तो हम ऐसी चोरी करें जिससे हमारी पूरी जिंदगी चल जाए।”

इस बात से और तीन चोर भी सहमत हुए। अब सभी मिलकर इस विषय में सोचने लगे। बहुत देर तक सोच-विचार करने के बाद सभी चोरों ने तय किया कि पहले पास के गाँव को चारों तरफ से आग लगा दी जाए और जब सभी गाँव वाले सोते-सोते ही मर जाएंगे तब हम उनकी सारी संपत्ति हड़प लेंगे।

करुणाकांत इन चोरों की बातें सुनकर चिंता में पड़ गया और मन ही मन सोचने लगा, हे ईश्वर! ये चोर अपने स्वार्थ के लिए हजारों लोगों की जान लेने जा रहे हैं। मुझे किसी भी प्रकार इन गाँव वालों की रक्षा करनी है। करुणाकांत धीरे-धीरे पैरों से पेड़ से नीचे उतरा। चोरों को भनक तक नहीं लगने दी।

करुणाकांत बहुत पहले ही अपने घर से लकड़ी काटने वाली कुल्हाड़ी ले आया था, उसी कुल्हाड़ी को लेकर सही मौके का इंतजार कर रहा था ताकि वह चोरों पर मौका मिलते ही हमला कर सके। चारों चोर इस बात से बेखबर विचार-विमर्श कर रहे थे। करुणाकांत को जैसे ही मौका मिला उसने एकाएक उस कुल्हाड़ी से चोरों पर हमला करके उनको नर्क का रास्ता दिखा दिया। चोरों के मरते ही पत्थर भी खिल उठा।

करुणाकांत को पत्थर को खिलता देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ। वह सोचने लगा, "मैंने तो चार चोरों को मारकर बहुत बड़ा अपराध किया है परन्तु यह तो आश्चर्य की बात है, इन चार चोरों को मारने से पत्थर खिल गया जिसके कारण मुझे जो गाय का पाप चढ़ा था वो भी धुल गया। हे ईश्वर यह कैसा चमत्कार है, मैं समझ ही नहीं पा रहा हूँ।"

करुणाकांत गुरु के कहे अनुसार पत्थर के खिलने के बाद गुरु जी के पास गया। गुरु जी ने करुणाकांत की सारी बातें सुनकर कहा, "बालक, इसमें आश्चर्य होने की कोई बात नहीं है।" गुरु जी ने कहा, "कोई भी वस्तु या बात दूसरों को दुःख या कष्ट दे, चाहे वो धर्म ही क्यों न हो, वह पाप है। लेकिन धर्मशास्त्र कहते हैं कि अगर अनेक लोगों की रक्षा करते हुए कोई पाप भी हो जाता है तो उसे पाप की गणना में नहीं गिना जाता है। वह भी एक प्रकार का धर्म ही है। तुम्हारे एक गाय की जान बचाने के चलते दो गाय की हत्या होने वाली थी तो वहीं दो गाय को बचाने के चलते चार गाय की हत्या हो गई। लेकिन तुमने हजारों गाँव वालों की जान बचाने के लिए उन चार चोरों को मार डाला, इसलिए इसी पुण्य के भाव से तुम्हारे वे पापों का प्रायश्चित हो गया है, इसलिए पत्थर भी खिल गया।"

अंत में गुरु जी ने करुणाकांत से कहा, "तुम बिना कुछ सोचे-समझे निश्चिंत होकर घर जाओ।" इस प्रकार करुणाकांत गुरु जी के चरण स्पर्श करके विदा हो गए।

18. चार रत्न (चार रत्न)

एक समय की बात है, रत्नावली शहर में वीरबाहू नामक एक राजा राज्य करता था। वह बड़ा ही न्यायी और दयालु सभाव का राजा था। राजा वीरबाहू रात के समय भेष बदलकर गाँव के हर घर में जाते थे ताकि वह देख सके कि गाँव वालों को कोई दुःख तो नहीं है। एक दिन राजा अपने नियमानुसार भेष बदलकर अपनी प्रजा के सुख-दुःख देखने निकले। उस दिन राजा एक पानबरही के घर के पीछे खड़े हो गए। पानबरही और उसकी पत्नी की बातें सुनने लगा। पानबरही अपनी पत्नी से कह रहा था, "सुनो प्रिय, इस शहर में रहते-रहते हमारी आमदनी भी घटती जा रही है, बस जैसे-तैसे गुजरा हो रहा है। अगर तुम कहो तो एक-दो वर्ष के लिए प्रदेश जाकर अपनी किस्मत आजमाना चाहता हूँ।"

पत्नी बोली, "श्रीमान, आप कह तो सही रहे हैं लेकिन मैं घर में अकेले कभी नहीं रही इसलिए डर लगता है और व्यापार का भी यह हाल है।"

पानबरही ने कहा, "तुम व्यापार की चिंता मत करो। मैं विदेश में जाकर कुछ न कुछ तो कर ही लूँगा और ज्यादा से ज्यादा एक-दो वर्ष के बाद लौट आऊँगा। मैं तुम्हें दो सौ रुपये दे जाऊँगा, इतने में तुम्हारा काम चल जाएगा। अगर ये रुपये समाप्त हो जाएँ तो तुम किसी से ऋण लेना। समय का कोई भरोसा नहीं है। फिर भी कोई दिक्कत हो तो मैं तुम्हारे पास यह चार रत्न छोड़कर जा रहा हूँ। इन चार रत्नों को राजा के हाथ बेच देना। और इसे बेचकर जो रुपये मिलें उसका उपयोग करना।"

पानबरही ने एक कागज का टुकड़ा निकालकर उसमें चार पंक्तियाँ लिखकर अपनी पत्नी को दिया। पत्नी ने कागज इधर-उधर पलटकर देखा, उसे कोई रत्न नहीं दिखा तो पत्नी ने आश्चर्य होकर पूछा, "इस कागज में तो चार अक्षरों के अलावा और कुछ नहीं है और आप कह रहे हैं कि चार रत्न बेचकर काम चलाने के लिए? श्रीमान आप क्या कहना चाहते हैं, मैं नहीं समझ पा रही हूँ।"

पानबरही ने उत्तर दिया, “तुम कह तो सही रही हो प्रिय, लेकिन यह सिर्फ चार अक्षर नहीं हैं, बल्कि इन चार अक्षरों में रत्न के समान एवं मूल्यवान उपदेश छिपा हुआ है। केवल इन चार अक्षरों को देखकर किसी को भी धोखा हो सकता है।”

पत्नी ने अपने पति से पूछा, “क्या मैं इन चार रत्न के समान अक्षरों के उपदेश को जान सकती हूँ?” पानबरही ने अपनी पत्नी को उन चार उपदेशों को पढ़कर सुनाया। पहला उपदेश: “नीच की सेवा कभी न करे।” दूसरा उपदेश: “कभी भी कोई भी वस्तु दूसरे के पास रखनी हो तो इसका लिखित प्रमाण अवश्य रखे।” तीसरा उपदेश: “अपनी पत्नी को कभी लंबे समय तक मायके में न रहने दे।” चौथा उपदेश: “अपनी संपत्तियों पर दूसरों को हक न जमाने दे।”

पति-पत्नी के बीच की बातचीत समाप्त हो गई। अब राजा भी इन चार उपदेशों पर विचार करते हुए महल की ओर चल दिया और उसने इन चार उपदेशों को आजमाने का निश्चय किया। एक दिन राजा ने सभी भाइयों, भ्राताओं एवं प्रजा को बुलाकर एक बड़ी सभा का आयोजन किया। सभा में राजा ने कहा, “सिरदार, मेरा विश्वसनीय पात्र है। इस संसार में राजा हो या रंक, सभी को एक दिन संसार से विदा लेना होगा। इस संसार में चौरासी जन्म के बाद ही मनुष्य का जन्म प्राप्त होता है। अगर इस रत्न रूपी जीवन में ईश्वर की भक्ति नहीं की तो वहीं चौरासी जन्म के चक्कर में पड़ना पड़ेगा। इसलिए मैंने निश्चय किया है कि मैं कल सुबह ही आप सबसे विदा लेकर एक वर्ष के लिए तीर्थ-यात्रा कर ईश्वर की भक्ति में लीन हो जाना चाहता हूँ।” राजा ने अपनी प्रजा से पूछा, “इस विषय में आप लोगों का क्या राय है?”

राजा की ऐसी बातें सुनकर प्रजा क्षण भर के लिए मौन हो गई। कुछ देर बाद प्रधानमंत्री हाथ जोड़कर विनती करते हुए कहता है, “हे पृथ्वीनाथ, आपके जाने से प्रजा वियोग से चिंतित पड़ जाएगी,

लेकिन आपके द्वारा कही गई बात भी सही है।" प्रधानमंत्री कहता है, "हुकुम, आप निश्चिंत होकर जाएँ, हम आगले एक वर्ष तक राज-काज संभाल लेंगे।"

अगले दिन राजा ने एक वर्ष के लिए रानी को मायके भेज दिया और सभी राज-काज का भार प्रधानमंत्री को सौंपकर दो लाख अशर्फी लिए, अर्थात भेष बदलकर राजा तीर्थ के लिए निकल पड़े।

राजा ने पानबरही के दूसरे उपदेश 'कोई भी वस्तु दूसरे के पास रखनी हो तो इसका लिखित प्रमाण अवश्य रखे' को जाँचने के लिए एक बनिए के यहाँ जाकर कहा, "भाई साहब, मैं तीर्थ-यात्रा करने निकला हूँ। यहाँ से मथुरा दस दिन का रास्ता है और फिर मैं इसी रास्ते लौट आऊँगा। इसलिए आपसे अनुरोध है कि आप इस एक लाख की अशर्फी को अपने पास संभालकर रख दें तो बड़ी कृपा होगी।"

बनिया राजा की ऐसी बात सुनकर दंग रह गया। फिर बनिया ने राजा से कहा, "भाई, इतनी बड़ी रकम मैं बिना किसी कागजी प्रमाण के नहीं रख सकता हूँ।"

राजा ने कहा, "यदि मैं कागजी प्रमाण के पीछे लगा रहूँगा तो मुझे विलंब हो जाएगा। बनिया तो कैसे रखूँ?" राजा ने उत्तर दिया, "भाई साहब, संसार विश्वास के बल पर ही चलता है। मुझे आप पर पूरा विश्वास है इसलिए इतनी बड़ी रकम आपके पास रखकर जा रहा हूँ। कागजी प्रमाण की कोई आवश्यकता नहीं है।"

राजा ने एक लाख अशर्फी बनिया के यहाँ रख दिया और बाकी अपने रास्ते के खर्च के लिए लेकर अपने ससुराल के रास्ते की तरफ मुड़ गया। राजा ने पूरी तरह अपना भेष भी बदल लिया था। अब उनको पहचानना कठिन हो गया था। राजा अपने ही ससुराल के पास कोते नामक व्यक्ति के यहाँ सुभाने नाम से नौकरी करने लगे। राजा से जितना बनता था वह उठाना कम करके कोते को रिझाने का

प्रयास करता था। कोते भी सुभाने की ईमानदारी को देखकर उनसे प्यार करता था। इस तरह देखते ही देखते महीने बीत गए।

एक दिन राजा को कोते और उसकी मायके आई पत्नी के गुप्त प्रेम के बारे में पता चल गया। उसने दोनों को एक साथ बैठकर हँसी-मजाक करते हुए देख लिया था। रानी ने भी सुभाने को देखते ही पहचान लिया जिसके कारण वह बहुत घबरा जाती है और कोते से कहती है, "सुनो प्रिय, तुम्हारे और मेरे बीच जो प्रेम है उसे गुप्त ही रहने देना उचित है। क्योंकि आज तुम्हारे नौकर ने हमें एकांत में बैठकर हँसी-मजाक करते हुए देख लिया है। अब वह सभी को बता देगा हमारे गुप्त प्रेम के बारे में। इसलिए उसको मार देना ही उचित है ताकि हमारा प्रेम गुप्त बना रहे।"

कोते राजा की पत्नी के प्रेम में अंधा था इसलिए उसने बिना सोचे-समझे अपने ईमानदार नौकर को मारने का आदेश दे दिया। उसके चार आदमियों ने सुभाने को उठाकर घसीटते हुए जंगल की ओर ले गए। सुभाने भी पहले तो चुप-चाप सब सहता रहा लेकिन जंगल में जब उसे एकांत महसूस हुआ तो सुभाने उन आदमियों से कहा, "सुनो भाइयों, तुम लोगों को मुझे मारने में कोई फायदा नहीं है। मैं तुम्हें मेरी पूंजी यह एक लाख अशर्फी ले लो और मेरी जान बख्श दो।"

आदमियों ने यह सुनते ही खुशी के मारे राजा से एक लाख अशर्फी ले ली और उसको रिहा कर दिया। राजा ने इस तरह वो चार अक्षर रूपी रत्न को आजमाया जो उसके नजर में अनमोल साबित हुआ।

एक वर्ष बीतने को था, राजा अपने राज्य की तरफ लौट रहे थे। रास्ते में बनिया का घर पड़ता था, वहाँ से उसे एक लाख अशरफी लेनी थी जो पिछली बार बनिया के पास रखकर गया था। राजा बनिया के घर पहुँचा, उसे देखते ही बनिया चिंतित हो गया। उस दिन राजा बनिया के घर में ही रुक

गया। अगले सुबह जब राजा अपने महल के लिए निकल रहा था तो उसने अपनी एक लाख सोने की अशरफी माँगी।

बनिया ने आश्चर्य से सिर हिलाते हुए कहा, "परदेशी, तुम पागल हो रहे हो क्या? तुम्हें मैंने अपने घर में रुकने के लिए जगह दी और तुम मुझ पर ही चोरी का आरोप लगा रहे हो? जाओ अपने रास्ते। आज के बाद मैं किसी को भी बिना उसके बारे में जाने घर में ठहरने नहीं दूंगा।"

राजा ने कहा, "सेठ जी, आप भूल गए हैं, शायद छह-सात महीने हो गए हैं आपके पास यह एक लाख सोने की अशरफी रखे हुए। मैं एक महीने में ही लौटने वाला था लेकिन एक काम आ गया था और काम खत्म होते-होते आने में देर हो गई।" राजा ने फिर कहा, "देखिए सेठ जी, आपने कहीं लिखकर तो नहीं रखा है?"

राजा की ऐसी बातें सुनकर बनिया और घबरा गया। उसने राजा को उत्तर देते हुए कहा, "मैं तुम्हें परदेशी मानकर जितनी नरमी से बात कर रहा हूँ तो तुम उतना ही मेरे सिर पर चढ़े जा रहे हो। अगर तुमने मुझे सच में कोई सोने की अशरफी रखने के लिए दी है तो प्रमाण कहाँ है?" अब राजा के पास कोई जवाब नहीं था। वह चुपचाप अपने राज्य की तरफ लौट गए और इस तरह राजा ने पानबरही के दूसरे अक्षर रूपी रत्न को भी आजमा लिया।

राजा को लौटते आता देखकर प्रजा बहुत प्रसन्न हुई और राजा का बड़े धूमधाम और सिंदूर यात्रा के साथ महल में प्रवेश कराया गया। राजा ने भी सबका स्वागत किया। अगले दिन राजा ने मंत्री को बुलाकर एक वर्ष की आमदनी एवं खर्च का हिसाब माँगा तो मंत्री ने हाथ जोड़कर विनती करते हुए राजा से कहा, "धर्मावतार, हुजूर, आपकी अनुपस्थिति में राज-काज चलाने में बड़ा कष्ट हुआ।

आपके न होने से पिछले एक वर्ष से वर्षा न होने के कारण यहाँ सूखा पड़ गया है। इसलिए इस वर्ष कोई आमदनी नहीं हो पाई है, बस खर्च ही खर्च हुआ और सारा खजाना खाली हो गया।"

राजा ने जब खजाने में जाकर देखा तो उनके दादा-परदादाओं द्वारा रखा गया धन समाप्त हो चुका था और इस तरह राजा को समझने में देर नहीं लगी कि मंत्री ने उसके साथ बेईमानी की है और सारा धन खुद ही चुरा लिया है। राजा ने अगले ही दिन एक बड़ी सभा आयोजित की। जिसमें पानबरही और उसकी पत्नी के साथ-साथ बनिया और रानी भी उपस्थित हुई। राजा ने अपने ससुर को पत्र लिखकर कोते को भी सभा में बुला लिया था। सभा में सभी लोग उपस्थित होने के बाद राजा ने पानबरही से प्रश्न किया, "पानबरही, जब तुम प्रदेश जा रहे थे तब तुमने अपनी पत्नी को चार रत्न रूपी चार अक्षर देकर गए थे। उन चार अक्षरों के उपदेश को पढ़कर सुनाओ, मैं सुनना चाहता हूँ।"

पानबरही ने हाथ जोड़कर अपनी पहली रत्न रूपी अक्षर का उपदेश सुनाया, "नीच की सेवा कभी न करें।" यह उपदेश सुनते ही राजा ने कोते द्वारा उसे मारने के लिए आदमी भेजे जाने का किस्सा प्रजा को कह सुनाया और तुरंत ही कोते को मारने का आदेश दे दिया।

पानबरही ने दूसरे अक्षर का उपदेश पढ़ सुनाया, "कभी भी कोई भी वस्तु दूसरे के पास रखनी हो तो इसका लिखित प्रमाण अवश्य रखे।" इस उपदेश को सुनते ही उसने बनिया की बेईमानी भी प्रजा को कह सुनाई और उसे पच्चीस लाख सोने की अशर्फी जुर्माना देने का हुकुम दिया।

पानबरही ने तीसरा अक्षर का उपदेश कह सुनाया, "अपनी पत्नी को कभी लंबे समय तक मायके में न रहने दे।" राजा ने अपनी पत्नी रानी और कोते के गुप्त प्रेम की कथा सबको कह सुनाई और रानी को देश निकाला दण्ड दिया।

पानबरही ने अंतिम अक्षर का उपदेश पढ़ सुनाया, "अपनी संपत्तियों पर दूसरों को हक न जमाने दे।" अंतिम उपदेश को सुनते ही राजा ने मंत्री के बेईमान होने का प्रमाण देकर उसे आजीवन कैद की सजा सुनाई।

इस प्रकार अंत में राजा ने पानबरही को प्रत्येक रत्न रूपी चार अक्षरों के लिए एक-एक लाख अशर्फी भेंट किया।

19. जैसे को तैसा (जस्तालई तस्तै)

अश्वगंधा नगर के राजा विक्रमकिशोर और उसी नगर के सेठ धनगुप्त बचपन के बहुत अच्छे मित्र थे। समय के साथ-साथ इनकी मित्रता में और भी घनिष्ठता बढ़ती गई। राजा विक्रमकिशोर तो धनगुप्त को अपने भाई के समान मानते थे। एक दिन अचानक सेठ धनगुप्त का निधन हो जाता है। जिसके कारण सेठ धनगुप्त का सारा कारोबार का भार उसके पुत्र नंदगुप्त के ऊपर आ जाता है। नंदगुप्त अब भी बहुत नादान था, उसके पिता ने उससे बड़े ही लाड़-प्यार से पाला-पोसा था और उससे कभी कोई काम नहीं कराया गया था। इसलिए उसे कारोबार का भी कोई ज्ञान नहीं था। नंदगुप्त को यह कारोबार संभालने में बहुत मुश्किल हो रहा था। परिणामस्वरूप लक्ष्मी यानी धन ने धीरे-धीरे सेठ के परिवार से दूर होती चली गई।

नंदगुप्त बचपन से ही बहुत धार्मिक था। पुरोहित जो कहते थे, हमेशा उसे करने को तैयार रहता था। इसी कारण पुरोहित ने नंदगुप्त को अपनी बातों में लपेटकर धनगुप्त की मेहनत की कमाई का आधा धन अपनी जेब में रख लिया था। धन से मनुष्य का लालच बढ़ता है। इतनी संपत्ति मिलने पर भी

लालची पुरोहित का मन नहीं भरा। अब उनकी दृष्टि सेठ धनगुप्त की गुजराती गाय पर थी, जो प्रतिदिन 20 सेर दूध देती थी। वह उस गाय को हथियाने का उपाय सोचने लगा। देखते ही देखते सेठ जी की मृत्यु के पैंतालीस दिन हो चले थे। जिसमें बेटे द्वारा आत्मा की शांति के लिए पुरोहित को कुछ दान-दक्षिणा दी जाती है। पुरोहित के मन में इतना लालच भर गया था कि उसने दस दिन पहले ही दान में दी जाने वाली वस्तुओं की सूची बनाकर नंदगुप्त को दे दिया था। पुरोहित ने पूरी तरह योजना बना ली थी कि उसे किसी भी प्रकार से नंदगुप्त का सारा धन अपने नाम करना है। पुरोहित वस्तुओं की सूची नंदगुप्त के हाथ में थमा देता है और वह खुद अपने घर की ओर लौटते हुए सोचता है कि किस प्रकार उस गुजराती गाय को दान के माध्यम से अपना बनाया जाए। यह सोचते-सोचते घर भी पहुँच जाता है।

पुरोहित जी पैंतालीस दिन होने के ठीक एक दिन पहले ही उतरा हुआ चेहरा लेकर प्रातःकाल ही सेठ के घर पहुँचा। नंदगुप्त ने भी पुरोहित का स्वागत किया और उसे अपनी गद्दी पर बैठाया। पुरोहित को जैसे ही मौका मिला, उसने नंदगुप्त से कहा, "बाबू, आज मुझे सपने में तुम्हारे पिता सेठ जी दिखे। वे आपके द्वारा किए गए दान को पाकर अत्यंत प्रसन्न हैं और सेठ जी मुझसे भी कह रहे थे कि पुरोहित जी, आपने यह दान की विधि को बड़े ही शुद्धता से संपूर्ण कराया जिससे मेरी आत्मा तृप्त हो गई। अब मैं बहुत प्रसन्न तो हूँ लेकिन नंदगुप्त ने जो गाय मेरी मृत्यु के समय आपको दान की थी, अब वो गाय दूध देना बंद कर दी है। इस गाय के दूध से ही मेरा गुजरा चल रहा था क्योंकि मैं कुछ दूध यमदूतों को भी देता था। अगर मैं उनको दूध नहीं देता तो वे मुझ पर ताड़ना करते हैं। इसलिए आपके पिता जी ने मुझे यहाँ भेजा है कि आप उनकी मनपसंद गुजराती गाय मुझे दान कर सकें। बाबू, आपके पिता जी बहुत दुबले हो गए हैं।" अंत में सेठ जी ने कहा, "अगर हम उनके कहे अनुसार यह दान करते हैं तो वे हमें परलोक से आशीर्वाद देंगे।"

पुरोहित फिर कहते हैं, “बाबू, यह तो मेरा कर्तव्य था आपको कहना, आगे आपकी इच्छा, आप दान करें या न करें। लेकिन पितृ यदि नाराज हो गए तो आपका पूरा कुल नष्ट हो सकता है।”

सेठ नंदगुप्त ने कहा, “पुरोहित जी, यह सारी संपत्ति तो पिता जी ने ही जमा की है। अगर उनको ही इसका लाभ न मिला तो यह संपत्ति किस काम की है। मैं कल ही यह गाय आपको दान कर दूंगा ताकि मेरे पिता जी को कोई कष्ट न हो।”

नंदगुप्त की यह बात सुनते ही पुरोहित प्रसन्न होकर घर की ओर लौट गया। और इस तरह पैंतालीस दिन में सेठ नंदगुप्त कंगाल हो गया। अब बस नंदगुप्त के पास एक ही अरबी घोड़ा बच गया था जो उसका एक मात्र सहारा था। इसके सिवाय कुछ नहीं था। पुरोहित को यह बात पता चली तो अब उसकी नजर उस अरबी घोड़े पर थी, उसे कैसे अपना बनाया जाए यह सोचने लगा। सेठ धनगुप्त को गुजरे पूरे छह महीने हो चुके थे। अब परंपरा के अनुसार उनकी आत्मा की शांति के लिए और एक विधि करनी थी, जिसमें पुरोहित को कुछ दान-दक्षिणा दी जाती है। सेठ धनगुप्त की मृत्यु के छह महीने होने से ठीक एक दिन पहले पुरोहित नंदगुप्त के यहाँ जाता है और कहता है, “बाबू, आज फिर एक बार बड़े सेठ जी को मेरे सपने में आए थे। वे बहुत मोटे हो गए हैं और उनका पेट भी बाहर निकल आया है। मुझसे कह रहे थे कि पुरोहित जी, आपकी कृपा से ही मुझे दूध पीने को मिला। देखिए कैसे मेरा पेट बाहर निकल गया है, और मेरे साथ जो यम-यमदूत हैं वे भी दूध पाकर बहुत प्रसन्न हैं मुझसे। लेकिन इस बड़े पेट को लेकर चलना बहुत ही मुश्किल हो रहा है। इसलिए कल मेरी मृत्यु के पूरे छह महीने हो रहे हैं, इस छह मासिक विधि में आप मेरे बेटे नंदगुप्त से जाकर कहिए कि कल मेरा प्रिय अरबी घोड़ा को भी आपको दान कर दे ताकि मैं सकुशल स्वर्ग पहुँच सकूँ। मेरा बेटा नंदगुप्त धार्मिक बुद्धि का है। आपके कहने से वह कभी मना नहीं करेगा।”

पुरोहित ने कहा, "मैंने उनका नाम खाया है इसलिए मेरा कर्तव्य बनता है कि मैं आपको आपके पिता जी की इच्छा बताऊँ। आगे आपकी इच्छा, जैसा आपको ठीक लगे।"

बालक सेठ नंदगुप्त ने कहा, "पुरोहित जी, आप निश्चिंत रहिए, मैं अपने पिता जी का कष्ट अवश्य दूर करने का प्रयास करूँगा। मैं कल ही छह मासिक विधि में इस अरबी घोड़े को आपको दान कर दूंगा ताकि मेरे पितृ को सुख की प्राप्ति हो। उस पुत्र का जन्म ही व्यर्थ है जो अपने स्वर्गीय माता-पिता एवं पूर्वजों को कष्ट देता है।"

पुरोहित बालक सेठ की खूब प्रशंसा करते हुए प्रसन्न मन से घर लौट गया। पुरोहित ने छह मासिक विधि के दौरान बालक सेठ नंदगुप्त को पूरी तरह से कंगाल कर दिया। अब बालक सेठ नंदगुप्त के यहाँ सुबह-शाम के भोजन के लिए भी लाले पड़ गए थे। उधर पुरोहित राजाओं जैसा सुखी जीवन व्यतीत करने लगा।

क्रमशः सेठ धनगुप्त की वार्षिक तिथि का समय भी आ गया। असहाय नंदगुप्त चिंतित हो गया। जब नंदगुप्त को अपनी गरिमा बनाए रखना भी मुश्किल हो गया तो उसने अपने पिता के परम मित्र राजा विक्रमकिशोर के पास जाने की सोची। अगले दिन सुबह होते ही बालक सेठ नंदगुप्त दरबार में उपस्थित हुआ। राजा ने बालक सेठ नंदगुप्त की सारी बात सुनी और वह समझ गया कि पुरोहित ने बालक नंदगुप्त के भोलेपन का फायदा उठाकर उसकी सारी संपत्ति छल से हड़प ली। राजा को पुरोहित पर बहुत क्रोध आया लेकिन उसने सोचा कि यह वक्त क्रोध करने का नहीं है, बल्कि उस पुरोहित को सबक सिखाने का है।

राजा ने बालक नंदगुप्त से कहा, "बेटा, तुम चिंता मत करो, मैं तुम्हारे साथ हूँ। तुम्हारे पिता मेरे परम मित्र थे और तुम मेरे परम मित्र के एकलौते बेटे हो। मैं इन मुश्किल की घड़ी में अवश्य सहायता

करूंगा। लेकिन कल मेरे भी सपने में तुम्हारे पिता जी आए थे और मुझसे कह रहे थे कि हे मेरे प्रिय मित्र, मैं मेरे बेटे द्वारा किए गए दान से बहुत प्रसन्न हूँ, परन्तु आजकल ज्यादा दूध पीने के कारण मेरी तबीयत खराब होने लगी है और जब से बेटे ने घोड़ा दान दिया है, तब से एक भी कदम न चलने के कारण मेरे जोड़ों में भी दर्द होने लगा है। यह दर्द तभी ठीक हो सकता है जब पुरोहित जी के जोड़ों में लोहे की दो छड़ों को आग में जलाकर लाल करके लगा दिया जाए तो मेरा कष्ट दूर हो जाएगा।"

राजा ने नंदगुप्त से कहा, "बेटा, हमें किसी भी तरह स्वर्गवासी सेठ जी को इस कष्ट से बाहर निकालना होगा। जिस प्रकार पुरोहित जी के दूध पीने से सेठ जी का पेट बड़ा हुआ और उनके घोड़े चढ़ने से सेठ जी को चलना नहीं पड़ा, ठीक इसी प्रकार अगर लोहे की छड़ को आग में तपाकर पुरोहित जी के जोड़ों में लगा देंगे तो सेठ जी का जोड़ों का दर्द ठीक हो जाएगा।"

राजा की यह बात सुनकर बालक सेठ नंदगुप्त समझ गया और पिता के समान राजा से कहा, "आप बिल्कुल ठीक कह रहे हैं। मैं अभी जाकर इस कार्य का प्रबंध करता हूँ। इस कार्य का प्रबंध होते ही मैं आपके पास सूचना देने आऊंगा।"

नंदगुप्त राजा के महल से निकलते ही तुरंत पुरोहित के यहाँ पहुँचा। पुरोहित जी अपने आसन में बैठे हुए थे। उसने आदरपूर्वक नंदगुप्त को प्रणाम किया और कुशल-क्षेम पूछा। नंदगुप्त ने भी अपनी कुशल समाचार बताते हुए कहा, "पुरोहित जी, पिता जी बहुत कष्ट में हैं। हमें किसी भी तरह उनका कष्ट दूर करना होगा। इस शुभ काम को करने में देर नहीं करनी चाहिए। आप एक आग की बाल्टी और लोहे की छड़ लेकर आइए।"

पुरोहित को कुछ समझ में नहीं आया। उसने सोचा, चलो देखते हैं ये क्या करने वाला है। पुरोहित ने अपने नौकर को एक बाल्टी भर भभकती हुई आग और लोहे की एक छड़ लाने का हुकुम

दिया। पुरोहित के नौकर ने सारी तैयारी कर दी। अब नंदगुप्त बैठकर उस बाल्टी की आग में लोहे की छड़ को लाल होने तक तपाकर पुरोहित जी से कहा, "इसे आपके घुटने के ऊपर वाले भाग से सेकना ठीक रहेगा है ना पुरोहित जी?" पुरोहित नंदगुप्त की बातें सुनकर एकदम से घबरा जाता है और नंदगुप्त से कहता है, "बाबू, यह तुम क्या करने जा रहे हो?"

नंदगुप्त उत्तर देता है, "पुरोहित जी, मेरे पिता बहुत कष्ट में हैं। उनको ज्यादा दूध पीने से पेट बाहर आ गया है और पैदल न चलने से उनके जोड़ों में दर्द होने लगा है। इसलिए मैं आपके घुटने सेकने आया हूँ ताकि उनको थोड़ा आराम मिले।" पुरोहित जी ने घबराकर नंदगुप्त से पूछा, "मेरे घुटने सेकने से सेठ जी को कैसे आराम मिलेगा?"

पुरोहित की ऐसी बातें सुनकर नंदगुप्त आश्चर्य होकर पुरोहित जी से कहता है, "पुरोहित जी, ये आप क्या कह रहे हैं? आपके दूध पीने से मेरे पिता जी को भी दूध मिलता है और आपके घुड़सवारी करने से पिता जी को पैदल नहीं चलना पड़ता है। हम इस छड़ से आपके जोड़ों को सेकेंगे तो अवश्य ही मेरे पिता जी का कष्ट दूर होगा। मैंने हमेशा अपने पितृ की सेवा बहुत ही श्रद्धापूर्वक की है तो आज मैं कैसे चूक सकता हूँ? चलिए, आपने पैर आगे कीजिए, मैं सेंकता हूँ।"

बालक सेठ की बात सुनकर पुरोहित जी के होश उड़ गए। उसने बालक सेठ से पूछा, "बाबू, आपको ये सब बातें किसने बताई?"

बालक सेठ ने उत्तर दिया, "मेरे पिता जी के परम मित्र राजा विक्रमकिशोर। उनके भी सपने में पिता जी आए थे, जिस प्रकार आपके सपने में आया करते थे और पिता जी ने ही आज्ञा दी है कि आपके जोड़ों को सेकने के लिए। इसलिए मैं यहाँ आया हूँ।"

इस प्रकार चतुर पुरोहित ने राजा की सारी चालाकी भाँप ली। पुरोहित ने नंदगुप्त से थोड़ी देर प्रतीक्षा करने के लिए कहा और वह स्वयं हड़बड़ाते हुए राजा विक्रमकिशोर के दरबार में जा पहुँचा। पुरोहित को ऐसे हड़बड़ाते हुए आता देख राजा बहुत प्रसन्न होता है और पूछता है, "पुरोहित जी, कैसे आना हुआ?"

पुरोहित ने निवेदन करते हुए कहा, "महाराज, मुझसे भूल हो गई। बालक को भोला देखकर बुद्धि भ्रष्ट हो गई थी। अब वह मेरे पैर जलाकर अपने पिता का कष्ट दूर करना चाहता है। महाराज, इसलिए मैं आपकी शरण में आया हूँ, कृपया मुझ पर दया कीजिए।"

राजा ने कहा, "पुरोहित जी, आपने सेठ बालक के साथ तो बहुत बुरा किया है। परन्तु आप तो जात से ही ब्राह्मण हैं तो स्वाभाविक है लालच करना। जाइए, आपको माफ किया। लेकिन आपको ही बालक सेठ से जितने भी छल से धन लिया था, उसे सही-सही सलामत वापस लौटा देना, तब जाकर आपकी जान बख्शेंगे।"

पुरोहित घर लौटा तो वहाँ बालक सेठ उसकी प्रतीक्षा में बैठा था। पुरोहित ने बालक नंदगुप्त से कहा, "सेठ जी, आपको महाराज विक्रमकिशोर जी ने तुरंत ही उनके दरबार में उपस्थित होने को कहा है।" नंदगुप्त पुरोहित की बात सुनते ही महल की ओर चल दिया और इस तरह पुरोहित की जान बच गई। पुरोहित ने अगले ही दिन बालक नंदगुप्त द्वारा दान किए गए वस्तुओं को महाराज विक्रमकिशोर के दरबार में रखते हुए उसने कभी किसी को न छलने की प्रतिज्ञा ली। उधर महाराज ने बालक नंदगुप्त को समझाया कि ऐसे किसी पर भी जल्दी से विश्वास नहीं करना चाहिए। नंदगुप्त बहुत भोला था, वह राजा की बात भी मान गया। अगले दिन फिर राजा विक्रमकिशोर ने नंदगुप्त को बुलाकर

पुरोहित जी द्वारा लौटाई गई वस्तुएँ उसे दे दीं। यह देखकर नंदगुप्त हैरान-चकित रह गया और राजा से पूछता है, “महाराज, ये वस्तुएँ तो मैंने दान की थी, अब मुझे ही क्यों लौटा रहे हैं?”

राजा ने उत्तर दिया, “बेटा, इन सब वस्तुओं को मैंने पुरोहित जी को पैसे देकर खरीद लिया है। तुम इन वस्तुओं को अपने साथ ले जाओ, मैंने इसका दाम पुरोहित को दे दिया है, तुम्हें कुछ नहीं होगा। इतने धन से तुम सारी जिंदगी खुशी-खुशी व्यतीत कर सकते हो और आज के बाद कोई भी काम मुझसे पूछे बिना हाथ भी नहीं लगाना। अब तुम आनंदपूर्वक अपने घर जाओ।”

बालक सेठ नंदगुप्त भी सभी वस्तुओं को लेकर प्रसन्नतापूर्वक घर लौट गया। अंत में राजा विक्रमकिशोर ने बालक नंदगुप्त के जब तक सेठ बनने योग्य न हो जाए, तब तक के लिए एक व्यक्ति नियुक्त कर दिया ताकि बालक नंदगुप्त के काम-काज की देख-रेख करने के लिए तैनात कर दिया गया।

20. आंतरिक रोग की औषधी (वित्त-रोगको औषधि)

एक देश में एक अत्यंत धनवान सेठ जी रहते थे। उन्हें अपने कारोबार से करोड़ों रुपए की आमदनी होती थी। हजारों नौकर-चाकर थे। सेठ जी को अपने धनवान होने पर बहुत घमंड था, वे दान-पुण्य का नाम भी नहीं लेना चाहते थे। अगर कोई साधु-संत महात्मा घर के दरवाजे पर आ भी जाते तो वे उन पर ध्यान नहीं देते थे। सेठ के मन में धर्म के प्रति इतना अनास्था स्वभाव देखकर उसके स्वर्गीय पिता एवं उनके पुरखों को बहुत कष्ट होता था। सेठ के स्वर्गीय पिता को उसके बेटे की कंजूसी बर्दाश्त नहीं हो पा रही थी। एक दिन सेठ के पिता साधु का रूप धारण कर मृत्युलोक से सेठ के घर आ पहुँचे। पिता जाकर सेठ के आगे खड़े हो गए लेकिन सेठ जी ने साधु रूपी पिता को आँख उठाकर भी नहीं देखा। इस बार पिता ने आवाज भी दी, "राम-राम सेठ जी।" परन्तु सेठ ने कोई उत्तर नहीं दिया। साधु ने दोबारा आवाज लगाई, "राम-राम सेठ जी।" परन्तु इस बार भी सेठ जी ने कोई प्रतिक्रिया नहीं जताई। पिता को अनुभव हुआ कि सेठ जी का धर्म रूपी आंतरिक रोग बहुत ही ग्रस्त हो गया है। सेठ की ऐसी हालत देखकर पिता ने मन ही मन में सोचा, इस रोग ने तो इसे बहुत बुरे तरीके से जकड़ लिया है, केवल उपदेश देने से काम नहीं चलेगा। इस रोग के लिए कड़ी औषधि की आवश्यकता है।

सेठ हर शाम अपनी बग्गी में बैठकर शहर के बाहर बने अपने बगीचे में ताजी हवा लेने जाते थे। उस दिन भी सेठ ताजी हवा लेने घर से बाहर निकले। पिता सेठ जी से भी पहले ही जाकर बगीचे में सेठ का रूप धारण कर बैठे थे। सेठ जी बग्गी उतरकर बगीचे के अंदर चले जाते हैं। पंद्रह मिनट के बाद ही पिता सेठ का रूप धारण करके बगीचे से बाहर निकल आए।

सेठ जी को बगीचे से जल्दी निकलता देखकर सभी नौकर आश्चर्यचकित हो गए। सेठ जी बगीचे से निकलते ही बग्गी पर जा बैठे और बग्गी चालक से कहा, "तुरंत घर की ओर चलो, मुझे कोई जरूरी काम आ गया है।" बग्गी भी तुरंत तैयार हो गई और सेठ जी घर लौट आए। सेठ जी को इतनी

जल्दी वापस घर लौटता देख घरवाले भी आश्चर्यचकित रह गए। सेठ जी के चार बेटे थे और ये चारों बेटे सेठ जी के आगे आकर खड़े हो गए। सेठ जी ने भी अपने बेटों को अपने नजदीक रखकर कहा, “सुनो पुत्रों, आज घर में एक डाकू मेरा रूप धारण करके आप लोगों को धोखा देने के लिए आने वाला है। मुझे यह सूचना बहुत गुप्त रूप से पता चली है।” सेठ जी ने अपने बेटों और बहुओं के साथ-साथ नौकरों को भी सतर्क रहने का आदेश दिया। “बहरूपिया चोर आज रात को ही आने वाला है। अगर उसने अपने बल से कोई भी वस्तु जब्त करने की कोशिश की तो उसे दो-चार थप्पड़ लगाकर बाँधकर रखना।” सेठ जी का रूप धारण करके आए पिता के कहने से सभी घर वाले बहरूपिया चोर सेठ को मारने के लिए तैयार बैठे थे।

उधर एक घंटे बाद जब सेठ जी बगीचे से बाहर आए तो उन्हें न तो कोई नौकर दिखा और बग्गी का तो नामोनिशान ही नहीं था। सेठ जी को बग्गी चालक पर बहुत क्रोध आ रहा था। सेठ जी ने इधर-उधर नजर दौड़ाई परन्तु उन्हें कोई नहीं दिखा तो वे और गुस्से से आगबबूला हो गए। शाम काफी हो चुकी थी। शहर में पूरी तरह से सन्नाटा छाया हुआ था। सेठ जी को भी अब डर लगने लगा था परन्तु वे भी कब तक ऐसे लाचार बनकर बैठे रहते, इसलिए सेठ जी धीरे-धीरे घर की ओर चलने लगे। जब सेठ घर पहुँचे तब तक आधी रात बीत चुकी थी। अब सेठ जी गुस्से से आगबबूला हो उठे थे। वे सोचने लगे, आज यह बग्गी चालक अपनी जान से हाथ धो बैठेगा। नीचे वाले कमरे में सेठ जी के चार बेटे उनके सभी नौकर-चाकर के साथ तैनात बैठे थे। जैसे ही सेठ जी दिखे, सभी ने आकर उनको पकड़ लिया। सेठ जी तो पहले से ही गुस्से में थे और अपने आप को सबके बीच घिरा हुआ देखा तो तिलमिलाकर पूछने लगे, “यह सब क्या कर रहे हो आप लोग? कहाँ गया वह बग्गी चालक? आज मैं उसका सिर फोड़कर ही रहूँगा। कहाँ गया वो निकम्मा? लगता है उस निकम्मे को काल का बुलावा आया है?”

सेठ के बड़े बेटे ने उत्तर दिया, "महाशय जी, अब ये सब चालाकी यहाँ नहीं चलेगी। यह डंडा दिख रहा है ना? इससे सिर पर एक डंडा पड़ने से तुम्हारी खोपड़ी फटकर चूर-चूर हो जाएगी। हम सब यहाँ आपके स्वागत के लिए हाजिर हुए हैं।"

बेटे की ऐसी बातें सुनकर सेठ जी दंग रह गए। उन्होंने अपने बेटे से कहा, "तुम्हें आज क्या हो गया है, क्यों ऐसी बहकी-बहकी बातें कर रहे हो? होश में आओ, वरना मैं घर से निकाल दूंगा।"

यह सुनकर चारों बेटों का मुँह गुस्से से लाल हो गया और उन्होंने तुरंत नौकरों को हुकुम दिया कि बहरूपिया चोर को बाँध दिया जाए। नौकरों ने सेठ जी को बाँध दिया, जिससे वह क्रोध और अपमान से जल उठे। उनकी आँखों में आँसू भी आ गए। और नम्र होकर बोलने लगे, "बाबू, तुम लोग यह क्या कर रहे हो मेरे साथ? भला कोई अपना बेटा अपने पिता के साथ ऐसा अपमान करता है क्या? क्या आप लोगों ने कोई नशा कर रखा है क्या? या फिर यह कोई दुर्भाग्य का प्रकोप है?"

यह सुनते ही बेटों ने दो-चार लात-जूते लगाए और कहा, "बहरूपिया, तुम बहुत होशियार हो। अगर हमें पहले से पता न होता कि तुम बहरूपिया हो तो हम तुम्हारी बातों में आ ही जाते।"

घर के अंदर शोर-शराबा होता देखकर सेठ का रूप धारण किए हुए पिता भी ऊपर कमरे से नीचे आए। सेठ जी ने जब उसकी तरह रूप धारण किए हुए दूसरे व्यक्ति को देखा तो उसे कुछ-कुछ बातें समझ में आने लगीं। सेठ जी ने अपने हमशक्ल से कहा, "अच्छा, तुम ही वह चोर हो जो मेरा रूप धारण करके सबको धोखा दे रहे हो। तुम्हें ईश्वर अवश्य दंड देंगे इस अपराध के लिए। तुमने मुझे कहीं का नहीं छोड़ा, आज मैं तुम्हारे कारण इतना बेबस हो गया हूँ।"

सेठ जी की ऐसी बातें सुनकर उनके बेटों ने उनको फिर से बहुत पीटा। सेठ जी का सारा शरीर जर्जर हो गया था। अब वे लाचार होकर चुप हो गए थे। अगले दिन बेटे सेठ जी के साथ राजा के दरबार

में उपस्थित हुए। राजा ने सारी बातें सुनी और कहा, "तुममें इतना साहस? तुमने तो सेठ जी को मारने की योजना बना ही ली थी। अगर सेठ जी को तुम्हारी चालाकी का पहले ही पता नहीं चलता तो आज सेठ जी की हालत तुम्हारी तरह होती।"

घायल सेठ जी ने राजा के सामने गुहार लगाते हुए कहा, "महाराज, असली सेठ मैं ही हूँ और जो सेठ बनकर बैठा है, वास्तव में वही चोर है। ये सब षड्यंत्र इसी ने रचा है। महाराज, इंसाफ करें।"

अब राजा भी असमंजस में पड़ गया क्योंकि दोनों का रूप-रंग, हाव-भाव में कोई अंतर नहीं था तो संदेह कैसे करे! और घायल सेठ जी के चेहरे से ईमानदारी और भोलापन झलक रहा था इसलिए दोनों में फर्क कर पाना बहुत मुश्किल हो गया था। घायल सेठ ने आज-कल में हुई अपनी घर की गुप्त बातें राजा को कह सुनाई। उसने असली सेठ होने का सबूत दिया। राजा को न्याय करना और भी कठिन लगने लगा। राजा ने तुरंत दूसरे सेठ को भी दरबार में उपस्थित होने का आदेश दिया। जब सेठ रूपी पिता दरबार में उपस्थित हुए तो सभी लोग आश्चर्यचकित रह गए। सेठ रूपी पिता ने भी घर की सारी गुप्त बातें राजा को कह सुनाईं क्योंकि जो नए सेठ थे वे तो सेठ जी के पिता थे, उनसे कोई बातें छिपी न थीं। अब राजा भी उलझन में पड़ गया कि किसके साथ न्याय करें।

घायल सेठ जी ने राजा से गुहार लगाते हुए कहा, "महाराज, असली सेठ मैं हूँ। यह बहरूपिया मेरी संपत्ति हड़पना चाहता है इसलिए मेरा रूप धारण करके आया है। यदि ये असली सेठ है तो बताए कि मेरे बड़े बेटे के विवाह में कितना खर्च हुआ था। जो इस बात का ठीक-ठीक उत्तर देगा, वही असली सेठ कहलाएगा।"

सेठ जी को पाँच साल पहले अपने बेटे की शादी में हुए खर्च का हिसाब ठीक से याद था लेकिन दूसरे सेठ जी ने भी अपनी दिव्य दृष्टि से विचार किया और तुरंत राजा के सामने सही गणना

बता दी। राजा ने सेठ के कोठी से लिखित प्रमाण लाने का आदेश दिया जिसमें दोनों सेठों द्वारा बताए गए खर्च सही साबित हुए और इस तरह एक बार फिर घायल सेठ की हार हुई। राजा ने घायल सेठ को सजा के रूप में एक सौ कोड़े मारने का आदेश दिया। इस सजा के बाद सेठ जी पीड़ा, लज्जा और शोक से व्याकुल होकर सांसारिक मोह-माया से दूर वनवास के लिए निकल गए।

सेठ जी जंगल में एक छोटी सी झोपड़ी बनाकर वहीं भजन-कीर्तन करके अपना जीवन व्यतीत करने लगे। इस प्रकार देखते ही देखते एक वर्ष बीत जाता है। भजन-कीर्तन की महिमा से सेठ के हृदय का सारा अभिमान और शोक दूर हो गया। उनका अहंकारी स्वभाव उनकी सरलता एवं ईमानदारी में परिवर्तित हो चुका था। उधर सेठ बने बैठे पिता ने अपनी दिव्य दृष्टि के माध्यम से अपने बेटे के विचारों को जान लिया। एक दिन पिता सेठ योगी का रूप धारण कर अपने बेटे की कुटिया में पहुँचे। सेठ जी ने योगी को कुटिया के बाहर देखते ही बहुत ही आदरपूर्वक सत्कार किया। सेठ के इस आदर-सत्कार से पिता बहुत प्रसन्न हुए और निश्चिंत हो गए कि अब सेठ द्वारा किसी को अपमान करने का अपराध नहीं होगा, अर्थात सेठ जी का आंतरिक रोग जड़ से समाप्त हो गया है।

योगी ने अपना असली रूप धारण कर लिया। सेठ ने जैसे ही अपने स्वर्गवासी पिता को देखा तो वह भावुक होकर दंडवत प्रणाम किया और पिता ने भी सेठ को सारी बातें बताते हुए कहा, ‘‘बेटा, घमंड से मनुष्य कभी बड़ा नहीं हो सकता है। तुम बहुत अभिमानी हो गए थे तथा तुम्हारे इस घमंड का नाश करना अत्यंत आवश्यक था क्योंकि तुम्हारे पूर्वज अपने वंश का पतन नहीं देख सकते थे। इसलिए तुम्हें नैतिक मूल्य का बोध कराने के लिए मुझे पृथ्वी लोक में आना पड़ा। और जब मैं राम नाम जपते हुए तुम्हारे द्वार पर पहुँचा तो तुमने मुझे कोई उत्तर नहीं दिया तो मुझे महसूस हुआ कि तुम्हें अभिमान रूपी आंतरिक रोग ने जकड़ रखा है। इसलिए यह सब जाल बुनना पड़ा। लेकिन औषधि कड़वी हो गई क्योंकि तुम्हारा रोग भी गहरा था। अब तुम घर लौट जाओ। मेरे आशीर्वाद से तुम्हारा शरीर पहले की

तरह हष्ट-पुष्ट हो जाएगा। हमारे बीच जो बातें हुई हैं, निश्चिंत रहो, किसी को भी पता नहीं चलेगा। लेकिन ध्यान रहे, अभिमान रूपी रोग से सदैव बचकर रहना। दान और पुण्य में ही मनुष्य का कल्याण छिपा हुआ है और यही धन की शोभा भी बढ़ाती है।"

सेठ जी पिता को प्रणाम कर घर की ओर लौट जाते हैं।

21. लालची और छट्टू (लौभी र छट्टू)

किसी देश में एक बहुत कंजूस साहूकार रहता था। उसकी गिनती शहर के बड़े-बड़े धनवानों में होती थी। साहूकार की पत्नी ने कई बार साहू से कहा कि उसे दान-पुण्य या ब्राह्मण भोज करना है, अगर आप मुझे कुछ खर्च दे तो। एक दिन एक ब्राह्मण घूमते-फिरते उस साहूकार के यहाँ पहुँचा। ब्राह्मण ने साहूकार की कंजूसी की चर्चा पूरे शहर में सुनते हुए चला आ रहा था। ब्राह्मण बहुत चतुर था, विशेषकर वह साहू को दंड देने के इरादे से ही आया था। ब्राह्मण जब साहूकार के द्वार पर पहुँचा, ठीक उसी समय साहू की पत्नी दान-खर्च माँग रही थी। साहू अपनी पत्नी की बातों से तंग आ चुका था। साहू को ब्राह्मण का घर आने से पहली बार क्रोध नहीं आया। उसने ब्राह्मण से पूछा, "हे देव, आप वक्त में कितना खाना खा सकते हैं?"

ब्राह्मण बहुत चतुर था, उसने उत्तर दिया, "साहू जी, मैं ठहरा गरीब ब्राह्मण, खाने के अभाव से मेरा पेट सिकुड़कर बहुत छोटा हो गया है इसलिए आधा डब्बे से ज्यादा नहीं खा पाऊँगा।"

ब्राह्मण के उत्तर से साहू दंग रह गया। साहू ने ब्राह्मण से कहा, "पंडित जी, तब तो कल अवश्य ब्राह्मण भोज करूँगा, लेकिन मैं कल घर में नहीं रहूँगा। मुझे आसामी उठाने के लिए जाना होगा, परन्तु मेरी पत्नी आपको ब्राह्मण भोज अवश्य कराएगी।"

ब्राह्मण साहू की बातों से बहुत प्रसन्न हो गया। अगले दिन आठ बजे ब्राह्मण साहू के घर पहुँच गया। साहू घर से निकल चुका था लेकिन साहूकार की पत्नी ने ब्राह्मण का पूरे आदर-सत्कार से स्वागत किया। साहूकार के घर में इससे पहले कभी ब्राह्मण भोज नहीं हुआ था, जिसके कारण साहूकार की पत्नी को कैसे ब्राह्मण भोज कराया जाता है, उसके बारे में कोई जानकारी नहीं थी। साहूकार की पत्नी ने ब्राह्मण से पूछा, "पंडित जी, क्या और कैसे करना होगा? ब्राह्मण भोज पहले कभी नहीं कराया है इसलिए मुझे कुछ पता नहीं है।"

ब्राह्मण ने कहा, "सबसे पहले नारायण की पूजा करनी होगी। आपके घर में नारायण की प्रतिमा है?" पत्नी ने उत्तर दिया, "नहीं पंडित जी।" ब्राह्मण पंडित ने कहा, "तब तो सारी सामग्री आप

मेरे घर भेज दीजिए, वहीं नारायण की प्रतिमा है। आपके भक्ति भाव से दिए हुए वस्तुओं को मैं ईश्वर को अर्पित कर दूंगा।" साहूकार की पत्नी ने ब्राह्मण से पूछा, "पंडित जी, क्या-क्या सामग्री तैयार करके भेजनी है?"

ब्राह्मण पंडित ने उत्तर दिया, "दो बोरे मैदा, दो बोरे पुराने चावल, एक टन माखन और घी, एक टन चीनी, एक मीटर असली पीताम्बर का कपड़ा और पाँच अशर्फी दक्षिणा मिल जाए तो काफी है।" साहूकार की पत्नी ने ब्राह्मण पंडित द्वारा बताए गए सभी सामग्री तैयार कर दी। ब्राह्मण पंडित उस सारी सामग्री को लेकर अपने घर लौट जाता है। साहूकार की पत्नी ब्राह्मण पंडित के लिए अनेक प्रकार के पकवान बनाने लगी। एक घंटे बाद ब्राह्मण पंडित घर से लौट आया। भोजन तैयार था। ब्राह्मण ने आनंदपूर्वक भोजन करते हुए कहा, "अहा, यह मोहनभोग कितना स्वादिष्ट है, इतना स्वादिष्ट भोजन मैंने अपने इस जीवन में कभी नहीं चखा है। मैंने कई बड़े-बड़े राजमहलों में भोजन किया है लेकिन इस मोहनभोग का स्वाद सबसे अलग है, जितनी प्रशंसा करूँ उतनी कम है। इसलिए लोग भी कहते हैं, बड़े घर की बहू-बेटियों के हाथ से बना भोजन बहुत स्वादिष्ट होता है, आज चख भी लिया।"

साहूकार की पत्नी को अपनी प्रशंसा सुनकर बड़ा आश्चर्य हुआ। क्योंकि साहू का ध्यान सदैव नफा-नुकसान पर रहता था। आज तक उसने कभी अपनी पत्नी द्वारा बनाए गए खाने की प्रशंसा नहीं की थी। ऐसे अचानक अपने खाने की प्रशंसा सुनकर साहूकार की पत्नी का नाक ऊँची हो गई। ब्राह्मण भोज समाप्त होने के बाद पंडित ने साहूकार की पत्नी से दक्षिणा माँगी। साहूकार की पत्नी ने पूछा, "कितना दूँ?"

ब्राह्मण पंडित ने उत्तर देते हुए कहा, "साधारण लोग तो दो-ढाई रुपये से कम नहीं देते हैं। आप तो शहर के प्रसिद्ध लोगों में से एक हैं। मैं क्या कहूँ, जो आपकी इच्छा हो दे दीजिए।" साहूकार की पत्नी ब्राह्मण पंडित की प्रशंसा से बहुत प्रसन्न थी, उसने तुरंत पाँच सौ रुपये निकाले और ब्राह्मण को दे दिए। ब्राह्मण ने साहूकार की पत्नी को खूब आशीर्वाद देते हुए घर की ओर लौट गया।

ब्राह्मण को संदेह था कि जैसे ही शाम को साहूकार को इस ब्राह्मण भोज के खर्च का पता चलेगा तो वह अवश्य उसके घर आएगा। उस वक्त ब्राह्मण को अपनी जान बचाना बहुत मुश्किल लग रहा था, इसलिए ब्राह्मण ने पहले ही अपनी पत्नी को सारी बातें बताकर आगाह कर दिया था और खुद ऊपर कमरे में जाकर सो गया। उधर शाम होते ही साहू घर लौटा। उसे खर्च हुए राशन और धन की

चिंता थी, उसने आते ही सबसे पहले अपनी पत्नी से पूछा, "ब्राह्मण पंडित ने कितना खाया? कितना खर्च हुआ?"

पत्नी ने साहूकार को सभी खर्च के बारे में बताया। पत्नी की बात सुनते ही साहू के होश उड़ गए और वह गुस्से से तिलमिला उठा। उसने तुरंत बाँस का डंडा उठाया और ब्राह्मण के घर की ओर चिल्लाते हुए दौड़ा, "आज मैं उस चोर को मारकर ही दम लूँगा।"

साहू को ऐसे गुस्से में आता देख, ब्राह्मण के निर्देशानुसार ब्राह्मण की पत्नी अपने केश खोलकर दरिद्र शोर में विलाप करने लगी। साहू ने ब्राह्मण की पत्नी को ऐसे विलाप कर रोता देख वह वहीं ठहरकर ब्राह्मण की पत्नी से विलाप कर रोने का कारण पूछता है। ब्राह्मण की पत्नी ने विलापते हुए शोर में उत्तर दिया, "आज मेरे पति को न जाने किस दुष्ट ने ब्राह्मणभोज कराया था। उस ब्राह्मणभोज में विष मिला हुआ था, जब से उस घर से ब्राह्मणभोज करके लौटे हैं तब से ही मूर्च्छा होकर पड़े हुए हैं, अब तो धीरे-धीरे कमजोर भी हो रहे हैं। कौन ऐसा दुष्ट है जिसे मेरी खुशी देखी नहीं गई। कृपया आप थोड़ी देर के लिए इनके पास बैठिए, मैं उस ब्राह्मण को सबक सिखाने जाती हूँ। मैं उस दुष्ट को मिट्टी में मिला दूंगी।"

ब्राह्मण की पत्नी की ऐसी बातें सुनकर साहू के होश उड़ गए। उसने सोचा, हे ईश्वर, मुझ पर यह कैसी विपत्ति आ पड़ी है? इस विपत्ति से तो अच्छा था कि मैं चुप ही रह जाता। अगर इस ब्राह्मण को कुछ हो गया तो या फिर इसकी पत्नी ने गाँव में जाकर सबको बता दिया तो लोग मुझे जिंदा काट डालेंगे। साहू ने विनम्रता से ब्राह्मण की पत्नी से कहा, "आपने उस ब्राह्मण को सबक सिखाने का निर्णय लेकर उचित नहीं किया, क्योंकि आप एक स्त्री, बिना स्वामी के आप उनसे नहीं जीत पाएंगी। बल्कि आप यह एक हजार रुपियाँ लीजिए और औषधि के माध्यम से पंडित जी को बचाने का उपाय कीजिए।"

ब्राह्मण की पत्नी ने कहा, "साहू जी, इस एक हजार रुपये का क्या करूँ? पंडित जी अब नहीं बचेंगे, इनके गुजर जाने के बाद हम अपना गुजरा कैसे करें? मेरी दो बेटियाँ हैं। मुझे उनका विवाह भी करनी है, बेटों का भी जनेऊ संस्कार करना है और मेरी भी उम्र अभी कच्ची है। जब तक मेरे बेटे बड़े नहीं हो जाते, मुझे ही घर का खर्चा उठाना है और उनको पढ़ाना है। इन सबके लिए कम से कम पाँच

हजार की जरूरत पड़ेगी। मैं उस दुष्ट साहू को जेल भेजकर ही रहूंगी और उससे पाँच हजार रुपये भी लूंगी।"

साहू ने सोचा, यह ब्राह्मण की पत्नी मुझे बहुत कष्ट दे सकती है, इसलिए मैं इसे अभी ही पाँच हजार देकर अपना पीछा छुड़ा लेता हूँ। साहू ने फिर विनम्रतापूर्वक से कहा, "हे ब्राह्मणी, आप मुझसे पाँच हजार ले लीजिए। ब्राह्मण की सेवा में दिया गया धन बेकार नहीं जाता। इस वक्त हमें पंडित जी को कैसे बचाने का उपाय सोचना चाहिए। साहू को सबक सिखाने का ख्याल छोड़ दीजिए।"

ब्राह्मणी भी मान गई और साहू ने उसे तुरंत घर से पाँच हजार रुपये लाकर दे दिए। इस प्रकार ब्राह्मण और उसकी पत्नी ने साहू का पीछा छुड़ा दिया और वह खुश होकर घर लौट गया।

इसके बाद साहू ने भी ब्राह्मण के बचने या मरने की समाचार लेने का साहस नहीं किया। न जाने फिर कोई मुसीबत आन पड़े। परन्तु उसने मन ही मन में ठान लिया था कि ब्राह्मण की मृत्यु हो गई होगी। साहू को ब्राह्मण की मृत्यु का बहुत दुःख भी था क्योंकि उसने ब्राह्मण की मृत्यु का कारण खुद को घोषित कर दिया था। फिर जैसे कि भाग्य को मंजूर था, उस वर्ष साहू का अधिकांश पैसा आसामी के पास फँस गया, उसे बहुत नुकसान हुआ। इस नुकसान का कारण वह उसके द्वारा हुई ब्राह्मणहत्या को मानता था। अब वह सोचने लगा कि इस महापाप का प्रायश्चित कैसे होगा?

एक दिन साहू को पता चला कि पास के गाँव में एक महात्मा व्यक्ति आए हुए हैं। और उसके स्वभाव में लालच रत्ती भर नहीं है। वे भक्तों के द्वारा अनेक चीजें चढ़ाने पर भी नहीं लेते हैं, यहाँ तक कि छूते भी नहीं, अगर कोई भक्त कुछ लेकर भी आता है तो उसे लौटा देते हैं। अनेक भक्त रुपये-पैसे भी चढ़ाते हैं पर उस महात्मा व्यक्ति को रुपये से कोई मोह-माया नहीं है, जिसका है उन्हीं को लौटाने को कहते हैं और उस पैसे से ब्राह्मणभोज कराने को कहते हैं जिससे उनको उसका फल मिलने का आशीर्वाद भी देते हैं। महात्मा का आगमन भक्तों के लिए स्वर्णिम अवसर था। क्योंकि भक्तों का पैसा भी बच गया और हजारों ब्राह्मणों को ब्राह्मणभोज कराने का फल भी मिल रहा है।

देखते ही देखते अनेक लोग एक-एक हजार करके महात्मा व्यक्ति के सामने चढ़ाने लगे लेकिन धन्य हो महात्मा की दृष्टि पर एक बार के लिए भी लोभ की छाया नहीं पड़ी। साहू को भी अब एक मौका मिला था जिसमें पैसे भी खर्च नहीं होंगे और ब्राह्मणभोज कराने का फल भी मिल जाएगा। इससे अच्छा मौका क्या हो सकता है? ब्राह्मणहत्या के महापाप का प्रायश्चित करने का इससे अच्छा अवसर क्या

हो सकता है भला। साहू अगले ही दिन उस पास जो जमा पूंजी के नाम पर पचास हजार रुपये थे, उसे झोले में रखकर पाँच व्यक्तियों को पकड़ा दिया और उनके साथ महात्मा व्यक्ति की कुटिया में उनके दर्शन के लिए उपस्थित हो गया। साहू ने सभी झोले को महात्मा व्यक्ति के सामने रखने का आदेश दिया। महात्मा शांत थे और गंभीर होकर ध्यान कर रहे थे। साहू क्षण भर मौन रहे। उसने देखा कि महात्मा के आगे उसके चार चेले बैठे हुए थे। महात्मा ने अपने चेलों को धीरे से इशारा किया और चेलों ने पैसे के झोले उठाकर कुटिया के अंदर ले गए। ऐसा दृश्य देखते ही साहू के होश उड़ गए। वह हड़बड़ाते हुए कहता है, "महात्मा जी, इन पैसे के झोलों को कुटिया के अंदर क्यों ले जा रहे हैं? यह सब पैसे तो मैंने केवल ब्राह्मणभोज के लिए लेकर आया हूँ।"

महात्मा ने उत्तर दिया, "बच्चा, तुम्हारी इच्छा ही पूर्ण करने के लिए यह पैसे से भरे झोले को हमने स्वीकार किया है। तुम्हारी इतनी भक्ति देखकर मैं इस पैसे को लेने से इंकार नहीं कर सका। इस धन से हम परोपकार का काम करेंगे।" महात्मा ने कहा, "बाबा की यही इच्छा है कि तुम्हारी हर मनोकामना पूरी हो।"

महात्मा की ऐसी बातें सुनकर साहू दंग रह गया। कुछ ही देर में पाँच-दस भक्त और जमा हो गए और वे भी कहने लगे, "साहू, आप कितने महान, आपकी भिक्षा महात्मा जी ने स्वीकार कर ली है। हम तो अभागे हैं, हमारे द्वारा दी गई भिक्षा कभी स्वीकार नहीं करते हैं।"

महात्मा आँख मूंदकर ध्यानमुद्रा बनाकर बैठ गए। बेचारा साहू अब क्या करता, नीला-काला मुँह बनाकर घर लौट जाता है। साहू को ऐसे उदास हाल में देखकर उसकी पत्नी ने पूछा, "आपको क्या हो गया है? और सभी रुपयों का क्या हुआ? व्यापार में लगा आए क्या?"

साहू ने बड़े दुःख के साथ अपनी पत्नी को सारी घटना कह सुनाई। पत्नी की सारी बातें सुनने के बाद साहू की पत्नी को भी बहुत दुःख हुआ। पत्नी ने साहू को समझाते हुए कहा, "अब जो होना था सो हो गया, इस विषय पर चिंता करके कोई फायदा नहीं है। ईश्वर ही हमारे साथ नहीं है तो क्या कर सकते हैं भला। आप फिक्र न करें, आप अब भी व्यापार करने में सक्षम हैं।" पत्नी कहती है, "हम फिर से व्यापार करके धन इकट्ठा कर लेंगे। ईश्वर ने लोभी होने का दंड दिया है।"

अब साहू लाचार हो गया था, वह अपने मन को समझाते हुए शांत हो गया था। अगले दिन साहू अपने काम से घर के बाहर निकला तो रास्ते में उसकी मुलाकात ब्राह्मण से हुई। ब्राह्मण ने साहू

से मिलते ही उसे आशीर्वाद दिया और वहीं साहू ने देखा कि ब्राह्मण के साथ महात्मा के चार चेले साहू के द्वारा दिया गया पैसे का झोला लेकर ब्राह्मण के साथ खड़े थे। यह देखकर ब्राह्मण को बड़ा आश्चर्य हुआ और उसके कान ठंडे पड़ने लगे। इतने में ब्राह्मण हँसने लगता है और कहता है, "साहू जी की जय हो! देखा हमारी कमाई! कैसे दो-चार रुपये में नकली जुड़ा-जटा, दाढ़ी से इतने कम समय में पचास हजार रुपये कमा लिया।"

यह बात सुनते ही मानो साहू आकाश से गिर गया हो।

22. देखने वाला अन्धा (देख्ने अन्धो)

प्राचीन काल में एक गाँव में हर्के नामक एक किसान रहता था। पहली पत्नी की मृत्यु के बाद उसने दूसरा विवाह कर एक पत्नी ले आया था। हर्के की उम्र थोड़ी ज़्यादा होने के कारण उसकी दूसरी पत्नी उसे संतुष्ट नहीं थी, इसलिए वह आए दिन गणेशस्थान जाने के बहाने से घर का पूरा काम-काज छोड़ कर घर से निकल जाती थी। हर्के को अपनी पत्नी पर शक था कि उसका किसी के साथ चक्कर चल रहा है। एक दिन, जैसे ही उसकी पत्नी घर से बाहर निकली तो हर्के ने चुपके से उसका पीछा करते हुए गणेशस्थान पहुँचा। उसने देखा कि उसकी पत्नी गणेशस्थान में प्रवेश करते ही हाथ में कुछ चावल के दाने और फूल लेकर मंत्र कहती है -

"इस पार पीपल, उस पार बरगत।

घर के बूढ़े की आँखें नष्ट कर।।"

इस मंत्र को सुनते ही हर्के के होश उड़ गए। पत्नी घर लौटने लगी तो हर्के भी धीमे-धीमे कदमों से उसके पीछे-पीछे चलने लगा। रास्ते में एक युवक खड़ा था। उसे देखते ही हर्के की पत्नी मुस्कुराती है और वह युवक उसे इशारा करते हुए पेड़ के नीचे बुलाता है। दोनों पेड़ के पीछे छुप कर बातें करते हैं। हर्के भी भेष बदलकर उनकी सारी बातें सुन लेता है। अब यह यकीन हो जाता है कि वह युवक और कोई नहीं उसकी पत्नी का प्रेमी है। हर्के उसकी पत्नी से पहले घर पहुँच जाता है। कुछ ही देर में उसकी पत्नी भी घर लौट आती है। हर्के अपनी पत्नी से कुछ नहीं कहता है, वह सही मौके की तलाश में था। हर्के के घर में दो बकरियाँ थीं, एक उसका था तो दूसरी उसकी पत्नी की थी। दोनों में हमेशा लड़ाई होती थी कि किसकी बकरी पहले कटेगी। हर्के की पत्नी चाहती थी कि उसकी पत्नी की बकरी पहले

कटे और इसी लड़ाई के चक्कर में दोनों बकरियाँ अब बहुत बड़ी हो गई थीं। हर्के को रात में एक उपाय सूझा, वह अगले ही दिन सुबह उस उपाय को अपनाने के लिए अपनी पत्नी से पहले ही जाकर गणेशस्थान में छुप जाता है। कुछ ही देर में उसकी पत्नी भी गणेशस्थान में पहुँच जाती है, उसने हमेशा की तरह उसी मंत्र का उच्चारण किया। जैसे ही मंत्र का उच्चारण करना समाप्त हुआ हर्के ने मौका पाते ही गंभीर स्वर में गणेश के भाँति उत्तर दिया -

बड़ी बकरी कटी खाई।

बूढ़े की आँखें फटी जाई।।

हर्के की पत्नी ने गणेश जी को बोलते सुना तो उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। वह घर लौट आती है और अपने पति से कहती है बहुत दिन हो गए, आपने मांस नहीं खाया और आपका मन भी कर रहा है। आज मेरी भी मांस खाने की इच्छा हो रही है, इसलिए मैं आज अपनी बकरी कटवा देती हूँ। हर्के अपना उपाय को कारगर होते देख बहुत प्रसन्न था। हर्के की पत्नी ने बकरी के मांस से अनेक प्रकार की व्यंजन बनाकर हर्के को खिलाया। हर्के ने भी पेट भर खाया और जैसे ही उसका पेट भरा उसने तुरंत अपनी पत्नी से कहा, अरे! यह मेरी आँखों के आगे अँधेरा क्यों हो रहा है? कहीं मैं अंधा तो नहीं हो रहा हूँ न? हर्के की पत्नी गणेश जी द्वारा दिया गया वरदान को इतनी जल्दी सफल होता देख बहुत खुश हुई लेकिन उसने अपनी खुशी को जाहिर न करते हुए दुःखी भाव से कहा, हे! भगवान मेरे पति की आँखों को क्या हो गया? कहकर बिलखने लगती है।

अगले दिन हर्के की पत्नी घर का सारा काम-काज समाप्त कर आँगन में बिस्कुट सुखाकर बोली, आप कुछ समय के लिए यहाँ बैठिए, मैंने बिस्कुट सुखाए हैं, अगर कोई पशु-पक्षी आए तो उन्हें

भगा देना। मुझे कुछ काम से बाहर जाना है और मैं थोड़ी ही देर में लौट आऊँगी। हर्के ने अपने पति को उत्तर देते हुए कहा, मेरा यहाँ बैठना और न बैठना एक समान है क्योंकि मैं अंधा हो चुका हूँ, मुझे कुछ दिखाई नहीं देता है। पत्नी ने कहा, मैं आपको एक बाँस का डंडा देकर जाती हूँ, जैसे ही आपको कोई आवाज़ सुनाई पड़े आप इस डंडे से मार देना। हर्के ने अपनी पत्नी की बात मान ली और उस डंडे को हाथ में लेकर वह अंधे की तरह एक पीढ़ा के ऊपर बैठ जाता है। हर्के की पत्नी घर से निकलकर उसके प्रेमी को बुलाने जाती है। वह सोचती है कि अब मेरा पति अंधा हो चुका है, अगर मैं अपने प्रेमी को घर लेकर भी आऊँ तो उसे कुछ पता नहीं चलेगा, अब मुझे किसी बात का डर नहीं है, वह मन ही मन में बहुत खुश होती है। हर्के की पत्नी उसके प्रेमी को घर ले आती है और उसे भी अनेक प्रकार की व्यंजन बनाकर खिलाती है। हर्के को उसकी पत्नी के प्रेमी को घर आता देख वह आग बबूला हो जाता है लेकिन यह सही समय नहीं था। वह चुपचाप सही मौके के इंतजार में था। हर्के की पत्नी एक बार के लिए जैसे ही हर्के को देखने के लिए आँगन में आई, उसने मौका पाते ही अपने पति पर बाँस के डंडे से तीन-चार डंडे मारे। पत्नी ‘‘हाय! मैं मर गई.. हाय! मैं मर गई’’ करती हुई जमीन पर गिर गई।

हर्के हड़बड़ाने का नाटक करते हुए अपनी पत्नी को उठाता है और कहने लगता है, अच्छा तुम थी? मुझे लगा कोई पशु होगा, इसलिए मैंने मारा। तुम्हें बता कर आना चाहिए था, मेरी तो आँखों की रोशनी चली गई है, इससे बड़ा दुःख मेरे लिए क्या हो सकता है भला? ज़्यादा चोट तो नहीं लगी है ना, कहो तो मालिश कर दूँ। पत्नी ने झट से कहा, नहीं-नहीं, मैं बिलकुल ठीक हूँ, कहकर अपने प्रेमी के साथ घर के अंदर चली जाती है। हर्के जलन से खाक हो रहा था।

थोड़ी ही देर बाद हर्के चिल्लाने लगता है, अरे सुनती हो, यहाँ मैं धूप से झुलस रहा हूँ। अब मुझसे बैठा नहीं जा रहा है, मुझे भी घर के अंदर ले जाकर मेरे बिस्तर पर लिटा दो। हर्के की पत्नी अंदर से आकर हर्के को भी अंदर ले जाकर उसके बिस्तर पर लिटा देती है और अपने प्रेमी के साथ बैठकर बातें करने लगती है। अब यह सारा तमाशा उसका पति बिस्तर पर लेटे-लेटे देख रहा था कि कैसे वह अपने प्रेमी को मांस-पकवान के साथ बड़े प्यार से खाना खिला रही थी और प्रेमी के पास बैठकर नाक-मुँह बनाकर इशारों ही इशारों में बातें कर रहे थे। इधर हर्के क्रोध से आग बबूला होकर सही मौके का इंतजार कर रहा था। हर्के की पत्नी जब पानी भरने के लिए उठी तो हर्के ने पूछा, मुझे किसी के चलने की आवाज़ आ रही है, यह कौन चल रहा है? पत्नी ने उत्तर दिया, मैं हूँ। हर्के ने पूछा, क्या करने जा रही हो? पत्नी ने उत्तर दिया, बिस्कुट सुखाई थी न, वहीं उठाने जा रही हूँ। हर्के ने कहा, तुम बाहर जा रही हो, इस बीच अगर कोई कुत्ता आकर मांस जूठा कर देगा तो? पत्नी ने उत्तर दिया, आपके पास तो वो बाँस का डंडा है न, अगर आपको कोई भी बर्तन खनकने की आवाज़ आए तो आप इस डंडे के माध्यम से उसे मारकर भगा सकते हैं।

हर्के चुप रहा और पत्नी पानी भरने बाहर निकल गई। पत्नी का प्रेमी वहीं बैठकर मांस खा रहा था। इतने में दो कटोरियाँ आपस में टकरा गईं और उसकी आवाज़ आते ही हर्के को मौका मिल गया और उसने दौड़कर पत्नी के प्रेमी को सिर में चार डंडे मारे और उसे पानी पीने का अवसर भी नहीं मिला, वह वहीं गिर पड़ा। डंडे की आवाज़ सुनकर पत्नी दौड़ते हुए अंदर आई तो उसने देखा कि उसका प्रेमी मृत अवस्था में जमीन पर पड़ा था। हर्के ने पत्नी से पूछा, कुत्ता था या बिल्ली? मैंने चार डंडे मारे, अभी वो जिंदा है या मर गया? पत्नी ने अपने दुःख के वेग को रोककर कहा, हाँ, यह एक बड़ा सा कुत्ता था, जो अभी यहीं मरा पड़ा है। हर्के कहता है, उस कुत्ते का काल कहूँ या मेरा अनुभव कहूँ, मेरे

जैसे अंधे ने भी क्या खूब निशाना लगाया, एक ही झटके में इस कुत्ते चोर का काम तमाम कर दिया। पत्नी ने कोई उत्तर नहीं दिया। उसने शव को बिस्तर के नीचे छिपा दिया और उसने पूरे कमरे की सफाई कर दी। रात को जैसे ही हर्के ने सोने का नाटक किया तो उसकी पत्नी को मौका मिल गया और उसने बिस्तर के नीचे से अपने प्रेमी के शव को निकालकर अकेली जाकर नदी में फेंक आती है। हर्के भी ऐसे ही सोने का नाटक किया मानो वह सच में अंधा है और उसे कुछ पता नहीं है।

अगले दिन सुबह उठते ही हर्के ने अपनी पत्नी से कहा, आज मैंने एक अजीब सा सपना देखा है। सपने में गणेश जी आए थे, उन्होंने कहा कि हर्के, तुम्हारी पत्नी की भक्ति देखकर मैं बहुत प्रसन्न हूँ। इसलिए अगर तुम्हारी पत्नी मेरे द्वारा बताए हुए मंत्र का उच्चारण कर रोज पूजा करेगी तो तुम्हारी आँखों की रोशनी वापस लौट आएगी। गणेश जी ने मुझे सपने में ही मंत्र भी सिखा दिए हैं। पत्नी ने उत्तर दिया, यदि गणेश जी की पूजा करने से आपकी आँखों की रोशनी लौट आएगी तो मैं रोज करने के लिए तैयार हूँ, आप मुझे मंत्र सिखा दीजिए।

हर्के ने मंत्र का उच्चारण किया -

"इस पार पीपल, उस पार बरगत।

प्रेमी के मृत्यु पर सिर को फोड़।।"

यह मंत्र सुनते ही पत्नी सब बात समझ जाती है, वह चुपचाप मौका देखकर उसी रात में खुदकुशी कर लेती है।

निंद्रा साधन, काल भोजन, स्त्री ताड़न स्वस्ति महाराज!

23. निंद्रा साधन, काल भोजन स्त्रिया ताड़न स्वस्ति महाराज!

(निंद्रा साधन, काल भोजन स्त्रिया ताड़न स्वस्ति महाराज!)

प्राचीन काल का एक राजा था। वह बहुत धार्मिक व्यक्ति होने के साथ-साथ दयालु भी था। उन्होंने गरीबों और भिखारियों को कभी खाली हाथ नहीं लौटाया था। एक दिन राजा के दरबार में एक ब्राह्मण कुछ पाने की आश लिए महल पहुँचा और राजा के मुख्य द्वार पर पहुँचकर वह कहता है निंद्रा साधन, काल भोजन, स्त्री ताड़न स्वस्ति महाराज! राजा ने जैसे ही ब्राह्मण की आवाज़ सुनी, वह महल से बाहर आया। यह एक तरह का उपदेश था जो ब्राह्मण ने राजा से कहा। उस वक्त राजा ने उस उपदेश पर ज़्यादा ध्यान नहीं दिया। राजा ने ब्राह्मण को कुछ दक्षिणा दिया जिससे ब्राह्मण संतुष्ट होकर घर लौट गया। अब राजा बहुत दिन तक ब्राह्मण के उपदेश के बारे में सोचने लगे।

एक दिन राजा ने ब्राह्मण के उपदेश को आजमाने का निर्णय किया। उन्होंने ब्राह्मण के पहले उपदेश निद्रा अर्थात नींद को कैसे वश में करें, उस पर विचार किया। उस दिन राजा ने पूरी रात जागने का निर्णय लिया और 12 बजे रात तक तो सब ठीक था, जैसे-जैसे रात बीतती गया उसे शमशान घाट की ओर से किसी के रोने की आवाज़ सुनाई पड़ने लगी। राजा उस आवाज़ को सुनते ही बेचैन होकर शमशान घाट की तरफ अकेले चल देता है। राजा जैसे ही शमशान घाट पहुँचा, उसने देखा कि वहाँ एक सुंदर स्त्री बैठी फूट-फूट कर रो रही है। राजा ने बड़ा आश्चर्य होकर पूछा, हे! देवी आप कौन हो और ऐसे अँधेरे में शमशान घाट पर बैठकर क्यों रो रही हो?

स्त्री ने उत्तर दिया, सज्जन पुरुष, मैं इस राज्य की राजलक्ष्मी हूँ और मैं इस राजा के राज्य में मुझे बहुत सुख था। परन्तु पिछले चार दिनों से काल बिल्ली का रूप धारण करके बैठा है, क्योंकि वह

राजा के प्राण लेना चाहता है और राजा उस वक्त इन सबसे अनजान अपने प्राण बचाने में असमर्थ होगा। इसी कारण मैं इस राज्य के सुखों को याद करके रो रही हूँ। यह सुनते ही राजा चुपचाप वहाँ से अपने महल की ओर चले जाते हैं और अब उसे ब्राह्मण के उपदेश पर विश्वास हो गया था।

राजा अब अपने प्राण बचाने का उपाय पर विचार करने लगा। उसे एकाएक ब्राह्मण का दूसरा उपदेश – 'काल भोजन' याद आया, अर्थात उसे काल को भोजन करना होगा। राजा ने काल को भोजन करके संतुष्ट करने के लिए बिल्ली को खाने में जो-जो पसंद है, राजा ने अनेक प्रकार के खाने के चीज़ें तैयार करने लगा। चार दिन में ही दरबार नाना प्रकार के खाद्य सामग्री से भर गया। अब चौथे दिन काल रूपी बिल्ली दरबार में प्रवेश करता है और नाना प्रकार के खाद्य सामग्री देखकर वह उसी के स्वाद में खो जाता है। अब राजा के मृत्यु का समय भी बीत चुका था और इस प्रकार समय बीत जाने के बाद काल भी कुछ नहीं कर सकता था, इसलिए काल रूपी बिल्ली वापस लौट जाता है। इस तरह राजा के प्राण भी बच गए और उसे ब्राह्मण के दूसरे उपदेश का उद्देश्य भी पता चल जाता है।

राजा पशुओं की बोली समझता था, परन्तु उनके गुरु के आदेश अनुसार वह पशुओं की भाषा समझने पर भी किसी को नहीं बताता था। एक दिन राजा के भोजन करने के समय में चींटियों का एक झुंड निकला। वे एक-दूसरे से कई दिलचस्प बातें कर रहे थे। उनकी बातें सुनकर राजा भी हँस पड़े। राजा को ऐसे ही बिना कारण के हँसते देख रानी को बड़ा आश्चर्य हुआ। वह बहुत जिज्ञासु होकर राजा से उसके हँसने का कारण पूछती है। राजा ने अनेक बहाने बताए हँसने के, परन्तु रानी उन सब जवाब से संतुष्ट नहीं हुई। रानी अब नाना प्रकार से हठ करने लगी। राजा ने कहा, बालक और स्त्रियों का हठ सहना बहुत कठिन होता है।

राजा ने अपनी पत्नी को समझाते हुए कहा, सुनो प्रिय, तुम इस तरह क्यों हठ कर रही हो, बात बहुत छोटी है परन्तु मैं तुम्हें नहीं बता सकता हूँ, अगर मैंने तुम्हें बता दिया तो गुरु जी ने कहा है, उसी

वक्त मेरी मृत्यु हो जाएगी। रानी ने कहा, मैं ये सब बहाने नहीं सुनना चाहती। ऐसी कौन सी गुप्त बात है जो मुझे भी नहीं बोल सकते? कोई मृत्यु नहीं होगी। अब चाहे कुछ भी हो जाए, मुझे गुप्त बात बतानी पड़ेगी।

राजा परेशान होकर बोला – तुम्हें मेरे जीने-मरने से कोई फर्क नहीं पड़ता है तो मैं तुम्हें अवश्य बताऊँगा। परन्तु तुम्हें मेरे साथ नदी के तट पर चलना होगा, क्योंकि हमारे बूढ़े बुजुर्ग कहते थे कि नदी के तट पर प्राण त्यागने से मोक्ष प्राप्त होता है। राजा-रानी नदी के तट पर पहुँचे। राजा ने एक बार फिर रानी से जिद छोड़ने की विनती की, किन्तु रानी अपनी जिद पर ही अड़ी रही। राजा को अपनी पत्नी के इस स्वभाव से बहुत दुःख हुआ। राजा के मृत्यु का समय बीत चुका था। राजा की नजर अचानक एक वृक्ष के ऊपर पड़ी, जिसमें एक बंदर बैठकर फल खा रहा था, उसी वृक्ष के नीचे उस बंदर की पत्नी बंदरी बैठी थी और वृक्ष में चढ़ने के आलस्य से आस-पास गिरे हुए फल खा रही थी। बंदरी ने वृक्ष के नीचे से बंदर से कहा, कृपया मेरे लिए भी दस-पाँच अच्छे फल गिरा देते तो अच्छा था।

बंदर ने बंदरी को उत्तर देते हुए कहा, तुम मुझे ऐसे कैसे हुक्म दे सकती हो? क्या मैं तुम्हारे बाप का नौकर हूँ? मैं वह मूर्ख राजा नहीं हूँ जो स्त्री के हठ को पूरा करने के लिए प्राण देने को तैयार हो जाता है। अगर पत्नियाँ जो बोले पुरुष वहीं करने लगें तो पुरुष जाति का अकाल मृत्यु हो जाएगा। स्त्रियों को ताड़ना ही अच्छा रहता है। राजा पशुओं की भाषा समझता था। बंदर की ऐसी बातें सुनते ही उसे झट से ब्राह्मण का तीसरा उपदेश याद आ जाता है – स्त्री ताड़ना, अर्थात स्त्री को ताड़ना चाहिए। राजा तुरंत उठा और रानी के बालों को पकड़कर खींचने लगा। रानी चीखने लगी, अय्यां बाबा! अय्यां बाबा! मेरे बाबा मुझे क्षमा कर दीजिए, आइंदा ऐसी गलती नहीं करूँगी, कहकर चिल्लाने लगी। इस प्रकार राजा यह सरल उपाय को अपनाकर बहुत प्रसन्न थे। राजा और रानी दोनों ही दरबार लौट जाते हैं। राजा

दरबार पहुँचते ही अपने नौकरों को ब्राह्मण को लाने का आदेश देता है और उसे लाखों रुपए दक्षिणा के रूप में देता है।

24. सींचा-धुंचा (सिञ्चा-धुञ्चा)

किसी देश में एक महान व्यक्ति रहता था। वह अत्यंत विवेकशील एवं गरीबों को मदद करने वाला सज्जन व्यक्ति था। उसके दो बेटे भी थे। माता-पिता ने दोनों बेटों का नाम प्यार से सींचा और धुंचा रखा था। माता-पिता आमिर होने के कारण दोनों बेटों का पालन-पोषण माता-पिता ने बहुत ही लाड-प्यार में किया। परंतु इसी लाड-प्यार के कारण सींचा और धुंचा का पढ़ाई में मन नहीं लगता था और न ही वे मेहनत करते थे, लेकिन दोनों भाइयों में सांसारिक ज्ञान की कोई कमी नहीं थी, क्योंकि उन्होंने बचपन से ही अपने घर में लाखों का कारोबार देखा था और अपने माता-पिता को गरीबों की सेवा करते भी देखा करते थे और धीरे-धीरे उनका स्वभाव अपने माता-पिता की तरह होता गया।

परन्तु काल किसी को नहीं बख्शता है। एक दिन काल ने उस महान व्यक्ति को भी अपने कब्जे में कर लिया। पिता ने मृत्यु से पहले अपने दोनों पुत्रों को पास बुलाकर कई उपदेश देते हुए कहा – मेरे पुत्रों, संसार में दुःखी और लाचार व्यक्तियों की कमी नहीं है। आप दोनों में इतनी शक्ति है कि गरीबों का कष्ट दूर कर सको और बुद्धिमान भी हो, मुझे पूरा विश्वास है कि आप दोनों गरीबों की सेवा अवश्य करोगे। इस सेवा में अगर आपकी जान भी चली जाए तो इसे अपना सौभाग्य समझना। परन्तु जरूरतमंद की हमेशा मदद करना। मैं आशा करता हूँ कि आप दोनों मुझे कभी निराश नहीं होने देंगे। आगे आप दोनों स्वयं समझदार हो अपने कर्तव्यों का पालन जरूर करोगे। इतना कहते ही पिता का स्वर्गवास हो जाता है।

पिता के गुजर जाने के बाद सींचा और धुंचा ने यथासंभव गरीबों की सेवा करने लगे। संसार में संपन्न लोगों से ज़्यादा गरीब और दरिद्र की संख्या ज़्यादा है। फलस्वरूप जिस वर्ष पिता का देहांत

हुआ था, उसी वर्ष ही सींचा और धुंचा ने सारा धन गरीबों की सेवा में समाप्त कर दिया। एक दिन दोनों चतुर भाई धन के विषय में बात करते हैं, सींचा कहता है, भाई हमारा सारा धन समाप्त हो गया है और आमदनी का कोई स्रोत भी नहीं बचा है, हमारा रोज का खर्च हजार रुपया है, अब क्या करें? कोई उपाय नजर नहीं आ रहा है, कोई उपाय नहीं मिला तो अगले दिन सुबह से दोनों भाई राजा के दरबार में सेवक का काम करने लगे।

सींचा और धुंचा को देखते ही राजा के दरबार के सारे कर्मचारी एवं सेवक उनके पीछे पड़ जाते थे, क्योंकि सींचा और धुंचा बहुत दयालु थे। उन गरीबों को अभी भी लगता था कि उनके पास बहुत धन है। परन्तु जब वे उन गरीबों को खाली हाथ लौटाते तो उन्हें ऐसा लगता था मानो उनकी जान ही चली गई हो। एक दिन सींचा ने कहा – भाई राजा की तिजोरी में बहुत धन पड़ा हुआ है। आज रात को राजा की तिजोरी का खजाना लूट लेते हैं। उसके बाद हम गरीबों की फिर से सेवा कर सकते हैं। धुंचा ने आश्चर्य स्वर में कहा, यह गलत है भाई? परन्तु वह करता भी क्या? अंत में धुंचा सींचा की बात से सहमत हो जाता है। रात के समय दोनों भाई सावधानी से राजा के महल पहुँच जाते हैं। धुंचा छोटा होने के कारण तिजोरी में घुसकर खजाने की पोटली बनाकर निकाल-निकाल कर अपने भैया सींचा को देने लगा। दोनों भाई बचपन से बड़े सुख-सुविधा में पले-बढ़े होने के कारण उन्हें चोरी-चकारी का कोई अनुभव नहीं था, अब यह सब उनके लिए बहुत कठिन हो रहा था। परन्तु फिर भी उन दोनों ने धीरे-धीरे पूरी तिजोरी खाली कर दी और जैसे ही खजाने की आखिरी पोटली देने की बारी आई तो धुंचा एकाएक लड़खड़ाकर दीवार पर गिर जाता है। धुंचा के गिरने की आवाज़ से दरबार के पहरेदार जाग जाते हैं। धुंचा भागते हुए दरवाजे की ओर जाता है, जैसे ही धुंचा ने अपना सिर दरवाजे से बाहर निकाला, इतने में सिपाही वहाँ पहुँच जाते हैं। अब धुंचा की स्थिति ऐसी थी, उसका शरीर तो दरवाजे के अंदर था, परन्तु सिर दरवाजे के बाहर था, सिपाही दौड़ते हुए जाते हैं, धुंचा के पैर पकड़कर अंदर

की ओर खींचने लगे। अपने भाई को विपत्ति में देखकर सींचा ने भी उसके हाथ पकड़कर बाहर की ओर खींचने लगा, परन्तु अनेक पहरेदार के सामने उसका बल कमजोर पड़ रहा था। पहरेदारों को जीत हो रही थी। अंत में धुंचा ने अपने भाई सींचा से कहा, भैया, इसे पहले वे मुझे अंदर की ओर खींच लें, आप तुरंत ही मेरा सिर धड़ से अलग कर दीजिए, क्योंकि उन्होंने अभी तक मेरा चेहरा नहीं देखा है, अगर मैं पकड़ा गया तो पिता जी की इज्जत मिट्टी में मिल जाएगी। अब पिता जी की इज्जत आपके हाथ में है भैया, यह वक्त मोह-माया का नहीं है। पिता जी के मान-सम्मान के बारे में सोचिए जरा! और रहा सवाल वंश का तो वो आपसे भी आगे पड़ सकता है, अगर हम दोनों पकड़े गए तो गरीबों की सेवा कौन करेगा और हमारे पिता जी का सपना भी अधूरा रह जाएगा। सींचा ने धुंचा की बात को दुःखी मन से सहमति देते हुए अपने कमर से खुकरी (एक प्रकार का हथियार) निकालकर अपने भाई का सिर धड़ से अलग करके देता है। और अपने भाई का सिर एक हाथ में लिए उन खजाने की पोटलियों को लेकर सींचा वहाँ से भाग जाता है। पहरेदारों के लिए बिना सिर के धड़ को पहचानना बहुत कठिन था। धुंचा के धड़ को राजा के दरबार में पेश किया गया। चोरों का साहस देखकर राजा ने बड़े आश्चर्य होकर कहा, ऐसे चोरों का हमारे राज्य में होना उचित नहीं है। इन्हें जल्दी ही पकड़ना होगा। राजा भरे दरबार में पूछता है, इन चोरों को पकड़ने का क्या उपाय हो सकता है?

दरबार में एक माननीय राजा पुरोहित थे, उन्होंने राजा से कहा, इन चोरों के बारे में आसानी से पता लगाया जा सकता है। इस देश की परंपरा है, अगर किसी अपनों की मृत्यु हो जाती है तो वह उसे कंधा देने अर्थात शोक मनाने जरूर आता है। इस शव के अपने भी जरूर आएंगे। इस बिना सिर के शव को हमें जल्द ही दाह संस्कार के लिए श्मशान ले जाना होगा। ऐसा करने से इसके अपने अवश्य उसके सिर को लेकर आएंगे, क्योंकि रिवाज के अनुसार अगर बिना सिर के धड़ का अंतिम संस्कार

करते हैं तो उसे मोक्ष प्राप्त नहीं हो पाता है। इसलिए इसका दोस्त जो भी था, वो अवश्य आएगा और तब हम उस चोर को पकड़ लेंगे।

पुरोहित द्वारा बताया गया इस उपाय से सभी सहमत हुए और साथ में यह भी तय हुआ कि दस सिपाहियों के साथ कोई बुद्धिमान अधिकारी को भी जाना चाहिए तथा पुरोहित से ज़्यादा बुद्धिमान दरबार में और कौन ही हो सकता था, इसलिए उन दस सिपाहियों के साथ पुरोहित का श्मशान जाना तय हुआ। सिपाहियों ने धुंचा के शव को उठाया और श्मशान की ओर पुरोहित के साथ चल दिए।

सींचा मजदूरी करने में लगा था, इतने में उसे गाँव के लोगों द्वारा रास्ते में पता चलता है कि उसके भाई के शव को श्मशान की ओर ले जा रहे हैं। यह खबर सुनते ही वह पागल का भेष बनाकर पुरोहित से भी पहले श्मशान पहुँच जाता था और पागलों की तरह हरकत करता है और कोई भी उसे देखता है तो वह उसे जाकर पकड़ लेता था और इस पागलपन का तमाशा लोग खड़े होकर देख रहे थे। उसी वक्त सिपाही धुंचा का शव लेकर श्मशान पहुँच जाते हैं। सींचा ने जैसे ही अपने भाई के शव को देखा, वह दौड़ते हुए जाकर शव से लिपट जाता है। सिपाही उसे पागल समझकर भगाने लगते, लेकिन सींचा करुण भरे स्वर में रोते हुए अपने भाई के शव को उठाता है, कुछ दूर तक जाता है, इतने में वह अपनी कुछ रीति का पालन कर लेता है, लेकिन सिपाही उससे शव फिर ले आते हैं। कुछ ही देर में सींचा फिर अघोरी का रूप धारण कर अपने भाई के सिर को गूंथा हुआ आटे से ढककर श्मशान पहुँचता है। सिपाही धुंचा की चिता को घेरे हुए उसके दाह-संस्कार की तैयारी कर रहे थे।

सींचा ने चिता के पास आकर कहा, नमस्ते भाई, मैं अघोरी हूँ। इस श्मशान कई दिन से कोई चिता नहीं जली है और मैं कई दिन से भूखा भी हूँ, अगर आप मुझे इस चिता की आग में इस आटे की लोई को सेंकने के लिए दे दें तो आपकी बड़ी कृपा होगी।

सिपाहियों ने उत्तर दिया, बाबा जी, इसकी इजाजत हम नहीं दे सकते हैं, हमारे पुरोहित जी के होते हुए आपको उनसे पूछना होगा। हम तो केवल आपको थोड़ी आग ही दे सकते हैं, आपको उसी से काम चलाना होगा। सींचा ने कहा, अरे बच्चा, इतनी आग में यह आटे की लोई नहीं पकेगा और मुझमें इतना कष्ट करने का हिम्मत भी नहीं है, आज मैंने कुछ नहीं खाया तो मैं मर जाऊँगा। आपके पुरोहित जी कहाँ हैं, मैं उनसे प्रार्थना करता हूँ कि मुझे इस चिता की आग में इस आटे की लोई को पकाने की इजाजत दे।

पुरोहित जी ने अघोरी बाबा की प्रार्थना स्वीकार कर ली। उन्होंने सोचा कि इस आटे को चिता में रखने देने में हमें कोई हानि नहीं है, तो अघोरी को क्यों मना करें। अघोरी बाबा यानी सींचा ने अपने हाथों से उस आटे से ढके धुंचा के सिर को चलते हुए चिता में रख दिया और इस प्रकार सींचा ने भाई धुंचा का दाह-संस्कार किया और मौका पाते ही सबसे नजर बचाकर नो-दो ग्यारह हो गया।

इधर चिता से कुछ ही देर में कुछ फटने की आवाज़ आई। सिपाहियों ने पास जाकर देखा तो वो उस धड़ का सिर था, यह देखकर सब आश्चर्यचकित हो गए। अब अघोरी बाबा का रहस्य खुल चुका था, उसे पकड़ने के लिए सब इधर-उधर दौड़ने लगे लेकिन सब व्यर्थ था, अघोरी बाबा कहीं नहीं मिला। सभी दाह-संस्कार का कार्य पूरा कर बेबस होकर महल लौट जाते हैं। सींचा ने अपने भाई का दाह-संस्कार तो कर लिया था। अब शव यात्रियों को भोजन करना था। सींचा ग्वाला का वेश धारण कर रास्ते में चार बड़ी कटोरी में दही लिए बैठा था। थोड़ी ही देर में पुरोहित जी और सिपाही उसे रास्ते से महल लौट रहे थे। दोपहर की तपती धूप और चिता की आग की गर्मी के कारण तथा इतनी मेहनत के बाद सभी को प्यास लगी थी। जैसे ही उन्हें रास्ते में दही दिखा, उन्हें खाने का मन कर रहा था। इतने में ग्वाला ने पुरोहित जी से कहा, पुरोहित जी, यह दही लीजिए, मुझे आज घर जल्दी लौटना है, इसलिए मैं दही आधे दाम में ही दे रहा हूँ, कहकर ग्वाला सबको दही देने लगता है। पुरोहित जी ने दही के प्रति

सबके मन में लालसा देखकर उनकी इजाजत देना पड़ा। सभी पेड़ के नीचे बैठकर दही खाने लगते हैं। ग्वाला ने पुरोहित जी से कहा, मैं हाथ धोने का पानी का व्यवस्था कर आता हूँ, कहकर वो वहाँ से निकल जाता है।

दही समाप्त हो गया था, परन्तु ग्वाला हाथ धोने का पानी लेकर नहीं लौटा। पुरोहित जी कहते हैं, बिना पैसे लिए वह कैसे जाएगा? शायद पानी की तलाश में इधर-उधर भटक रहा होगा, लेकिन अब बहुत समय बीत चुका था, ग्वाला लौटकर नहीं आया। इधर सिपाहियों को चक्कर आने लगे। पुरोहित जी पहले तो सिपाहियों से कहा, दोपहर की तपती धूप से आते ही सब ने दही खाई है न, इसी कारण चक्कर आ रहा है शायद। सिपाहियों की हालत बिगड़ते देख पुरोहित जी को ग्वाला पर शंका होने लगी, लेकिन अब पुरोहित जी लाचार हो गए थे।

कुछ ही देर में सभी बेहोश होकर गिर पड़े। ग्वाला यह सब तमाशा दूर खड़ा होकर देख रहा था, जैसे ही सब बेहोश हुए, वह उनके पास आकर सभी के शरीर पर राख मल देता है और उनके कपड़े खोलकर ले जाता है। उधर राज महल में जब काफी देर बाद भी पुरोहित जी और सिपाही नहीं लौटे तो राजा चिंतित होने लगे। राजा ने चार लोगों को पुरोहित जी और सिपाहियों को खोजने के लिए भेजा।

कुछ ही समय बाद वे चार लोग राजा के पास समाचार लेकर आए कि पुरोहित जी के साथ सभी सिपाही अधनंगी अवस्था में बेहोश पड़े हैं। यह खबर सुनते ही राजा दंग रह गए। उसने पहले सभी के लिए कपड़े का इंतजाम कराया और उन्हें अपने घर पहुँचने का हुक्म दिया।

अगले ही सुबह पुरोहित जी लज्जित होकर दरबार में हाजिर हुए। उन्होंने सभी बातें राजा को विस्तारपूर्वक बताई और कहते हैं, महाराज, चोर बहुत ही चतुर निकला। हमारी आँखों में धूल झोंककर सारा विधि पूरा कर लिया। उसने भरे रास्ते में हमारे कपड़े उतारे, जिसके कारण हमें बेइज्जत होना पड़ा। रिवाज के अनुसार अगर वह मुझे दक्षिणा देने के लिए आया तो मेरा क्या हाल करेगा चतुर चोर?

महाराज, हमें कुछ भी करके उस चतुर चोर को पकड़ना ही होगा। इस दरबार में कई हट्टे-कट्टे बलवान सरदार हैं। क्या उनके पास इस चतुर चोर को पकड़ने का कोई उपाय नहीं है? या फिर चोर की चतुराई देखकर सबकी बुद्धि भ्रष्ट हो गई है।

राजा और पुरोहित जी को ऐसे क्रोध में देखकर पूरे दरबार में सन्नाटा छा गया। एक क्षण के बाद धर्माधिकारी ने कहा, महाराज, मैं भी एक उपाय आजमाना चाहता हूँ। राजा ने पूछा, कैसा उपाय? धर्माधिकारी ने बताया कि वह एक गैंडे पर कुछ मंत्र से वशीकरण कर छोड़ देगा, उसके बाद वह गैंडा जिस घर पर जाकर अपना सींग मारेगा, वहीं चोर होगा। धर्माधिकारी के उपाय से सभी सहमत हो जाते हैं। अब जंगल से एक गैंडा पकड़कर लाया गया, धर्माधिकारी ने कुछ मंत्र के द्वारा उस पर वशीकरण किया और उसे छोड़ दिया। जैसे ही धर्माधिकारी ने गैंडा को छोड़ा, वो सीधा सींचा के घर की तरफ बढ़ने लगा।

सींचा को धर्माधिकारी के इस उपाय के बारे में पहले से ही पता था। जिस रास्ते से गैंडा उसके घर तक आने वाला था, उसी रास्ते में उसने एक बड़ा सा गड्ढा बनाकर उसके ऊपर मिट्टी और घास बिछा देता है, जैसे ही गैंडा उस गड्ढे के पास पहुँचा, वह गड्ढे में गिर जाता है। सींचा तुरंत ही ऊपर से उस गड्ढे को मिट्टी और घास से ढक देता है। कुछ ही देर में गैंडा के पीछे आए लोग भी गैंडा को

खोजते हुए उस गड्ढे तक पहुँच जाते हैं। वे लोग गैंडा को ऐसे अचानक गायब होता देखकर दंग रह जाते हैं। गैंडा के गायब होने के बाद सब लाचार होकर महल लौट जाते हैं और जब गैंडा के गायब होने का समाचार राजा के पास पहुँचा तो राजा के साथ-साथ दरबार के लोग भी हैरानी में पड़ गए।

तेरह दिन के बाद फिर उस चतुर चोर को पकड़ने के लिए योजना बनाने की चर्चा चलने लगी। राजा ने कहा, अब किसी भी प्रकार से उसे अपने वश में करना होगा। मंत्री ने राजा से कहा, हुज़ूर, इस शहर में एक बुढ़िया अत्यंत ही बुद्धिमान है। उसके लिए असंभव काम कुछ भी नहीं है। सरकार, इस चतुर चोर को पकड़ने का काम भी हमें इस बुढ़िया को सौंप देना चाहिए।

इस वक्त राजा के दरबार में वही होता है जो दरबार में उपस्थित लोग कहते थे। राजा ने बुढ़िया को लाने का आदेश दिया। दरबार में बुढ़िया की हाजिरी हुई, राजा ने बुढ़िया से कहा, यदि आप इस चतुर चोर को पकड़ने में सफल हुईं तो मैं आपको एक लाख रुपये का इनाम दूँगा। बुढ़िया ने कहा, महाराज, मैंने बहुत बड़े-बड़े चोर पकड़े हैं। यह तो मेरे लिए एक मामूली सा चोर है, इसे पकड़ना कोई मुश्किल काम नहीं है, कल ही आपको खुशखबरी देती हूँ।

बुढ़िया शाम होते ही बाहर निकल जाती है और सींचा के घर के पास वाले रास्ते में कहते हुए फिरती है कि मेरी पुत्रवधू को बच्चा नहीं हो रहा है, वह प्रसव पीड़ा में तड़प रही है, यदि किसी दयालु सज्जन व्यक्ति के पास गैंडे की नाभि है तो मुझे कृपया दे दें, ताकि मेरी पुत्रवधू के कमर में बाँध दूँ और उसकी प्रसव पीड़ा कुछ कम हो जाए। उस दयालु सज्जन के लिए भी बहुत बड़ा पुण्य का कार्य होगा। बुढ़िया का कष्ट सुनकर सींचा का कोमल हृदय पिघल जाता है और वह अपने घर से निकलकर बुढ़िया से कहता है, अम्मा जी, मुझसे आपका दुःख सहा नहीं जा रहा है। आप चिंता न करें, मैं आपके लिए

अवश्य गैंडे की नाभि खोजकर लाऊँगा और जब तक मैं गैंडे की नाभि लेकर न आ जाऊँ, आप यहीं मेरा इंतजार कीजिए।

सींचा गैंडे की नाभि खोजने के लिए निकल जाता है। बुढ़िया को जैसे ही मौका मिलता है, वह अपने कमर से एक कटार निकालकर सींचा के दरवाजे में एक निशान बना देती है। कुछ ही देर में सींचा अपने द्वारा मारे गए गैंडे की नाभि लिए घर लौट आता है और बुढ़िया को दे देता है। बुढ़िया ने उसे खुश होकर ढेर सारा आशीर्वाद देते हुए वह भी घर लौट जाती है। बुढ़िया के जाते ही सींचा घर में प्रवेश करने ही वाला होता है तो उसकी नजर दरवाजे के ऊपर उस नए निशान पर पड़ी। वह उसे देखते ही सहम जाता है और सींचा बुढ़िया की सारी चाल भी समझ जाता है। अब सींचा ने भी अपने घर से एक कटार निकाला और रातों-रात शहर के सारे घरों के दरवाजे में उसी प्रकार का निशान बना देता है।

अगले दिन बुढ़िया बहुत प्रसन्नता के साथ दरबार में हाजिर हुई और राजा से प्रणाम करते हुए कहा, महाराज, मैंने चोर का पता लगा लिया है। रात का समय था, मैं चोर का घर अच्छे से नहीं पहचान पाई, इसलिए मैंने अपने कटार से उसके दरवाजे के ऊपर एक निशान बनाकर आई हूँ, जिससे उस घर को पहचाना जा सकता है।

महाराज, सिपाहियों को भेजकर चोर को पकड़ लिया जाए। राजा ने भी सिपाहियों को तुरंत आदेश दिया कि उस चोर को पकड़कर लाया जाए। महल के सारे सिपाही उस घर को खोजने के लिए दौड़ पड़े, लेकिन सिपाहियों ने देखा कि शहर के सभी घरों के दरवाजे में एक ही प्रकार का निशान बना हुआ है, वे असफल होकर महल लौट आते हैं। सिपाहियों को लौटा देखकर सारे दरबारी दुःखी हो जाते हैं। मंत्री ने इन सारे उपाय को व्यर्थ जाता देखकर राजा से हाथ जोड़ते हुए कहा, महाराज, इस चोर ने हमारा बहुत अपमान कर लिया, अगर हम अब भी चुप रहे तो पता नहीं और क्या-क्या करेगा वह चोर? महाराज, आपकी आज्ञा हो तो इस सेवक को भी अपनी बुद्धि का प्रयोग करने का मौका दें।

राजा ने मंत्री को भी अनुमति दे दी, लेकिन साथ ही चोर से सतर्क रहने के लिए भी कहा। मंत्री घर लौट जाता है। उस समय सींचा भी दरबार में मौजूद था, वह राजा और मंत्री की सारी बातें सुन लेता है। शाम के समय मंत्री घोड़े पर सवार होकर चोर को पकड़ने के लिए निकल जाता है। चोर को ढूँढते-ढूँढते आधी रात बीत जाती है, लेकिन चोर का कहीं पता नहीं चलता है। वह हताश होकर घर लौट ही रहा होता है कि अचानक उसे एक पेड़ की चोटी पर आग जलते हुए दिखाई देती है। मंत्री भी उत्सुक होकर देखने जाता है। वहाँ जाकर उसने देखा कि एक छोटी सी झोपड़ी है, जहाँ एक महात्मा मृगचर्म पहने पद्मासन में बैठे ईश्वर के ध्यान में भजन-कीर्तन कर रहे थे। मंत्री को देखते ही महात्मा ने कहा, कैसे आना हुआ? उस चतुर चोर को ढूँढते हुए आए हो न? महात्मा ने उसे आशीर्वाद देते हुए कहा, विजयभव।

मंत्री को बड़ा आश्चर्य हुआ कि महात्मा को कैसे पता चला है कि वह उस चतुर चोर को ढूँढने के लिए निकला है। मंत्री ने महात्मा से विनम्र होकर पूछा, आप तो त्रिकालदर्शी महात्मा हो, आपकी बातें कभी झूठी नहीं हो सकती। परन्तु, रात काफी बीत गई है, चोर का कहीं पता ही नहीं चल रहा है। अगर मैंने कल दरबार में चोर की हाजिरी नहीं करा पाया तो मुझे अपमानित होना पड़ेगा। अब समझ में नहीं आ रहा है कि कैसे और कहाँ ढूँढूँ उस चोर को? महात्मा ने कहा, 'बच्चा, महात्मा के मुख से ईश्वर बुलवाते हैं। मेरा आशीर्वाद कभी व्यर्थ नहीं जाता है। जाओ, उत्तर दिशा के जंगल में एक चोर घूम रहा है। तुम्हें ध्यान से जाना होगा, परन्तु अकेले जाने से काम नहीं बनेगा, मैं भी चलता हूँ तुम्हारे साथ।

बच्चा, तुम्हें इस थैले के अंदर रहना होगा और मैं इस बोरी को बाहर से बाँधकर तुम्हें ले चलूँगा। हम जैसे ही वहाँ पहुँचेंगे, वह चोर मेरे प्रभाव से स्वयं अवश्य मेरे पास आएगा और उसी वक्त हम उसे पकड़ लेंगे। मंत्री महात्मा की बात से सहमत हो गया था, क्योंकि उसने मंत्री का विश्वास जीत

लिया था। महात्मा मंत्री को लेकर जंगल पहुँच जाता है। मंत्री भी बोरी के अंदर चोर को पकड़ने के लिए तैयार बैठा था।

महात्मा जैसे ही जंगल पहुँचता है, बोरी को तुरंत नीचे रखकर वह अपनी दाढ़ी-मूंछ और जतन निकालकर वह अपने असली रूप में आ जाता है। वह महात्मा और कोई नहीं, बल्कि धुंचा का भाई सींचा ही होता है। सींचा ने महात्मा को उसी बोरी में बाँधा हुआ छोड़कर उसी के घोड़े पर चढ़कर घर की ओर लौटता है। रास्ते में सींचा की एक सिपाही से मुलाकात हुई तो सिपाही ने पूछा, तुम कौन हो? सींचा ने उत्तर दिया, मैं मंत्री का निरीक्षक हूँ। हमारे महाराज ने चोर को पकड़ लिया है, उसे जंगल में उत्तर की ओर पेड़ के नीचे एक बोरी में रखकर बाँध रखा है, जाओ तुरंत पूरे शहर में खबर कर दो कि चोर पकड़ा गया और तुरंत पचास सिपाहियों को बुलाओ और इस चोर को सही-सलामत महाराज के दरबार में पहुँचाओ। खबरदार, चोर भाग न पाए! नहीं तो तुम लोगों की खैर नहीं! अगर तुम लोगों ने यह काम अच्छे से कर लिया तो तुम्हें इनाम भी मिल सकता है।

इनाम पाने की आशा में सिपाही दौड़ते हुए शहर की ओर भागा और वह राज महल से पचास सिपाहियों के साथ जंगल पहुँच जाता है। उन्होंने देखा कि पेड़ के नीचे एक बोरी में चोर को बाँधकर रखा गया है। सिपाहियों ने उस बोरी को बड़ी सावधानी से उठाकर राजा के दरबार में पेश किया। राजा उस समय अपने कक्ष में सो रहे थे, परन्तु चोर पकड़ा गया! चोर पकड़ा गया! के शोर से उनकी नींद टूट जाती है। राजा भी दरबार में उपस्थित होते हैं। सिपाहियों ने जैसे ही राजा के सामने उस बोरी को खोला तो उसमें से मंत्री को देखकर सभी दंग रह गए।

राजा ने आश्चर्य से पूछा, यह सब क्या है मंत्री? मंत्री ने लज्जित होते हुए राजा को एकांत में अपनी व्यथा सुनाते हुए कहता है। हे! अन्नदाता, उस चतुर चोर को पकड़ना मेरे बस की बात नहीं है, परन्तु महाराज, चोर बहुत दयालु है, उसने मेरी जान बख्श दी। मैं आज कान पकड़ता हूँ, दोबारा उस

चोर को खोजने की गलती नहीं करूँगा। जान बची तो लाखों पाए। दरबार में चोर की चतुराई से सब हैरान थे। उनका मानना था कि यह कोई सामान्य चोर नहीं है, इसे वश में करने के लिए ठोस उपाय खोजना होगा। पूरी सभा में इस विषय पर विचार होने लगा। मंत्री ने राजा से हाथ जोड़ते हुए कहा, महाराज, उस चतुर चोर के सामने किसी का भी वश नहीं चलता।

इसे बुद्धि से वश नहीं किया जा सकता। इस चतुर चोर को किसी तंत्र-मंत्र से ही वश में किया जा सकता है। हमारे इस राज्य में एक बहुत बड़े ढूँढ़डेश्वर नामक तांत्रिक हैं। अब वही कोई उपाय बता सकते हैं महाराज! राजा ने ढूँढ़डेश्वर तांत्रिक को तुरंत बुलाने का आदेश दिया। ढूँढ़डेश्वर तांत्रिक दरबार में उपस्थित हो गया और राजा से कहने लगा, महाराज, चोर चाहे इतना भी चतुर क्यों न हो, मैं अपने मंत्र की शक्ति से उसको वश में करके पकड़ लूँगा, परन्तु महाराज, मुझे इस काम के लिए कुछ सामग्री की आवश्यकता पड़ेगी, जो शाम तक मुझे मिल जाना चाहिए। आज अमावस की रात है। तंत्र की शक्ति आज अधिक प्रबल है। पूरी सामग्री के अलावा एक बत्तीस गुण वाली कन्या की आवश्यकता होगी। मैं उस कन्या को मंत्र से अपने वश में कर लूँगा और फिर जंगल में छोड़ दूँगा।

कन्या मंत्र के वश से वह चोर के पास पहुँच जाएगी और उसकी एक उँगली काटकर फेंक देगी ताकि अगली सुबह उस चोर की पहचान हो सके और फिर सिपाही उसे पकड़ लें। ढूँढ़डेश्वर तांत्रिक के इस उपाय से सभी सहमत थे। राजा को परन्तु पूरे राज्य में एक भी बत्तीस गुण वाली कन्या नहीं मिली। अंत में राजा को अपने राज्य की मान-सम्मान बचाने के लिए लाचार होकर अपनी एकमात्र बत्तीस गुण वाली पुत्री यानी राजकन्या को देना पड़ा।

ढूँढ़डेश्वर तांत्रिक ने रात के समय राजा की बत्तीस गुणों वाली पुत्री पर अनेक मंत्र से वशीकरण किया और जंगल की ओर भेज दिया। उधर सींचा भी मंत्र से आकर्षित होने लगा और मंत्र का ऐसा प्रभाव देखकर वह चिंतित होने लगा। अब सोचने लगा कि कैसे इस मंत्र से बचा जाए? सींचा ने बहुत

से गरीब और विवश लोगों की सेवा की थी, उसी के फल स्वरूप ईश्वर ने उसकी मदद की और उसी समय उसके मन में एक उपाय आया। आधी रात बीत चुकी थी, ढूँढ़डेश्वर तांत्रिक अपनी कोठी में बैठे तंत्र-मंत्र का जाप कर रहे थे। उसी वक्त किसी व्यक्ति ने उसे बाहर से ढूँढ़डेश्वर तांत्रिक बाबा करके आवाज़ लगाई! ढूँढ़डेश्वर तांत्रिक ने खिड़की से झाँकते हुए पूछा, कौन है? क्या काम है?

व्यक्ति ने उत्तर दिया, ढूँढ़डेश्वर तांत्रिक बाबा जी, मैं किसी बड़े काम से बाहर जा रहा हूँ। अगर यह काम सफल हो गया तो मैं लाखपति बन जाऊँगा। मैं आपके पास इस कार्य को सफल बनाने का मंत्र पता करने आया हूँ। और जो भी दक्षिणा लगेगा, मैं देने के लिए तैयार हूँ।

ढूँढ़डेश्वर तांत्रिक बाबा ने तुरंत उत्तर दिया, थोड़ा ठहर जाओ बालक, मैं तुम्हें अवश्य ही मंत्र बताऊँगा। अंदर आ जाओ, मैं दरवाजा खोल देता हूँ। व्यक्ति ने कहा, कोई बात नहीं बाबा जी, मैं यहीं ठीक हूँ। खामखा आपको तकलीफ क्यों दूँ। मुझे बस आप मंत्र बता दीजिए, मैं यहीं से चला जाता हूँ या फिर किसी कागज में लिखकर इसी खिड़की से दे दीजिए, मैं भी दक्षिणा आपको यहीं दे दूँगा।

ढूँढ़डेश्वर तांत्रिक बाबा के मन में दक्षिणा के प्रति लोभ की भावना आने लगी थी, इसलिए उसने तुरंत ही मंत्र लिखकर खिड़की के द्वारा उस व्यक्ति को पकड़ा देता है। व्यक्ति बाबा ढूँढ़डेश्वर तांत्रिक से मंत्र लेने के बाद अब उसे तांत्रिक बाबा को दक्षिणा देना था। परंतु उसने अपने कमर से दक्षिणा के बदले एक खुकुरी (एक प्रकार से नेपाली समाज का हथियार) निकालकर एक ही वार में ढूँढ़डेश्वर तांत्रिक बाबा का हाथ काट देता है। यह व्यक्ति कोई और नहीं बल्कि ही सींचा था। सींचा मंत्र के प्रभाव से ढूँढ़डेश्वर तांत्रिक बाबा का कटा हुआ हाथ लेकर जंगल की ओर चल देता है। राजा की बत्तीस गुणों वाली कन्या जंगल में बैठी हुई थी। उस एकांत में सेठ के रूपवान बेटे सींचा को देखते ही उसके मन में सींचा के प्रति प्रेम का भाव उत्पन्न हो जाता है। कन्या ने सींचा से कहा, युवक, आप बहुत

भले आदमी जान पड़ते हो और बुद्धिमान भी हो, परन्तु काम करते हो चोरी का, मैं आपको समझ नहीं पा रही हूँ, ऐसी क्या मजबूरी है आपकी युवक?

सींचा भी राजकन्या के प्रेम में मोहित हो चुका था। उसने राजकन्या को उत्तर देते हुए कहा, हे देवी, आप बिलकुल ठीक कह रही हो। एक समय था जब मैं भी एक करोड़पति सेठ का पुत्र हुआ करता था, परन्तु पिता के मृत्यु के बाद उसकी इच्छा थी कि हम दो भाई मिलकर गरीब दरिद्र और असहाय लोगों की मदद करें और इन सबके चलते मेरा एक लौटा प्यारा भाई धुंचा भी मारा गया और सारी संपत्ति भी चली गई और इस प्रकार गरीबों की सेवा करते-करते मेरी यह दशा हो गई है। आज मुझे चोरों की तरह छुप-छुपकर रहना पड़ रहा है।

राजकन्या सींचा की उत्तर से संतुष्ट हो गई। राजकन्या और सींचा जंगल में अनेक प्रकृति सुंदरता का आनंद लेते हैं और जैसे ही रात बीतने ही वाली थी, अचानक ही राजकन्या की आँखें लाल-लाल होने लगती हैं। सींचा को पता चल जाता है कि अब उस पर ढूँढ़डेश्वर तांत्रिक बाबा के मंत्र का असर हो रहा है। वह एकदम से सावधान हो जाता है। एकाएक राजकन्या सींचा का हाथ पकड़ लेती है। परन्तु सींचा ने तुरंत ही अपना हाथ छुड़ाकर ढूँढ़डेश्वर तांत्रिक बाबा का कटा हुआ हाथ राजकन्या को पकड़ा देता है। राजकन्या ने उस कटे हुए हाथ को सींचा का हाथ समझकर उसके दो टुकड़े कर देती है। ढूँढ़डेश्वर तांत्रिक बाबा के द्वारा सींचा को काम सफल होने का मंत्र प्राप्त हुआ था। उसी के प्रभाव से आज उसका यह उपाय भी काम कर गया।

राजकन्या भी उस हाथ को काटते ही मंत्र के प्रभाव से बेहोश हो जाती है और सींचा भी घर की ओर लौट जाता है। सूर्योदय होने से पहले ही राजा सैकड़ों सिपाहियों के साथ जंगल पहुँच जाता है। वहाँ जाकर राजा ने देखा तो चोर का हाथ कटा हुआ था और राजकन्या बेहोश पड़ी थी। अनेक

उपचार करने के बाद राजकन्या होश में आई। राजा अपनी बेटी और चोर का कटा हुआ हाथ लेकर महल लौट जाता है।

अब राजा ने पूरे शहर में उस चोर को पकड़ने के लिए अपने जासूस छोड़ दिए थे। उधर बेचारा ढूँढ़डेश्वर तांत्रिक बाबा दर्द से छटपटा रहा था। अंत में जासूस सिपाहियों ने ढूँढ़डेश्वर तांत्रिक बाबा को ही चोर समझकर पकड़ लिया और राजा के दरबार में उसे लाया जाता है। ढूँढ़डेश्वर तांत्रिक बाबा को देखते ही राजा क्रोध से आग बबूला हो जाता है। राजा ने ढूँढ़डेश्वर तांत्रिक बाबा से कहा, यह सब तुम्हारा ही किया हुआ है, तो चोर को पकड़ने का ढोंग क्यों कर रहे थे जबकि वह चतुर चोर तो तुम ही हो, परन्तु तुम अपने जाल में खुद ही फंस गए।

ढूँढ़डेश्वर तांत्रिक बाबा ने अपनी सफाई देते हुए राजा से सारी घटना कह सुनाई, परन्तु राजा को तांत्रिक बाबा पर विश्वास नहीं था, उसने जब अपनी पुत्री से पूछा तो उसने भी बताया कि वह चतुर चोर ढूँढ़डेश्वर तांत्रिक बाबा नहीं, बल्कि कोई और है। चोर ने हमें झाँसा देकर भाग गया और तांत्रिक बाबा फंस गए।

एक महीने के बाद सारा रहस्य पूरे शहर को पता चल जाता है। परन्तु अब भी राजकन्या सींचा से बहुत प्रेम करती थी। राजकन्या उसके प्रेम में इतनी डूब चुकी थी कि उसने चलना-फिरना छोड़ दिया था। राजा यह सब देखकर चिंतित में पड़ गया। राजकन्या उसकी एकमात्र संतान थी और कोई नहीं था। अपनी पुत्री की ऐसी हालत देखकर राजा ने उसकी पुत्री का विवाह सींचा से करने की सोची, परन्तु इससे पहले अपने मंत्री से सलाह-मशविरा करता है। मंत्री ने राजा से कहा, राजकन्या के कहने अनुसार सींचा बहुत बड़े सेठ का बेटा है। देखने में अच्छा होने के साथ-साथ बुद्धिमान एवं परोपकारी भी है और बहादुरी का तो क्या कहना, अपनी जान हाथ में लिए फिरता है। मंत्री ने भी कहा, इससे अच्छा

वर राजकन्या के लिए नहीं मिलेगा महाराज। राजकन्या का विवाह सींचा से कराकर उसे राजयुवक बना लीजिए।

राजा भी मंत्री की बात से सहमत हुआ, क्योंकि उसके पास और कोई रास्ता नहीं था। अगले दिन से पूरे शहर में घोषणा की गई कि राजा उस चतुर चोर की बुद्धिमानी से अत्यंत प्रसन्न है, इसलिए उसने यह निर्णय लिया है कि वह अपनी पुत्री का विवाह उस बुद्धिमान चोर से करना चाहते हैं और राजगद्दी भी उसी को दी जाएगी, कृपया करके आप दरबार में हाजिर हों। सींचा को जब यह सारी बातें पता चलीं तो वह अगले दिन इस बात की पुष्टि करने के लिए दरबार जाता है तो उसे राजकन्या पहचान लेती है और वहीं उसका विवाह भी कर दिया जाता है। अब राजा भी बहुत प्रसन्न था, क्योंकि उसकी पुत्री का विवाह इतने बड़े दयालु सेठ के बेटे से हुआ था जो बुद्धिमान के साथ-साथ परोपकारी भी था और इस तरह पूरे हर्षोल्लास के साथ सींचा को राजगद्दी भी सौंपी गई।

25. सरसों फुला हुआ गाँव, जमाई मेरा नाम (तोरी फुल्यो गाउँ, ज्वाइं मेरो नाऊँ)

किसी गाँव में जसे नाम का एक अत्यंत चतुर व्यक्ति रहता था। एक दिन अपनी घर की बिगड़ी हुई परिस्थिति को देखकर उसे बहुत दुःख हुआ और वह बैठकर विचार करने लगा कि इस संसार में ईमानदार होकर जीवन बिताना बहुत ही कठिन है। अगर ईमानदारी के फेरे में रहे तो एक दिन भूखे मरना होगा। कल ही मुझे इस गरीबी एवं बुखारी से बचने के कोई तरीके खोजना होगा।

जसे अगले ही दिन अपना भाग्य आजमाने के लिए घर से निकल जाता है। उसके पास घर का मोह करने लायक कुछ नहीं बचा था, इसलिए वह बेफिक्र होकर घर से खाली हाथ ही चल देता है। जैसे ही जसे रास्ते पर चलता हुआ जा रहा होता है, उसे चार-पाँच बच्चे मिट्टी खोदते हुए दिख जाते हैं। जसे ने उन बच्चों से पूछा, इस मिट्टी से क्या करने वाले हो बच्चों? बच्चों ने भी बड़े प्यार से उत्तर दिया, भैया! इस सफेद मिट्टी से घर की पुताई करेंगे, इसलिए इसे खोद रहे हैं। जसे ने भी अपने मन ही मन में सोचा, मैं ऐसे ही खाली हाथ चलता रहा तो कमाई होने से रही। क्यों न इस सफेद मिट्टी को खोदकर किसी को महँगे दाम में बेच दूँ। इससे मेरी पहली कमाई अच्छी हो जाएगी।

जसे ने भी चार माना (चावल को नापने वाला डोको) सफेद मिट्टी को चार पोटली में बाँधकर चल देता है। थोड़ी दूर चलने के बाद उसे खेत दिखा जहाँ एक किसान हल चला रहा था और जिन बैलों से किसान हल जोत रहा था, उन बैलों का रंग एक जैसा नहीं था। एक सफेद था तो दूसरा भूरे रंग का था। जसे ने किसान के पास जाकर कहा, भाई साहब, यह क्या है, आपके दोनों बैल का रंग क्यों अलग-अलग है? क्या आपको पता नहीं है हल वाले बैल हमेशा एक ही रंग के होने चाहिए?

किसान ने कहा, क्या करूँ भाई, इस बार मैं नहीं ला पाया एक रंग के बैल, परन्तु अगली बार इस भूरे रंग के बैल को बेचकर एक सफेद बैल जरूर ले आऊँगा। जसे ने किसान से कहा, इस काम में तो मात्र एक रुपये का खर्च है, अगर आप कहें तो मैं इस भूरे रंग के बैल को सफेद कर सकता हूँ। बैल रंगने की बात सुनकर किसान को भी अच्छा लगा और उसने जसे को बैल रंगने की इजाजत दे दी।

जसे के पास जो चार पोटली में बाँधा हुआ मिट्टी था, उसी को उसने पानी में घोला और उस भूरे बैल के पूरे शरीर पर मल दिया, जिससे वह भूरा बैल भी सफेद रंग का होने लगा। किसान यह देखकर बहुत खुश हो जाता और कहता है, भाई, पैसे तो घर में रखे हैं और मैं बिना पूरा खेत जोते घर नहीं लौट सकता हूँ। इसलिए शाम को पैसे ले लेना। जसे ने किसान से कहा, शाम को मुझे कहीं और जाना है, इसलिए मैं उस समय नहीं आ सकता। आप मुझे अपने घर का पता बता दीजिए, मैं वहीं जाकर पैसे ले लूँगा। किसान ने जसे से कहा, उस पहाड़ के पीछे मेरा घर है। घर में मेरी पत्नी है, उसे जाकर कहना कि मैंने कहा एक रुपया तुम्हें देने के लिए, तो वह तुम्हें दे देगी। अगर उसे तुम पर विश्वास नहीं हुआ तो मैं भी यहाँ से चिल्लाकर कह दूँगा तुम्हें पैसे देने के लिए कह देता हूँ।

जसे किसान के कहे अनुसार उसके घर पहुँच जाता है। किसान की पत्नी बरामदे में धान कूट रही होती है। जसे ने किसान की पत्नी से कहा, भाभी जी, भाई साहब ने मुझसे ६० रुपये में एक सफेद बैल खरीदा है। मैं उसी सफेद बैल का कीमत लेने आया हूँ। अगर आपको मेरी बात पर विश्वास नहीं है तो अपने पति से पूछ लीजिए। पत्नी ने खेत की ओर देखकर चिल्लाते हुए पूछा, क्या हल के दोनों बैल सफेद हैं? यहाँ एक आदमी पैसे लेने आया है। क्या उसे मैं पैसे दे दूँ? किसान को पूरी बात सुनाई नहीं पड़ी और उसने भी अपनी पत्नी से कह दिया कि पैसे दे दो। पत्नी ने जसे को ६० रुपये दे दिए। जसे ने जैसे ही किसान की पत्नी से ६० रुपये लिए, वह तुरंत वहाँ से चला जाता है।

शाम को जब किसान घर लौटा तो किसान की पत्नी ने बैल को देखते ही कहा, यह बैल क्यों रूखा-सूखा सा लग रहा है? किसान ने उत्तर दिया, रँगा हुआ बैल और कैसा लग सकता? मैंने इस बैल को रँगने के लिए केवल एक रुपया दिया है, जिससे हमारे दोनों बैल एक रंग के हो गए हैं। अब गाँव वाले भी कुछ नहीं कहेंगे। अगली बार एक बैल खरीद लेंगे। पति की बात सुनकर पत्नी आश्चर्य होकर बोली, आज दोपहर में ही मैं बैल खरीदने के लिए जो ६० रुपये में रखा था, आपके कहने से मैंने उस आदमी को दे दिया। भला कौन बैल को ६० रुपये में रँगता है? अगली बार इतने पैसे में तो एक और सफेद रंग की बैल खरीद लेना।

पत्नी की बात सुनते ही मानो किसान के पैरों तले जमीन खिसक गया। किसान गुस्से से कहता है, अब तक तो वह बेईमान आदमी बहुत दूर निकल गया होगा। उधर जसे किसान के डर से रातों-रात जंगल के रास्ते भाग रहा था, उसी रास्ते में एक भालू सो रहा था। जैसे ही जसे का पैर उस भालू को लगा, वो क्रोध में तिलमिला उठा और उसने तुरंत जसे पर हमला कर दिया। जसे भी कम नहीं था, उसने भी सही मौका देखकर भालू के कान के बाल पकड़ लिए और वह भी भालू के साथ भिड़ गया। इन दोनों की इस लड़ाई में जसे के कपड़े फाड़कर पुर्जे-पुर्जे हो गए थे और जसे के कमर में जो पैसे का थैला था, वो भी फट चुका था और सारा पैसा इधर-उधर बिखर गया था। जसे भी अब थक चुका था, वह भालू से पीछा छुड़ाने का उपाय सोचने लगा।

सुबह होने ही वाली थी कि उसी रास्ते से गाँव का मुखिया कचहरी के काम से घोड़े पर सवार होकर बाहर जा रहा था। मुखिया ने देखा कि प्रातःकाल में ही रास्ते पर एक व्यक्ति और भालू के बीच लड़ाई हो रही है। उसने बड़े आश्चर्य होकर पूछा, यह क्या हो रहा है, तुम दोनों क्यों लड़ रहे हो?

जसे ने कहा, मुखिया जी, आप अपना घोड़ा दूर ही रखिए, क्योंकि आपके घोड़े के पास आने से मेरा भालू डरकर पखाने से पैसे निकालना बंद कर देगा। आप यहाँ से चले जाएँ और हाँ, रास्ते में

मेरा कोई आदमी मिला तो उसे कह देना कि जल्दी ही मेरे पास आएँ। मैं इस काम के लिए आपको २० रुपये भेंट में दूँगा। जसे की बात सुनकर मुखिया असमंजस में पड़ गया। उसने जसे से कहा, तुम कहना क्या चाहते हो, साफ-साफ कहो, मैं नहीं समझ पा रहा हूँ तुम्हारी बातों को। जसे ने पहले तो व्यंग्य भाव से कहा, आपको किसने मुखिया बना दिया? बात तो साफ ही है। आज से चार साल पहले से ही मैं इस भालू को पकड़ने की कोशिश कर रहा था। आखिरकार इतना जद्दोजहद करने के बाद आज रात ही यह भालू मेरे हाथ आया है।

मैं जिस वक्त इस भालू को पकड़ा था, उस समय मेरा बेटा भी मेरे साथ था, परन्तु यह भालू बहुत ही बलवान है, अकेले सामना करना मुश्किल है, इसलिए मैंने गाँव वालों को बुलाने के लिए मेरे बेटे को भेजा था, परन्तु वह अभी तक नहीं लौटा है और मैं भी काफी थक गया हूँ। बेचारा मुखिया कैसे जसे की बात पर विश्वास न करे, क्योंकि उस स्थान पर पूरे पैसे बिखरे पड़े थे। मुखिया ने कहा, यह तो पड़ा अद्भुत भालू है, अगर आप कहें तो आपके गाँव वाले जब तक नहीं आते हैं, तब-तक क्या मैं इस भालू को संभाल सकता हूँ, क्योंकि मुझे भी अपनी बेटी के विवाह का खर्च चाहिए, जिस कारण कुछ पैसों की आवश्यकता है और इसके पखाने से जो पैसे निकलेंगे, उसे हम आपस में आधा-आधा बाँट लेंगे। जसे ने कहा, आप बड़े होशियार हो मुखिया जी! काम मेरा, इनाम आपका! इन चार सालों में मैंने धूप-बारिश में दौड़ते हुए यह फल पाया है और आप बस एक छन मेरी मदद करके यह फल पाना चाहते हैं। मदद की कोई जरूरत नहीं है, क्योंकि मेरे गाँव के लोग आते ही होंगे। आप यहाँ से जा सकते हैं, या फिर आपको अगर सच में मेरी मदद करनी है तो आप अपने घोड़े को थोड़ी दूर जाकर बाँधकर मात्र धोती पहनकर तैयार होकर आएँ और हो सके तो जल्दी आएँ, क्योंकि मैं भी बहुत थक चुका हूँ।

मुखिया जसे की बात सुनकर बहुत खुश हुआ, क्योंकि उसे पैसा कमाने का आसान तरीका मिल चुका था। जसे के कहे अनुसार वह घोड़े को उस स्थान से दूर कहीं बाँधकर धोती पहनकर वह भालू को संभालने पहुँच जाता है। अब जसे की जगह पर मुखिया भालू से आपस में भिड़ रहे थे। जसे ने इसी मौके का फायदा उठाकर सारा पैसा समेट लेता है और मुखिया के कपड़े पहनकर उसके घोड़े पर चढ़कर वह वहाँ से नौ दो ग्यारह हो जाता है। यह दृश्य देखकर मुखिया के तो होश उड़ गए। मुखिया ने अपने पाँव पर खुद ही कुल्हाड़ी मारी थी। भालू के सामने मुखिया कमजोर पड़ गया, जिस कारण उसने मुखिया को पाँच-दस पंजे मारे और वो जंगल की ओर भाग गया।

जसे घोड़े पर बैठकर तेजी से दोपहर के समय एक गाँव में पहुँचता है। वहाँ वह एक साहूकार के घर जाता है और उसकी पत्नी से कहता है, साहूकारनी, मैं एक परदेशी हूँ, मेरा घोड़ा कल से बहुत भूखा है, कृपया करके इसे कुछ खाने के लिए दे दीजिए, मैं आपको इसके बदले कुछ पैसे दूँगा। साहूकारनी भी मान जाती है। और वह घोड़े के लिए चारा लाने घर के अंदर चली जाती है और सामने खड़े लोग सभी इधर-उधर चले जाते हैं। जसे ने खुद को अकेला पाकर वह जल्दी से घोड़े के सिर पर बीस रुपया और घोड़े के मलद्वार में पाँच रुपया रख देता है।

साहूकारनी जैसे ही घर से बाहर आई, उसने देखा कि घोड़े के सिर पर बीस रुपये पड़े हुए हैं। उसने आश्चर्य भरे स्वर में पूछा, यह पैसे कहाँ से आए? जसे ने उत्तर दिया, साहूकारनी जी, यह कोई साधारण घोड़ा नहीं है। यह घोड़ा प्रति दिन २५ रुपया अपने मलद्वार से निकालता है। यह देखिए, बीस रुपया तो निकाल चुका है, अब ५ रुपया बाकी है। और देखते ही देखते घोड़े ने जसे द्वारा मलद्वार में रखा हुआ पैसा भी साहूकारनी के सामने ही निकाल दिया। साहूकारनी घोड़े का ऐसा चमत्कार देखकर दंग रह गई।

साहूकारनी ने जसे से कहा, हे परदेशी, ऐसे चमत्कारी घोड़े को शहर ले जाना उचित नहीं है। इस चमत्कारी घोड़े को यहीं रख जाए, मैं इसके बदले आपको कुछ पैसे दे दूँगी और आपको शहर जाने के लिए एक घोड़ा भी भेंट करूँगी, अर्थात यह घोड़ा हमारे साथ आपकी एक निशानी के रूप में भी रहेगा। जसे ने कहा, साहूकारनी जी, यह घोड़ा प्रतिदिन 25 रुपया अपने पखाने से निकालता है, ऐसे चमत्कारी घोड़े को आप कुछ पैसों में ही खरीदना चाहती हैं। अब यह तो नहीं हो सकता। यदि आप मुझे पाँच हजार के साथ एक घोड़ा भी देंगी तो मैं तैयार हूँ आपको अपनी यह चमत्कारी घोड़ा देने के लिए।

साहूकारनी जसे को ५००० हजार रुपये के साथ एक घोड़ा देती है और बदले में उस चमत्कारी घोड़े को अपने पास रख लेती है। जसे ने साहूकारनी द्वारा दिए गए पैसे को बैल रँगने वाले पैसे के साथ मिलाकर एक थैले में रख देता है और साहूकारनी के घोड़े पर चढ़कर अपने घर की ओर चल देता है।

जसे घर लौट ही रहा था कि उसे रास्ते में एक छोटी सी नदी के किनारे एक बूढ़ी औरत अपनी जवान बेटी को लिए बैठी हुई थी। जसे ने पूछा, अम्मा, कहाँ जा रही हो और यह लड़की तुम्हारी क्या लगती है? बुढ़िया ने उत्तर दिया, बेटा, यह लड़की मेरी पुत्री है। मैं बहुत गरीब हूँ। अपनी पुत्री को सुखा नहीं दे सकती, इसलिए पुत्री को नेपाल के राजा के दरबार में ले जा रही हूँ, ताकि वह वहाँ खुशी से रह पाए। परन्तु इस नदी में बहुत पानी है, इसे पार करना असम्भव सा लग रहा है। बुढ़िया ने जसे से पूछा, तुम कहाँ जा रहे हो बेटा? अगर हमें भी तुम इस नदी से पार करा देते तो बड़ी कृपा हो जाती।

जसे ने कहा, अरे अम्मा जी, मैं बहुत लोगों के बड़े-बड़े कामों में मदद की है। आप लोगों को तो बस नदी ही पार करानी है, वह तो मैं करवा ही दूँगा। परन्तु अभी मेरा घोड़ा बहुत थक गया है, वो तीन लोगों को एक साथ नहीं उठा पाएगा, इसलिए पहले मैं आपकी बेटी को लेकर छोड़ आऊँगा, फिर आपको लेने आऊँगा अम्मा जी। बुढ़िया ने अचानक से ही जसे से उसका नाम पूछा। बेटा, तुम्हारा

नाम क्या है? जसे ने बातों को घुमाते हुए कहा, अम्मा, मेरे गाँव वालों ने मेरा बड़ा अनोखा नाम रख दिया है। वे मुझे दामाद कहकर पुकारते हैं। मेरा गाँव सरसों फूल से नाम से जाना जाता है।

बुढ़िया जसे की बात पर यकीन कर लेती है। जसे ने बुढ़िया की बेटी को अपने साथ घोड़े में बैठाकर नदी पार कर ली। बुढ़िया दामाद का इंतजार करने लगी कि वह उसकी बेटी को नदी के उस पार छोड़कर उसे लेने आएगा, परन्तु बुढ़िया राह देखते रह गई, दामाद नहीं आया। अब बुढ़िया का सब्र का बाँध टूट चुका था। उसे अपनी बेटी की चिंता होने लगी थी। बुढ़िया नदी के किनारे बैठकर जोर-जोर से रोने लगती है। रास्ते में आते-जाते लोग बुढ़िया से रोने का कारण पूछते तो बुढ़िया कहती, दामाद ने मेरी बेटी को चुराकर ले गया है, अगर कोई भला सज्जन हो तो मुझे मेरी बेटी वापस लाकर दे।

आते-जाते लोगों ने बुढ़िया को समझाते हुए कहते हैं कि आपकी बेटी दामाद के साथ ही तो गई है, तो फिर इसमें रोने की क्या बात है? जसे बुढ़िया की बेटी को एक अंजान गाँव में ले जाता है और उससे विवाह कर लेता है और दोनों वहीं रहकर खेती-बारी करके आनन्दपूर्वक जीवन बिताने लगते हैं और इस प्रकार जसे ने अपनी बुद्धि से धन भी कमा लिया और उसे पत्नी भी मिल गई।

26. ज्ञान से लाभ (ज्ञानबाट फाइदा)

त्रिविक्रमपुर नामक राज्य में एक राजा के दो पुत्र थे। दोनों स्वभाव से भी एक ही थे और एक ही कक्षा में पढ़ते थे। वे दोनों हर काम एक साथ करते थे, चाहे वो शिकार करना हो या भोग-विलास करना हो, दोनों साथ-साथ ही करते थे। उन्हें किसी चीज की कमी नहीं थी। परन्तु पिता के मृत्यु के बाद बड़े भाई को राजा बनाया गया। छोटा भाई ज्ञानचन्द्र केवल राजकुमार बनकर रह गया था, जिसके कारण उसे बहुत दुःख हुआ, क्योंकि उसे किसी के अधीन में रहना पसंद नहीं था, इसलिए वो जंगल की ओर चला जाता है।

एक दिन ज्ञानचन्द्र जंगल में फिरते हुए एक महात्मा की कुटिया में पहुँचे। महात्मा ने ज्ञानचन्द्र से उसका समाचार पूछते हुए कहा, हे राजकुमार, मैं एक जंगल में रहने वाला योगी, आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ, मेरे पास आपको देने के लिए कुछ नहीं है। परन्तु मेरे पास आपके लिए यह चार उपदेश हैं। इन्हीं को ले जाओ, यह आपको भविष्य में अवश्य काम आएगा। मेरे चार उपदेश कुछ इस प्रकार हैं-

1. परदेश में बिना आश्रम के न रहें।
2. किसी भी परिस्थितियों में लोभ न करें।
3. जिस दिन राजा बन जाओ, उस दिन दिन सोना नहीं।
4. बिना सोचे-समझे कोई कार्य न करना।

इन चार उपदेशों को सुनने के बाद ज्ञानचन्द्र महात्मा को प्रणाम करते हुए अपने रास्ते चला गया। एक दिन शाम के समय राजकुमार ज्ञानचन्द्र घूमते-फिरते एक नगर के नजदीक पहुँच जाता है। ज्ञानचन्द्र ने देखा कि एक पेड़ के नीचे दस-बारह परदेशी वहाँ कुछ दिनों से रह रहे थे। उनको वहाँ रहता देखकर ज्ञानचन्द्र को भी रहने का मन होने लगा, परन्तु उसे उसी वक्त महात्मा का पहला उपदेश याद आया – परदेश में बिना आश्रम के न रहें। इस उपदेश का स्मरण होते ही वहाँ रहने का विचार छोड़कर ज्ञानचन्द्र आश्रम के तलाश में निकल जाता है।

ज्ञानचन्द्र को आश्रम के तलाश में ज़्यादा दूर तक जाना नहीं पड़ा, कुछ दूर चलते ही आगे एक मंदिर दिख जाता है। वहाँ जाते ही मंदिर के पुजारी ने उसे बड़े आदरपूर्वक उसका स्वागत किया और उसे एक रात रुकने का स्थान भी दिया। ज्ञानचन्द्र ने भी सुखपूर्वक रात गुजारी।

संयोगवश, उसी रात को ही राज महल में चोरी हो गई। पूरे राज महल में हलचल मच उठी, सिपाही चोर की तलाश में जुट जाते हैं। चोर की तलाश करते हुए सिपाही उसी पेड़ के नीचे जा पहुँचते हैं जहाँ वे परदेशी रुके हुए थे और उन्हीं को संदेह के घेरे में ले लिया जाता है। जब यह बात ज्ञानचन्द्र को पता चली तो उसे महात्मा के पहले उपदेश का महत्व समझ आया कि वहाँ रात बिताना दुःखदायक हो सकता है। ज्ञानचन्द्र को उन परदेशियों पर बहुत दया आई, परन्तु वह कुछ नहीं कर सकता था।

ज्ञानचन्द्र पुजारी से विदा लेकर मंदिर से निकल जाता है। इस बार वह किसी नगर में एक परिवार के पास पहुँचता है। वो परिवार क्षत्रिय था। उस परिवार का एक पुरुष था जो नशा करके अपनी पत्नी को मारता था, उसकी पत्नी अत्यंत सुन्दर थी। उस दिन भी वह अपनी पत्नी को नशे में मार ही रहा था कि ज्ञानचन्द्र आ पहुँचा। पत्नी ने ज्ञानचन्द्र को देखते ही उसके शरण में गिर जाती है और उसे अपने ही पति से बचाने की गुहार लगाते हुए कहती है, मुझे इस कसाई से बचा लो परदेशी, यह पागल मुझे मार डालेगा। दया करके मुझे भी अपने साथ ले चलो। जीवन भर आपको ही अपना स्वामी मानकर

आपकी पूजा करूँगी, अगर आप कहें तो मैं अपनी सारी जेवरात भी साथ ले जाऊँगी। जब उसे ऐसी सुन्दर पत्नी मिलने वाली थी, तो ज्ञानचन्द्र के मन में एक पल के लिए लोभ उत्पन्न हो जाता है, लेकिन उसे तुरंत महात्मा का दूसरा उपदेश याद आता है कि किसी भी परिस्थितियों में लोभ नहीं करना चाहिए। और वह स्त्री से कहता है, हे देवी, आप कह तो ठीक रही हो, परन्तु क्या करूँ, मेरे घर में पहले से ही मेरी चार पत्नियाँ हैं। वे चार दुष्ट औरतें आपको कभी खुश रहने नहीं देंगी। आप क्या सोचती हो, क्या यह विवाह उचित है? पत्नी ज्ञानचन्द्र की बात सुनकर निराश होकर घर से बाहर निकल जाती है। ज्ञानचन्द्र अंदर आराम करने लगता है।

अगली सुबह घर के मालिक का नशा उतर जाता है। अपनी पत्नी को घर में न पाकर ज्ञानचन्द्र से पूछता है कि तुमने मेरी पत्नी को कहीं देखा है? ज्ञानचन्द्र उसे रात की सारी घटना कह सुनाता है। पति ने अपनी पत्नी के गुमशुदा होने की रिपोर्ट थाने में दर्ज कराई और तुरंत कार्रवाई भी शुरू की गई। अनेक सिपाही उस स्त्री की खोज में जुट गए। अंत में पता चलता है कि वह स्त्री किसी दूसरे परदेशी के साथ भागते हुए पकड़ी गई है। उस परदेशी को दूसरे की पत्नी को भगाने के जुर्म में दंड दिया गया और स्त्री को उसके पति द्वारा खूब पीटा गया।

यह सब तमाशा देखकर ज्ञानचन्द्र को महात्मा के दूसरे उपदेश की स्मृति होती है, जिससे वह कुछ देर के लिए सहम जाता है। अब ज्ञानचन्द्र वहाँ से भी आगे बढ़ जाता है। इसी चलते-चलते वह फिर किसी राज्य की राजधानी में पहुँच जाता है।

शाम होने को चला था, ज्ञानचन्द्र के हाथ में एक फूटी कौड़ी नहीं थी। कहाँ रहे, क्या करे? उसे कुछ समझ में नहीं आ रहा था। ज्ञानचन्द्र चिंता में डूबा एक छोटी-सी सड़क पर चले जा रहा था। अचानक उसे सुनाई पड़ा कि सामने वाले घर से कई स्त्री-पुरुषों के विलाप करने की आवाज़ आ रही

है। वह बड़े उत्सुक होकर घर के अंदर घुस जाता है। घर के अंदर बैठे लोग एकदम से सहम जाते हैं और ज्ञानचन्द्र से पूछते हैं, तुम कौन हो परदेशी? ऐसे कैसे घर में घुस गए हो?

ज्ञानचन्द्र ने उत्तर दिया, मैं परदेशी हूँ, पैसे नहीं होने के कारण मैं कई दिनों से भूखा हूँ। मैं यहाँ यह सोचकर आया हूँ कि आप लोग मुझे एक वक्त का खाना और एक रात रहने के लिए जगह दें। परन्तु आप सब यहाँ किस कारण से एकत्र हुए हैं, क्या मैं जान सकता हूँ। ज्ञानचन्द्र की ऐसी बातें सुनकर घर का मालिक भावुक हो जाता है और उसे बड़े ही आदरपूर्वक घर के अंदर ले आता है और कहता है, हे परदेशी, आप हमारे घर आए यह तो हमारे लिए बड़े सौभाग्य की बात है, हम आपके सत्कार में कोई कमी नहीं करेंगे, अगर फिर भी हमसे कोई भूल हो जाए तो हमें क्षमा कर देना, क्योंकि हम स्वयं विपत्तियों से घिरे हुए हैं। ज्ञानचन्द्र ने पूछा, बाबा, कैसी विपत्ति? क्या आप लोगों के ऊपर देव का प्रकोप छाया हुआ है? मैं भी अपनी जिन्दगी से निराश हूँ, अगर मेरी जान भी चली जाए तो मुझे कोई दुःख नहीं है।

घर के मालिक ने ज्ञानचन्द्र के सवालों का उत्तर देते हुए कहा, परदेशी, हमारी विपत्तियों के बारे में न ही जानो तो बेहतर है, यह कोई नई बात नहीं है। यहाँ आए दिन किसी न किसी परिवार पर देव के प्रकोप का प्रभाव पड़ता है, इसलिए हमारे राज्य में कोई राजा नहीं है, अगर राज्य में से किसी को राजा बना भी दे तो वह एक ही रात में देव प्रकोप के प्रभाव से मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। इसी कारण आज भी हमारे राज्य की राजगद्दी खाली है।

परन्तु इस राज्य को एक राजा की अति आवश्यकता है, इसलिए प्रत्येक परिवार से राजा बनाए जाते हैं और जिसे राजा बनाया जाता है, वह कुछ ही दिनों में काल के मुख में चला जाता है, अर्थात घर का मालिक घबराते हुए कहता है, आज हमारी बारी है राजा बनने की। हम दोनों तो बूढ़े हो चुके हैं, इसलिए हमें राजा नहीं बनाया जा सकता है। जिस कारण हमें अपने जवान बेटे को भेजना पड़

रहा है और इसी शोक में हम विलाप कर रहे हैं। ज्ञानचन्द्र ने कहा, बाबा, आप चिंता न करें। आपके बेटे को राजा बनाने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी, क्योंकि मैं उसके जगह पर राजा बन जाऊँगा। मेरा इस संसार में ईश्वर के अलावा और कोई नहीं है, यदि मैं मर भी गया तो शोक मनाने वाला कोई नहीं होगा, इसलिए चिंता की बात नहीं है। ज्ञानचन्द्र की बात सुनते ही घर के मालिक बूढ़ा और बूढ़ी खुश हो गए। खूब आदर-सत्कार के साथ दोनों ने ज्ञानचन्द्र को भोजन कराया गया।

ज्ञानचन्द्र ने अभी ही भोजन समाप्त किया था कि मंत्री अपने सेवकों के साथ आ पहुँचता है। ज्ञानचन्द्र भी आनन्दपूर्वक मंत्री के साथ राज महल पहुँचते हैं। ज्ञानचन्द्र का पूरे मान-सम्मान के साथ राजतिलक कराकर उसे राजा घोषित किया गया। सारे कार्य औपचारिक रूप से पूरा होने के बाद ज्ञानचन्द्र कमरे में आराम करने जाता है। कमरे में जाकर ज्ञानचन्द्र विचार करने लगता है, मैं इस संसार में बस आज भर के लिए हूँ, परन्तु नियति का खेल भी कितना निराला है, मैं अपने ही देश में राजा न बन पाने के कारण देश छोड़कर विदेश चला आया। ईश्वर की कृपा से आज मैं राजा बन गया हूँ, परन्तु खुशी की जगह मुझे दुःख महसूस हो रहा है। ज्ञानचन्द्र अपने मन ही मन में सोचता है, कैसे लोग राजा बनने के बाद मर जा रहे हैं? देखते हैं काल कैसे आता है प्राण लेने के लिए, मैं भी एक क्षत्रिय का पुत्र हूँ, इतनी आसानी से अपना प्राण नहीं त्यागूँगा। अब देखते हैं कैसे बचा जाए इस महाकाल से? तब राजा को तुरंत ही महात्मा के तीसरे उपदेश का स्मरण होता है – जिस दिन राजा बन जाओगे, उस दिन तुम्हें नहीं सोना है। ज्ञानचन्द्र तीसरे उपदेश पर विचार करते हुए सोचने लगा, क्या इस उपदेश से मेरा हित हो सकता है? अब तक तो महात्मा जी के सारे उपदेश कारगर हुए हैं। इस उपदेश को अपनाने के अलावा मेरे पास और कोई उपाय नहीं है।

महात्मा के कहे अनुसार ज्ञानचन्द्र ने पूरी रात जागने का निर्णय लिया, परन्तु पूरे दिन भागदौड़ करने के बाद ज्ञानचन्द्र थककर चूर हो गया था। उसे धीरे-धीरे नींद आ रही थी, इतने में ज्ञानचन्द्र ने एक

तलवार निकाला और अपने घुटने का मांस काट दिया, ताकि उसे दर्द के कारण नींद न आए। उसका यह उपाय कारगर रहा, उसे घाव में दर्द और जलन होने लगा, जिसके कारण उसे नींद नहीं आ रही थी। ज्ञानचन्द्र हाथ में नंगी तलवार लिए कोठी टहलने लगे। आधी रात हो चली थी, उसी वक्त महल के बगीचे की ओर से किसी साँप के कराहने की आवाज़ आई। ज्ञानचन्द्र ने खिड़की से झाँककर देखा तो एक भयानक काला साँप उसकी कोठी की ओर आ रहा था। ज्ञानचन्द्र सावधान हो गया, साँप बहुत जहरीला था, साँप के साँसों की गर्मी से ज्ञानचन्द्र की आँखें धीरे-धीरे बंद होने जा रही थी, परन्तु घाव के दर्द से और जीवन के मोह से वह नींद को रोकता रहा और जैसे ही साँप खिड़की के माध्यम से महल के अंदर आने ही वाला था, उसने तलवार से उसे घायल कर दिया, अब साँप दो टुकड़ों में बट गया था। ज्ञानचन्द्र साँप के खतरे से तो बच गया था, परन्तु ज्ञानचन्द्र काल के डर से पूरी रात सो नहीं पाया।

अगली सुबह जब मंत्री हमेशा की तरह मृत राजा का शव लेने राजा के कमरे आया तो ज्ञानचन्द्र को जीवित देखकर वह हैरान रह गया। ज्ञानचन्द्र ने मंत्री को सारी बातें इत्मीनान से बताई और उस मरे हुए साँप को मिट्टी में दफनाने के लिए कहा। ज्ञानचन्द्र ने अनेक लोगों की जान बचा ली थी, जिससे सभी गाँव वाले बहुत खुश थे।

ज्ञानचन्द्र मन ही मन में महात्मा को धन्यवाद देता है, क्योंकि आज वह उसी के उपदेश के कारण जीवित है। इस प्रकार ज्ञानचन्द्र उस राज्य का राजा बने कई वर्ष हो चले थे। और वह उस राज्य में आनन्दपूर्वक अपना जीवन व्यतीत कर रहा था। परन्तु ज्ञानचन्द्र के राजा बनने से मंत्री बिलकुल खुश नहीं था, क्योंकि वह किसी अनजान परदेशी राजा के हुक्म में नहीं रहना चाहता था। मंत्री ज्ञानचन्द्र को मारकर स्वयं राजा बनने का उपाय सोचने लगा। एक दिन मंत्री ने राजा के नाई को अपनी तरफ कर लिया और उसे कहा, हे देख भाई! अगर तुम इस परदेशी राजा को मार दोगे तो मैं तुम्हें राजा बनने के बाद अपना मंत्री बनाऊँगा।

मंत्री ने राजा को मारने का उपाय सोचते हुए नाई से कहा, तुम्हें ज़्यादा परिश्रम करने की आवश्यकता नहीं है, बस तुम जिस छुरी से राजा की दाढ़ी-मूँछ बनाते हो, उसी छुरी में विष लगा देना और दाढ़ी बनाते वक्त एक छोटा सा घाव कर देना, उसी घाव से पूरे शरीर में विष फैल जाएगा और राजा की मृत्यु हो जाएगी। नाई ने भी मंत्री बनने के लोभ में उसकी बात मान ली।

राजा ज्ञानचन्द्र ने महात्मा के उपदेशों को अभी भुलाया नहीं था। उसने तीन उपदेशों की सत्यता का अनुभव तो कर लिया था। अब एक बच गया था, राजा ने महात्मा के द्वारा दिए गए उन चार मौखिक उपदेशों को स्वर्ण अक्षरों में लिखवाकर महल की दीवार पर लटका दिया। सोमवार का दिन था, नाई राजा की दाढ़ी बनाने के लिए महल आता है। मंत्री के कहने अनुसार वह छुरी में विष लगाकर लाया था, परन्तु नाई इस अपराध को अंजाम देने के लिए डर रहा था, इसलिए जब उसने उस विष लगी हुई छुरी को अपने थैले से निकाला तो उसका हाथ काँपने लगता है। डर से नाई का दिल आधा टुकड़ा हो गया था, वह घबराकर इधर-उधर देखने लगा तो अचानक से उसकी नजर दीवार में लगे महात्मा के उपदेश चार पर पड़ती है कि 'बिना सोच-विचारे कोई काम न करें' स्वर्ण अक्षरों में लिखा गया था। नाई ने विचार किया कि यह कोई साधारण उपदेश नहीं है, हो न हो वह बहुत खास है, इसलिए इसे स्वर्ण अक्षरों में लिखकर दीवारों पर लगाया गया है। मुझे यह काम सोच-समझकर ही करना चाहिए। यही मेरे लिए उचित रहेगा।

नाई ने तुरंत उस विष वाली छुरी को थैली में रख दिया और दूसरी छुरी निकालकर राजा ज्ञानचन्द्र की दाढ़ी बनाने लगता है। राजा ज्ञानचन्द्र ने नाई की घबराहट देखकर आश्चर्य हो रहा था कि एकाएक उसने अपने हाथ में रखा हुआ छुरी को थैली में रखकर दूसरी छुरी निकाली, जिससे ज्ञानचन्द्र को उस पर शंका हो जाती है। तथा वह नाई का हाथ पकड़ लेता है, जैसे ही राजा ने नाई का हाथ

पकड़ा, वह घबरा जाता है और कहने लगता है, महाराज! मैं बेकसूर हूँ! यह सब किया कराया मंत्री का है, उन्होंने ही मुझे मंत्री बनने का लोभ दिया था। इसमें मेरा कोई बेकसूर नहीं है।

उसी वक्त दरबार में आए मंत्री को राजा के सैनिकों ने पकड़कर उसे बंदी बना लिया। और उसे मृत्युदंड की सजा सुनाई गई और साथ ही नाई को देश निकाला की सजा दी गई। राजा ज्ञानचन्द्र को महात्मा के चारों उपदेशों का चमत्कार देखकर कहता है, ज्ञान से बड़ा लाभ होता है, मुझे आज पता चला। और इस प्रकार राजा ज्ञानचन्द्र बड़े-बड़े महात्माओं का आदर-सत्कार करके उनसे ज्ञान लेने लगे थे और उन्हीं के उपदेशों के अनुसार सारा काम करते थे।

27. चट्टू- छट्टू- उपरचट्टू (चट्टू-छट्टू-उपरचट्टू)

दशहरा आने वाला था, परन्तु चट्टू के पास त्यौहार मनाने के लिए एक भी पैसा नहीं था। चट्टू ने कुछ उपाय करने का निर्णय लिया। चट्टू ने अपनी बुद्धि से दस माना (अनाज नापने का पात्र) में गोबर भर लेता है और उसी के ऊपर थोड़ी बहुत घी भी मिला देता है और उसे बेचने के लिए बाजार की ओर निकल जाता है। ठीक इसी तरह छट्टू के पास भी त्यौहार मनाने के लिए पैसे नहीं थे, इसलिए वह भी कागज का तलवार बनाकर उसके ऊपर सिगरेट के जैसा पत्ता चिपका देता है और उस तलवार को एक मखमल के कपड़े से बना म्यान में रख देता है और वह भी उसे बेचने के लिए बाजार की तरफ चल देता है।

बाजार में घी बेचने वाला चट्टू और तलवार बेचने वाला छट्टू की मुलाकात हो जाती है। दोनों की बातचीत होती है और दोनों अपने-अपने वस्तुओं का मोल-भाव कर लेते हैं। चट्टू मन ही मन में सोचता है कि छट्टू को एक मुट्ठी घी देकर उससे तलवार लेने में मेरा फायदा है। इधर छट्टू भी सोचता है, यदि मुझे इस कागज के तलवार के बदले एक दबा घी मिल जाए तो इसमें कोई नुकसान की बात नहीं है, परन्तु दोनों ही अपने आप को चतुर समझ रहे थे। दोनों ने अपने-अपने समान एक-दूसरे को देते ही तुरंत वहाँ से चले जाते हैं, क्योंकि उन्हें अपने भेद खुलने का डर था। चट्टू ने अभी उस तलवार को खोलकर नहीं देखा था और न ही छट्टू ने घी चखा था।

परन्तु दोनों ने लगभग एक मील की दूरी तय करने के बाद उनके मन में आया कि एक बार अपने-अपने वस्तुओं की जांच कर ली जाए। चट्टू ने रास्ते में ही उस मखमल के कपड़े से बने म्यान से तलवार निकाला तो उसमें कागज का तलवार देखकर हैरान रह गया। वहीं उधर छट्टू घर पहुँचकर आग जलाता है और डब्बे से जब घी निकालने लगता है तो उस डब्बे में घी के बदले गोबर मिलता है, जिससे वह भी दंग रह जाता है। दोनों एक-दूसरे को सबक सिखाने के लिए दौड़ते हुए उसी स्थान पर

आते हैं जहाँ वो पहली बार मिले थे, परन्तु जब दोनों एक-दूसरे के आमने-सामने आते हैं तो दोनों ही एक-दूसरे को देखकर हँसने लगते हैं। चट्टू कहता है, मित्र, हमें ईश्वर ने मिलाया है ताकि हम दोनों मिलकर अपनी बुद्धि का प्रयोग कर सकें, क्योंकि एक से भले दो होते हैं।

अब चट्टू और छट्टू दोनों अच्छे मित्र बन गए थे और दोनों लोगों को ठगने के लिए निकल परदेश की ओर पड़े। दोनों चतुर मित्र चलते-चलते एक गाँव में पहुँच जाते हैं और उसी दिन उस गाँव के मुखिया का देहांत हुआ था। यह दृश्य देखकर दोनों मित्र ने गाँव वालों को ठगने की योजना बनाई। चट्टू गाँव से बाहर रहकर अपने काम में जुट जाता है। उधर छट्टू कंकाल शब्दों में विलाप करता हुआ मुखिया के घर में प्रवेश करता है। एक अजनबी व्यक्ति को ऐसे रोते आता देख मुखिया के बेटे ने पूछा, हे युवक, आप कौन हैं? और कहाँ से आए हैं? मैंने आपको नहीं पहचाना।

छट्टू ने उत्तर देते हुए कहा, भैया, मैं आपका भाई हूँ। आपके पिता जी ने मेरी माँ से भी विवाह किया था, आपको तो पता ही होगा। जब पिता जी खेप के लिए बाहर जा रहे थे तब उन्होंने मेरी माँ को रास्ते देखा था और वे मेरी माँ की सुन्दरता से मोहित हो गए थे और उन्होंने उसी दिन मेरी माँ के घर वालों से बात करके उनसे विवाह कर लिया था, लेकिन खेप के कारण वे माँ को अपने साथ नहीं ले गए। इसलिए मेरी माँ अपने मायके में ही रही और पिता जी खेप के लिए चले गए थे।

इस तरह वर्षों इंतजार के बाद भी पिता जी नहीं लौटे तो इसी बीच माँ को एक साँप ने काट लिया, जिसके कारण उसका स्वर्गवास हो गया। और जब माँ की मृत्यु के बाद पिता जी घर लौटे तो मैं केवल दो महीने का था। ऐसी परिस्थितियों में पिता जी को नाबालिक शिशु को दूध पिलाना एवं उसका देखभाल करना बहुत कठिन था उनके लिए, इसलिए पिता जी ने मुझे मामा के घर में ही छोड़ दिया, परन्तु पिता जी मेरे सभी खर्चे उठाते थे। यह तो पता ही होगा आपको? पिछले साल पिता जी

खेप में जाते हुए मुझे मिलने आए थे तो कह रहे थे, और कितना मामा के घर में रहोगे बेटा, घर चलो मेरे साथ, वहाँ तुम्हारे दो बड़े भाई हैं, उनके साथ रहकर घर का कारोबार संभालो।

मैं उसी समय पिता जी के साथ आने के लिए तैयार था, परन्तु अचानक वहाँ कुछ काम आ गया, जिसके कारण मैं नहीं आ सका और पिता जी ने भी कहा कि सारे काम खत्म करके अगले दशहरा तक घर लौट आना, अर्थात मैं आज इसलिए आया हूँ। मुखिया के बेटे ने कहा, मैं तो तुम्हें नहीं पहचानता हूँ। इस समय पिता जी की रीति-रिवाज करना ज़्यादा जरूरी है, ताकि उनकी आत्मा को शांति प्राप्त हो। इस विषय पर हम बाद में भी बात कर सकते हैं। चतुर छट्टू भी मुखिया के बेटों के साथ अपना सिर मुंडन कर सफेद वस्त्र धारण कर मुखिया के सारे रीति-रिवाज में भाग लेता है। सारे रीति-रिवाज के पूरे होने पर छट्टू मुखिया के बेटे से कहता है, भैया! यहाँ मेरा गुजरा नहीं हो सकता। यह गाँव मुझे बेगाना सा लग रहा है, आपसे अनुरोध है कि मुझे मेरे हिस्से का जायदाद दे दीजिए, जिससे मैं मेरा रोजगार का जरिया बनाकर और पिता जी की इच्छा पूरी कर सकूँ।

मुखिया के बेटे ने कहा, देख भाई, मैं बिना जांच-पड़ताल के तुम्हें एक पैसा नहीं दूँगा, क्योंकि पिता जी ने आज तक कभी भी उनकी दूसरी विवाह के बारे में हमें नहीं बताया, तो हम कैसे मान लें तुम्हारी बात मानकर तुम्हें जायदाद दे दें। पहले जाकर साक्षी-गवाह लेकर आओ, तब फैसला होगा इस विषय पर। छट्टू ने कहा, भैया, यह साक्षी-गवाह लेकर आना बहुत झंझट का काम है और इन्हें लेकर आने में पैसा भी लगता है। अभी मेरे पास एक भी पैसा नहीं है, उन्हें मैं नहीं ला सकता हूँ। मैं झूठ नहीं बोल रहा हूँ, इसके साक्षी परमात्मा हैं, अगर मैं एक दिन पहले आ गया होता तो पिता जी से भेंट हो जाती, तो आज मुझे यह सब नहीं सहना पड़ता, क्योंकि पिता जी समाधान का हल निकाल देते, परन्तु क्या करूँ, जिसका भाग्य ही खराब हो तो उसको दुःख ही तो मिलता है। छट्टू ने मुखिया के बेटे

से कहा, भैया, आपको साक्षी-गवाह चाहिए तो पिता जी की कब्र के पास जाना होगा, अगर मैं सच्चा हूँ तो पिता जी स्वयं स्वर्ग से बोलेंगे। अगर ऐसा नहीं होगा तो मैं दूसरा साक्षी खोजकर लाऊँगा।

ठग का सरदार छट्टू पूरे गाँव वालों को विश्वास दिलाने के लिए मुखिया की कब्र पर चलने को कहता है। सभी गाँव वाले भी उसकी बात सुनकर मुखिया की कब्र के पास जाते हैं। छट्टू वहाँ पहुँचते ही गाँव वालों के सामने रोने का ढोंग करता है और आसमान की ओर देखकर कहता है, पिता जी, मैं संकट में हूँ। मुझ पर दया कीजिए, यदि आपने बड़े भैया को आज्ञा नहीं दी तो मुझे मेरे हिस्से की संपत्ति नहीं मिलेगी। मैं भी आपका बेटा हूँ, इसका परिणाम आपको देना होगा पिता जी। छट्टू के ऐसे कहते ही कब्र से अचानक एक आवाज़ आई, "छट्टू मेरा ही पुत्र है, इसे इसका अंश दे दिया जाए।" यह आवाज़ सुनते ही सभी गाँव वाले आश्चर्यचकित रह गए। अब छट्टू ने पूरे गाँव वालों का विश्वास जीत लिया था। सभी गाँव वालों ने मिलकर छट्टू को उसके हिस्से की संपत्ति दे दी, परन्तु छट्टू ने कहा, बर्तन-वर्तन लेकर क्या करूँ, कहाँ ले जाऊँ। भैया, आप मुझे जो देना चाहते हो वह मुझे नकद में दे दीजिए।

फलस्वरूप छट्टू के हिस्से में एक लाख एक रुपया, डोको भर हीरा-मोती और बड़ा सा सोने का हीरे से जड़ा हुआ एक कटोरी मिल गया। इसके बाद छट्टू आनन्दपूर्वक उसके हिस्से की सारी संपत्ति लेकर चट्टू से बिना बताए ही वह दूसरे नगर की ओर चल देता है। वह बहुत खुश था, क्योंकि उसने इस बार बड़ा हाथ मारा था। परन्तु इस सफलता में वह चट्टू के योगदान को भूल चुका था। कब्र से पिता जी के रूप में बोलने वाला और कोई नहीं बल्कि चट्टू ही था। दोनों की योजना के अनुसार छट्टू को गाँव जाकर नकली बेटा बनना था तो चट्टू को उसके मरे हुए पिता की आवाज़ निकालनी थी, इसलिए गाँव वालों के कब्र पर पहुँचने से पहले ही चट्टू ने एक बड़ा सा गड्ढा कब्र के समान तैयार किया और उसमें रात भर छिपा रहा और जैसे ही छट्टू गाँव वालों को लेकर कब्र पर पहुँचता है, वह छट्टू को मुखिया की आवाज़ में अपना बेटा बताता है।

चट्टू गाँव से बाहर छट्टू का राह देखता रह गया, परन्तु वह नहीं आया। अंत में चट्टू गाँव में जाता है, जिससे उसे सारी बातें समझ आ जाती हैं कि छट्टू ने उसे भी ठग लिया है। अब वह छट्टू को पकड़ने की योजना बनाता है, उसने एक जोड़ा खरीदा और उसे पहनकर छट्टू के पीछे उसे खोजने के लिए निकल पड़ता है। अगले दिन चट्टू उसी नगर में पहुँच जाता है जहाँ छट्टू रुका हुआ था। चट्टू उस रात तो चुप रहा, क्योंकि छट्टू बहुत थका हुआ था, बोझ उठाने के कारण, इसलिए वह भी चुपचाप वहीं सो जाता है। अगली सुबह फिर छट्टू अपना सारा सामान लिए निकल जाता है। चट्टू भी सही मौका देखकर उसका पीछा करने लगता है। चलते-चलते दोनों एक सुनसान जंगल में पहुँच जाते हैं। अब चट्टू मौका मिल चुका था छट्टू को सबक सिखाने का, वह छुपते-छुपाते दबे पाँव से छट्टू के आगे निकल जाता है और अपना एक जूता रास्ते रखकर वह आगे बढ़ जाता है और फिर कुछ ही दूरी में उसी तरह दूसरा जूता भी रख देता है और चट्टू तमाशा देखने लगा।

छट्टू ने पहला जूता देखते ही कहता है, अरे! यह तो बहुत सुन्दर और नया है जूता, परन्तु एक जूते का क्या काम है, रहने देता हूँ, लगता है किसी व्यापारी से गिर गया होगा। वह जूता बेकार समझकर आगे बढ़ जाता है, थोड़ी दूर चलने के बाद फिर उसे उसी जूते का दूसरा जोड़ा रास्ते पर पड़ा हुआ दिखाई देता है। अब उसे अफसोस होने लगता है कि उसने पहले वाले जूते को क्यों छोड़ दिया। जूते तो बहुत अच्छे लगे, जिसे छोड़ा नहीं जा सकता था और उसके मन में लोभ भी आ गया था, लेकिन वह क्या करता, उसके पास पहले से ही बहुत बोझदार वाली वस्तुएँ थीं। उन वस्तुओं को लेकर फिर उसी जगह जाने की हिम्मत नहीं बची थी छट्टू के पास। अब वह सोचने लगा, इस जंगल में मेरे अलावा और कोई नहीं है, क्यों न मैं इन वस्तुओं को यहीं रखकर उस जूते को ले आऊँ।

छट्टू ने वस्तुओं को जंगल में ऐसी जगह पर रखा जहाँ किसी की भी नजर न पड़े और वह उस जूते को लेने के लिए वापस चला जाता है। चट्टू को सही मौका मिल गया था, उसने छट्टू के वस्तुओं

का बोरा उठाकर चल दिया। जब छट्टू जूता लेकर लौट आया तो अपनी वस्तुओं को न पाकर वह घबरा जाता है। उसने ध्यानपूर्वक इधर-उधर देखने पर छट्टू को आदमी के पैर का निशान दिख जाता है।

छट्टू उसी पैरों के निशान को देखकर उसके पीछे-पीछे चल देता है और कुछ ही दूर चलने के बाद उसे चट्टू दिख जाता है, जिससे वह सारी बातें समझ जाता है। पहले तो दोनों खूब झगड़ने लगते हैं, फिर कुछ ही देर बाद दोनों में सुलह भी हो जाती है। दोनों ने मुखिया के घर से मिले धन को आधा-आधा बाँट लिया, परन्तु सोने का एक कटोरा रह जाता है, उसे कैसे बाँटें? छट्टू ने कहा, मित्र, किसी गाँव में जाकर सोनार से कटवाकर दोनों अपना-अपना हिस्सा ले लेंगे। चट्टू ने भी सहमति दे दी और दोनों ने अपना सामान उठाकर सोनार के पास चले जाते हैं। कटोरा छट्टू के हाथ में था।

शाम के समय छट्टू और चट्टू एक गाँव में पहुँच जाते हैं, वहाँ एक उपरचट्टू नाम का बनिया रहता था। दोनों ने उस रात बनिया के घर में बिताने का सोचा और बनिया ने भी उसे स्वीकृति देते हुए रात में रुकने के लिए कहा। दोनों मित्र खाना-पीना खाकर सो जाते हैं। छट्टू को यह चिंता थी कि कहीं उनकी सोने की कटोरी कोई चोरी न कर ले, इसलिए वह कटोरी में पानी भरकर अपनी छाती पर रखकर सोता है, क्योंकि कोई अगर उस सोने की कटोरी को चुराने की कोशिश करेगा तो कटोरी के पानी से उसकी नींद टूट जाएगी।

इस तरह छट्टू और चट्टू के सो जाने के बाद उपरचट्टू उन्हें देखने के लिए कमरे में जाता है, छट्टू को ऐसे छाती के ऊपर कटोरी में पानी भरकर रखता देखकर उपरचट्टू के मन में भी विचार आया कि यह कटोरी अवश्य बहुत कीमती होगी, इसलिए यह परदेशी अपनी छाती पर रखकर सो रहा है। उसने उस कटोरी को चुराने का सोचा और उसने तम्बाकू की चिलम से कटोरी का सारा पानी पी जाता है और कटोरी छाती के ऊपर से उड़ा ले जाता है। चतुर छट्टू इस सबसे बेखबर गहरी नींद में सो रहा था।

सुबह जब छट्टू की नींद खुली तो वह सबसे पहले उस सोने की कटोरी को खोजने लगा। जब कटोरी नहीं मिला तो वह चट्टू को चोर समझने लगा और दोनों आपस में लड़ने लगे। दोनों को लड़ता देखकर उपरचट्टू ने कहा, सुनो भाई! यह मेरा घर, कोई लड़ने की जगह नहीं है। मैंने तुम लोगों पर दया करके एक रात बिताने को जगह दी, तुम तो लड़ने ही लगे। यहाँ तुरंत मेरे घर से निकल जाओ तुम दोनों, बाहर जाकर लड़ाई करना। इस प्रकार लड़ने के चलते दोनों के हिस्से का धन भी चोरी हो गया था, अब दोनों चुपचाप बनिया के घर से निकल जाते हैं और अपने-अपने घर चले जाते हैं।

28. चोर कौन है (चोर कुन हो)

एक देश में राजा, मंत्री, कोतवाल और सेठ रहते थे, उनके बेटों में बड़ी घनिष्ठ मित्रता थी। एक दिन चारों मित्रों ने पढ़ाई पर विचार करते हुए कहा, भाइयों, हमें केवल पुस्तक नहीं पढ़नी चाहिए, बल्कि उसमें जो लिखा ज्ञान दिया गया है, उसका अनुभव भी करना चाहिए। प्रत्येक ज्ञान ही सर्वोत्तम है, इसलिए अब हम विदेश जाकर ज्ञान अर्जित करना चाहिए, क्योंकि एक बार अगर हम गृहस्थ जीवन में प्रवेश कर गए तो हमें ज्ञान प्राप्त अथवा घूमने का मौका मिलना मुश्किल हो जाएगा।

चारों मित्रों की सहमति से वे चारों मित्र अपने-अपने आवश्यकता अनुसार खर्च लेकर परदेश की ओर निकल जाते हैं। राजा का बेटा राजकुमार ने बिना किसी को बताए अपनी पगड़ी में एक अनमोल रत्न रख लिया था, क्योंकि परदेश में अगर कठिन समय हो तो उस रत्न को बेचकर अपना जीविका चला सके। चलते-चलते घोर अँधेरा हो चला था। घने जंगल में आस-पास कोई गाँव-बस्ती नहीं थी, ऐसे में चारों मित्र ने तय किया कि घने जंगल में ही रात बिताई जाए। चारों मित्रों ने अपने साथ लाए भोजन को पेट भर खाकर सोने की व्यवस्था करने लगते हैं। घना जंगल होने के कारण चारों मित्रों ने तय किया कि पूरी रात में एक-एक कर चारों मित्र पहरा देंगे। चारों मित्रों में से तीन मित्र सो गए और सेठ का बेटा पहरा देने लगा। आधी रात को अचानक ही सेठ के बेटे की नजर राजकुमार की पगड़ी पर पड़ी। उसने देखा कि एक छोटी सी पोटली में कुछ रखा हुआ है। पोटली के पास जाता है और उसे खोलकर देखता है, उसमें एक अनमोल रत्न था। सेठ का बेटा जात से बनिया था, इसलिए उसके मन में उस अनमोल रत्न को देखते ही लोभ आ गया और उसने उस अनमोल रत्न को अपने पास रख लिया। रात का एक पहर बीत चुका था, अब सेठ के बेटे ने कोतवाल के बेटे को पहरेदारी के लिए जगाया और वह खुद सो जाता है। इसी तरह चारों मित्रों ने एक-एक पहर पहरेदारी कर रात बिताई।

अगली सुबह जब सभी प्रस्थान के लिए तैयार हुए तो राजकुमार ने देखा कि उसकी पगड़ी से वह अनमोल रत्न चोरी हो गया है। राजकुमार को अपने तीन मित्रों पर संदेह होता है और मन ही मन में सोचता है कि हो न हो इन्हीं तीनों में से एक के पास मेरा अनमोल रत्न है। परन्तु राजकुमार ने सोचा, अभी इनसे वैर लेना मेरी मूर्खता होगी। मुझे कुछ ऐसा उपाय सोचना होगा जिससे साँप भी मर जाए और लाठी भी न टूटे, अर्थात मेरा काम भी हो जाए और इन्हें बुरा भी न लगे। राजकुमार बिना कुछ कहे अपने मित्रों के साथ परदेश के लिए निकल पड़ता है। चलते-चलते चारों मित्र एक बड़ी राजधानी में पहुँच जाते हैं। उस राज्य का राजा अत्यंत इमानदार और न्यायप्रिय था। राजकुमार ने जैसे ही यह बात सुनी, वह तुरंत ही अपने मित्रों से छुपते-छुपाते राजा के पास न्याय माँगने पहुँच जाता है। राजकुमार ने राजा को विस्तारपूर्वक सारी बातें कहते हुए कहा, महाराज, मैंने आपके न्यायप्रिय एवं इमानदारी के किस्से बहुत सुने हैं। महाराज, मुझे भी एक ऐसा उपाय बताएँ कि मेरा रत्न भी मिल जाए और मित्रों से मित्रता भी बनी रहे।

राजा ने राजकुमार को आश्वासन देते हुए विदा किया। अगली सुबह राजा ने चारों मित्रों को लाने के लिए महल से चार सिपाहियों को भेजा। सिपाही उन चार मित्रों को पकड़कर दरबार में हाजिर करते हैं। राजा ने बड़े ही आदरपूर्वक उन्हें बिठाते हुए कहा, हे परदेशियों, आज मैं आप सब की बुद्धि परखना चाहता हूँ, इसलिए आप सबको यह कहानी सुननी होगी।

एक देश में एक राजपुत्र और एक मंत्रीपुत्र रहते थे। दोनों बचपन के दोस्त भी थे और दोनों में बहुत प्रेम भी था। एक दिन राजपुत्र ने हँसी-मजाक करते हुए मंत्रीपुत्र से कहा, मित्र, हम दोनों में कितनी समानताएँ हैं न? मंत्रीपुत्र ने कहा, हाँ मित्र, यह सब बातें तो ठीक है, परन्तु हमने विवाह भी एक साथ ही करना चाहिए, नहीं तो हमारी बेइज्जती हो जाएगी। राजपुत्र ने कहा, मित्र, यथासंभव हमारा एक साथ विवाह हो जाए तो अच्छा है। यदि किसी कारणवश हमारा विवाह एक साथ नहीं हुआ तो हम

दोनों को एक प्रतिज्ञा लेनी होगी कि जिसकी पहले शादी होगी, वह शादी की पहली रात के लिए अपनी पत्नी को मित्र के घर भेजेगा। मंत्रीपुत्र भी अपने मित्र की बात से सहमत हो जाता है। दुर्भाग्यवश राजपुत्र की पहले शादी हो जाती है। वह प्रतिज्ञा का पालन करने के लिए तैयार था। राजपुत्र ने अपनी पत्नी को सारी बातें बताते हुए कहा, हे प्रिय, मैं आपका पति हूँ, मेरी प्रतिज्ञा का पालन करना आपका कर्तव्य है। आपको किसी भी कीमत में मेरे मित्र के पास जाना ही होगा। राजपुत्र की पत्नी भी मान जाती है। रात के समय राजकुमार की पत्नी हीरे-मोती से लदी हुई मंत्रीपुत्र के पास जाने के लिए निकल जाती है। रास्ते में राजकुमार की पत्नी को अकेले ऐसे गहनों में लदा देखकर चार चोर उसके पीछे पड़ जाते हैं। पत्नी ने उन चोरों को ऐसे घिरता देखकर उन्हें अपनी सारी व्यथा सुनाते हुए कहती है, मैं आप सबसे अनुरोध करती हूँ कि मुझे अभी जाने दो, क्योंकि मुझे अपने पति की प्रतिज्ञा का पालन करना है। मेरी कृपया श्रृंगार को भंग मत करो। मैं जब मंत्रीपुत्र के घर से लौटूँगी तो तुम लोगों को यह सारे गहने दे जाऊँगी।

वे चार चोर राजकुमार की पत्नी की बात सुनकर आश्चर्यचकित रह जाते हैं, परन्तु उन्हें पता था कि राजकुमार की पत्नी कभी झूठ नहीं कहती है। उन्होंने राजकुमार की पत्नी को जाने की इजाजत दे दी। राजकुमार की पत्नी मंत्रीपुत्र के यहाँ पहुँच जाती है। मंत्रीपुत्र ने अपने मित्र की पत्नी को देखते ही कहा, हे राजकन्या, आपके पति मेरे मित्र होने के साथ-साथ हमारे अन्नदाता भी हैं। राजकुमार मेरे लिए पिता के समान हैं और आप माता के समान, मैं आपके साथ कुछ गलत करने का सोच भी नहीं सकता। मेरे मित्र ने अपनी प्रतिज्ञा का पालन किया, मैं इसी में बहुत खुश हूँ। हे आप, अब घर लौट जाइए। राजकन्या राजकुमार की पत्नी मंत्रीपुत्र की सत्यता देखकर बहुत प्रसन्न हो जाती है।

राजकन्या घर की ओर निकल पड़ती है, उधर वे चारों चोर रास्ते में उसकी प्रतीक्षा में थे। राजकन्या को आता देख चारों चोर उसकी ईमानदारी से बहुत प्रसन्न होते हैं और बिना कुछ लिए ही

जाने को कहते हैं। राजकन्या भी प्रसन्न होकर अपने पति के पास पहुँच जाती है और इस प्रकार यह कथा यहीं समाप्त हो जाती है। अब राजा ने उन चारों मित्रों को अलग-अलग बैठाकर पूछा, इस कथा में आपको सबसे सच्चा कौन लगा? सबसे पहले राजा ने परदेशी राजकुमार से पूछा तो उसने उत्तर दिया, महाराज, मुझे तो राजपुत्र सबसे सच्चे लगे, क्योंकि उन्होंने बचपन में हँसी-मजाक के दौरान जो प्रतिज्ञा ली थी, उसका पालन करते हुए उसने अपनी पत्नी को अपने मित्र के पास भेज दिया। यह अपने आप में बहुत बड़ी बात है, इसलिए मेरे अनुसार इस कथा में राजपुत्र सबसे सच्चा व्यक्ति है। और जब राजा ने यही सवाल मंत्रीपुत्र से पूछा गया तो उसने उत्तर दिया, महाराज, मेरी नजर में राजकन्या सबसे सच्ची लगी, क्योंकि वह अपने पति के द्वारा ली गई प्रतिज्ञा को पूरा करने के लिए आधी रात को अकेली स्त्री पूरे सोलह श्रृंगार कर अपने पति के मित्र के पास जाती है।

अब राजा ने कोतवाल के बेटे से पूछा तो उसने उत्तर दिया, महाराज, मेरी नजर में भी राजकन्या ही सबसे सत्यवादी स्त्री है, उसने अपने पत्नी धर्म के कर्तव्य को निभाया ही, साथ ही उसने रास्ते में मिले चोरों को दिया गया वचन भी पूरा करने के लिए लौट आती है, उसमें ईमानदारी कूट-कूट के भरी हुई है।

इसलिए सत्यवादी का श्रेय राजकन्या को ही जाता है। अंत में राजा ने यही प्रश्न बनिया के पुत्र से पूछा तो उसने उत्तर दिया, महाराज, मेरी नजर में सबसे सच्चे वे चार चोर हैं, जिन्होंने राजकन्या को गहनों से लदा हुआ देखकर भी उसे जाने की इजाजत देना, यह अपने आप में बहुत बड़ी बात है। इसलिए मेरे विचार से उन चार चोरों से सच्चे और कोई नहीं है। यह उत्तर सुनते ही राजा ने बनिया के पुत्र से कहा, हे परदेशी, तुम्हारे अंदर लोभ की भावना बहुत है, इसलिए तुमने राजपुत्र का रत्न भी चुराया है। लाओ, वह अनमोल रत्न मुझे दे दो। मैं बिना किसी से कुछ कहे राजकुमार को लौटा दूँगा। ऐसा करने से तुम लोगों की बचपन की दोस्ती खराब नहीं होगी और आपसी प्यार भी बना रहेगा।

अगर तुमने उस अनमोल रत्न को अपने पास रख लिया तो इससे तुम्हारी दोस्ती में दरार आ जाएगी और रत्न बहुत अनमोल है, इसे छुपाया नहीं जा सकता, कुछ दिनों में राजकुमार को पता चल ही जाएगा। राजा की बातें सुनकर बनिया का पुत्र सिर आत्मग्लानि से झुका देता है। और इस तरह बनिया के पुत्र ने राजा को राजकुमार का अनमोल रत्न दे दिया और राजा ने भी उस रत्न को ले जाकर राजपुत्र को सौंप दिया। और बड़े ही आदरपूर्वक उन चारों मित्रों को विदा कर दिया और वे भी अपने राज्य की ओर लौट जाते हैं।

29. सपना का प्रेम (सपनाको प्रेम)

एक दिन की बात है, आधी रात के समय आकाश में एक दानव उड़ता हुआ जा रहा था। एकाएक उसकी नजर कंचनपुर की राजकुमारी मृगावती पर पड़ी। उस समय राजकुमारी मृगावती अपने शयनकक्ष में हीरे-मोतियों से सुसज्जित बिस्तर पर आराम कर रही थी। दानव राजकुमारी मृगावती की सुन्दरता पर मोहित हो जाता है और वह मन ही मन में उसकी प्रशंसा कर रहा होता है कि उसकी मुलाकात अचानक रास्ते में एक अप्सरा से हो जाती है। दानव को इतना प्रसन्न देखकर अप्सरा ने पूछा, हे दानवराज, आज आप बहुत प्रसन्न लग रहे हैं, क्या बात है?

दानव ने उत्तर दिया, क्या कहूँ, आज मैं जब कंचनपुर से होते हुए आ रहा था तो मैंने एक अत्यंत सुन्दरी राजकुमारी को देखा। आहा! कंचनपुर की राजकुमारी इतनी सुन्दर थी कि साक्षात् लक्ष्मी लग रही थी। अप्सरा ने ईर्ष्या भाव से कहा, बस करो। आज मैं भी रतनपुर की ओर से लौट रही थी तो मेरी भी नजर सहसा रतनपुर के राजकुमार पर पड़ी। विधाता ने उसे रंग-रूप से भरपूर सवारा है। साक्षात् कामदेव लगता है। तुम्हारी राजकुमारी मेरे राजकुमार से ज़्यादा सुन्दर कदापि नहीं हो सकती। दानव ने कहा, नहीं-नहीं अप्सरा! मेरी राजकुमारी अत्यंत सुन्दर है, अगर तुम्हें मुझ पर यकीन नहीं है तो चलो मेरे साथ स्वयं देख लो।

अप्सरा दानव के साथ चलने के लिए तैयार हो जाती है। जब दोनों कंचनपुर पहुँच जाते हैं, तब अप्सरा ने राजकुमारी मृगावती को देखा तो वह भी उसकी सुन्दरता पर मोहित हो गई और उसकी प्रशंसा करने लगी। अप्सरा और दानव ने उनकी सुन्दरता को देखकर विचार किया कि अगर हम इन सुन्दर युवक और युवती को मिला दें तो यह संसार की सबसे सुन्दर जोड़ी होंगी, अर्थात इन्हें मिला

देना ही उचित है। एक दिन राजकुमारी मृगावती गहरी नींद में अपने महल में सो रही होती है, उसी वक्त दानव और अप्सरा दबे पाँव से राजकुमारी के कक्ष में आते हैं और उसे उठाकर रतनपुर के राजकुमार के पास ले जाकर राजकुमार के शयनकक्ष में लिटा देते हैं, उसके बाद दोनों छिप जाते हैं। जब एकाएक राजकुमार की नींद खुलती है तो उसने देखा कि उसके पास एक परम सुन्दरी युवती सो रही है, देखकर वह बहुत आश्चर्यचकित हुआ और वह एकदम से उठकर बैठ जाता है, अब राजकुमारी की नींद टूट गई थी। इतने में युवती की नींद भी टूट जाती है और वह भी अपने सामने अत्यंत सुन्दर युवक को देखकर आश्चर्यचकित हो गई। राजकुमारी ने बड़े ही प्रेमपूर्वक पूछा, हे युवक, आप कौन हो? और मैं यहाँ कैसे आई? मैं तो अपने महल में थी।

राजकुमार ने उत्तर देते हुए कहा, राजकुमारी, मैं भी कुछ नहीं जानता कि आप यहाँ कैसे आईं। मैं रत्नपुर का राजकुमार हूँ, यह मेरा महल है। शाम को मैं भोजन करके सो गया था और एकाएक आँख खुली तो सामने आपको पाया। यदि आपको इस आश्चर्यजनक भेंट का कारण पता है तो कृपया मुझे भी बता दीजिए। राजकुमारी ने कहा, हे राजकुमार, मैं भी कंचनपुर की राजकुमारी हूँ, मेरा नाम मृगावती है और आपकी तरह मैं भी रात को भोजन करके सो गई थी और अभी मेरी आँखें खुलीं तो मैंने खुद को यहाँ पाया। इतनी ही बातचीत में दोनों के मन में एक-दूसरे के प्रति प्रेम की भावना उत्पन्न हो चुकी थी। अब दोनों प्रेमी जोड़े कुछ समय तक एक-दूसरे को निहारते रहे, फिर राजकुमार ने कहा, हे मेरी प्रिय, जिस भी भगवान ने हमें आज मिलाया है, वही हमें दोबारा से एक करेंगे। फिर राजकुमार ने कहा, आओ प्रिय, हम एक-दूसरे से प्यार की निशानी का आदान-प्रदान करें और दोनों ने एक-दूसरे को प्यार की निशानी अंगूठियाँ पहनाई।

सुबह होने ही वाली थी। अप्सरा और दानव ने फिर से अपनी जादुई शक्ति से दोनों प्रेमियों को गहरी नींद में कर दिया। और फिर से राजकुमारी मृगावती को कंचनपुर महल में ले जाकर छोड़ दिया

और दोनों अपने-अपने रास्ते चले जाते हैं। सुबह हो चली थी, अब जब दोनों की नींद खुली तो दोनों ने खुद को अपने-अपने शयनकक्ष में पाया। इतने में जैसे ही राजकुमार रत्नकुमार की नींद टूट जाती है, वह मृगावती को अपने पास न पाकर एकाएक राजकुमारी मृगावती...! राजकुमारी मृगावती! कहकर पुकारने लगता है और उत्तर न मिलने पर विलाप करने लगता है।

रत्नपुर के राजा-रानी यानि रत्नकुमार के माता-पिता अपने बेटे की ऐसी हालत देखकर बहुत चिंतित पड़ जाते हैं। जब माता-पिता को बेटे के दुःख का कारण पता चलता है तो वे तुरंत अपने चार दूतों को राजकुमारी मृगावती को लाने के लिए भेज देते हैं, परन्तु वे चार राजदूत राजकुमारी मृगावती को कहीं नहीं ढूँढ पाते हैं। दूत चार-छह दिनों में वापस लौट आते हैं और भरे दरबार में राजा को समाचार सुनाते हुए कहते हैं, महाराज, राजकुमारी मृगावती पूरे कंचनपुर में कहीं नहीं मिली। यह बात सुनते ही रत्नकुमार को लगता है कि राजकुमारी मृगावती उसे खोजने के लिए घर छोड़कर निकल गई है। और अगले दिन वह भी घर छोड़कर राजकुमारी मृगावती को ढूँढने के लिए निकल पड़ता है।

उधर राजकुमारी मृगावती की भी नींद टूट जाती है। वह भी रत्नकुमार को अपने पास न पाकर विलाप करने लगती है और जब कंचनपुर की रानी को मृगावती के विलाप की सूचना मिलती है तो वह स्वयं अपनी बेटी को फटकार लगाने के लिए आती है तो उसने देखा कि राजकुमारी मृगावती राजकुमार द्वारा दी गई अंगूठी को अपने सीने से लगाकर विलाप करते हुए राजकुमार को पुकार रही थी। रानी ने अपनी बेटी की ऐसी हालत देखकर उसे कई तरह से समझाने का प्रयास किया, परन्तु यह सब व्यर्थ था। राजकुमारी मृगावती को अपनी माँ की बात सुनकर घर के प्रति वैराग्य का भाव उत्पन्न हो जाता है और उसी रात सही मौका देखकर घर छोड़कर जंगल की ओर भाग जाती है।

सुख में पले-बढ़े राजकुमार और राजकुमारी मृगावती अब जंगल में पिछले पंद्रह दिन से एक-दूसरे को खोज रहे थे, दोनों को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा था, जिसके कारण उनके

रूप में परिवर्तन होने लगा था, परन्तु अब भी दोनों एक-दूसरे से दूर थे। एक दिन दोनों थककर चूर हो गए थे और विश्राम करने के लिए पेड़ के नीचे बैठे थे। दोनों प्रेमी जोड़े केवल १० कोश की दूरी पर बैठकर एक-दूसरे की याद में विलाप करने लगे, परन्तु थकान के कारण कुछ ही देर में दोनों को नींद आ गई और पेड़ के नीचे ही सो जाते हैं।

इसी तरह दिन का पहर समाप्त चुका था और लगभग आधी रात बीतने के बाद ठीक पहले की तरह दानव और अप्सरा की मुलाकात हो जाती है। दोनों को राजकुमार और राजकुमारी मृगावती की हालत देखकर बहुत दुःख हुआ। दानव ने अप्सरा से कहा, इन दो प्रेमियों के दुःख के कारण हम दोनों ही हैं, अगर हमने इन्हें नहीं मिलाया होता तो आज इनका यह हाल नहीं होता। अब ये एक-दूसरे को नहीं भूल पा रहे हैं, हमें इन्हें फिर से मिलाना होगा। अप्सरा और दानव ने उन दोनों को अपनी जादुई शक्ति से गहरी नींद में कर दिया और क्षण भर में राजकुमारी मृगावती को राजकुमार की गोद में सुला देते हैं।

दानव और अप्सरा वहाँ से चले जाते हैं। कुछ ही देर में जैसे ही दोनों प्रेमी जोड़े की नींद खुलती है तो दोनों ने एक-दूसरे को सामने पाकर उनका सारा दुःख सुख में बदल जाता है। राजकुमार, राजकुमारी मृगावती को लेकर रत्नपुर लौट जाता है। रत्नपुर के राजा अपने पुत्र को इतनी सुन्दर पुत्रवधू को लेकर आता देखकर वह खुशी से गदगद हो उठे। उधर कंचनपुर के राजा-रानी को जब यह समाचार मिला तो उनको भी बड़ी खुशी हुई और उन्होंने अपनी पुत्री का विवाह राजकुमार रत्नकुमार के साथ बड़े ही धूमधाम से कर दिया। राजकुमार, राजकुमारी अपने माता-पिता की एकमात्र संतान थी, इसलिए दोनों के विवाह के बाद राजकुमार रत्नकुमार कंचनपुर के भी राजा बन गए और दोनों राज्यों में राज करने लगे और इस प्रकार रत्नकुमार और मृगावती आनन्दपूर्वक अपना जीवन व्यतीत करने लगते हैं।

चतुर्थ अध्याय

चयनित नेपाली लोककथाओं का विश्लेषण

(क) चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त समाज का विश्लेषण

(ख) चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त संस्कृति का विश्लेषण

(ग) चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त प्रेम का विश्लेषण

(घ) चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त धर्म का विश्लेषण

(ङ) चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त जादू-टोना का विश्लेषण

(च) चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त प्रकृति एवं पशु-पक्षी का विश्लेषण

चतुर्थ अध्याय

चयनित नेपाली लोककथाओं का विश्लेषण

क. चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त समाज का विश्लेषण:

'लोककथा' साहित्य की वह विधा है जो समाज की गतिविधियों को जीवंत रूप में प्रस्तुत करती है। यह विधा न केवल पाठकों का मनोरंजन करती है; बल्कि हमारी सांस्कृतिक विरासत को भी बचाए रखती है। ये लोककथाएँ जनसामान्य के बीच मौखिक परम्परा के रूप में पीढ़ी दर पीढ़ी चलती आ रही है। चूँकि लोककथाएँ किसी भी कवि या लेखक द्वारा नहीं लिखी जाती है; बल्कि लोग इन्हें सुनते है और याद रख कर अपनी तरह से आगे सुनाते है। लोककथाओं में समाज और प्रकृति के विविध रूप प्रतिबिंबित होते है। लोककथाओं का उद्भव उतना ही पुराना है जितना की मनुष्य। क्योंकि लोककथाएँ समाज में मनोरंजन के लिए भी कही जाती है, नैतकिता की सीख के लिए भी, अच्छाई बुराई के अंतर को दिखाने के लिए भी इनका सहारा लिया जाता है तो हमारे सांस्कृतिक विकास को आगे बढ़ाने के लिए भी। अतः जिस प्रकार प्रथम मनुष्य को लेकर कोई स्पष्टता नहीं है वैसे ही लोक कथाओं के विषय में यह बता पाना बहुत ही कठिन है कि इसकी शुरुआत कब ? कहाँ? और कैसे हुई? इसी संदर्भ में डॉ. सत्येंद्र लिखते है कि "लोक-कथा की सुनिश्चित परिभाषा देने का कोई प्रयास नहीं किया गया है। सामान्यतः इस शब्द के अंतर्गत समस्त परम्परागत आख्यानों और उनके विभेदों को स्वीकृत किया गया है।"[1] वहीं आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार "लोककथा शब्द मोटे तौर पर लोक-प्रचलित उन कथाओं के लिए व्यवहारिक होता रहा है, जो मौखिक परंपरा से क्रमशः एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को प्राप्त होते रहें हैं।"[2] लोककथाएँ केवल मौखिक रूप में प्रसिद्ध नहीं है; बल्कि

ये लोक संस्कृति को भी बचाए रखने का माध्यम है। अतः यह कहना गलत नहीं होगा कि लोककथाओं में समाज की स्मृति एवं भावनाएँ पूरी तरह से समायी हुई है जो पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ती जा रही है।

साहित्य को समाज का दर्पण कहा जाता है। साहित्य और समाज का संबंध अटूट है क्योंकि साहित्य समाज के समग्र रूपों का चित्रण प्रस्तुत करता है। इस संबंध में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा "प्रत्येक देश का साहित्य वहाँ की जनता की चित्तवृत्ति के परिवर्तन के साथ-साथ साहित्य के स्वरूप में भी परिवर्तन होता चला जाता है।"[3] चूंकि लोककथा लोक का साहित्य है अतः यह अपने लोक के समाज की सोच, उसके व्यवहार, उसकी भावनाएं एवं जीवन शैली आदि को दर्शाता है और इसी से लोककथाएँ समाज में पनपती है। जिसमें समय और परिस्थिति के अनुसार बदलाव होते रहता है। इसी तरह इन चयनित नेपाली लोककथाओं में समाज के कई महत्वपूर्ण पहलुओं का वर्णन किया गया है। जिन्हें इन निम्नलिखित बिन्दुओं के माध्यम से समझ सकते हैं:

1. नैतिक मूल्य : नैतिकता को लोककथा की एक प्रमुख विशेषता माना गया है। जो प्रत्येक लोककथा में प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से विद्यमान रहती है। इन चयनित नेपाली लोककथाओं में भी अनेक स्थानों पर समाज में नैतिक मूल्य का भाव दिखाई पड़ता है, जिसमें सामाजिक आदर्शों, सिद्धांतों, शिक्षाओं का चित्रण के साथ अच्छाई और बुराई के बीच संघर्ष का वर्णन मिलता है। इसका उदाहरण सींचा-धुंचा की कथा को देख सकते है- जहाँ दो भाई है जो गरीबों के प्रति दया का भाव रखते हैं। उनका अंतर्मन तो कहता है की गलत काम नहीं करना चाहिए; परन्तु वहीं पिता के मृत्यु के बाद धन समाप्त होने पर दोनों भाई अपने नैतिक मूल्य को भूलते हुए राजा के महल में चोरी करने पहुँच जाते है। "सींचा और धुंचा को देखते ही राजा के दरबार के सारे कर्मचारी एवं सेवक उनके पीछे पड़ जाते है क्योंकि सींचा और धुंचा बहुत दयालु थे, इसलिए गरीब मजदूरों को अब भी लगता था की उनके पास बहुत धन है; परन्तु जब वे उन गरीबों को खाली हाथ लौटाते तो उन्हें ऐसा लगता था मानों उनकी जान

ही चली गयी हो। एक दिन सींचा ने कहा भाई! राजा की तिजोरी में बहुत धन पड़ा हुआ है। आज रात को राजा की तिजोरी के खजाने लुट लेते है। उसके बाद हम गरीबों की फिर से मदद कर सकते है। धुंचा ने आश्चयर्य स्वर में कहा यह गलत है भाई? परन्तु वह करता भी क्या ? अंत में धुंचा, सींचा की बात से सहमत हो जाता है । रात के समय दोनों भाई सावधानी से राजा के महल में चोरी करने पहुँच जाते है।"[4] कहने का तात्पर्य यह है कि अगर कोई व्यक्ति गरीबों की मदद करता है; परन्तु उसके मदद करने का तरीका गलत हो तो केवल उसके उद्देश्य को देखकर उस मदद को सही नहीं ठहराया जा सकता। सही कार्य के लिए सही तरीका अपनाना भी आवश्यक होता है। यहाँ भी दोनों भाईयों का तरीका सही रहता तो धुंचा को अपने प्राण से हाथ नहीं धोना पड़ता।

इसी श्रृंखला में 'बूढ़े' पिता को फेंकने वाला पुराना डोका' कथा में नैतिकमूल्य में भी नैतिक मूल्यों का अभाव सा दिखाई पड़ता है। जहाँ एक बेटे को अपने ही पिता बूढ़े होने पर बोझ लगने लगते है। वह उन्हें पहाड़ से नीचे फेंकने के लिए डोको (लकड़ी धोने वाला टोकरी) में रख कर अपने बेटे के साथ पहाड़ पर जाता है; परन्तु जब उसका बेटा उसे भी बूढ़े होने पर डोको में रख कर फेंकने की बात करता है तो उसकी आँखे खुल जाती है। जिससें इस कथन में देख सकते हैं "पिता जी आप भले ही दादा जी को इस पहाड़ से नीचें गिरा दीजिए; परन्तु आपसे निवेदन है कि इस डोको को आप मेरे लिए रख दीजिए क्योंकि मैं भी इसे अपने पास रखना चाहता हूँ। पिता ने बेटे से ऐसी बात सुनकर उसने पूछा तुम क्या करोगें इस पुराने ड़ोको का? यह बहुत पुराना हो चूका है अब इसका कोई काम नहीं है। बेटा अपने पिता की बातों को अनसुना कर देता है; लेकिन, पिता ने बेटे से फिर एक बार यही सवाल किया कि तुम क्या करोगें इस पुरानें ड़ोको का? तब बेटे ने पिता को उत्तर देते हुए कहा क्या करूँगा से क्या मतलब है? पिता जी! यह ड़ोको मुझें भी भविष्य में काम आने वाला है। जिस तरह आप इसमें दादा जी को बैठा कर पहाड़ से गिराने के लिए लेकर आए है। जब आप बूढ़े हो जाओगे तो मैं भी तो आपको

भी एक दिन तो इसी ड़ोको में बैठा कर पहाड़ से नीचें गिरा दूँगा। इसलिए मैं कह रहा हूँ की अगर आप अभी इस ड़ोको को दादा जी के साथ ही फेक देंगे तो आप जब बूढ़े हो जायेंगे तो मेरे पास तो ड़ोको नहीं रहेगा तो मैं आपको पहाड़ से कैसे फेकू? बेटे की ऐसी बाते सुनकर पिता के पैरो तले जमीन खिसक जाती है। यह बात सुनते ही पहले तो पिता को अपने कानों पर यकीन ही नहीं हुआ। उसने फिर एक बार अपने बेटे से पूछा क्या कहा तुमनें? बेटे ने उत्तर दिया। अपने सुना नहीं पिता जी मैंने क्या कहा? मैं यह कह रहा हूँ कि जिस प्रकार अपने पिता जी को बहला फुसलाकर पुराने ड़ोको में बैठा कर उनसे झूठ कहा की आप उनको देवी स्थान, देउराली मंदिर के दर्शन करने के लिए ले जा रहे हैं। अब आप पहाड़ से दादा जी को गिरा देना चाहते है। तो मुझे भी तो आपको इसी तरह बहला फुसलाकर ड़ोको में रख कर इसी पहाड़ से फेंकना होगा।”[5] कहने का तात्पर्य यह है कि जब उसनें अपने बेटे के द्वारा उसे पहाड़ से गिराने की बात सुनी तो उसे यह अहसास हुआ कि हम जैसा बोएँगे, वैसा ही काटेंगे। उसको यह बात समझने में देर नहीं लगीं तथा बच्चे बड़े होकर किस तरह के व्यक्ति होंगे यह उनके संस्कार तय करता है। जिसमें माता-पिता की अहम भूमिका रहती है। क्योंकि बच्चे कई चीजें अपने माता पिता से ही सीखते है अगर माता –पिता अच्छे कर्म करते है तो बच्चे भी संस्कारी बनते है; लेकिन वही अगर माता–पिता ही गलत राह पर चलने लगें तो उसका असर बच्चों पर भी पड़ता है। यहाँ एक बच्चा के माध्यम से समाज को नैतिक शिक्षा दी गई है। जिसमें एक बेटे ने अपने ही पिता को मारने का प्रयास करता है जिसमें नैतिक मूल्य का हनन दिखता है तो वहीं दूसरे तरफ बेटे के कहने मात्र से सकारात्मक नैतिक मूल्य का बोध होता है। यह एक प्रकार से वृद्ध विमर्श की समस्या पर आधारित लोककथा है।

वही दूसरी तरफ इन लोककथाओं में समाज के पारिवारिक रिश्तों का आदर्श मुख्य रूप से उभरकर आता है। जिसमें प्रेमी-प्रेमिका, पति-पत्नी, भाई-बहन, सच्चे मित्र आदि के संबंधों में आदर्श

रूप स्थापित करने का प्रयास किया गया है। जहाँ सच्चे मित्र में नैतिकता का चित्रण मिलता है। उदाहरण के तौर पर 'जैसे को वैसा' कथा के इस कथन में देख सकते हैं "अश्वगंधा नगर के राजा विक्रमकिशोर और उसी नगर के सेठ धनगुप्त बचपन के बहुत अच्छे मित्र थे। समय के साथ-साथ इनकी मित्रता में और भी घनिष्ठता बढ़ती गई। राजा विक्रमकिशोर तो धनगुप्त को अपने भाई के समान मानते थे। "[6] इस कथा में सेठ धनगुप्त की मृत्यु के बाद भी राजा विक्रमकिशोर अपने मित्र धनगुप्त के पुत्र को पुरोहित के चुंगल से बचाकर अपनी सच्ची मित्रता को निभाता है।

वहीं भाई-बहन की सबंध की बात करे तों 'उतरों न उतरों प्रिय सुनकेशरी' कथा में बहन के प्रति भाई का अटूट प्रेम दिखाई पड़ता है। "शाम को जब भाई गाय चराकर घर लौटा तो उसने देखा कि घर का चूल्हा सुना पड़ा था। न तो माड़ चावल बना था । बस जमीन पर काला रंग और काला पानी फैला पड़ा था मानों सुनकेशरी के चेहरे का रंग धुल गया हो। यह सब देख कर भाई ने दीदी को आवाज़ लगाई; परन्तु कोई उत्तर नहीं मिला तो भाई दीदी को न पाकर चिंतित हो उठता है और फिर वह चिल्लाने लगा 'दीदी...दीदी कह के; परन्तु दीदी का कोई उत्तर नहीं आया। अब वह आस –पास के घरों में जा कर पुछ-ताछ करने लगा; लेकिन उसकी दीदी का कहीं पता नहीं चला। भाई अकेले बैठ कर जोर-जोर से रोने लगा है"[7] यहाँ एक राजकुमार उसकी बहन को उठा ले गया। चूंकि भाई बहन से प्यार करता है तो वह फूट-फूट कर रोने लगता है। जिससे उसकी बहन के प्रति चिंता और प्यार दिखाई देता है। अंत में वह दीदी के प्रति अगाध प्रेम और संघर्ष के कारण वह अपनी बहन पहुँच जाता है।

2. जातिगत भेदभाव: चयनित लोक कथाओं में जातिगत भेदभाव प्रतीकात्मक रूप में दिखाई पड़ता है। जहाँ मनुष्य ही नहीं, पशु-पक्षियों, पेड़-पौधे आदि को भी उत्पत्ति के आधार पर विभिन्न जातियों एवं वर्गों में बाँटा है। यह जाति प्रथा को समाज की एक पुरानी सामाजिक व्यवस्था कहा जा सकता है। जिसने एक ओर से तो समाज को व्यवस्थित किया है तो वहीं दूसरी ओर से असमानता और भेदभाव

उत्पन्न किया है। यहाँ समाज के जातिगत भेदभाव प्रतीकात्मक रूप से पशु-पक्षी पेड़-पौधे आदि में भी रंग, रूप, जाति के आधार पर बताया गया है- जिसका वर्णन 'उत्तिस र गुराँस की प्रेम कथा' के इस कथन में मिलता है- "एक दिन सुरीली और रोज्जा की अचानक से भेंट हुई। सुरीली की एक झलक से ही रोज्जा के मन में सुरीली के प्रति प्रेम-भाव उत्पन्न हो गया। यह सुयोग गुराँस के लिए बड़ी आश्चर्य की बात थी। गुराँस मन ही मन में सोचने लगा-सुरीली तो ठहरी उत्तिस की बेटी। जो लम्बी कद, सुडौल शरीर और बहुत सुन्दर भी है। उसकी शारीरिक बनावट और सुन्दर चेहरा होने के कारण उसकी गणना मुल्यवान वृक्षों में एक उम्दा वृक्ष के रूप में की जाती है। अब इस शालीन सृजना को गुराँस ने अपनी आत्मा में बसा लिया। सुरीली से भेंट होना तो रोज्जा के लिए सौभाग्य की बात थी; लेकिन उसके मन में एक डर था कि वह तो ठहरा बोनी जात का जो गाँठों के अन्दर उलझा और छिलके से बंधा हुआ शरीर हैं जो कीचड़ में भी रहने पर खुश हो जाता है।"[8] यही कारण है कि नेपाली समाज में गुराँस के फूल का सांस्कृतिक एवं पारंपरिक रूप से अधिक महत्व है। इसे लालीगुराँस के नाम से भी जाना जाता है। जो वर्तमान समय में नेपाल देश का राष्ट्रीय फूल भी है। इस कथा में गुराँस को एक कूरूप एवं बौना फूल के रूप में चित्रित किया गया है। वही उत्तिस को सर्वगुणसंपन्न एवं सुन्दर फूल के रूप में चित्रित किया गया हैं। कथा में रोज्जा गुराँस का बेटा होता है; जो बिलकुल अपने पिता जैसा लगता था तो वहीं सुरीली सुन्दर और सुडोल फूल है- जो उत्तिस की बेटी है तथा इन दोनों को पहली ही नजर में प्रेम हो जाता है; परन्तु इनके रंग-रूप एवं जातीय अंतर के कारण इनका विवाह नहीं हो पता है। यह कथा अप्रत्यक्ष रूप से समाज के जातिगत भेदभावों का वर्णन करती है। जिसमें इन दो फूलो को प्रतीक बनाकर दिखाया गया है।

3. आर्थिक स्थिति: लोक कथाएँ केवल समाज की लोक मान्यताओं तथा विश्वास को ही उजागर नहीं करती है; बल्कि ये समाज की आर्थिक स्थितियों को भी प्रस्तुत करती है। इन चयनित लोक-

कथाओं में कई स्थानों पर समाज की आर्थिक स्थितियाँ दिखाई पड़ती है- जैसा की ‘गोलसिमल’ कथा में। जहाँ एक पिता गाँव में अकाल पड़ने से उत्पन्न हुई आर्थिक तंगी के कारण और अपनी पहली पत्नी की मृत्यु के बाद अपनी बेटी गोलसिमल को सौतेली माँ के पास छोड़ कर वह पैसे कमाने के लिए परदेश चला जाता है। उसके परदेश जाते ही सौतेली माँ गोलसिमल को जलाकर मार देती है। जब पिता परदेश से लौट कर आता है तो अपनी बेटी को एक पक्षी के रूप में पाता है। यहाँ गाँव में अकाल पड़ने की वजह से पिता बाहर गए और अपनी बेटी से दूर हो गए। “उसी वर्ष ही सनमान के गाँव में अकाल पड़ा जिसके कारण खेत सुखे पड़ गए। जिससे कृषि भूमि तबाह हो गई। फसलें नष्ट हो गई, गाँव वाले गाँव छोड़ कर पलायन कर गए; लेकिन सनमान और सानी अपना पुश्तैनी घर छोड़कर कहीं नहीं जाना चाहते थे। धीरे –धीरे हालत बद से बदतर होते गए। और नतीजा यह हुआ कि अकाल के सूखे ने कृषि भूमि को बंजर भूमि में बदल दिया। किसानों और गाँव वालों की आर्थिक स्थिति चरमरा गई। उन्हें जीवनयापन के बाहर जाना पड़ा।”[9]

इसी तरह की इन लोककथाओं में समाज के आर्थिक भेदभाव का भी वर्णन है। जिसमें धनी और गरीब वर्गों के बीच का अंतर दिखाई देता है। जिसकी अभिव्यक्ति शादी-ब्याह, भोज, व्यवहार आदि में आर्थिक असमानताओं में दिखाई देती है। ‘सरसों फूल गाँव, जमाई मेरा नाम’ इस कथा में सजे नामक आदमी जो गरीबी से तंग आकर वह लोगों को ठगने लगता है। “किसी गाँव में जैसे नाम का एक अत्यंत चतुर व्यक्ति रहता था। एक दिन अपने घर की बिगड़ी हुई परिस्थिति को देख कर उसे बहुत दुःख हुआ और वह बैठ कर विचार करने लगा कि इस संसार में ईमानदार हो कर जीवन बिताना बहुत ही कठिन है। अगर वह ईमानदारी के फेरे में रहा तो एक दिन भूखे मरेगा। कल ही मुझे इस गरीबी एवं भुखमरी से बचने के कोई तरीका खोजना होगा।”[10] वही दूसरी कथा ‘चट्टू-छट्टू उपरचट्टू’ में भी चट्टू गरीबी से मजबूर होकर धन कमाने का गलत रास्ते चुनता है जिसे इस कथन में देख सकते हैं “दशहरा

आने वाला था, परन्तु चट्टू के पास त्यौहार मनाने के लिए एक भी पैसा नहीं था। चट्टू ने कुछ उपाय करने का निर्णय लिया। चट्टू ने अपने बुद्धि से दस माना (अनाज नापने का पात्र) में गोबर भर लेता है और उसी के ऊपर थोड़ा सा घी मिला देता है और उसे बेचने के लिए बाजार की ओर निकल जाता है। ठीक इसी तरह छट्टू के पास भी त्यौहार मनाने के लिए पैसे नहीं थे इसलिए वह भी कागज की तलवार बनाकर उसे और उसके ऊपर सिगरेट के जैसा पत्ता चिपका देता है और उस तलवार को एक मखमल के कपड़ें से बना म्यान में रख देता है फिर वह भी उसे बेचने के लिए बाजार की तरफ चल देता है।"[11] उपर्युक्त दोनों घटनाओं से समाज की आर्थिक स्थिति का बोध होता है। जहाँ इस आर्थिक अंतर ने एक वर्ग को दूसरे का वर्ग का दुश्मन बना दिया। अमीर- गरीब के इस अंतर से उपजी लाचारी, मजबूरी ने मनुष्य की इच्छाओं, सपनों और नैतिकताओं भक्षण किया है। जब पेट में भूख की आग सुलगती है तो चारों ओर केवल अभाव ही दिखाई देता है तब व्यक्ति अच्छाई और बुराई में अंतर भूल नैतिकताओं को तिरोहित कर देता है।

4. स्त्री की चित्रण: प्रस्तुत लोक-कथाओं के समाज में स्त्री का चित्रण विविध रूपों में दिखाई पड़ता है। जहाँ कहीं तो वह देवी रूप में पूजी जाती है तो कहीं राक्षसी बनकर तबाही मचाती है। वह कहीं पर माँ का दुलार लुटाती हुई, कहीं बेटी और पत्नी आदि के रूप में वर्णित हुई है; लेकिन सबसे अधिक समाज में एक स्त्री के रूप में उपेक्षित और पितृसत्तात्मक समाज की शिकार के रूप में दिखाई पड़ती है।

स्त्री का पूजनीय रूप 'पारुहाङ और सुम्निमा' कथा में देख सकते है। जहाँ सुम्निमा नाम स्त्री है जिसको माता पार्वती का प्रतीक माना गया है। यह एक प्रेम-प्रसंग पर आधारित कथा है जिसमें सृष्टि निर्माता ने संसार में सबसे पहले एक युवक और एक युवती को बनाया। जिनसे एक पुत्री का जन्म होता है जिसका नाम सुम्निमा रखा जाता है। सुम्निमा संसार में अकेली होने के कारण वह जीव-जंतुओं के

साथ रहती थी। एक दिन उसे जंगल में अचानक पारुहाङ को देखा। सुम्निमा उसकी व्रज जैसे बलिष्ट एवं सुगठित शारीरिक बनावट को देख कर मोहित हो जाती है; परंतु सुम्निमा ने पारुहाङ का चेहरा नहीं देख पाई। उसे केवल उसके बलिष्ट शरीर से मोह था। एक दिन यह मोह भी टूट जाता है जब वह पारुहाङ चेहरा देख लेती हैं। इस तरह सुम्निमा के द्वारा अस्वीकृत होने पर पारुहाङ को अपमान महसूस होता है। वह सुम्निमा से प्रतिशोध लेने का ठानता है। वह सारी पृथ्वी का जल सुखा देता है। जिससे सुखा पड़ जाता है और चारो ओर हाहाकार मच जाता है। चारों ओर सुखा पड़ने से सुम्निमा की तबीयत और भी बिगड़ने लगती है। जब यह बात पारुहाङ को पता चलती है तो उसे अपनी करनी पर बहुत पश्त्याताप होता है। और अपना शाप वापस ले लेता है जिससे सुम्निमा भी ठीक हो जाती है। अंत में दोनों को अपनी-अपनी-अपनी गलतियों का अहसास हो जाता है। दोनों सब कुछ भुलाकर विवाह कर लेते है और खुशी-खुशी अपना जीवन व्यतीत करने लगते है। आज भी नेपाली किरात राई समाज में यह लोक विश्वास है कि यह कथा शिव- पार्वती की प्रेम कथा पर आधारित है जो कथा के अंत में इस कथन से यह स्पष्ट भी होता है “पारुहाङ और सुम्निमा को शिव, पार्वती का प्रतीक माना जाता है। आज भी किरात समाज में यह प्रचलित एवं लोक विश्वास है कि पारुहाङ और सुम्निमा के रूप में शिव पार्वती ने धरती पर अवतार लिया था। किरात राई समाज में सुम्निमा को प्रकृति पुत्री मानते है तथा शिव के साथ इनकी पूजा-अर्चना करते है। इस आस्था और विश्वास के प्रतिरूप के कारण लेक्सेप में स्थित शिव मंदिर के प्रवेशद्वार की दिवार पर सुम्निमा और पारुहाङ का चित्र बना हुआ मिलता हैं।”[12]

इन लोक कथाओं में स्त्री कई स्थानों पर क्रूरता की प्रतीक के रूप में हमारे सामने आती है। जहाँ ये भय, लालच एवं निर्दयता के प्रतिरूप के साथ-साथ नायक एवं आम लोगों के मार्ग में बाधक बनती है। इन स्थानों पर स्त्री की छवि को दुष्ट स्वभाव, असामान्य रूप-रंग और अनैतिक आचरण से भरी हुई दिखाया गया है। जहाँ ये दूसरों को हानि पहुँचाकर इनको खुशी होती है। इनका स्वभाव और

रूप दिखने में भयानक तथा डरावनी दिखाया गया है। "कुछ ही क्षण में आकाश की ओर से काला मैला भयानक तूफान आया और देखते ही देखते उस तूफान की भयानक आँधी एक नव युवक को भी अपने साथ उड़ा ले गई। दरअसल उसी तूफान के साथ राक्षसी छुप कर आई थी, क्योंकि उस समय नव युवक ने अपना सफ़ेद पक्षी पोशाक उतार रखा था। यह भयानक दृश्य देखकर जुनपारी की आंखें खुली की खुली रह गई। वह राक्षसी कोई नहीं; बल्कि दोपहर में मिली वही वृद्ध महिला थी जिसने उसे अपने पति का सफ़ेद पक्षी पोशाक को जलाने के लिए कहा था।"[13] इस तरह की स्त्रियों से बचने के लिए आज भी नेपाली समाज में लोग अपने घरों में परिवार और गाँवों की रक्षा के लिए चील, कबूतर, मोर आदि पक्षियों के रंग- बिरंगे पंखो से बने कपडें तथा सजावट के वस्तुएं रखते है। ऐसी मान्यता है कि घर में पक्षियों के पंख रखने से पंख आपकी रक्षा करेगा तथा किसी के काले जादू एवं बुरी नजर का प्रभाव नहीं पड़ेगा।

स्त्री की क्रूरता का दूसरा रूप सौतेली माँ के रूप में गोलसिमल कथा दिखता है "सौतेली माँ के लिए गोलसिमल एक बोझ थी। जिसके कारण सौतेली माँ गोलसिमल से पीछा छुड़ाने के लिए चाल चलती है। जब गोलसिमल सो रही थी, इसका फायदा उठाकर सौतेली माँ सारी खिड़कियाँ बंद करके दरवाजे पर बाहर से ताला लगा देती है और घर को आग लगा देती है। जिसमें गोलसिमल जल जाती है। इतना करने पर भी पापिनी निर्मम सौतेली माँ को चैन नहीं मिला। उसकी क्रूरता इतनी बढ़ गई कि गोलसिमल के जिन्दा आधे जले हुए शरीर को ले जा कर झाड़ियो के बीच पानी में फेक दिया है। जहाँ गोलसिमल बहुत देर तक तड़पती रहीं और उसकी मृत्यु हो गई।"[14] इस तरह समाज में कई बार सौतेली माँ को लगता है कि पति का प्रेम बच्चों पर अधिक है और उस पर कम। इससे उपजी ईर्ष्या की भावना से वह बच्चों को प्रतिद्वंद्वी मानकर उसके प्रति कठोर व्यवहार करती है। जैसा इस कथा में दर्शाया गया है।

इन कथाओं में स्त्री को बेटी, बहन और पत्नी के रूप में दिखाया गया है। जहाँ उनके जीवन में आने वाली चुनौतियों के अलग-अलग रूप दिखाई पड़ते है। परिवार से समाज बनता है। अतः कुछ परिवारों की गलत धारणा समाज को भी प्रभावित करती है। समाज में कई ऐसे परिवार है जो बेटियों को बोझ समझते हैं। जो कन्या भ्रूण हत्या, दहेज, बेमेल विवाह और सुरक्षा की समस्या आदि सामाजिक कुरूतियों के रूप में हमारे सामने आती है। जो समाज के लिए एक चिंता का विषय है। जहाँ स्त्री मात्र वस्तु बन कर रह गई। जिसको अपने स्वतंत्र विचारों को व्यक्त करने पर परिवार और समाज के विरोध का सामना करना पड़ता है।

'उतरों न उतरों प्रिय सुनकेशरी' कथा में सुनकेशरी का विवाह अपने ही सगे भाई से तय कर दिया जाता है क्योंकि सुनकेशरी के स्वर्ण केश खो जाने पर राजमाता द्वारा घोषणा की जाती है कि जो सुनकेशरी का खोया हुआ केश ढूंढ कर लायेगा उसी से सुनकेशरी का विवाह कर दिया जाएगा। संयोगवश वो केश सुनकेशरी के मंझले भाई को मिल गया और राजमाता ने अपने मान, सम्मान एवं प्रतिष्ठा को बचाने के लिया सुनकेशरी का विवाह उसी के भाई के साथ करने का निर्णय किया। सुनकेशरी राजमाता के इस फैसले से बिलकुल भी सहमत नहीं थी। इसलिए वह घर से भाग कर एक पेड़ की चोटी में रहने लगती है- "उधर महल में विवाह का मंडप तैयार हो गया था और विवाह का मुहूर्त भी हो चला था। सुनकेशरी को साज-श्रृंगार करके दुल्हन बनाने का समय भी हो चला था; परन्तु जैसे ही सुनकेशरी को खोजा जाने लगा तो वह कहीं नहीं मिल रही थी। सभी उसे महल के कोने-कोने में खोजने लगते है; परन्तु उसका कहीं पता नहीं चला। सुनकेशरी के पिता जब सुनकेशरी को खोजते हुए नदी के किनारे जा पहुँचे तब उन्होंने देखा की एक कदम के विशाल वृक्ष के उपर स्वर्ण जैसा कुछ चमक रहा था। जिससे सुनकेशरी के पिता को संदेह हुआ की कहीं वृक्ष के ऊपर ही सुनकेशरी तो नहीं है ? सुनकेशरी के पिता जैसे-जैसे वृक्ष के ओर आगे बढ़ने से उन्हें यकीन हो जाता है कि वह उनकी

बेटी सुनकेशरी ही है। जो अपनी शादी से बचने के लिए कदम के वृक्ष पर छुपी हुई है। सुनकेशरी से उसके पिता ने नीचे उतरने का अनुरोध किया; परन्तु सुनकेशरी ने वृक्ष से उतरने से माना कर दिया।"[15]

इस प्रकार लोक कथाओं में स्त्रियों का चरित्र एकरूप नहीं मिलता। इनमें कुछ स्त्रियाँ त्याग, ममता, करुणा और आदर्श का उदाहरण बनकर परिवार और समाज का मार्गदर्शन करती है, उसी प्रकार कुछ स्त्रियाँ स्वार्थ और ईर्ष्या के वशीभूत होकर कठोर और अनैतिक आचरण भी करती हैं। प्रस्तुत लोककथाओं में हमें इन दोनों प्रकार की स्त्रियों का चित्रण मिलता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि स्त्री भी मनुष्य है। उनमें अच्छाई-बुराई दोनों हो सकती है। केवल स्त्री होने के कारण वह आदर्श ही होगी या केवल दोषपूर्ण होगी, यह कहना उचित नहीं है। परिस्थिति, संस्कार, शिक्षा और समाज की अपेक्षाएँ स्त्री के आचरण को प्रभावित करती है। इसलिए स्त्रियों को किसी एक पक्ष से नहीं देखना चाहिए। अच्छी स्त्रियों से हमें प्रेरणा लेनी चाहिए और बुरी प्रवृत्तियों से बचना चाहिए। समाज का यह दायित्व है कि वह स्त्रियों को शिक्षा, स्वतंत्रता और समान अवसर दे। जिससे उनमें सकारात्मक शक्तियाँ और अधिक विकसित हो और नकारात्मक प्रवृत्तियाँ धीरे-धीरे समाप्त हो जाए। जब स्त्री का सम्मान होगा, तभी समाज में संतुलन, सद्भाव और उसकी प्रगति सुनिश्चित होगी।

5. राजनीतिक: प्राचीन काल में जब लिखित इतिहास का अभाव था। तब कथाएँ ही उस समय की सामाजिक और राजनितिक परिस्थितियों को सुरक्षित करने का माध्यम था। जिसमें में पशु पक्षी, राजा, महाराजा, सेठ और साहूकार जैसी कथाएँ मिलती थी। यहाँ राजा को आदर्शवादी, न्यायप्रिय शासक के रूप में प्रस्तुत किया गया है। जहाँ एक राजा अपने कर्तव्य का पालन करते दिखाई पड़ते है। जो एक अच्छे शासक के प्रतीक के रूप में सामने आता है। इसका एक रूप 'चार रत्न' कथा में देखने को मिलता है "एक समय कि बात है रत्नावली शहर में एक वीरबाहू नामक राजा राज्य करता था। वह

बड़ा ही न्यायप्रिय और दयालु स्वभाव का राजा था। राजा वीरबाहू रात के समय वेश बदल कर गाँव के हर घर में जाते ताकि वे यह देख सके की गाँव वाले दुःखी तो नहीं है।”[16]

वहीं दूसरी ओर क्रूर लोभी सेठ का रूप में ‘आंतरिक रोग की औषधि’ कथा में देख सकते है कि किस प्रकार एक सेठ अपनी चतुराई से धनवान बन जाता है; परन्तु वह इतना लालची होता है कि वह किसी को एक वक्त का भोजन भी कराने के लिए को सौ बार सोचता है जिसे इस कथन में देख सकते है। “एक देश में एक अत्यंत धनवान सेठ जी रहते थे। उसे अपने कारोबार से करोड़ों रुपए की आमदनी होती थी। हजारों नौकर-चाकर थे। सेठ जी को अपने धनवान होने पर बहुत घमंड था। वह दान-पुण्य का नाम भी नहीं लेता चाहता था। अगर कोई साधु-संत या महात्मा दरवाजे पर आ भी जाए तो वह उन पर ध्यान नहीं देता था।”[17] यहाँ समाज में दो प्रकार की राजनीतिक व्यवस्था को दर्शाया गया है जिसमें आदर्शवादी शासक केवल सत्ता का उपभोग नहीं करता; बल्कि प्रजा का पालनकर्ता भी होता है। वहीं सेठ जैसे लालची एक स्वार्थी शासक का प्रतीक है जो राजनीति के अंधेरे पक्ष को उजागर करता है। जो केवल अपने सुख-सुविधा और सत्ता को बनाए रखने ले लिए जनता का शोषण करता है। इन कथाओं में अक्सर पशु-पक्षियों को मानवीय गुणों से युक्त दिखाई जाता है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि लोक कथाएँ राजनीतिक का बहुआयामी चित्र प्रस्तुत करती है। इसमें शासक और प्रजा का संबंध,सत्ता संघर्ष, न्याय और दंड व्यवस्था, आदर्श आदि झलकता है। वास्तव में लोक कथाओं में समाज में राजनीति केवल सत्ता का खेल न होकर नैतिकता और आदर्शों का भी विषय रही है और यही कारण है कि लोक कथाएँ उस समय की राजनीति चेतना दस्तावेज़ है।

ख .चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त संस्कृति का विश्लेषण:

लोककथाएँ केवल काल्पनिक एवं मनोरंजन का माध्यम ही नहीं होती; बल्कि इन्हें समाज के रीति-रिवाज, परम्पराएँ और संस्कृति का सजीव चित्रण माना जाता सकता है। ये जीवन को यथार्थवादी अनुभव, ज्ञान और संवेदनशील बना देती है तथा व्यक्ति के अंदर रुचि और आनंद उत्पन्न करती है। प्रो.राधेश्याम सिंह के शब्दों में "लोककथाएँ जीवन को प्रेरणा देती हैं और हमारे भीतर चेतना का अंकुर पैदा करती हैं। यह मनुष्य के लिए जीवन की अविरल धारा का काम करती हैं।"[18] लोककथाएँ मानव जीवन को प्रभावशाली बनाती है। और यह मनुष्य की एक समृद्ध विरासत भी है जो अलग-अलग रूपों में प्रचलित दिखाई पड़ती है।

लोककथाओं का आधार लोक संस्कृति को कहा जाता है। "संस्कृति शब्द सम् उपसर्ग के साथ संस्कृत की (डु) कृ (ञ्) धातु से बनता है जिसका मूल अर्थ साफ या परिष्कृत करना है। आज की हिंदी में यह अंग्रेज़ी शब्द 'कल्चर' का पर्याय माना जाता है। संस्कृति शब्द का प्रयोग अर्थों में होता है-एक व्यापक और एक संकीर्ण अर्थ में। व्यापक अर्थ में 'उत्क' शब्द का प्रयोग नर-विज्ञान में किया जाता है। उत्क विज्ञान के अनुसार संस्कृति समस्त सीखे हुए व्यवहार अथवा उस व्यवहार का नाम है जो सामाजिक परम्परा से प्राप्त होता है। इस अर्थ में संस्कृति को सामाजिक प्रथा (कस्टम)का पर्याय भी कहा जाता है। संकीर्ण अर्थ में संस्कृति एक वांछनीय वस्तु मानी जाती है और संस्कृत व्यक्ति एक श्राद्ध व्यक्ति समझा जाता है। इस अर्थ में संस्कृति प्रायः उन गुणों का समुदाय समझी जाती हैं जो व्यक्तित्व को परिष्कृत एवं समृद्ध बनाते हैं।"[19] संस्कृति को समाज की आत्मा कह सकते है इसमें अनेक प्रकार के रीति-रिवाज, खान पान, रहन-सहन, परम्परा आदि समाहित रहती है। रामधारी सिंह 'दिनकर' लोक संस्कृति के संदर्भ में लिखते हैं कि- "साधारण जन समाज में प्रचलित वे सब बातें जो सिद्धांततः संस्कृति के क्षेत्र से सम्बन्ध हों।"[20] कहने का तात्पर्य यह है कि लोक संस्कृति में आम जनता

के जीवन में जो रीति-रिवाज एवं परम्परा तथा विचार प्रचलित होते है वहीं लोक संस्कृति के अंतर्गत आते हैं। लोक संस्कृति आम जनता के दैनिक जीवन का सच्चा प्रतिबिम्ब है। जो इन चयनित लोक कथाओं में भी देख सकते है-

लोककथाओं में अगर कुछ मनोरंजन से सम्बंधित कथाओं को छोड़ दिया जाएं तो अधिकतर कथाओं से संस्कृति एवं परंपरा झलकती होती है। इन कथाओं के पीछे भी कोई ना कोई मान्यताएं या मिथक जरूर रहा है। और यह कितनी प्रमाणित है इसे कोई नहीं जानता है। यहाँ मिथ से तात्पर्य एक ऐसे संदर्भ से है जिसके पीछे पूर्ण धारणा या विश्वास शक्ति निर्मित होती है। मैथिली प्रसाद भारद्वाज के अनुसार "ऐसी किसी भी कथा को, जो विचारण और आलोचना शक्ति से सर्वथा शून्य, आदिम चेतना की स्वयं-स्फूर्त उद्भावना होती है, उसे मिथ कहा जाता है।"[21] ऐसी ही मान्यता पर आधारित 'आतेक कि बाँसुरी का धुन' सिक्किम के नेपाली समुदायों में बांसुरी बजाना अशुभ माना जाता है इसी लोक विश्वास पर आधारित यह कथा है जिसमें आतेक नामक लड़का जो एक ग्वाला होता है। उसे बांसुरी बजाना बहुत पसंद था; परन्तु उसके बांसुरी बजाने के कारण उसे हिममानव (एक प्रकार का रक्षा) परेशान करने लगता है क्योंकि उसे भी आतेक से बांसुरी की धुन सुनना अच्छा लगता था। अंत में उस हिममानव आतेक को बहुत परेशान करने लगा और उसे लगातार बांसुरी बजाते रहने को कहता है जिससे आतेक भी परेशान हो जाता है तथा उससे छुटकारा पाने के लिए उसने उस हिममानव को धोखे से जिन्दा जला देता है उसके बाद आतेक ने कभी बांसुरी को हाथ भी नहीं लगाया। जिससे इस कथा का यह आखरी कथन प्रमाणित करता है "आज भी सिक्किम के नेपाली समुदाय में शाम सुबह सीटी बजाना जोर से चिल्लाना और खास करके बांसुरी बजाना सख्त वर्जित है, यदि किसी ने सहयोगवश बांसुरी बजा भी ली तो हिममानव उसको परेशान करने लगेगा ऐसी लोग विश्वास प्रसिद्ध है।"[22] इसी प्रकार दूसरी कथा 'उत्तीस और गुराँस' की है जिसमें सामाजिक व्यवस्था जैसे जातीय

व्यवस्था, स्त्री पुरुष संबंध, संयुक्त परिवार की परम्परा आदि की झलक दिखाई पड़ती है। इसको उत्तीस नामक वृक्ष और गुराँस नमक फूल पर आधारित एक प्रेम कथा बुना गया है। जहाँ गुराँस को एक कुरूप फूल के रूप में दर्शाया गया है तो वहीं उत्तीस वृक्ष को सुन्दरता का प्रतीक माना गया है। कथा में गुराँस का बेटा रोज्जा और उत्तीस की बेटी सुरीली दोनों को पहली ही नजर में एक-दूसरे से प्रेम हो जाता है; परन्तु जातीय भेदभाव होने के कारण यह प्रेम अधूरा रह जाता है। "सुरीली की शारीरिक बनावट और सुन्दर चेहरा होने के करण उसकी गणना मूल्यवान वृक्षों में एक उम्दा वृक्ष के रूप में होती है। इस शालीन सृजना को गुराँस ने अपनी आत्मा में बसा लिया था। सुरीली का भेंट होना रोज्जा के लिए किसी सौभाग्य से कम नहीं था; परन्तु उसके मन में एक प्रकार का डर था कि कहीं वह मुझे न पसंद न कर ले क्योंकि मैं तो ठहरा बोनी जात की संतान। मेरा शरीर हर जगह पर गाँठ और छिलके से बंधा हुआ है और मैं कीचड़ में भी रह कर खुश होता हूँ।"[23] नेपाली समाज में गुराँस को लाली गुराँस के नाम से जाना जाता है और अंग्रेजी में इसे रोडोड़ेडॉ्न आर्बोरियम कहते है। इसे नेपाल देश के राष्ट्रीय पुष्प के रूप में मान्यता दी गई है। जो सांस्कृतिक पहचान का प्रतीक है। गुराँस की जीवंत सुन्दरता और औषधीय लाभ के कारण नेपाली समाज में इसका गहरा महत्व है।

इन लोककथाओं में एक प्रमुख पक्ष धार्मिक और आध्यात्मिक विश्वासों का भी मिलाता है। जिसमें सामान्य जन जीवन में देवी-देवताओं या स्थानीय देवताओं की कृपा या कोप का वर्णन दिखाई पड़ता है। जैसा 'स्वर्ग जाने वाली सीढ़ी' कथा में देख सकते है "बघसिंग मंडल नाम का एक महान संत उस गाँव में रहता था। साधना, जप-तप और दैवीयगुणों के कारण उन्हें सम्मानित व्यक्तित्व का दर्जा दिया जाता था। बघसिंग की कई वर्षों की तपस्या से प्रसन्न होकर उनके इष्टदेव ने उसे दर्शन दिए और कोई एक वरदान मांगने का आदेश दिया तो उसने अपने इष्टदेव से वरदान मांगते हुए कहा की मेरे गाँव वालों को किसी भी तरह का कोई परिश्रम करना न पड़े और न ही कभी खाने-पीने ने की दिक्कत

आए। बघसिंग के इष्टदेव ने यह वरदान स्वीकार कर लिया और इसी वरदान के कारण द्रामदीन गाँव हर तरह से संपन्न था।"[24] सामान्य जन-जीवन प्रायः देवी-देवताओं तथा अलौकिक शक्तियों और अदृश्य सत्ता में आस्था का वर्णन को देखा जा सकता है और यहीं आस्था से संबन्धित लोककथाओं के पात्रों एवं प्रसंगों के माध्यम से स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है।

किसी भी संस्कृति में परिश्रम और उत्पादन आदि को कितना महत्व दिया गया है वह इन कथाओं में देखा जा सकता है। जहाँ खेती-किसानी, पशुपालन, चरवाहा जीवन, शिल्पकला और व्यापार से जुड़े पात्र मिलते है। गो पालन नेपाली लोकसंस्कृति एवं भारतीय लोकसंस्कृति का अत्यंत महत्वपूर्ण अंग रहा है। लोककथाओं में इसकी गहरी छाप दिखाई देती है जिससे हम 'पक्षी पोशाक धारी राजकुमार1'की कथा देख सकते हैं "अपने माता- पिता की मृत्यु के बाद तीनों बहनें मिलकर गोपालन कर अपना जीवन व्यतीत करने लगती है। बड़ी बहन सुनपारी दूध, खोया, घी और चुरपी बानक बाजार में बेचती थी। वहीँ दूसरी मोनपारी पशुओं के लिए घास काटने और गायों को चराने, गोबर फेंकने का काम करती थी और छोटी बहन खाना बनाने और अपनी बहनों को खिलने में व्यस्त थी। इन बहनों का आजीविका का साधन ही गो पालन रह गया था।"[25]

गो पालन लोकथाओं में केवल जीविका का साधन भर नहीं है; बल्कि यह धार्मिक आस्था, आर्थिक संरचना, सामाजिक जीवन और सांस्कृतिक संवेदना सभी का प्रतिनिधि रूप हमारे सामने आता है। वहीं आर्थिक संरचना और व्यापार में भी धर्म और परम्परा का प्रभाव दिखाई पड़ता है। व्यापारी यात्रा पर निकलते समय अपने इष्ट देवी-देवता की पूजा-अर्चना करते है और शुभ मुहूर्त में लेन-देन करते है। जो संस्कृति और धार्मिक विश्वासों से जुड़ा हुआ है। यहीं कारण है कि व्यापार भी लोक संस्कृति का अभिन्न हिस्सा बनकर लोककथाओं में अभिव्यक्त हुआ है।

लोक कथाएँ समाज के रीति-रिवाज और परंपराओं का एक प्रमाणिक स्रोत माना जाता है। क्योंकि किसी भी संस्कृति का वास्तविक स्वरूप पर्व, विवाह-संस्कार, जन्म-मृत्यु के अवसरों और दैनिक आचार आदि का दूसरा रूप होता है। 'सुनेरी रेशमी मजेत्रो' कथा में कैसे एक माँ अपनी बेटी के विवाह के बाद उसे अपना एक पुश्तैनी शाल भेंट करते हुए कहती है। जिससे वह अपने पुरखों की धरोहर के महत्व को बताते हुए कहती है "सुनौली ने उस सुन्दर रेशमी मजेत्रो को देखते ही कहा! माँ दीजिए जरा में इसे ओढ़ कर देखू कि मुझ पर कैसा लगता है। इतने में माँ ने जोर से चिल्लाते हुए कहा रुको, श्याम सुंदरी इसे अभी हाथ मत लगाओ, कहकर अपनी तरफ खींच लेती है और वह सुनौली से कहती है कि यह रेशमी मजेत्रो, ऐसा-वैसा नहीं है आज से कई वर्ष पहले देवी माँ ने आशीर्वाद के रूप में, स्वयं मेरी नानी को यह रेशमी मजेत्रो दिया था। तब से अब तक यह रेशमी मजेत्रो हमारे परिवार के लिए एक अमूल्य उपहार है जो हमारी रक्षा करते हुए चला आ रहा है। यह रेशमी मजेत्रो चार पुस्त से हमारे खानदानी मजेत्रो के रूप में है आज भी इसकी चमक कम नहीं हुई है। अब यह तुम्हारी जिम्मेदारी है। इसे हमेशा संभाल कर रखना और एक बात याद रखना बेटी इसे बिना मंत्र के कोई न छुए नहीं तो अनर्थ हो जाएगा।"[26]

इसी तरह इन लोककथाओं में मृत्यु संस्कारों को केवल धार्मिक अनुष्ठान के रूप में नहीं दिखाया गया है; बल्कि यहाँ आत्मा की शांति, परिवार की सामाजिक प्रतिष्ठा और लोक विश्वासों का संरक्षण आदि का बड़े ही सूक्ष्म रूप के वर्णन किया गया है। जैसे 'सींचा-धुंचा' की कथा में पिता अपने बेटों से वचन लेता है कि उसके बेटे भी ठीक उसी की तरह आजीवन गरीबों की मदद करे। दो भाई अपने पिता को अंतिम समय में दिए गये वचन का पालन करते हुए गरीबों की सेवा करने लग गए। एक समय ऐसा भी आता है कि वे आर्थिक रूप से बहुत कमजोर हो जाते है और इसी आर्थिक समस्या के कारण दोनों भाई राजा के महल में चोरी करने जाते है। वहाँ पकड़ें जाने पर सिपाहियों ने बड़े भाई

धुंचा का सिर धड़ से अलग कर दिया; परन्तु सींचा अपने भाई का कटा हुआ सिर और खजाना ले कर वहाँ से भाग जाता है। अब हिन्दू धर्म एवं परम्परा के अनुसार बिना सिर के धर का अंतिम संस्कार नहीं हो सकता था। क्योंकि ऐसा माना जाता है कि आत्मा की शांति नहीं मिलेगी; परन्तु अंत में सींचा ने अपनी चतुराई से अपने भाई का सर और धर को एक कर के पूरे विधि विधान से उसका का अंतिम संस्कार किया जिसे इस कथन में देख सकते है "इस देश की परम्परा है अगर अपनो की मृत्यु हो जाती है तो उसे कंधा देने अर्थात शोक मनाने जरूर आते हैं। इस शव के भी अपने भी जरूर आएंगे। हमें बिना देर किए इस के शव का जल्दी दाह संस्कार के लिए श्मशान ले जाना होगा। ऐसा करने से इसके अपने अवश्य उसके सर को लेकर आएंगे। क्योंकि रिवाज के अनुसार अगर बिना सर के धर का अंतिम संस्कार करते है तो उसे मोक्ष प्राप्त नहीं होगा।"[27] इस प्रकार की कथाएँ हमें यह बताती है कि हमारी संस्कृति किसी भी परिस्थिति में जीवन को एक अर्थ देती है। चाहे वह विवाह का संस्कार हो या मृत्यु का। ये केवल आत्मा की शांति के लिए नहीं होता; बल्कि ये पारिवारिक और सामाजिक स्तर पर यह महसूस कराती है कि परम्परा निभाना हमारा कर्तव्य है। तथा संस्कृति मनुष्य को जीवन-मरण के सत्य को स्वीकार करना भी सीखा देती है।

ग. चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त प्रेम का विश्लेषण:

प्रेम मानव जीवन का स्वाभाविक एवं गहरा भाव है। यह केवल एक भाव ही नहीं हैं; बल्कि समस्त मानव सभ्यता की आत्मा है जिसमें विश्वास, त्याग, निष्ठा आदि छिपी होती है जो हृदय और आत्मा के बीच गहरा संबंध स्थापित करती है। अगर मानव जीवन में प्रेम की आवश्यकता की बात करें तो यह उतनी ही जरूरी है जितना मनुष्य जीवन के लिए भोजन। प्रेम के बिना जीवन शून्य और उदासीन होता है। यहाँ प्रेम से तात्पर्य केवल स्त्री-पुरुष का प्रेम नहीं है; बल्कि माता-पिता का स्नेह, भाई-बहन

का प्रेम, पति-पत्नी, सखी-सहेली आदि के प्रेम से है। श्रीचद्रं जैन सृष्टि में प्रेम का आधार बताते हुए लिखते है कि "विश्व में जो रमणीयता विद्यमान है उसका कारण भी प्रेम है। प्रेम की व्यापकता को देखकर ही इसे ईश्वर का प्रतिरूप कहा गया है। फलतः जिस प्रकार ईश्वर को किसी विशिष्ट परिभाषा में आबध्द नहीं किया जा सकता है, उसी प्रकार प्रेम की परिपूर्ण परिभाषा देना असम्भव सा प्रतीत होता है।" [28] वहीं आचार्य परशुराम चतुर्वेदी ने भी प्रेम की परिभाषा के संदर्भ में लिखा है कि "प्रेम की कोई निश्चित या उपयुक्त परिभाषा देना अत्यंत कठिन है। कदाचित इसी कारण, देवर्षि नारद से लेकर उसके अन्य आधुनिक मर्मज्ञों तक ने उसे किसी प्रकार अनिर्वचनीय ठहरने की चेष्टा की है।"[29] जीवन और सृष्टि की मूल शक्ति प्रेम है। यह ईश्वर की तरह अपरिभाष्य और अनंत है। इसे पूरी तरह शब्दों में बाँधना कठिन है; परन्तु इसका अनुभव और अभिव्यक्ति हर मनुष्य के जीवन और लोककथाओं में सहज रूप से देखने को मिलती है।

लोककथाएँ लोकजीवन की आत्मा होती हैं इसमें समाज के रीति-रिवाज, परम्परा, विश्वास, मान्यताएं आदि के साथ-साथ मानवीय संवेदनाएँ भी सूक्ष्म रूप में दिखाई पड़ती है। जिसमें प्रेम का स्वरूप बहुत ही व्यापक रूप में उभर कर आता है। इन चयनित लोकथाओं में भी स्त्री-पुरुष के प्रति आकर्षण, माता-पिता का स्नेह, पति-पत्नी का प्रेम तथा भक्त और भगवान के बीच का आत्मिक संबंध को सुन्दर ढंग से अभिव्यक्त किया गया है। जिसे 'उत्तिस और गुराँस की प्रेम कथा' में देख सकते है जिसमें रोज्जा और सुरीली नामक फूल का मानवीकरण करते हुए इनके पहली नजर में हुए प्यार का वर्णन किया गया है। जो कुछ इस प्रकार है "एक दिन अचानक सुरीली और रोज्जा कि भेंट हुई। सुरीली की एक झलक देखते ही रोज्जा के मन में सुरीली के प्रति प्रेम की भावना उत्पन्न हो जाती है। यह सुयोग घटना गुराँस के लिए बड़ी आश्चर्यजनक बात थी। गुराँस मन ही मन में सोचने लगा की सुरीली तो ठहरी उत्तिस की बेटी। जो लम्बे कद, सुडौल शरीर और अत्यंत सुन्दर शाररिक बनावट से भी

परिपूर्ण थी। उसकी इसी सुन्दरता के कारण उत्तिस की गणना मूल्यवान वृक्षों में एक उम्दा वृक्ष के रूप में होती हैं।"[30] यहाँ एक ऐसे प्रेम को दर्शाया गया है जो आकर्षण से शुरु होते हुए मृत्यु पर खत्म होता है क्योंकि इस प्रेमी जोड़े में जातीय एवं रंगरूप में विभिन्नता होने के कारण इनका प्रेम अधूरा रह जाता है। कथा के अंत में सुरीली रोज्जा से अलग होने पर आत्महत्या कर लेती है। जिससे यह प्रेम अधूरा रह जाता है।

लोक कथाएँ एक भावनात्मक सत्य पर आधारित होती है। इसमें कोई ऐतिहासिक सत्य नहीं है इसीलिए इसमें प्रेम कभी बलिदान और त्याग के रूप में दिखाई देता है तो कभी संघर्ष और दुखांत रूप में। ऐसी ही एक कथा 'रोंगीत और रोंगनू' की है जो दो जल स्त्रोत को आधार बनाकर पहाड़ियों के बीच बसे हुए है। दो नदी रोंगीत(रंगगित) और रोंगनु (टीस्टा) में प्रेम संघर्ष दिखाया गया है। इस कथा के अनुसार यह जल स्त्रोत रोंगनु और रोंगीत संसार के सबसे महान प्रेमी जोड़े में से एक माना गया है; लेकिन दोनों एक दूसरे से दूर थे। एक का उद्गम स्थल उत्तरी हिमालय की गोद था तो दूसरे का पश्चिम हिमालय की गोद में, इसलिए दोनों का मिलना असम्भव था। ये प्रेमी जोड़ा न मिल पाने के कारण हमेशा दुःखी रहते थे। कभी- कभी रोंगनु दूत के रूप में साँप को भेज कर रोंगीत की खबर पूछ लिया करती थी। तो वहीं रोंगीत भी कभी पक्षी को भेज कर अपने प्रेमी की हाल-चाल पूछा करती थी।

एक दिन इस प्रेमी जोड़े ने अपने उद्गम स्थल को एक करने का फैसला लिया और रोंगनू' हिमालय की ओर छलांग लगा कर रोंगीत के स्थान पर पहुँच जाता है। इस प्रकार दोनों का मिलन हो जाता है। उसके बाद दोनों प्रेमी कभी नहीं बिछड़ने का संकल्प लेते हुए खुशी-खुशी रहने लगते है। जिससे कथा की इस अंतिम पंक्ति में देख सकते है "आज भी दक्षिण सिक्किम के मल्लिन रबर वन के इर्द-गिर्द इन्द्रकील त्रिवेणी के रूप में गहरे हरे रंग में 'रोंगनु' और गहरे नीले रंग में 'रोंगीत' के प्रणय

मिलन अति सुन्दर दृश्य दिखाई देता है। यह महान प्रेमी जोड़ा परस्पर प्रेमालिंगन में बंध के एक लय, एक लहर और एक प्रवाह में एक साथ बहता हैं।"[31]

चयनित लोक कथाओं में भाई बहन का प्रेम बहुत ही पवित्र और भावुक रूप में मिलता है। भाई बहन के संबंध में केवल प्रेम नहीं होता है; बल्कि त्याग, रक्षा और आत्मीयता का भाव भी होता है। जिसे 'उतरों न उतरों प्रिय सुनकेशरी' कथा के माध्यम से समझ सकते है। इस कथा में एक राज परिवार होता है जहाँ एक राजा के तीन पुत्र और एक पुत्री होती है। पुत्री अत्यंत सुन्दर होने के साथ-साथ उसके सोने के केश थे जिसके कारण उसे पुरे राज्य में सुनकेशरी' के नाम से पुकारा जाता था।

एक दिन नदी में स्नान के समय उसके सोने केश कही खो जाते है जब यह बात सुनकेशरी की माँ को पता चली तो उसने पुरे राज्ये में यह घोषणा की, जो भी सुनकेशरी का खोया हुआ केश खोजकर लायेगा उसी से सुनकेशरी की शादी की जायेगी। संयोगवश वो खोया हुआ केश सुनकेशरी के मंझले भाई को ही मिल जाता है। अब घोषणा के अनुसार सुनकेशरी का विवाह उसके ही सगे भाई के तय कर दिया जाता है; परन्तु सुनकेशरी इस फैसले से बिलकुल खुश नहीं थी इसलिए वह घर से भाग कर कदम के पेड़ पर रहने लगी।

अब शादी का मुहूर्त हो चला था सुनकेशरी को खोजा जाने लगा। सुनकेशरी के नहीं मिलने पर घर के सदस्य एक-एक कर उसे खोजने निकल जाते है। उसे खोजते- खोजते कदम के पेड़ के नीचे पहुँच जाते है और जब पिता और दो बड़े भाई सुनकेशरी को पेड़ से नीचे उतरने के लिए कहते तो वह कहती है "उत्तर तो जाती भैया क्या करूँ आप पति ठहरे।''[32] कहने का तात्पर्य यह है कि भैया मैं आपके कहने से उत्तर तो जाती; परन्तु आपको अपना पति स्वीकार नहीं कर सकती हूँ। इसी तरह वह अपने बड़े भाई और माता-पिता को भी जेठ, सास-ससुर बोल कर संबोधित करती है। जिसके कारण वे आत्मग्लानि में नदी में छलांग लगाकर आत्महत्या कर लेते है; परन्तु यहाँ छोटा भाई अपने दीदी

को पेड़ से नीचे उतरने को नहीं कहता है; बल्कि वह उसके साथ पेड़ पर रहने लगता है। कुछ ही दिनों बाद वे नीचे आकर अपना नया जीवन शुरू करने लगते है। यहाँ सुनकेशरी और उसके छोटे भाई के माध्यम से भाई-बहन के रिश्ते की पवित्रता का वर्णन हुआ है। वहीं दो बड़े भाइयों की आत्महत्या जैसी त्रासदी इस रिश्ते को और गहरा कर देती, क्योंकि उसमें भाई-बहन के बीच का निःस्वार्थ प्रेम और आत्मीयता उजागर होती है।

इन कथाओं में पति-पत्नी का संबंध केवल दाम्पत्य जीवन तक सीमित न रहकर मित्रता पर भी आधारित होता है जब पति संकट में होता है तो पत्नी केवल संगिनी बनकर नहीं, बल्कि सच्चे मित्र के रूप में उसका साहस बढ़ाती है और साथ ही बुद्धिमान से मार्गदर्शन देती है जिससे हम 'पक्षी पोशाक धारी राजकुमार2' इस कथा में देखते है जिसमें एक राजकुमार राक्षसी से बचने के लिए पक्षी पोशाक धारण करता है; परन्तु इस बात से अनजान उसकी पत्नी जुनपारी एक दिन उस राक्षसी की बातों में आकर उस पक्षी पोशाक को जला देती है जिसके कारण राक्षसी राजकुमार को बंदी बना लेती है। जुनपारी को अपने किए पर बहुत पछतावा होता है। जिसके बाद जुनपारी चुपके से राजकुमार से मिलने जाती है और राजकुमार उसे कहता है अब जो होना था सो हो गया अगर तुम मुझे इस राक्षसी से बचाना चाहती हो तो जाओं और दस पक्षियों के पंख खोज कर एक नया पक्षीपोशाक तैयार करो तभी में इस राक्षसी से बच सकता हूँ।

जुनपारी दिन-रात एक कर के एक पक्षी पोशाक तैयार करती है और अपनी चतुराई और बुद्धि से अपने पति के प्राण बचा लेती है। यहाँ इन पत्रों के माध्यम से पति-पत्नी के रिश्तों में विश्वास एवं सुख-दुःख के साथी के रूप में दिखाई पड़ता हैं। जिस तरह राजकुमार को राक्षसी द्वारा बंदी बना लेने पर जुनपारी सावित्री की तरह अपने पतिव्रता धर्म, साहस, धैर्य, बुद्धिमानी और अटूट प्रेम से यमराज से अपने पति के प्राण वापस ले आई ठीक उसी प्रकार जुनपारी ने भी अपनी धैर्य, बुद्धिमानी और अटूट

प्रेम से अपने पति को राक्षसी के चुंगुल से बचा लेती है। यह कथा इसलिए भी महत्वपूर्ण क्योंकि नेपाली लोक में अभी भी यह लोक मान्यता है। "आज भी कुछ नेपाली समाज में इस लोककथा को लोगों के बीच काफी मान्यता मिली हुई है। लोग अपने घर परिवार और गाँवों की रक्षा के लिए चील, कबूतर, मोर आदि पक्षियों के रंग- बिरंगी पंखों से बनी कपड़े और सजावट की वस्तु रखते है क्योंकि अगर घर में पक्षियों के पंख रखते है तो वह आपकी रक्षा करेगी तथा काला जादू एवं बुरी नजर का प्रभाव भी नहीं पड़ेगा"[33]

इस प्रकार इन लोककथाओं में प्रेम की अभिव्यक्ति विविध रूपों में हुई है। कहीं प्रेम आकर्षण के रूप में उभर कर आया है तो कहीं पवित्र पतिव्रता के रूप में, कहीं वह बलिदान तो कहीं भक्ति के स्वरूप में। इन लोक कथाओं में प्रेम लोक मान्यताओं के माध्यम से जीवन को मूल्यवान बनाता हुआ दिखाई देता है।

घ .चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त धर्म का विश्लेषण:

धर्म, नियमों और कर्तव्यों का समूह है जो मनुष्यों को सही दिशा प्रदान करता है। धर्म का शाब्दिक अर्थ केवल पूजा-पाठ करना नहीं है; बल्कि यह उपदेश, आचरण और मूल्यों को भी उजागर करता है। जीवन के विविध पक्षों में धर्म का प्रभाव दिखाई पड़ता है। समाज में धर्म धार्मिक मान्यताएं, आस्थाएँ, विश्वास और कर्म काण्ड आदि रूपों में होता है। लोककथाएँ एक प्रकार से समाज का दर्पण होती है और इनमें धर्म के विविध पक्षों का वर्णन में सूक्ष्म रूप में दिखाई पड़ता है। सर जी.एल.तोमर के शब्दों में "धर्म कथा प्रग्न वैज्ञानिक युग की विचार सामग्री को विशेष ढंग से तथा प्रस्तुत करने का प्रयास करती है।"[34]

इन चयनित लोककथाओं में कई स्थानों में देवी देवताओं को पात्रों की रक्षा करते हुए बताया गया हैं तो कहीं उन्हें संकट से उभरते हुए जिससे यह पता चलता है कि मनुष्य ईश्वरीय न्याय पर आस्था रखता है। डॉ. श्रीचद्र जैन अपनी पुस्तक लोक-कथा विज्ञान में लिखते है कि "लोक-कथाओं की सांसों में ये देवता ऐसे बसे हैं, जैसे दूध में मक्खन रहता है। इसमें सबसे अधिक उल्लेख भगवान शंकर तथा भगवती पार्वती का हुआ है, क्योंकि दोनों स्वभावतः बड़े दयालु, बड़े भोले-भाले तथा बड़े सहायक है।"[35] जिसे 'सुम्निमा और पारुहाङ' की कथा में भी देख सकते है "किरात समाज में पारुहाङ और सुम्निमा को शिव ,पार्वती का प्रतीक माना जाता है और आज भी इस समाज में यह प्रचलित एवं लोगविश्वास है की पारुहाङ और सुम्निमा, शिव पार्वती के स्वरूप में धरती पर जन्में थे और साथ सुम्निमा को प्रकृति पुत्री भी माना गया है तथा इस जोड़े की पूजा अर्चना भी की जाती है। इस आस्था और विश्वास के प्रतिरूप के कारण लेक्सेप में स्थित शिव मंदिर के प्रवेशद्वार के दीवार पर सुम्निमा और परुहग की चित्र बना हुआ मिलता हैं।"[36] देवी-देवताओं के सम्बन्ध में यह कहना समुचित है कि कुछ तो ऐसे आराध्य है जो सर्वत्र मान्य है।

इसी संदर्भ में डॉ. श्रीचद्र जैन कहते है कि "इस विराट विश्व में देवी-देवता व्याप्त हैं ठीक उसी प्रकार लोक-कथाओं में भी ये किसी न किसी प्रकार विद्यमान है। कोई भी कथा इनके बिना न रोचक बनती है और न अलौकिक। ये अद्भुत शक्ति के जन्मदाता हैं और ये ही असम्भव को सम्भव बनता है।"[37] ऐसी ही विश्वास, आस्था एवं औलौकिक कथा 'स्वर्ग जाने वाली सीढ़ी ' कथा है। जिसमें एक दरामदीन नामक गाँव जो हर तरह से सम्पन्न था। यह सम्पन्नता इस गाँव को बघसिंग मंडल नाम का एक महान संत के कई वर्ष के तपस्या से प्रसन्न होकर उनके इष्टदेव ने उसे दर्शन दिया और उसे कोई एक वरदान मांगने का आदेश दिया तो उसने अपने इष्टदेव से वरदान मांगते हुए कहा की मेरे गाँव वाले को किसी भी तरह का कोई परिश्रम न करना पड़े और न ही कभी खाने-पीने के तड़पना पड़े बस मैं

इतना ही चाहता हूँ। बघसिंग के इष्टदेव ने भी यह इच्छा स्वीकार कर के उसे वरदान देते है। इस प्रकार यह गाँव पूरी तरह सम्पन्न हो चूका था इसलिए अब संत बघसिंग मंडल और गाँव वासी स्वर्ग जाने की चिंता करने लगें और एक स्वर्ग जाने वाली सीढ़ी बनाने लगते है; परन्तु वो सीढ़ी बनने से पहले ही नष्ट हो जाती है जिससे उनका स्वर्ग जाने का सपना टूट जाता है। जिससे इस कथन में देख सकते है "लेप्चा समुदाय में आज भी इस कथा की प्राचीनता, ऐतिहासिकता और लोग मान्यताएं उतनी ही ताजा और प्रसिद्ध है। जो आज भी दारमदिन के फैलावदार और विस्तृत रास्ते के एक तरफ मिट्टी के हांडियों के टुकड़े और मलबे के ढेर पाए जाते हैं।"[38] इन कथाओं का उद्देश्य मानव-जीवन की सीमाओं से बहार की शक्तियों को प्रतीकात्मक के रूप से प्रस्तुत करना होता है और ये समाज में आदर्श, नैतिक मूल्यों और धार्मिक विश्वासों के सशक्त रूप में उभरती है।

नैतिक मूल्यों की कथाओं में धर्म का प्रभाव गहरे रूप में दिखाई पड़ता है। जहाँ जीवन में सत्य का पालन करना ही सबसे बड़ा धर्म माना गया है। इन चयनित लोककथाओं में भी देख सकते है कि जो पात्र हमेशा सत्य की राह अपनाते हुए दिखाई पड़ते है अंत में उन्हें सफलता मिलती है जैसे 'धर्म और पाप कहा है' इस कथा में धर्म केवल पूजा-पाठ या संप्रदाय तक सीमित न रहकर नैतिक कर्तव्य, संवेदना और जीवन मूल्य के महत्व पर प्रकाश डालती है। इसमें एक मुसलमान व्यक्ति अपनी रोजी रोटी के लिए गाय का मांस बेचता है और इस काम को करते हुए वह बिलकुल शर्मिन्दा नहीं होता है। क्योंकि यह उनके खान-पान और धार्मिक परंपरा का हिस्सा है। वही दूसरी ओर एक हिंदू व्यक्ति अपने धर्म की रक्षा करना चाहता है, उसके लिए गाय धार्मिक आस्था का प्रतीक है। हिंदू धर्म के व्यक्ति द्वारा बहुत प्रयास करने पर भी गायों की हत्या को रोक पाने में वह असमर्थ होता है। उसे आत्मग्लानि होती है, वह अपने आप को दोषी समझने लगता है और अपने गुरु के पास जाता है और बोलता है इस पाप का प्रायश्चित कैसे करें? गुरु ने उसे प्रायश्चित के लिए वनवास जाने को कहते है। जिसके दौरान

वह चार चोरों से एक गाँव को बचाता है और इससे उसके पाप का प्रायश्चित हो जाता है। यहाँ धर्म केवल बाहरी कर्मकांड नहीं है; बल्कि आंतरिक मानवता की भावना और संवेदना से जुड़ा दिखाई देता है।

इस कथाओं से समाज में धार्मिक टकराव और भिन्न-भिन्न मान्यताएं दिखाई पड़ती है और जैसे ये दोनों ही पत्रों अपने-अपने विश्वसों के आधार पर काम कर रहें हैं इसलिए धर्म का अलग-अलग रूप सामने आता है जिसमें आस्था, परंपरा और नैतिकता एक-दूसरे से उलझती है जिससे कथा के इस कथन में देख सकते है "गुरु जी ने कहा कोई भी वस्तु या बाते दूसरों को दुःख या कष्ट दे चाहे वो धर्म ही क्यों न हो वो पाप है। लेकिन धर्मशास्त्र कहते है कि अगर अनेक लोगों की रक्षा करते हुए कोई पाप भी हो जाता है तो उसे पाप के गणना में नहीं गीना जाता है । वह भी एक प्रकार का धर्म ही है । तुम्हारे एक गाय की जान बचाने के चलते दो गाय की हत्या होने वाली थी तो वही दो गाय को बचाने के चलते चार गाय कि हत्या हो गई। लेकिन तुमने हजारों गाँव वालों के जान बचाने के लिए उन चार चोरों को मार डाला इसलिए इसी पुण्य के भाव से तुम्हारे वो पापों का प्रायश्चित हो गया है"[39] अर्थात यहाँ हिन्दू व्यक्ति का दुःख यह सिखाता है कि सच्चा धर्म केवल अपनी आस्था की रक्षा करना नहीं है ,बल्कि सभी जीवों के प्रति दया, संरक्षण और संवेदनाशील रखना होता है।

इस तरह लोकथाओं को किसी भी समाज की आत्मा माना जाता है जिसमें मनुष्य जाति का विश्वास धर्म एवं आचरण का प्रभाव गहरा मिलता है। जिससे 'आंतरिक रोग की औषधी' कथा में भी देख सकते है। जिसमें एक धनवान व्यक्ति होता है उसे अपने धनवान होने पर बहुत घमंड करने लगा था। सेठ के मन में धर्म के प्रति इतने अनास्था के भाव को देख कर उसके स्वर्गीय पिता एवं उनके पुरखों को बहुत कष्ट होता था और इसी कारण उसे सबक सिखाने के लिए उसके स्वर्गवासी पिता धरती पर उसका ही रूप धारण कर आते है फिर अंत में वन में रहकर भक्ति भाव से उसका हृदय परिवर्तन हो

जाता है जैसे कथा के इस कथन में बताया गया है “सेठ जी जंगल में एक छोटी सी झोपड़ी बनाकर वहीं भजन-कीर्तन करके अपना जीवन व्यतीत करने लगें। इस प्रकार देखते ही देखते एक वर्ष बीत जाता है। भजन-कीर्तन की महिमा से सेठ के हृदय का सारा अभिमान दूर हो गया। उनका अहंकारी स्वभाव अब सरलता एवं ईमानदारी में परिवर्तन हो चूका था। उधर सेठ बने बैठे पिता अपनी दिव्य दृष्टि माध्यम से अपने बेटे के विचारों अवगत हुए। एक दिन पिता सेठ योगी का रूप धारण कर अपने बेटे के कुटियाँ में पहुँचे। सेठ जी ने योगी को कुटियाँ के बहार देख कर आदरपूर्वक सत्कार किया। सेठ के इस आदर-सत्कार से पिता बहुत प्रसन्न हुए और निश्चिंत हो गए कि अब सेठ से द्वारा किसी को अपमान करने का अपराध नहीं होगा अर्थात सेठ जी का अहंकार का रोग जड़ से समाप्त हो गया है।”[40] इस धनवान व्यक्ति के माध्यम से बताया गया है कि चाहे व्यक्ति कितना भी धनवान क्यों न हो, यदि उसमें दया और आस्था का अभाव है तो उसका जीवन अधूरा और तुच्छ माना जाता है। कंजूसी और स्वार्थ से अर्जित किया हुआ धन अंत में व्यक्ति को अकेला और अपमानित कर देता है। इस प्रकार इन लोककथाओं में भक्ति-भाव की अभिव्यक्तियों से मनुष्य के हृदय को शांति एवं नैतिक मूल्य अपनाने की प्रेरणा मिलती है। धर्म पर आधारित लोक कथाओं में लोगों के लोभ, मोह और अहंकारी को मिटा के दया, करुणा, सत्य और परोपकार का भाव भक्ति द्वारा संभव होता है। भक्ति केवल ईश्वर-उपासना नहीं, बल्कि जीवन और समाज को बदलने की शक्ति है।

ङ. चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त जादू- टोना का विश्लेषण:

इस तरह की लोक-कथाएँ लोकजीवन की कल्पना, विश्वास, अनुभवों एवं आस्था को प्रतिबिंब करती है। जिसमें अलौकिक और चमत्कारी तत्वों की प्रमुखता दिखाई पड़ता है तथा इनके अंतर्गत जादू-टोनों एक विशेष रूप से विद्यमान होता है। जिससे कथा में रहस्यमय, रोचक और

शिक्षामयी बना रहता है। जादू टोने से तात्पर्य उन अलौकिक शक्तियों से है जो समाज की कल्पना, आस्था और अंधविश्वासों से जुड़ें होते है। भारतीय समाज में जादू टोने उल्लेख तथा प्रयोग प्राचीन समय से ही होता रहा है। इस पर इनका विश्वास इतना अधिक है की ये मानते है की भगवान ने ही इस समस्त सृष्टि को अपने जादू से बनाया है। लोक-कथाओं में जादू-टोनों की अभिव्यक्ति अनेक रूपों में देख सकते है जिन्हें निम्नलिखित विद्वानों के मतों में भी देख सकते है।

श्रीचद्र जैन ने अपने पुस्तक लोक-कथा विज्ञान में जादू टोने और धर्म के बीच संबंध बताते हुए कहा है कि "मंत्र, तंत्र जंत्रादि की चर्चा प्रायः विश्व के समस्त धार्मिक ग्रंथों में हुई है। धर्म एवं जादू को एक मानना अथवा एक को दूसरे का अंग मानना किसी युग में समुचित कहा गया था, क्योंकि ये दोनों दूध-पानी की भांति एक दूसरे से इतने एकाकार हो गये थे कि अप्रबुद्ध मानव इन दोनों के मिलन को समझ सकने में अपने आपको असमर्थ पाता था।"[41] वही विद्यमार्तण्ड सत्यव्रत सिद्धान्तालंकार के शब्दों में- आदिकालीन धर्मों तथा जादुओं का अध्ययन करने पर कुछ बातें ऐसी दिख पड़ती है जो धर्म तथा जादू में समान हैं। इसका यह भी कारण है कि आदिकालीन समाज में धर्म तथा जादू हिलमिल गए थे। आदिकालीन समाज में ही नहीं वर्तमान जनजातियों और लोक में भी इन दोनों में इतना सम्मिश्रण हो गया है कि धर्म की बातों में जादू और जादू की बातों में धर्म की बात घूम गई है।"[42] आशय यह है कि मानव सभ्यता के प्रारंभिक समय में धर्म और जादू के बीच कोई भेद भाव नहीं था क्योंकि उस समय विज्ञान ने इतनी प्रगति नहीं की थी। वे प्राकृतिक शक्तियों को समझ नहीं पाते थे। जिस कारण उन पर नियंत्रण एवं उनका प्रयोग करने के लिए जादू-टोना और धार्मिक अनुष्ठान का सहारा लिया जाता था।

इस तरह धीरे-धीरे जब समाज शिक्षित होने लगा तो लोग धर्म और जादू के बीच अंतर समझने लगें। इस सम्बन्ध में श्रीचद्र जैन लिखते हैं "यह सत्य है कि दोनों का सम्बन्ध उन अलौकिक शक्तियों

से हैं जो क्षण में ही ऐसे अद्भुत कार्य सम्पादित कर देती है जिसकी कल्पना भी मानव मन नहीं कर पता है। धर्म की भांति जादू भी मानव के कल्याणार्थ प्रयत्नशील है और ये दोनों इंसान को क्षतियों से बचाते हैं और उनकी मनोकामना को भी पूर्ण करते हैं। आदि मानव ने अपनी शक्ति को तोलकर जब उसके गुरुत्व का अनुभव किया और प्रकृति के उपकरणों को ध्यान से देखा कि बादल सूर्य की ज्योति को ढक सकते हैं, पवन का वेग महान वृक्ष को हिला सकता है तथा आंधी तूफ़ान स्थिर शिलाओं को चंचल बना सकते हैं, तब उस निर्भीक मानव ने जादू का सहारा लिया होगा और उसके माध्यम से अलौकिक शक्ति को अपने वश में करने का प्रयास किया होगा। यह भावना दृष्टि जादू के उद्भव का कारण मानी जा सकती है।"[43] यहाँ भावना नकारात्मक नहीं बल्कि मानव उत्थान का प्रतीक है क्योंकि इस प्रकार के इच्छाएँ और शक्ति की चाह ने मनुष्य को आगे बढ़ने में प्रेरित किया है।

'जादू' क्या है? इस सम्बन्ध में डॉ. फ्रेजर की परिभाषा उल्लेख है "जादू मनुष्य के विश्वासों तथा व्यवहारों के उस संग्रह को कहते हैं जिस पर किसी प्रकार की आलोचना दुबारा परख या लेना – छोड़ना सम्भव नहीं हो सकता।"[44]

दुरखीम ने जादू के सत्ता को धर्म से भी पहले मानते हुए लिखा है कि "धर्म का अनुष्ठान सामाजिक हित की दृष्टि से किया जाता है जादू सामाजिक अहित किन्तु व्यक्ति के हित की दृष्टि से किया जाता है। जब व्यक्ति को अपना भला तथा दूसरे का बुरा करना होता है, तब वह जादू की शरण लेता है। कभी-कभी सिर्फ अपने भले के लिए भी जादू का आश्रय लिया जाता है। अगर यह कहा जाए कि धर्म सामाजिक है और जादू वैयक्तिक है तो कोई अत्युक्ति न होगी। आदिकालन मानव को जब जादू की शक्ति में संदेह होने लगा तब जादू का स्थान धर्म ने लेना शुरू किया। इस दृष्टि से जादू की सत्ता धर्म से पहले मानी जाती है।"[45]

विज्ञान एवं जादू के साम्य को स्पष्ट करते हुए डॉ. फ्रेजर लिखते है "सृष्टि की शक्तियों पर अधिकार करके उनका अपनी इष्ट सिद्धि के लिए विनियोग है। जादू का भी उद्देश्य ऐसे ही कार्य करना है। विज्ञान निसर्ग के नियमों पर निर्भर करना है। विज्ञान को भरोसा रहता है कि निसर्ग नियमों को योग रीति से काम में लाया जाये तो वह निश्चय ही फलदायी होगा। जादूगर भी अपने मंत्र, तंत्र, यंत्रों पर और उसी क्रिया से संबंधित प्रकृति की वस्तुओं के स्वभाव पर ऐसे ही निर्भर करता है। जब जादू की व्यर्थता की जानकारी होने लगी तब धर्म उत्पन्न हुआ। प्रकृति की अलौकिक शक्ति लहरी स्वभाव की है, उसका कुछ ठिकाना नहीं। उसकी शरण में जाना चाहिए, उसका मन अपने अनुकूल करना चाहिए, यही भावना धर्म को जन्म देती है। फ्रेजर ने धर्म और जादू की विषमता और विज्ञान और जादू की समानता पर जोर देकर धर्म, जादू और विज्ञान का मनोविज्ञान बतलाया है।"[46] विज्ञान और जादू ये दोनों ही असाधारण शक्तियों की तरह दिखाई पड़ते है; लेकिन जहाँ विज्ञान यथार्थ और प्रमाण पर आधारित है तो वहीं जादू कल्पना और विश्वास पर आधारित है।

इन चयनित नेपाली लोककथाओं में भी जादू एक प्रकार से लोक समाज की कल्पना को रूप देता है तो वही विज्ञान समाज की यथार्थ शक्ति को दर्शाता है। इन लोककथाओं में जादू को अलौकिक शक्ति माना गया है जो सामान्य मनुष्यों की पहुँच से परे समझी जाती है। अलौकिक शक्ति का प्रयोग किसी सामान्य व्यक्ति के बस का नहीं है, जैसे श्राप देना सामान्य मनुष्य के बस में नहीं है। यह कार्य देवता, ऋषि, साधु या तांत्रिक आदि व्यक्तियों द्वारा ही किया जा सकता है। जैसे 'विवाह का प्रस्ताव' लोक कथा में दिखाई पड़ता है। इस कथा में एक राजा के दो पत्नियाँ थी। इन दोनों पत्नियों से राजा की एक-एक बेटी थी। पहली पत्नी देवयानी से सुरुचि और दूसरी पत्नी तारकेश्वरी से ललितारानी। देवयानी बहुत ही गुणी और दयालु थी तो वहीं छोटी रानी तारकेश्वरी दृष्ट और लालची स्वभाव की औरत थी। दोनों की बेटियों का स्वभाव अपनी-अपनी माँ से मिलता था।

राजा को भी अपनी दूसरी पत्नी ज्यादा प्रिय थी इसलिए उसकी अपनी पहली पत्नी को नौकरों को रखने वाले घर में रहने के लिए भेज दिया। देवयानी और सुरुचि से महल के सारे काम करवाते। इसी तरह सुरुचि को वन में पशुओं को चराने के लिए भेजा जाता। एक दिन जब वह पशुओं को चराकर घर लौट रहे थी तब उसे अचानक एक अजीब सी आवाज सुनाई दी। जिसमें उसे विवाह का प्रस्ताव दिया जा रहा था; परन्तु सुरुचि बिना पीछे मुड़े घबराती हुई घर लौट आती है। सुरुचि के साथ इस तरह की घटना बार-बार होने लगती है। अंत में सुरुचि अपनी माँ के कहने पर विवाह का प्रस्ताव स्वीकार कर लेती है। जिसके बाद उसे पता चलता है कि विवाह का प्रस्ताव देने वाला कोई व्यक्ति नहीं; बल्कि एक अजगर सांप था। दरअसल यहाँ एक राजकुमार को वन देवता द्वारा अजगर बनने का श्राप मिला था। जो किसी राजकुमारी सुरुचि से विवाह करने के बाद मुक्त हो जाएगा। जैसा कथा में देख सकते है "युवक ने देवयानी को पूरी कथा कह सुनाई, कि किस तरह एक दिन जब वनदेव से उसकी लड़ाई होने पर उसने क्रोध में आकर उन्होंने मुझे अजगर बनने का श्राप दिया और मैं उसी दिन एक युवक से अजगर बन गया। मैंने वनदेव से बहुत प्रार्थना की, कि मुझे इस श्राप से मुक्त कर दे; परन्तु अब यह संभव नहीं था। अंत में उन्होंने मुझे इस श्राप से मुक्त होने का एक उपाय बताया यदि मेरा किसी राजकुमारी से विवाह हो जाता हूँ तो मैं इस श्राप से मुक्त हो सकता हूँ। और फिर से मुझे मनुष्य जीवन मिल जाएगा। इसी तलाश में मैं कई वर्षों से इस वन में भटक रहा था अंत में मैंने एक दिन अचानक सुरुचि को वन में देखा तो मुझे लगा कि यह अवश्य ही कोई राजकुमारी होगी फिर मैंने सुरुचि के बारे में जाँच पड़ताल की तो पता चला की सुरुचि एक राजकुमारी ही है। इसलिए मैंने सुरुचि के सामने विवाह का प्रस्ताव रखा और उसके यह प्रस्ताव स्वीकार करने पर ही मैं आज वनदेवता के श्राप से मुक्त हो पाया हूँ।"[47] यहाँ युवक का अजगर में बदल जाना कोई प्राकृतिक नहीं; बल्कि जादुई परिवर्तन है यह किसी जादू-मंत्र के या श्राप की शक्ति से होता है। इसी तरह 'सपनों का प्रेम' कथा में दानव और अप्सरा अपने जादुई शक्तियों से राजकुमार रत्नकुमार और राजकुमारी मृर्गावती के प्रेम को सफल होते

दिखाया गया है। जिसे कथा में इस प्रकार दिखाया है "आधी रात बीतने के बाद ठीक पहले की तरह दानव और अप्सरा की मुलाकात हो जाती है। दोनों को राजकुमार और राजकुमारी मृर्गावती की हालत देख कर बहुत दुःख हुआ। दानव ने अप्सरा से कहा इन दो प्रेमियों के दुःख के कारण हम दोनों ही है, अगर हमने इन्हें नहीं मिलाया होता तो आज इनका यह हाल नहीं होता। अब ये एक दूसरे को नहीं भूल पा रहे है तो हमें इन्हें फिर से मिलाना होगा। अप्सरा और दानव ने उन दोनों को अपनी जादुई शक्ति से उनको गहरी नींद में सुलाकर और क्षण भर में राजकुमारी मृर्गावती को ले जाकर राजकुमार के गोद में सुला देते है।"[48] इस कथा का तात्पर्य है कि प्रेम केवल मानव प्रयास से ही नहीं; बल्कि स्वर्गीय करुणा एवं पृथ्वी शक्तियों से भी सफल होता है तथा जादू केवल चमत्कार नहीं, यह प्रेम को पूरा करने वाला संयोग भी होता है।

श्रीचंद्र जैन ने कथाओं में जादू के चार रूप बताते हुए लिखा है कि "जादू के द्वारा शुभाशुभ दोनों प्रकार के कार्य सम्पादित होते हैं। इसके माध्यम से रक्षा भी होती है, कष्टों का निवारण भी होता और विनाश भी किया जाता है। ऐसे स्थिति में संवर्धनात्मक, संरक्षणात्मक, विनाशक तथा प्रतिबंधात्मक। इस प्रकार जादू के चार रूप कहे जा सकते हैं। आकर्षण, सम्मोहन, उच्चाटन एवं मारण भी जादू की शक्ति से संभव बताए गए है।"[49] ईसुरी की निम्न पंक्तियों में भी जादू का आकर्षण और सम्मोहन प्रस्तुत हैं-

"तुमने नेह का जादू कीना,
जिया परायो लीना।
परगऔ मंत्र मोहनी मौपै,
बातन में पड़ दीना।
गिरदी खात रात दिन दौरत,

अब कल परत कहीं ना।

'ईसुर' आप भाई मुंदरी हैं,

मौखां करो नगीना।"[50]

जादू मंत्र का प्रयोग प्राचीन समय से प्रचलित रहा है। मंत्रों द्वारा प्रेमी-प्रेमिकाओं को वश में करना, रोग निवारण करना अनेक लोगों का व्यवसाय था। उदासीन और विरोधी व्यक्तियों को अपने वश में करना हो या दूसरों को वश में करवाना हो तो जादू और मंत्र का सहारा लिया जाता था। अगर लोक साहित्य में हम जादू-टोने की बात करें तो लोक कथाओं का विशेष संबंध दिखाई पड़ता है। जादू लोक कथाओं का विभिन्न अंग है। जो इन कथाओं के माध्यम से अभिव्यक्त हुआ है। जैसे 'सुनेरी रेशमी मजेत्रो' की कथा में एक जादुई खानदानी शाल का वर्णन किया गया है जो माँ अपनी बेटी को उपहार स्वरूप भेंट करते हुए उसके महत्व को समझाती है। " माँ ने कुछ मंत्र का उच्चारण करते हुए उस सुन्दर रेशमी मजेत्रो को निकाला। उस मजेत्रो में नीले, हरे लाल और सोने के रंग- बिरंगी रत्न की जड़ी लगी हुई थी। सुनौली ने उस सुन्दर रेशमी मजेत्रो को देखते ही कहा माँ दीजिए तो जरा में इसे ओड़ कर देखू मुझ पर कैसा लगता है। इतने में माँ ने जोर से चिल्लाते हुए कहा रुको श्याम सुंदरी इसे अभी हाथ मत लगाओ, कहकर अपनी तरफ खींच लेती है। वह सुनौली से कहती है कि यह रेशमी मजेत्रो ऐसा-वैसा नहीं है आज से कई वर्ष पहले देवी माँ ने आशीर्वाद के रूप स्वयं मेरी नानी को ये रेशमी मजेत्रो दिया था। तब से अभी तक यह रेशमी मजेत्रो हमारे परिवार के लिए एक अमूल्य उपहार अर्थात हमारी रक्षा कर रहा है। यह रेशमी मजेत्रो चार पुस्त से हमारे खानदानी मजेत्रो के रूप में है। आज भी इसकी चमक कम नहीं हुई है, अब यह तुम्हारी जिम्मेदारी है कि इसे हमेशा इसे संभाल कर रखना और एक बात याद रखना बेटी इसे बिना मंत्र के कोई न छुए नहीं तो अनर्थ हो जाएगा।"[51] अर्थात जादू यहाँ लोक संस्कृति को उजागर करता है। श्रीचद्र जैन के शब्दों में "यह कहानी में अलौकिकता सम्पन्न

करता है, कथानक की रोचकता को बढ़ाता है, उसमें विभिन्न मौड़ो को जन्म देता है और साथ ही साथ श्रोता के मन में उत्सुकता को भी प्रस्फुटित करता है। यही जादू नायक को सजग बनता है, विपत्तियों से लड़ने के लिए सजग करता है और उसके शरीर में अतार्किक बल उत्पन्न कर देता है। जहाँ जादू कहानियों के पात्रों को आकाश में उड़ाता है, स्वर्ग में ले जाता है, इंद्र के दरबार में बैठाता है, प्रेमिकाओं से भेंट करवाता है और भूत प्रेत-प्रेतादि के भय को भी नष्ट करता है।" [52]

इस प्रकार लोक कथाओं में जादू की अभिव्यक्ति समाज की कल्पना शक्ति, परम्पराओं, लोकविश्वास एवं लोकमान्यताओं और संस्कृति के प्रतीकों के रूप में वर्णित है। यहाँ लोक जीवन की कठिनाइयों और आशाओं को प्रतीकात्मक रूप में प्रस्तुत किया गया है। जिससे कथा में चमत्कारिता तो आती ही है और साथ ही इसमें मानव जीवन के मूल्य भी निहित हैं।

च. चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त प्रकृति एवं पशु-पक्षी का विश्लेषण:

लोककथाओं को लोक जीवन का दर्पण माना जाता है। जिसमें आम जनजीवन की भावनाएँ, अनुभव, जीवन के संघर्ष, आस्था, विश्वास एवं पर्यावरण का गहरा संबंध दिखाई पड़ता है। अगर हम विज्ञान के दृष्टिकोण से देखे तो प्रकृति के बिना जीवन संभव ही नहीं है, चाहे मनुष्य हो या पशु-पक्षी, इनका जीवन प्रकृति पर निर्भर रहता है। यहाँ तक कि हवा, पानी, खान –पान, पेड़-पौधे आदि की आवश्यकता प्रकृति के माध्यम से मनुष्य की आवश्यकताओं, प्रकृति के संरक्षण, संतुलन और सुन्दरता को बनाएं रखने के लिए जरूरी है। मनुष्य के लिए जितनी ऑक्सीजन कि जरूरत होती है उतना ही पेड़-पौधे स्वास्थ्य रहने के लिए कार्बोहाइड्रेट की आवश्यकता पड़ती है।

लोककथाओं में प्रकृति एवं पशु-पक्षी की भूमिका केवल प्रतीक के रूप में नहीं है; बल्कि कई बार ये मुख्य पात्रों की भूमिका में भी अभिव्यक्त होते है। इन्हें देखकर लगता है लोककथाओं का जन्म प्रकृति की सुखद छाया तथा पुष्प के सुरभित वातावरण में ही हुआ होगा। प्रकृति और मनुष्य का संबंध आत्मा और शरीर की तरह है। प्राकृतिक सौरभता लोकथाओं को जीवंतता, प्रतिकात्मकता और नैतिकता प्रदान करती है। क्योंकि लोककथाएँ प्रकृति की संवेदनात्मक, धार्मिक और सांस्कृतिक रूपों को सहेजकर पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ाती है।

इन लोकथाओं में पशु-पक्षियों को मुख्य पात्र के रूप में उभारते हुए उनको मानवीय गुणों से युक्त दिखाया गया हैं। "लोक- कथाओं में प्रकृति से एकाकार मानव का एक नवीन ढंग से मिलता है। विश्व के कोलाहल से परे सचमुच ग्राम्य जीवन स्पृहणीय है। प्रकृति की ग्रामों पर विशेष कृपा है। उषा की अरुणिमा, चमकता हुआ दिवाकर, मुस्कराता हुआ सुधाकर, हँसती हुई तारावलियाँ, हरे-भरे खेत, लता-वितार, वृक्ष-निकुंज, नदी-पोखर, ताल-तलैया, धोनों से लहलहाती हुई डहरें तथा कमलों और सिंघाडों से सजे हुए जोहड़ हृदय को मुग्ध कर लेते है। कुलचे भरते हुए मृग-शावक, कलरव करते हुए पक्षी, नृत्य करता हुआ मयूर, कोयल की कूहू- कूहू, पपीहे की पी-पी, गोधूलि की बेला में चरागाहों से लौटती हुई गायें तथा उनसे मिलने को आतुर उनके बछड़े, चलते हुए रहट और परोहे, मस्त चाल से चलती, सिर पर घास की गठरी उठाए अथवा पानी की गगरी लिए ग्राम्य नारियाँ तथा खेतों से लौटते हुए कृषक बरबस हमारा ध्यान आकृष्ट कर लेते है। इसी से हमारी लोक कथाओं में प्रकृति मानव की चिर-सहचरी है। वहाँ पक्षी मनुष्य के साथ वार्तालाप करते हैं। पशु उसके दुख में कातर होते हैं। वृक्ष और लताएं प्रखर आतप से तप्त पथिक को विश्रान्ति देती हैं और साथ ही कभी-कभी उसकी कठिनाइयों में हाथ बंटाती सी प्रतीत होती हैं। वहाँ मनुष्य और पशु-पक्षी जगत भिन्न हैं। वे परस्पर एक-दूसरे के सुख-दुख में चिरसंगी हैं। सच तो यह है कि लोक-गाथाकार भी कालिदास के

समान प्रकृति का कवि अथवा गाथाकार कहा जा सकता हैं।"[53] यह कथन लोक कथाओं के विस्तृत क्षेत्र व्याख्यायित करता है जिसमें पेड़-पौधे, नदी और पशु-पक्षियों को मानवीय प्रतीकों के साथ प्रस्तुत किया गया हैं। जैसे सुम्निमा और पारुहाङ कि कथा में सृष्टिकर्ता को हिमालय के सृजन के बाद लगा कि यदि इस विशाल और विस्तृत हिमालय का कुछ उपयोग नहीं किया गया तो यह सुन्दर रचना ऐसे ही व्यर्थ हो जाएगी। इसी कारण सृष्टिकर्ता ने हिमखंड में सबसे पहले एक युवक और एक युवती का सृजन किया। उन्होंने गोकोपी नाम का एक पुरुष और संत सुरुख नाम की एक महिला को बनाया। सृष्टिकर्ता ने इन दोनों को विवाह के बंधन में भी बांध दिया। इन्होंने एक परम सुंदरी बालिका को जन्म दिया। जिसका नाम उन्होंने सुम्निमा रखा। अब समस्या यह थी कि सुम्निमा पूरी सृष्टि में अकेली हो गई थी। हिमालय पर्वत एवं श्रृंखलाएँ इतनी सुन्दर, भव्य तथा शालीन होने पर भी सुम्निमा अकेली पड़ गई थी इसलिए सुम्निमा उस वीरान स्थान को छोड़कर, धरती पर प्रकृति के बीच रहने लगी। " वृन्दावन के एकांत जंगल में प्रकृति पुत्री के रूप में सुम्निमा वन के पशु-पक्षियों और प्रकृति के साथ खेलते-कूदते बड़ी होती है। सुम्निमा हवा , जल पेड़, पशु-पक्षी और वन आदि की भाषा भी समझने लगी थी। सुम्निमा वन की रानी बनकर अपना जीवन स्वतंत्र रूप में व्यतीत कर रही थी है। सुम्निमा प्रकृति के वातावरण में घुल-मिल कर देखते ही देखते वह एक सुन्दर नवयौवन युवती हो गई।"[54] अर्थात प्रकृति और मनुष्य का संबंध माता और संतान का है तथा मनुष्य प्रकृति की गोद में जन्म लेता है और प्रकृति के संसाधनों से फलता-फूलता है और अंत में उसी में विलीन हो जाता है।

इसी तरह इन लोक कथाओं में प्रकृति एवं पशु-पक्षियों का मानवीकरण अनेक स्थानों पर दिखाई पड़ता है। जैसे रोँगीत और रोँगनू की कथा में दो नदियों के बीच प्रेम-संबंध दिखाया गया है। जिसमें रोँगीत प्रेमिका थी तो रोँगनू प्रेमी था। इन दो जल स्रोतों का उद्गम स्थल अलग-अलग होने के कारण कभी एक-दूसरे से मिलना संभव नहीं था। कई वर्षों के संघर्षों के बाद रोँगीत और रोँगनू का

मिलन हो जा रहा था। इस कथा के अनुसार रोंगनु और रोंगीत संसार के सबसे महान प्रेमी जोड़ा था; परन्तु इनका मिलना असंभव सा था। क्योंकि एक का उद्गम स्थल उत्तरी हिमालय की गोद से था तो दूसरे का पश्चिम हिमालय की गोद से। इस कारण एक दूसरे से नहीं मिलने के कारण हमेशा दु:खी रहते थे। कभी- कभी रोंगनु दूत के रूप में साँप को भेज कर और रोंगीत दूत के रूप में पक्षी को भेज कर एक दूसरे के हाल-चाल पूछ लिया करते थे। एक दिन दोनों प्रेमियों ने एक होने का निर्णय लिया और दो प्रेमी जोड़े एक होकर जन्म-जन्म के साथ बहनों की कसम लेते है। "त्रिवेणी के रूप में गहरे हरे रंग में 'रोंगनु' और गहरे नीले रंग में 'रोंगीत' का प्रणय मिलन अति सुन्दर दिखाई देता है। ये दो महान प्रेमी जोड़े परस्पर प्रेमालिंगन में बंध के एक लय, एक लहर और एक प्रवाह में एक साथ बहते हैं। प्रेमास्थल पौशाकशोक के उपर से जब नीचें देखते है तो पहाड़ की जड़ एक हरी रंग की परिधान में सजी हुई प्रेमिका और दूसरा नीले रंग के परिधान में सजा हुआ प्रेमी जोड़ा अर्थात रंगीन टीस्टा नदी के साक्षात रूप में दर्शन होते है। आज भी इन्द्रकील त्रिवेणी की पवित्र भूमि स्वर्ग की अनुभूति लिए रोंगीत- रोंगनु प्रेम की साक्षी बनकर निरंतर बह रही है।"[55] यहाँ इस प्रेम कथा के माध्यम से प्राकृतिक सौन्दर्य तथा प्रेम में आने वाले चुनौतियों, संघर्ष एवं वेदना, प्रतीक्षा, विरह आदि का मार्मिक चित्रण किया गया है।

इन लोककथाओं में फूल केवल सुन्दरता का बोध ही नहीं कराते; बल्कि ये सांस्कृतिक, प्रेम पवित्रता और जीवन की उर्जा आदि के महत्व को भी प्रस्तुत करते है। जैसे उत्तिस र गुराँस प्रेम कथा में देख सकते है यहाँ उत्तिस और गुराँस के फूलों को माध्यम बनाकर प्राकृतिक सौंदर्य को दर्शाते हुए एक अधूरे प्रेम का वर्णन किया गया है। जहाँ रंग-रूप, जात-पात आदि के कारण उनका प्रेम अधूरा रह जाता है। तो वहीं 'आक के वृक्ष के रूप में पुनर्जन्म' कथा में संसार की सबसे सुन्दर कन्या को एक वृक्ष से प्रेम हो जाता है; परन्तु कन्या के पिता इस प्रेम संबंध से बिलकुल खुश नहीं थे। इसलिए उस पेड़ को काट देते है और जिससे आक के पेड़ का सफ़ेद पानी कन्या के पिता के आँख पर पड़कर वे तुरंत अंधे

हो जाते है और पेड़ का दूसरा टुकड़ा कन्या के आँख में जा गिरता है। जिससे उसकी मृत्यु हो जाती है। यहाँ मनुष्य और प्रकृति के बीच एक गहरा संबंध दिखाया गया है। जिसमें पेड़ केवल एक वस्तु नहीं है; बल्कि एक जीवंत प्राणी के रूप में चित्रित होता है उसे काटना प्रकृति को आहत करना होता है। " जब लकड़हारा ने वृक्ष पर पहला प्रहार किया तो पेड़ के सारे पत्ते सिकुड़ कर एक गोल आकर में परिवर्तित होकर एक ही जगह पर जमा हो गये और वृक्ष से एक अजीब प्रकार से साँस लेने की ध्वनि सुनाई पड़ रही थी। किसी को भी अंदाजा भी नहीं था कि उस चमत्कारी एवं रहस्यमयी पेड़ का क्या रहस्य था। जिसने सभी को हैरान कर दिया था। लकड़हारा को उस वृक्ष को काटने में बड़ी मुश्किल हो रही थी फिर भी वे लगातार काटते ही जा रहे थे; लेकिन आश्चर्य की बात तो यह थी कि पेड़ को काटने पर जितने भी टुकड़े निकल रहे थे वो पेड़ के टुकड़े जमीन में न गिर के आकाश कि ओर जा कर लटक रहे थे; लेकिन लकड़हारे बिना रुके ही लगातार उस पेड़ को काटते रहे । अंत में रात होने से पहले काफी मेहनत के बाद पेड़ जमीनी पर गिर ही गया।"[56]

भारतीय समाज में प्राचीन काल से ही सुन्दरता का वर्णन करने के लिए प्रकृति एवं पशु पक्षियों का सहारा लिया गया है। जिन्हें प्रतीक के रूप में दर्शाया जाता है। जैसे- चाँद सा मुखड़ा, हिरनी सी आँखे, गुलाब से होंठ, बिजली सी चमक आदि है। इन लोककथाओं में यहीं सुन्दरता के प्रतीक मुख्य पात्र एवं नायक-नायिका के रूप में उभर कर आते है। "प्रदूषण रहित शुद्ध रंग, मनमोहक रूप, निश्चल मुस्कान, प्रकृति जननी की सर्वोत्तम रचना थी सुरीली! वर्षों के बाद गुराँस के वन में जाने के बाद सुरीली का मन आत्मविभोर से भर गया और उसने यह अनुभव किया कि असली सुंदरता शरीर से नहीं बल्कि आत्मा से होती है।"[57] यहाँ एक फूल को नायिका के रूप में दर्शाया गया है जिसमें उसकी सुंदरता, कोमलता और शांत स्वभाव का वर्णन किया गया है। इससे प्रकृति के सौंदर्य के साथ-साथ मनुष्य की सुन्दरता भी निखर कर आती है।

पशु-पक्षियों और मनुष्य का संबन्ध आदि मानव के समय से ही गहरा रहा है जिससे श्रीचद्र जैन के इस कथन से समझ सकते हैं "एक युग था,जब इन-पक्षियों ने मानव शरीर को शीत से बताया था। उनकी भूख मिटाने के लिए अपना मांस दिया था और शत्रुओं से लड़ने के लिए अपने पंजे, सींग आदि दिए थे। आज भी साधु-संत मृग तथा बाघ के चमड़े पर बैठकर ईश्वराधान करते हैं। ऐसी स्थिति में मानव का इनके प्रति कृतज्ञ होना अनिवार्य है। समय बीतने पर इंसान ने इनके साथ रहकर इनकी प्रवृतियों को समझा, इनकी भावनाओं का अध्ययन किया एवं इनके आमोद-प्रमोद के साधनों का अनुशीलन किया। परिणामस्वरूप पशु-पक्षियों की कथाओं से एक ओर हमें अनेक जीवनोपयोगी शिक्षाएँ मिलती हैं और दूसरी ओर उनकी सहज प्रवृतियों का परिज्ञान हो जाता है।"[58] वहीं अन्य विद्वानों के मतानुसार पशु विषयक कथाएँ ही अत्यन्त प्राचीन है तथा इनका रूप छोटा ही रहता है क्योंकि मानव की बुद्धि का विकास उसके प्रथम चरण में अधिक नहीं हो पाया था। इन कथाओं में अभिप्राय भी 1-2 से अधिक नहीं रहते हैं तथा कथा मानक रूप भी अत्यन्त सीमित देखे गए हैं।"[59]

लोककथाओं में पशु-पक्षी केवल एक पात्र के रूप में ही नहीं आते; बल्कि वे काल्पनिक रूप से मानवीय गुणों का प्रतीक एवं मनुष्य की तरह सोचते, बोलते और व्यवहार करते दिखाई पड़ते है। उदाहरण के तौर पर 'पांडा किंग का मोहभंग' कथा में जब किंग पड़ा राज पशु बन जाता है जिससे उसमें घमंड का भाव उत्पन्न हो जाता है तब प्रकृति का वातावरण उदासी, अशांति और असंतुलन वाला हो जाता है; परन्तु कुछ ही दिनों में उस जंगल का वातावरण बदल जाता है। "कुछ दिनों तक चिड़ियाघर में बहुत चहल-पहल रही लेकिन धीरे-धीरे चिड़ियाघर का वातावरण बिगड़ने लगा और अब किंग पड़ा की देख- भाल करने वाले सेवक गायब रहने लगे थे। इसी तरह जैसे-तैसे दिन कट ही रहे थे कि एक दिन पांडा को पता चला की वह उस जंगल में अकेला पशु नहीं है जो पिंजरे में कैद है, उसके जैसे अनेक पशु और भी है। इन पशुओं की स्वंत्रता पूरी तरह खत्म हो गई थी। वे अपनी इच्छा

से न तो घूम सकते है और न ही खेल–खुद कर पाते और इतना ही नहीं जंगल में चर भी नहीं सकते है। इन पशुओं की हालत इतनी खराब थी कि उन्हें गंदे, बदबूदार और मक्खियों से भरे पिंजरे में पड़ा रहना पड़ता था। वर्षों से कैद होने के कारण उनकी दयनीय स्थिति हो गई थी। उनके शरीर में केवल सांस रह गई। कुछ दिनों के बाद किंग पांडा का भी यही हाल होने लगा। उसे भी किसी गंदे और बदबूदार पिंजरे में डाल दिया गया जिससे उसकी हालत बद से बदतर हो गई।"[60] इस कथा में पांडा पशु केवल मनोरंजन के रूप में नहीं है; बल्कि नायक (पांडा) के भावों के दर्पण एवं नैतिक समावेश दर्शाता है। जिसमें पांडा राज पशु की उपाधि पाते ही वह अहंकारी हो जाता है; लेकिन स्वतंत्रता छीन जाने से उसे यह एहसास होता है कि उसकी खुशी उसके अपने परिवार के साथ रहने में है। न की राज पशु बनकर सुख भोगने में। उस समय उसे सभी आराम बेकार लगने लगे। आशय यह है कि मनुष्य हो या पशु-पक्षी सभी के लिए स्वतंत्रता ही सच्चा सुख है।

इन लोककथाओं में पक्षियों एवं कुते आदि विशेषत: चर्चित हैं। पक्षी विभिन्न भावों और गुणों के प्रतीक होते है जो कभी संदेश पहुँचाने वाले के रूप में प्रयुक्त होते है तो कभी रूपांतरण के भावनात्मक के रूप में उभर कर आते है। ' उतरो न उतरों प्रिय सुनकेशरी ' कथा में जब सुनकेशरी की शादी उसी के मंझले भाई से होने वाली थी तब एक कौवा आकर उसे अपने ही भाई से शादी करने से बचाता है। जो कथा में इस प्रकार वर्णित है "सुनकेशरी जब असहाय होकर दुःख से व्याकुल हो रही थी। तब सुनकेशरी के सामने एक कौवा आया और उसने सुनकेशरी को उसके दुःखी होने का कारण पूछते हुए कहा -क्यों ऐसे छटपटा रहीं हो प्रिय ? दुःखी मत हो प्रिय। यह कदम्ब का बीज लो। इसे नदी के किनारें जाकर मिट्टी में बो दो। अपने साथ एक मोटा सा धागा और कुछ तिल, चावल और एक छोटी सी खुरपी भी ले जाना। उसके बाद " बढ़–बढ़ कदम जल्दी बढ़ कहते हुए लौट आना विरह में रोते समय काग द्वारा मिले संयोग, सलाह और उपाय ही उसको सही लगा काग ने जो निर्देश दिया था

उसी का पालन करते हुए सुनकेशरी नदी के किनारें जा कर कदम के बीज को बो देती है। जैसे ही उसने उस बीज को बोया वैसे ही उससे एक पौधा निकल आया। प्रतिदिन सुनकेशरी उस पौधे के पास जाकर कहने लगी- बढ़–बढ़ कदम जल्दी बढ़। कुछ ही दिनों में कदम का पौधा विशाल वृक्ष का रूप धारण कर लेता है । इसके वाद एक दिन सुनकेशरी उसी वृक्ष पर चढ़ जाती है।”[61]

इसी तरह ‘गोलसिमल’ कथा में गोलसिमल नामक की लड़की को उसकी सौतेली माँ द्वारा जिंदा जलाया जाने पर उसका पुनर्जन्म एक पक्षी के रूप में होता है। जो गोलसिमल की आवाज निकाल कर अपने पिता के सामने आती है जिससे उसके पिता भावुक हो जाते हैं।

वहीँ ‘पक्षी पोशाकधारी राजकुमार1’ कथा में भी एक राजकुमार राक्षसी से बचने के लिए पक्षी पोशाक धारण करता है क्योंकि राक्षसी राजकुमार को बंदी बनाना चाहती है और वह अपने मकसद में कामयाब भी हो जाती है; परन्तु पत्नी ने एक और नया पक्षी पोशाक तैयार करके उसे राक्षसी के चंगुल से छुड़ा लेती है। यहाँ पक्षी केवल एक पात्र ही नहीं है; बल्कि स्वतंत्रता विवेक और मुक्ति का प्रतीक है जो मनुष्य को संकट के समय अपनी सीमाओं से ऊपर उठा सकता है।

लोककथाओं में विशेष पशु के रूप में कुत्तों को आज्ञाकारी और कृतज्ञ तथा वफादार पशु माना गया है। जो मनुष्य का सच्चा मित्र होता है। कुत्ते का उल्लेख केवल लोककथा में नहीं; बल्कि प्रेमचन्द जैसे बड़े लेखक ने भी अपनी कहानियों कुत्ते की कहानी, पूस की रात आदि में मुख्य पात्र के रूप में प्रस्तुत किया है। इन चयनित लोककथाओं में से कुत्ते को आज्ञाकारी और कृतज्ञ भाव वाला जानवर दिखाया गया है। जिससे ‘कुत्ता को उधार मांस’ कथा में एक ग्वाडे नामक लड़का एक कुत्ते को बकरे का मांस खिलता है क्योंकि वह बहुत दिन से भूखा था। ग्वाडे ने उस कुत्ते को मांस देते हुए कहां कि मैं तुम्हें मांस दे तो रहा हूँ; लेकिन ध्यान रहे कि इस मांस की रकम तुम मुझे शाम तक चुका देना। कुत्ता भी सहमत हो जाता है। ग्वाडे को खाली हाथ घर लौटता देख उसकी माँ गुस्से से आग बबूला हो जाती

है। ग्वाडे अपनी माँ को बड़बड़ाते हुए देख कर कहता है "माँ कुत्ते बेईमान नहीं होते है। वह इस उधारी को जरूर चुकाएगा।"[62] यह कथा कुत्ते के चरित्र के माध्यम से निष्ठा, विश्वास और सच्चे सेवाभाव जैसे मानवीय मूल्यों की शिक्षा देती हैं।

निष्कर्ष:

इस प्रकार इन चयनित लोककथाओं में प्रकृति एवं पशु-पक्षियों का वर्णन करते हुए मनुष्य और प्रकृति के बीच एक गहरा संबंध दर्शाया गया है। ऐसी लोक कथाएँ वर्तमान संदर्भ में और अधिक प्रासंगिक हो जाती है जब ये कथाएँ जनमानस में यह संदेश देती है कि प्रकृति और पशु-पक्षी, जीवजन्तु हमारे पर्यावरण और हमारे जीवन का अभिन्न अंग है। हम-सब एक दूसरे पर निर्भर है इससे ही पूरी दुनिया का संतुलन बना हुआ है। इन लोककथाओं में निहित संदेह साफ़ है कि जब मनुष्य प्रकृति या पशुओं के साथ अन्याय करता है तो वह स्वयं अपने विनाश का कारण बनता है। जैसे 'आक के वृक्ष के रूप में पुनर्जन्म' कथा में कन्या के पिता द्वारा वृक्ष को काटने और उसका सफ़ेद रस आँखों में पड़ने से वह स्वयं अंधा हो जाता है और उसी वक्त वृक्ष का दूसरा टुकड़ा कन्या के सिर पर लगता है। जिससे उसकी भी मृत्यु हो जाती हैं। वहीं, जो व्यक्ति जो जीव-जगत के प्रति प्रेम का भाव रखता है। उसे सदा सुख और सफलता प्राप्त मिलती है। जैसे- 'कुत्ता को उधार मांस' कथा में देख सकते है जहाँ ग्वाडे द्वारा कई दिनों से भूखे कुत्ते को दया भाव से मांस खिलाने पर कुत्ता उसके प्रति आभार व्यक्त करते हुए उसके लिए शाम तक रुपये से भरा थैला उसके आँगन में छोड़ जाता हैं। अतः लोककथाओं में प्रकृति एवं पशु-पक्षी की कल्पना केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं है; बल्कि यह जीवन मूल्यों, नैतिकता और मनुष्यता का प्रतीक हैं। जिसमें मानव, प्रकृति एवं पशु-पक्षियों में संतुलन बना रहे।

संदर्भ सूची:

---

[1] श्रीचद्र जैन, लोक-कथा विज्ञान, पृ. 31

[2] लोक कथा अंक (आज कल), पृ. 91

[3] आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास, पृ. 8

[4] ललितजंग सिजापति, कथा संग्रह (दन्त्यकथा), पृ 62,63

[5] पुष्प शर्मा, गोलसिमल, पृ. 133

[6] ललितजंग सिजापति, कथा संग्रह (दन्त्यकथा), पृ. 62,63

[7] पुष्प शर्मा, गोलसिमल, पृ. 33

[8] वही, पृ. 58

[9] वही पृ. 68

[10] ललितजंग सिजापति, कथा संग्रह (दन्त्यकथा), पृ. 79

[11] वही, पृ. 95

[12] पुष्प शर्मा, गोलसिमल, पृ. 45

[13] वही, पृ. 129

[14] वही, पृ. 67

[15] वही, पृ. 28

[16] ललितजंग सिजापति, कथा संग्रह (दन्त्यकथा), पृ 20

[17] वही, पृ. 36

[18] राधेश्याम सिंह, पवन कुमार रावत, लोक साहित्य एवं संस्कृति, पृ. 59

[19] श्रीचद्र जैन, लोक-कथा विज्ञान, पृ.130

[20] राधेश्याम सिंह, पवन कुमार रावत, लोक साहित्य एवं संस्कृति, पृ. 21

[21] मैथिली प्रसाद भारद्वाज, पाश्चात्य काव्यशास्त्र के सिद्धांत, पृ. 296

[22] पुष्प शर्मा, गोलसिमल, पृ. 80

[23] वही, पृ. 57

[24] वही, पृ. 38

[25] वही, पृ. 123

[26] वही, पृ. 94

[27] ललितजंग सिजापति, कथा संग्रह (दन्त्यकथा), पृ.64

[28] श्रीचद्र जैन, लोक-कथा विज्ञान, पृ. 191

[29] वही, पृ. 191

[30] पुष्प शर्मा, गोलसिमल, पृ. 57

[31] वही, पृ. 54

[32] वही, पृ. 54

[33] वही, पृ.128

[34] श्रीचद्र जैन, लोक-कथा विज्ञान, पृ. 33

[35] वही, पृ. 153

[36] पुष्प शर्मा, गोलसिमल, पृ.47

[37] श्रीचद्र जैन, लोक-कथा विज्ञान, पृ. 152

[38] पुष्प शर्मा, गोलसिमल, पृ. 40

[39] ललितजंग सिजापति, कथा संग्रह (दन्त्यकथा), पृ. 17

[40] वही, पृ. 30

[41] श्रीचद्र जैन, लोक-कथा विज्ञान, पृ. 156

[42] वही, पृ. 157

[43] वही, पृ. 157

[44] वही, पृ. 158

[45] वही, पृ. 157

[46] वही ,पृ.159

[47] वही ,पृ.160

[48] ललितजंग सिजापति, कथा संग्रह (दन्त्यकथा), पृ.17

[49] वही, पृ. 160,161

[50] वही, पृ. 162

[51] पुष्प शर्मा, गोलसिमल, पृ. 95

[52] श्रीचद्र जैन, लोक-कथा विज्ञान, पृ. 161

[53] वही, पृ. 69

[54] पुष्प शर्मा, गोलसिमल, पृ. 43

[55] वही, पृ. 51

[56] वही, पृ. 76

[57] वही पृ. 57

[58] श्रीचद्र जैन, लोक-कथा विज्ञान, पृ. 168

[59] वही, पृ.171

[60] पुष्प शर्मा, गोलसिमल, पृ. 88

[61] वही पृ. 33

[62] ललितजंग सिजापति, कथा संग्रह (दन्त्यकथा), पृ.10

पंचम अध्याय

चयनित नेपाली लोककथाओं के हिंदी अनुवाद की समस्याएँ

(क) शब्दानुवाद की समस्याएँ

(ख) भावानुवाद की समस्याएँ

पंचम अध्याय

चयनित नेपाली लोककथाओं के हिंदी अनुवाद की समस्याएँ

भाषा एक ऐसा माध्यम है, जिसके द्वारा हम अपने भावों और विचारों को व्यक्त करते हैं, और दूसरों के भाव और विचारों को भी समझते हैं। तथा भाषा मानव अभिव्यक्ति का प्रमुख साधन हैं। इस संसार में अधिकतर देश, राज्य एवं समाज कि अपनी-अपनी भाषा, बोली और लिपि है। जैसे हिंदी भाषा कि देवनागरी लिपि है तो अंग्रेजी भाषा कि रोमन आदि। समस्त भाषाओं में व्याकरणिक, सांस्कृतिक एवं क्षेत्र आदि के कारण से भिन्नता पाई जाती है तो कुछ सामानताएं भी दिखाई पड़ती है।

नेपाली और हिंदी भाषाएँ अपनी व्याकरणिक संरचना तथा शब्द-संपदा में अनेक समानताएँ रखती है, फिर भी अनुवाद के स्तर पर कई सूक्ष्म भिन्नताएँ प्रकट होती है। विशेष रूप से शब्दानुवाद और भावानुवाद—इन दो अनुवाद-पद्धतियों के चयन के कारण अर्थ-स्खलन, सांस्कृतिक असंगति और अभिव्यक्तिगत अस्पष्टता जैसी समस्याएँ सामने आती हैं। शब्दानुवाद में शब्द-दर-शब्द अर्थ के चलते वाक्य का भाव बिगड़ सकता है, तो भावानुवाद में मूल पाठ की सांस्कृतिक गहराई या स्थानीय रंग फीका पड़ने का खतरा रहता है। इसलिए नेपाली से हिंदी अनुवाद करते समय इन दोनों पद्धतियों से उत्पन्न होने वाली समस्याओं का अध्ययन अत्यंत महत्त्वपूर्ण है, ताकि अनुवाद अधिक स्वाभाविक, और सटीक बन सके।

अनुवाद' शब्द "अनु + वाद" धातु में प्रत्यय जोड़कर बना है अर्थात अनुवाद से तात्पर्य, एक भाषा से दूसरी भाषा में विचार, भावनाओं और ज्ञान का आदान-प्रदान करना होता है। यह दो भाषाओं के बीच सेतु का काम करता है,तो वही समाज के विविध सांस्कृतिक,सभ्यताओं और साहित्य

परंपराओं को भी एक-दुसरे तक पहुँचाकर लोगों को जोड़े रखता है। डॉ नगेंद्र ‘अनुवाद’ शब्द को स्पष्ट करते हुए लिखते हैं कि “अनुवाद शब्द ‘वद्’ धातु में ‘अनु’ उपसर्ग और ‘धन्न्’ प्रत्येय के योग से बना है। अनु+वद्+धन्न्= अनुवाद, ‘वद्’ का अर्थ है ‘बोलना’ या ‘कहना’। यही ‘अनु’ उपसर्ग ‘वाद’ में या ‘पीछे-पीछे’ के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। इस दृष्टि से अनुवाद का मूल अर्थ किसी के कहने के बाद कहना अर्थात पुनः कथन होता है।” [1] वही दूसरी ओर डॉ. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर ‘अनुवाद’ को परिभाषित करते हुए आगे कहते हैं कि “अनुवाद में दो भाषाओं की सामग्री होती है। उनमें प्रथम भाषा में जो बात है उसे द्वितीय भाषा में उलथा करके बताया जाता है। यह उलथा करने की प्रक्रिया हिंदी में अनुवाद (अनु = अनंतर + वाद = कथन) (दुहराना) कहलाती हैं।”[2] अर्थात अनुवाद मानव जीवन के प्रारंभ से चली आ रही गतिविधि है। सभ्यताओं और संस्कृतियों के विकास में भाषाओं का आदान-प्रदान एक महत्वपूर्ण कार्य रहा है। अनुवाद की प्रक्रिया जितना सरल लगता है वास्तव में उतना सरल नहीं है। जिससे रीतारानी पालीवाल की यह कथन सिध्द करती है। “यह कार्य तमाम कठिनाइयों और चुनौतियों से भरा हुआ इसलिए माना जाता है कि प्रत्येक भाषा एक भिन्न प्रकृति एवं परिवेश लेकर विकसित होती है। उसका संरचनात्मक गठन अपने स्वरूप और आयामों में दूसरी भाषा से भिन्न अर्थ-स्तर का होता है। एक भाषा से दूसरी भाषा की यह भिन्नता पद, पद-बन्ध, वाक्य-रचना, ध्वनि, अर्थ-लय, शब्द-रूप, शब्द-गठन-विन्यास, रूप-विन्यास, अलंकार, छन्द, लोकोक्ति-मुहावरों के प्रयोग की विधि एवं सांस्कृतिक-ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य के अध्ययन से समझी-समझायी जा सकती है।’’[3] अर्थात सार्थक अनुवाद वही होता है जिसमें भाषिक,सांस्कृतिकएवं भावात्मक प्रतिक्रियों को ध्यान में रख कर किया गया हो।

नेपाली भाषा भी हिंदी भाषा की तरह एक समृद्ध भाषा मानी जाती है और ये दोनों भाषाएँ भारोपीय परिवार के अंतर्गत ही आती है। जिनकी जननी संस्कृत को माना गया है। इन दो भाषाओं में

लिपि, शब्द, अर्थ, व्याकरण आदि के स्तर पर कई समानताएं दिखाई पड़ती है। परन्तु इन समानताओं के बावजूद भी जब नेपाली भाषा से हिंदी भाषा में अनुवाद करते समय अनेक प्रकार की समस्याएँ सामने आती है। क्योंकि एक अनुवादक के लिए दो भाषा को समझना काफ़ी नहीं है बल्कि उसे शब्दों कि शाब्दिक अर्थ के साथ-साथ उसका भावार्थ को भी समझना अति आवश्यक होता है। यह समझ केवल नेपाली भाषा से हिंदी भाषा में अनुवाद समय ही नहीं बल्कि अन्य भारतीय एवं विदेशी भाषाओं में अनुवाद करते समय अनुवादक को भाषा के साथ-साथ दोनों संस्कृतियों से परिचित होना अनिवार्य होता है,जिससे जी.गोपीनाथ व एस.कंदस्वामी ने आपनी पुस्तक अनुवाद की समस्याएँ में उल्लेख किया है "अनुवाद में अर्थ की समस्या सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ के अंतरण में पैदा होती है। सामाजिक-सांस्कृतिक विभिन्नताएँ हिन्दी एवं विदेशी भाषाओं के बीच में ही नहीं, हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं के बीच भी द्रष्टव्य है। ये समस्याएँ सामाजिक-सांस्कृतिक शब्दावली, मुहावरे और लोकोक्तियों, लोक बिम्ब, अलंगकार एवं मिथक तथा हास्य-व्यंग के अनुवाद में विशेष रूप से पैदा होती है। "[4]

इस प्रकार इन चयनित नेपाली लोककथाओं को हिंदी में अनुवाद करने के दौरान कई प्रकार कि समस्याएँ दिखाई पड़ती है। यहाँ कुल 29 लोकथाएँ है जो दो लोककथा संग्रह से लिया गया है। पहला कथा संग्रह गोलसिमल जिससे पुष्प शर्मा जी द्वारा संकलित किया गया है तो वहीं दूसरा संग्रह ललितजग्न्ग सिजापति जी द्वारा किया गया है। इन कथाओं में स्थानीय शब्द एवं वहाँ कि संस्कृति आदि का प्रभाव भी दिखाई पड़ता है जिसके कारण शब्दानुवाद एवं भावानुवाद में समस्याएँ उत्पन होती है। और इन्हीं लोकथाओं के माध्यम से अनुवाद की समस्याओं का वर्णन किया गया जो कुछ इस प्रकार है -

क. शब्दानुवाद की समस्याएँ

नेपाली समाज की प्रकृति, संरचना, जन-जीवन, खान-पान, रहन-सहन, वेश-भूषा, जीव-जंतु एवं वनस्पतियों आदि की दृष्टि से देखें तो हिंदी भाषी प्रदेश से कुछ भिन्न है तो समानताएं भी है। इन समाज कि अपनी इतिहास और अपनी किंवदंतियां तथा सदियों से प्रचलित लोक कथाएं, मुहावरें, कहावतें एवं लोकोक्तियां हैं जिसकी झलक इन चयनित नेपाली लोक लोककथाओं में दिखाई पड़ती है। जिन्हें हिंदी में अनुवाद करने के दोरान नेपाली भाषा की सांस्कृतिक शब्दों अथवा प्रतीकों के लिए सटीक शब्द ढूंढने में कठिनाइयां आती है। नेपाली और हिंदी भाषा की उत्पत्ति का स्रोत एक होते हुए भी इन दोनों भाषाओं में शब्दों का प्रयोग व्याकरणिक संरचना और भावार्थ में भिन्नताएँ पाई जाती है जिसके कारण शब्दानुवाद जैसी चुनोतियो का सामना करना करना पड़ता है। जिन्हें हम इन निम्नलिखित बिन्दुओं के माध्यम से समझ सकते है –

1.अर्थगत असमानताएं की समस्या: हिंदी और नेपाली भाषाओं में कई शब्द ऐसे हैं, जो उचारण की दृष्टी से एक सामान लगते है परन्तु वे शब्द के अर्थ आगल होते है जैसे- नेपाली भाषा में ‘नानी’ शब्द का अर्थ बच्चा या फिर बेटी को कहां जाता है वही हिंदी में ‘नानी’ से तात्पर्य माँ की जननी को कहते है।

इसी तरह नेपाली में ‘दाई’ का अर्थ ‘बड़ा भाई’ होता है जबकि हिंदी में ‘दाई’ से तात्पर्य बच्चे को देखभाल करने वाली या जन्म के समय मदद करने वाली महिला को कहा जाता है। अर्थात इस प्रकार की अर्थगत असमानताएं से भ्रम पैदा होता है जो अनुवाद करते समय कई बार अनुवादक को समस्याएँ का सामना करना पड़ता है।

2. शब्द रूपांतरण की समस्या: नेपाली भाषा के शब्द रूप रूपांतरण हिंदी से आलग पाएं जाते है जिससे सीधा शब्दानुवाद करने पर वो शब्द अर्थ हिन् हो सकता है। उदहारण : नेपाली भाषा में 'हो' से तात्पर्य 'हाँ' या 'है' होता है जबकि हिंदी में 'हो' का प्रयोग सहायक क्रिया के रूप में होता है, तो 'ल' वर्ण का भी अर्थ होता है जिसका मतलब 'ठीक' या 'ठीक है' के रूप में प्रयोग किया जाता है। वहीं हिंदी में 'ल' केवल एक वर्ण है। जो एक ध्वनी मात्र है। इस प्रकार के अंतर से अनुवादक को भ्रम होने की संभावना रहती है। अर्थात इनका सीधा शब्दानुवाद हिंदी में करना व्याकरणिक रूप से उचित नहीं होता है।

3.उच्चारण की समस्या : उच्चारण की समस्या: नेपाली भाषा में कुछ ऐसी ध्वनियाँ एवं वर्णो का प्रायोंग होता हैं जिसका हिंदी में लिप्यान्तरण कर पाना कठिन हो जाता है। जैसे- हिन्दी भाषा में ङ, ञ स्वतंत्र रूप से प्रयुक्त किया जाता है परंतु नेपाली में किसी व्यक्ति तथा वस्तु आदि के नाम में 'ङ' वर्ण का प्रयोग स्वतंत्र रूप मे दिखाई पड़ता है जैसे पारुहाङ एक लड़के का नाम है इस नाम में 'ङ' का प्रयोग स्वतंत्र रूप से हुआ है परन्तु इस नाम को हिन्दी मे लिखा जाएं तो परुहंग होता है। जो उच्चरण के रूप से अनुवादक के लिए एक चुनौतु भरा कार्य होता है।

इसी तरह 'ञ' वर्ण का प्रयोग नेपाली भाषा मे कुछ इस प्रकार से होता है। हिंदी में 'ज्ञान' शब्द नेपाली में 'ञयान' हो जाता है। इस प्रकार के वर्णभेद, ध्वन्यात्मक असमानता और स्वर परिवर्तन से अनुवाद में समस्याएँ होती है।

नेपाली भाषा फ़, ज़, ख़, ग़ इन वर्णों से बने शब्दों में अरबी-फ़ारसी प्रभाव नहीं दिखाई पड़ता है। परन्तु नेपाली में अरबी-फ़ारसी का प्रभाव नहीं दिखाई पड़ता है। जैसे ख़बर-खबर, ज़मीन→ ''जमिन अर्थात इस प्रकार के वर्णभेद,ध्वन्यात्मक असमानता और स्वर परिवर्तन से अनुवाद में समस्याएँ होती है।

4.शब्द का आभाव: नेपाली भाषा से हिंदी भाषा में अनुवाद करते समय कई ऐसे शब्द पाएं गए हैं जिसका हिंदी में सटीक शब्द नहीं मिलता है जिसके कारण अनुवादक को मिलते-जुलते शब्द का प्रयोग करना पड़ता है जैसे- लाडे पल्टिदै – माता-पिता या किसी बड़े को देख कर छोटे बच्चे की तरह व्यहार करना है

जञयाक -जुरुक – कोई बेठा हुआ व्यक्ति जल्दी से उठ खड़ा हो जाए।

टोकेसो- इस से मिलता जुलता शब्द अत्याचार हो सकता है।

दाम्लो- गाय के गले का रस्सी

खोर- जहाँ बकरियों को राखी जाती है

थन्कयाउदा- किसी भी वस्तु को समेट कर रखना

गुटुमुतु- कम्बल या फिर किसी कपडें से खुद को धक लेना है। या फिर सिकुड़कर गोल हो जा है।

इञयाली –ढोल

कचल्टिएको – इसका भावार्थ पूरी तरह विकशित न होना या फिर आधा कचा जिसका हिंदी में कोई सटीक शब्द नहीं पाया जाता है।

झ्याँम्टे- जिसका भावर्थ है कुरूप देखना परन्तु यह इस का सटीक अर्थ नहीं है।

फुस्रो- किसी व्यक्ति का रुखा-सुखा दिखना

खस्रो-उबड़ खाबड़ जगह या तोचा को कहते है।

5. संस्कृतिक शब्दों की समस्या: किसी भी भाषा का संबंध उसकी संस्कृतिक के विरासत एवं परंपराओं से होती है तथा इन चयनित नेपाली लोकथाओं को हिंदी में अनुवाद करते समय नेपाली संस्कृतिक के कई शब्द मिलते है जिसका हिंदी में सटीक शब्द ढूँढ पाना एक चुनौती हो जाता है।

क्योंकि नेपाली संस्कृतिक के शब्दों को हिंदी संस्कृतिक के संदर्भ में ढूँढने के लिए केवल नेपाली संस्कृतिक को नहीं बल्कि उनके परदेश को भी समझना पड़ता है। नेपाली समुदाय कई उप समुदाय एवं जनजातियों से बना है जिसकी अपनी अपनी समुदाय,मान्यताएँ और लोकविश्वास पाई जाती है तथा इनकी भाषा,बोली में भी भिन्नताए होती है, जिसके कारण संस्कृतिक शब्दों का खोजना एक अनुवादक के लिए कठिन कार्य हो जाता है।

इसी संदर्भ में विद्वानों का मानना है कि किसी भाषा का जो अर्थ बोध होता है वही संस्कृतिक सापेक्ष माना जाता हैं। अतः इन नेपाली संस्कृतिक शब्दों हिंदी में समतुल्य नहीं मिल पाते हैं। उदहारण के लिए-

गुंड्रुक - नेपाली समाज की एक पारंपरिक सब्जी है जो मुख्य रूप से सरसों,मुली या पत्तागोभी के पत्तों से बनाई जाती है इस पारंपरिक सब्जी का हिंदी में कोई समानार्थक शब्द नहीं पाया जाता है।

चौबन्दी चोलो ’(पारंपरिक पोशाक) जिसके लिए हिंदी में समतुल्य भी नहीं पाया जाता है।

कुन्यु -एक चादर जैसा कपड़ा जिससे महिलायें कमर में पहनती है। जो पूर्वोत्तर भारत के अधिक तर राज्य का पारंपरिक पोशाक है जिससे असम में मेखला कहां जाता है तो अरुणाचल में गाले और मिजोरम में पुआन आदि है। इस पारंपरिक पोशाक की बनावट एक जैसा होता है परन्तु इसकी डिज़ाइन अलग अलग होता है। अर्थात इन समस्याओं के कारण इन्हें व्याख्यात्मक अनुवाद पड़ता है जिससे अनुवाद लम्बा और जटिल बन जाता है।

6. मुहावरोंदार शब्द एवं मुहाव लोक्तियों का अनुवाद की समस्या: मुहावरोंदार शब्दों का अर्थ नहीं बल्कि भाव होता है अगर अनुवादक इन शब्दों का सीधा अर्थ ले लेता है तो उसका मूल अर्थ पूरी तरह बदल जाता है। इस चनियत नेपाली लोककथाओं में कई ऐसे मुहावरोंदार एवं मुहावरों शब्दों

का प्रयोग हुआ है। जिनका हिंदी में समतुल्य भाव शब्द नहीं मिलते है जिसके कारण शार्थक व भावपूर्ण अनुवाद करने में समस्या आती है। उदाहरण के लिए-

मुहावरेदार शब्द - उर्लीरहेको-इ स शब्द का हिंदी में सटीक शब्द तो नहीं मिलता है परन्तु समतुल्य के रूप में उफानता को मान सकते है नेपाली भाषा इस शब्द का प्रयोग कई प्रकार से होता है।-

जैसे आमाको माया उर्लीरकोछ –माँ का प्यार उफनता है। इस प्रकार के अनुवाद में समान भाव नहीं आ पता है जो अनुवादक के लिए एक बड़ी समस्या का कारण है।

सगरसम्म- इस शब्द के लिए भी हिंदी में कोई सटीक शब्द नहीं मिलता है परन्तु समतुल्य के रूप में हम 'आकाश का सिर ' कह सकते है। इस प्रकार के अनुवाद में समान भाव नहीं आ पता है जो अनुवादक के लिए एक बड़ी समस्या का कारण है।

मुहावरों: 'कालले कुत्कुत्याएको' इस मुहावरे का आशय है मृत्यु के निकट जाना या अशुभ संकेत मिलने का भाव प्रकट होता है , हिंदी में इस प्रकार के भाव से सम्बंधित नहीं मिलता है जिससे अनुवाद करने में कठिनाई आती है।

नरहे बाँस बबजे बाँसुरी' इस तरह के मुहावरों समतुल्य हिंदी में 'ना रहेगा बाँस ना रहेगी बाँसुरी को माना जा सकता है अर्थात इस प्रकार के मुहावरों से अनुवादक को सहयोग मिलता है।

लोक्तियों : 'घिरौला जत्रो नाक भयों' इस प्रकार की लोक्तियों किसी व्यक्ति की बहुत बड़ी या मोटी नाक का मजाक उड़ाने या हँसी में टिप्पणी करने के लिए कहा जाता है तथा किसी की तारीफ करने पर नाक फूल जाना भी मान सकते है परन्तु हिंदी में इस प्रकार के कोई नहीं पाई जाती जो अनुवाद के लिए एक अनुवाद की समस्या का कारण है।

कसैलाई मरी मरी कसैलाई परिपरी' जिसका भावर्थ होता है कोई अधिक मेहनत करे और कोई आराम से बैठे रहे तथा इस प्रकार के लोक्तियों से हिंदी में अनुवाद करते चुनौती भरा कार्य होता है।

इस प्रकार नेपाली से हिंदी में अनुवाद करते समय केवल एक भाषा के शब्द को दूसरे भाषा में बदल देना काफी नहीं होता है क्योंकि हर भाषा की अपनी पारंपरिक संबंधित शब्द, अर्थ भाव और संदर्भ होते है जिससे दूसरी भाषा में अनुवाद करने पर उसका मूल भाव एवं अर्थ खो जाता है इसलिए एक अनुवादक को केवल शब्दों पर नहीं बल्कि संस्कृति और पारपरिक शब्दों पर भी ध्यान देना चाहिएं जिससे अनुवाद प्रभाशाली साली बन सकें।

ख. भावनुवाद की समस्याएँ:

लोककथाओं की उत्त्पति लोक जीवन से ही होती है जो एक पीड़ी से दूसरी पीड़ी तक चलती रहती है। यह केवल पाठको को मनोरजन ही नहीं बल्कि जन जीवन की भावनाएं,मान्यताएं,विश्वास,अंधविश्वास,अनुभवों एवं आदशों को प्रस्तुत करती है जो किसी लेखक या कवि द्वारा नहीं लिखा जाता है यह मौखिक रूप से ही आगे बढ़ते जाता है इसलिए लोककथाओं हम सामूहिक रचना भी कह सकते है।

प्रत्यक समाज के लोककथाओं में उसकी संस्कृति, परम्परा एवं मात्री भाषाओं का प्रभाव दिखाई पड़ता है। इस तरह नेपाली भाषा की भी अपनी संस्कृति, एवं परम्परागत शब्द होते है जिसका हिंदी में सटीक या समतुल्य शब्द न मिलने पर स्रोत भाषा में जो भाव होता है वह लक्ष्य भाषा में प्रकट नहीं हो पता है। डेविड के.अजयु जी ने अपने पीएचडी थीसिस में अनुवाद को परिभाषित करते हुए

लिखा है कि " किसी भाषा में कहे या लिखे गए विचारों को किसी अन्य भाषा में उपयुक्त रूप से प्रस्तुत करना। जब स्रोत-भाषा (Original Language) के शब्दों और विचारों को लक्ष्य-भाषा (Target Language) में उसी प्रकार स्थानांतरित किया जाता है तो यह कार्य अनुवाद कहलाता है। इसमें अनुवादक का उद्देश्य स्रोत-भाषा में व्यक्त भावों, विचारों और अर्थों को लक्ष्य-भाषा में सही और प्रभावी ढंग से प्रस्तुत करना होता है। केवल शब्दों का अनुवाद (शब्दानुवाद) भावों के बिना अधूरा होता है। वस्तुओं के नाम का सरल अनुवाद संभव है जैसे potato का हिंदी में आलू परंतु तकनीकी शब्दों का शाब्दिक अनुवाद कभी-कभी हास्यास्पद हो सकता है। उदाहरण के लिए Train का शब्दानुवाद लौह पथगामिनी किया जा सकता है जो सुनने में अटपटा और अप्राकृतिक लगता है। ऐसे में शब्दों की जगह भाव और संदर्भ के अनुसार उचित शब्दों का चयन अधिक उपयुक्त होता है। कभी-कभी अनुवादक को परिस्थितियों के अनुसार विवेकपूर्ण निर्णय लेना पड़ता है और स्रोत एवं लक्ष्य भाषा के बीच संतुलन स्थापित करना पड़ता है। उसे केवल शब्दों का अनुवाद नहीं बल्कि उनके पीछे छिपे भाव और संदर्भ को समझकर उसे लक्ष्य-भाषा में उसी प्रभाव के साथ प्रस्तुत करना होता है।"[5]

इन चयनित नेपाली लोककथाओं को हिंदी में अनुवाद करने के दौरान कई ऐसे भावनुवाद की समस्याओं का सामना करना पड़ा जिन्हें हम बिन्दुओं के माध्यम से समझ सकते है जो कुछ इस प्रकार है-

1.शब्दों में भावओं आभाव: कई बार स्रोत भाषा के शब्द लक्ष्य भाषा में होते हुए भी उसमें वह भाव नहीं उत्तपन कर पाते है जो स्रोत भाषा में है। उदाहरण के लिए –

"ओर्ल न ओर्ल सुनकेशरी मैयाँ
बिहेको लगन टञय ...बरी लै" ![6]

इस कथन में पिता द्वारा अपनी बेटी को अपने ही मंजले बेटे के साथ विवाह करने के लिए वृक्ष के ऊपर बैठी बेटी से नीचे उतरने की आग्रह करते हुए कहां गया वाक्य है। जिसका हिंदी अनुवाद कुछ इस प्रकार है -

उतरों न उतरों प्रिय सुनकेशरी

विवाह का लगन छुट ... रहा है

नेपाली भाषा में 'ओर्ल' शब्द का अर्थ होता है 'उतरना' परन्तु हिंदी का यह 'उतरना' शब्द में वह भाव नहीं दे पा रहा है जो 'ओर्ल' सब्द दे रहा है। जो सुनने में अटपटा सा लगता है और के लिए यह एक चनौती भरा कार्य हो जाता है।

2.यथार्थ की कमी: इन कथाओं में कई बार अत्यधिक बनावटी होने पर जीवन का वास्तविकता कही खो जाती है जिससे कथा अवास्तविक और कल्पनात्मक लगने लगती है जैसे 'विवाह का प्रस्ताव' कथा के इस कथन में देख सकते है। "शादी के रात को ही ललितारानी को भी सुरुचि की तरह ही अजगर के साथ जबरन एक कमरे में बंद कर दिया गया था। अब तारकेश्वरी बेसब्री से सुबह होने की प्रतीक्षा करने लगी। जब सुबह होते तारकेश्वरी ने सबसे पहले जाकर ललितारानी के कमरे का दरवाजा खटखटाया, लेकिन दरवाजा नहीं खुला। अंत में नौकरों को बुलाकर दरवाजा तोड़ा गया। तारकेश्वरी ने देखा की जमीन पर बेसुध होकर अजगर पड़ा था, लेकिन ललितारानी कमरे में नहीं थी। तारकेश्वरी घबराकर चिला उठी। उसकी चीख सुनकर महल के लोग एकत्रित हो गये। राजा भी घबराते हुए आये तो पता चला की ललितारानी को अजगर ने निगल लिया है और अब ललितारानी अजगर की पेट में थी। महल के एक व्यक्ति ने कहा यदि ललितारानी अभी भी जीवित है तो मैं उसे बाहर निकाल सकता हूँ।"[7] अर्थात इस कथा में एक राजा के दो पत्नियाँ थी। इन दोनों पत्नियों से राजा के एक-एक बेटियाँ थी। पहली पत्नी देवयानी से सुरुचि और दूसरी पत्नी तारकेश्वरी से ललितारानी।

देवयानी बहुत ही गुणी और दयालु थी तो वहीं छोटी रानी तारकेश्वरी अधिक दुष्ट और लालची स्वभाव की थी तथा दोनों के बेटियों का स्वभाव अपने-अपने माँ से मिलता था। देवयानी की बेटी सुरुचि का विवाह एक अजगर से कर दिया जाता है परन्तु विवाह के बाद वह अजगर एक सुन्दर राजकुमार के रूप में परिवर्तित हो जाता है क्योंकी उसे वन देवता द्वारा श्राप मिला हुआ था जिससे वह किसी राजकुमारी से विवाह करने पर ही मुक्त हो सकता था। अब तारकेश्वरी ने भी अपनी बेटी का विवाह जंगल से एक अजगर को खोज कर करा देती है परन्तु वह जंगल राजकुमार नहीं था उसने रात में ही ललितारानी को जिन्दा निगल लिया था। इस प्रकार यह कथा मनोंरजन के हिसाब से तो अच्छी है लेकिन इसमें इतना बनाबटीपन है की कथा का यथार्थ भाव खो जाता है। क्योंकी वास्तविक जीवन में इस प्रकार की घटना होना असंभव है और यह काल्पनिक कथाओं अनुवाद करते हुए इसमें यथार्थ भाव को दर्शाना एक अनुवादक के लिए कठिन कार्य है।

3.अन्धविश्वाश और मिथकीय सोच: अनुवाद केवल भाषा को नहीं बदलती है यह भाषा की संस्कृति परम्परा और सोच का स्थानान्तरण भी करता है। इन चयनित लोककथाओं की भाषा एवं समाज में अन्धविश्वाश और मिथकीय सोच पाई जाती है जिन्हें स्रोत भाषा से लक्ष्य भाषा में अनुवाद करते समय लक्ष्य भाषा में वह भाव नहीं आ पता है जो स्रोत भाषा में पाई जाती है। उदहारण के लिए – 'आतेक की बाँसुरी की धुन' कथा को देख सकते है जिसमें सिक्की के लेप्चा समुदाय में शाम और सुबह के समय सिटी बजाना या बाँसुरी बजाना तथा सुनना अशुभ माना जाता हैं यदि किसी ने जाने अनजाने में बजा भी लिया तो उसे वह हिम मानव जीव दिखाई देगा ऐसी लोक विश्वाश है। इस अन्धविश्वाश एवं मिथकीय सोच के पीछे आतेक नमक लड़के की लोककथा है जो बहुत मधुर बाँसुरी बजता था जिसके हिम मानव आकर्षित होता है और उसे बाँसुरी बजाने के लिए परेशान करने लगता है। अब इस प्रकार के अंधविश्वास और मिथक कथाओं को हिंदी में अनुवाद करते समय जब कथाओं

में आये संस्कृति और प्रतिक के माध्यम से अन्धविश्वाश एवं मिथकीय वाले प्रसंग आते है तो आधुनिक और तार्किक दृष्टिकोण वाले भाव हास्यास्पद या व्यंग्य लगने लगता है जो अनुवाद की गंभीर समस्या के रूप में सामने आती है।

4. व्याकरणिक समस्याएँ: इन चयनित नेपाली कथाओं को हिंदी में अनुवाद करने के दोरान कई भावात्मक रूप से व्याकरणिक समस्याएँ उत्पन होती है जैसे –

क्रिया रूप से अनेक भाव निकलता है जैसे आग्रह,विनम्र आदि । उदाहरण-नेपाली में 'तिमी आउ न!' जिसका हिंदी अनुवाद 'तुम आओ!' लिंक और वचन की असमानता- जिस प्रकार हिंदी भाषा में हर एक संज्ञा और विशेरण के लिए लिंग तय होता है परन्तु नेपाली भाषा में लिंग प्रयोग हिंदी की तरह स्पष्ट रूप से नही दिखाई देता है उदाहरण ले लिए – ऊ राम्रो छ जिसका हिंदी अनुवाद वो अच्छा है या वो अच्छी है। यहाँ इस वाक्य में 'ऊ' का लिंक स्पष्ट नही हो पा रहा है। इस प्रकार की समस्या में भाव के अनुसार लिंग को चुनना पड़ता है।

क्रिया और काल के रूप में भाव का अंतर- नेपाली भाषा से हिंदी भाषा में अनुवाद करते समय क्रिया के रूप में तथा काल के रूप में भाव का सही चयन करना बहुत कठिन हो जाता है क्योंकि अगर हम क्रिया रूप का काल तथा भाव गलत चुनते है तो वाक्य में भावनात्मक अर्थ पूरी तरह नहीं आ पता है। जैसे-

नेपाली भाषा में कभी कभी एक ही अर्थात यहाँ 'न' से विनम्र आग्रह का भाव प्रकट होता है। और हिंदी में यहीं भाव से शब्द को अलग बन जाता है।

नेपाली में – 'ऊ जान्थ्यो' हिंदी में

इसका अनुवाद होगा 'वह जाया करता था।'

अर्थात यहाँ ‘न्थ्यो’ का प्रयोग नेपाली में बीते समय को दिखता है ,जो हिंदी में ‘किया करता था’ का बोध होता है।

5. वाक्य संरचना की समस्या- नेपाली भाषा और हिंदी भाषा एक ही भाषा परिवार के भाषाएँ है तथा व्याकरणिक दृष्टी भी देखे तो नेपाली भाषा का वाक्य क्रम हिंदी की तरह ही होता है कर्ता+ कर्म+ क्रिया परन्तु इतनी समानताएँ होने के बावजूद एक भाषा से दूसरी भाषा में अनुवाद करते समय वाक्य संरचना में कई छोटे-छोटे अंतर पाए जाते हैं और यही अंतर अनुवाद समस्या एवं वाक्य संरचना की समस्या के रूप में दिखाई पड़ता है। उदाहरण के लिए-

नेपाली में वाक्य - ‘म जान्नूँ’ का शब्दिक अनुवाद ‘मैं जाता नहीं’ होता है किन्तु हिंदी में स्वाभविक रूप ‘मैं नहीं जाता’ है।

‘उसले भन्यो कि ऊ आउँछ’ का सटीक हिंदी अनुवाद ‘उसने कहा कि वह आएगा’ है लेकिन ‘उसने कहा कि वह आएगा’ कहा जाए तो वाक्य अपूर्ण लगता है।

इस तरह जब दोनों भाषाओं के शब्द क्रम, संयोजक प्रयोग से वाक्य संरचना से समस्या उत्पन होती है जिससे अनुवादक के लिए भी समस्या का कारण बनता है।

6. नैतिकता पर भाव का प्रभाव- इन चयनित लोककथाओं में कई जगह पर भावनाओं के प्रभाव से कथा की नैतिकता एवं तर्क कही लुप्त हो जाती है प्रेम, करुणा, क्रोध आदि मनुष्य की आंतरिक भाव है तो वही सदाचार और अच्छाई-बुराई नैतिकता का प्रतिक है। इसी तरह जब कोई व्यक्ति प्रेम तथा क्रोध आदि जैसे भाव उसके अन्दर होते है तो वह नैतिकता का धर्म भूल जाता है उसे बुरी बाते भी अच्छी लगने लगती है। और अच्छी बाते भी बुरी लगने लगती है - उदहारण के और पर ‘सुम्निमा और पारुहाङ’ के कथा में देख सकते है। सुम्निमा का जब पारुहाङ के रूप को देख कर उसका मौह

भंग होता है तो पारुहाङ का सुम्निमा के प्रति प्रेम भाव नफरत में बदल जाता है जिससे इस कथन में देख सकते है। "सुम्निमा के चेहरे पर घृणा भाव देखते ही पारुहाङ समझ जाता है और वह वहाँ से तुरंत आकाश की ओर लौट जाता है। पारुहाङ के स्वाभिमान को बहुत ठेस पहुंचता था। इस अपमान से उसे एक बड़ा झटका लगा था। अब पारुहाङ ने सुम्निमा से प्रतिशोध लेने की ठानी। और सुम्निमा के प्रिय निवास वृन्दावन के सभी नदी-नालों, झरनों कुँओं और तालाबों का जल सुखाने की कुविचार लिए वह पृथ्वी पर लौट आता है और उसने वृन्दावन की सभी नदी, नालों एवं झरनों का जल अपने शक्तियों से सुखा देता है। पूरी वृन्दावन में सुखा पड़ने से हाहाकार मच उठा हैं।"[8] अर्थात इस प्रकार किसी कथा में भावनाएं इतनी प्रबल होती हैं की वे अपनी नैतिक निर्णय को प्रभावित करती है, जैसे इस कथा में पारुहाङ के साथ हुआ है। जिसने सुम्निमा द्वारा न ना पसंद करने पर वो अपना नैतिक धर्म भूल जाता है और प्रतिशोध लेने लगता है। इस प्रकार अनुवाद करते समय अनुवादक के सामने यह एक बड़ी चुनौती बन जाती है कि कौन से भाव को अधिक प्रमुख रूप में प्रस्तुत किया जाए और इसी द्वंद के कारण कई अनुवाद की समस्याएँ उत्पन्न होती हैं।

निष्कर्ष:

इस प्रकार नेपाली एवं हिंदी भाषा एक भाषा परिवार से होने के साथ-साथ ये समृद्ध भाषा के श्रेणी में भी आते है, परन्तु हर भाषा की अपनी- अपनी संस्कृति एवं पारंपरिक और उसके शब्द होते हैं। जिससे एक भाषा से दूसरी भाषा में लिखने या बोलने पर कुछ समस्याएँ उत्तपन होती और वहीं अनुवाद की समस्याएँ के रूप में सामने आती हैं। जिसके एक अनुवादक को मुख्य रूप से शब्दानुवाद और भावानुवाद जैसे समस्याएँ का सामना करना पड़ सकता हैं। जिससे इन चयनित कथाओं के माध्यम से समझा गया हैं। और इन्ही के आधार पर कह सकते है कि लोकथाओं का

अनुवाद की प्रक्रिया को केवल शब्दों का स्थानान्तरण नहीं माना जा सकता है,बल्कि यह लोकभावना और परंपराओं को आदान प्रदान का जरिया हैं।

शब्दानुवाद की समस्याएँ तब उत्पन्न होती है जहन किसी शब्द का भाषायी समानार्थक नहीं मिलता और उसका अर्थ केवल अनुभव एवं वाक्य से जाना जा सकता हैं। ठीक इस प्रकार भावानुवाद की समस्याएँ भी तब उत्पन होती जय जब अनुवादक स्रोत भाषा के भाव मूल को गहराई से नहीं समझ पता है या फिर किसी एक भाव को अधिक बाल देने पर भी अनुवाद की समस्या हो सकती हैं।

अतः अनुवाद का उदेश्य केवल एक भाषा से दूसरी भाषा तक अपनी बातों को कहना या लिखना नहीं होता है, बल्कि यह समाज की लोकसंस्कृति,लोक मान्यताओं , लोकविश्वास और जनभावओं को संरक्षित करना भी होता है जिसके माध्यम से लोकजीवन की आत्मा सदैव जीवित रहती हैं।

संदर्भ सूची:

---

[1] डॉ नागेंद्र, अनुवाद सिद्धांत एवं अनुप्रयोग, पृ 15

[2] डॉ. एन. ई. विश्वनाथ अय्यर, अनुवाद भाषाएं-समस्याएं, पृ 13

[3] रीतारानी पालीवाल, अनुवाद प्रक्रिया एवं परिदृश्य, पृ. 11

[4] जी. गोपीनाथ व एस. कंदस्वामी, 'अनुवाद की समस्याएँ , पृ 19

[5] डेविड के. अजयु, मारा भाषा की लोककथाएँ: अनुवाद और विश्लेषण ('मरा फोह्पा' के विशेष संदर्भ में) हिंदी विभाग, मिजोरम विश्वविद्यालय, आइजोल में प्रस्तुत पीएचडी का शोध प्रबंध

[6] पुष्प शर्मा, गोलसिमल, पृ 27

[7] वही, पृ 116

[8] वही, पृ 45

उपसंहार

उपसंहार

लोक-कथा को लोक साहित्य की प्रमुख विधा के रूप में देखा जाता है। अतः इस विधा या लोक साहित्य को समझने से पहले 'लोक' शब्द की सरंचना को समझना अति आवश्यक है। 'लोक' शब्द किसी भावुकता या दैनिक पूर्वाग्रहों से निर्मित कोई सामाजिक-मानवीय विमर्श या प्रलाप नहीं है; बल्कि इसकी उपस्थिति उतनी ही प्राचीन है, जितना की मनुष्य स्वयं। लोक साहित्य के क्षेत्र में 'लोककथा' सबसे महत्वपूर्ण विधा है। इस विधा में जितना सृजन हुआ है शायद ही लोक साहित्य की किसी दूसरी विधा में हुआ होगा। 'लोककथा' शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है- 'लोक' और 'कथा'। कथा में लोक शब्द जुड़ जाने से वह लोककथा की संज्ञा प्राप्त करता है जिससे एक विशेष अर्थ 'जनकथा' का बोध होता है। प्रस्तुत शोध प्रबंध 'चयनित नेपाली लोककथाओं का हिंदी अनुवाद और विश्लेषण' विषय में लोक-कथा के विविध आयामों को समझने का प्रयास किया गया है। अध्ययन की सुविधा के लिए प्रस्तुत शोध प्रबंध को पाँच अध्यायों में बाँटा गया है।

प्रथम अध्याय: 'नेपाली समाज और नेपाली भाषा : सामान्य परिचय' है। इस अध्याय को दो उप-अध्यायों में बाँटा गया है। पहला उप-अध्याय नेपाली समाज का सामान्य परिचय है। जिसमें नेपाली समाज का सामान्य परिचय प्रस्तुत करते हुए नेपाली समाज के खान-पान, वेशभूषा, रहन-सहन, पर्व एवं त्योहार, संस्कृति और सामूहिक जीवन-पद्धति, स्त्रियों की दशा आदि का अवलोकन किया गया है। बदलती हुई परिस्थितियों के कारण इसमें कई बदलाव भी आए हैं। इसमें से कुछ बदलाव सकारात्मक हैं तो कुछ नकारात्मक। नकारात्मक बदलाव से यहाँ तात्पर्य रूढ़िवादी मान्यताओं एवं सोच से है वहीँ सकारात्मक बदलाव में शिक्षा का बड़ा योगदान रहा है। जिससे समाज में एक जागरूकता दिखाई पड़ती है, जिससे नेपाली समाज प्रगतिशील बना है।

दूसरा उप-अध्याय नेपाली भाषा का उद्भव और विकास है। इस अध्याय में नेपाली भाषा के उद्भव एवं विकास की यात्रा को रेखांकित किया गया है। नेपाली भाषा की उत्पत्ति भारोपीय भाषा परिवार से शौरसेनी होते हुए खस, गोर्खा और नेपाल की भाषा बनने की यात्रा तय करती है; परन्तु कुछ विद्वानों में गोर्खा भाषा और नेपाली भाषा की प्राचीनता को लेकर मतभेद दिखाई देता है। गोर्खा भाषा को प्राचीन मानते हुए प्रमुख भाषाविज्ञानी भोलानाथ तिवारी जी लिखते हैं कि- "शासकीय स्तर पर गोरखा भाषा के लिए नेपाली नाम का प्रयोग 1932 के बाद हुआ है।"[1] कुछ विद्वान नेपाली भाषा की निकटता राजस्थानी से भी बताते हैं। सूर्यविक्रम ज्ञवाली इस मत के समर्थक रहे हैं- "प्राचीन खस जाति के साथ नेपाली भाषा का कोई संबंध नहीं है। उनके विचार में राजपूताना (चित्तौड़) के राजपूतों ने नेपाल (गोर्खा) में राज्य बसाकर राजस्थानी भाषा चलाई थी। नेपाली भाषा राजस्थानी से मिलती जुलती है।"[2] इससे यह निष्कर्ष निकलता है, कि नेपाली भाषा भी परिवर्तन की प्रक्रिया में रही है जो मानव समाज के विकास के साथ-साथ निरंतर आगे बढ़ती चली जा रही है।

इस शोध प्रबंध का द्वितीय अध्याय: 'लोककथा : स्वरूप विवेचन' है। इस अध्याय को दो उप-अध्यायों में विभाजित किया गया है। पहला उप-अध्याय 'लोककथा की परिभाषा और स्वरूप' है। इसके अंतर्गत 'लोक' शब्द एवं लोककथाओं की परिभाषाओं का वर्णन करते हुए लोककथा के प्रकार, मौखिक परम्परा और तत्त्व आदि पर विभिन्न विद्वानों के मतानुसार प्रकाश डाला गया है। लोक कथाओं का स्वरूप जनमानस की भाषा, भावनाओं एवं जीवन के अनुभवों से जुड़ा होता है। इनमें काल्पनिक पात्र के माध्यम से मनोरंजन के साथ-साथ सामाजिक मूल्य एवं लोक जीवन की झलक भी दिखाई पड़ती है। जो समाज में आम जनता की आस्था, विश्वास, मान्यताएँ आदि को पीढ़ी दर पीढ़ी मौखिक परम्परा के माध्यम से आगे बढ़ाते रहती है।

इस अध्याय के दूसरे उप-अध्याय लोककथाओं का वर्गीकरण प्रस्तुत किया गया है। जिसमें अनेक विद्वानों द्वारा किए गए लोककथाओं के वर्गीकरण पर प्रकास डाला गया है। इस सम्बन्ध में कृष्णदेव उपाध्याय अपनी पुस्तक 'लोक-साहित्य की भूमिका' में लोक कथाओं को वर्ण्य विषय की दृष्टि से 'छः' वर्गों में वर्गीकृत करते है जो इस प्रकार है- उपदेश कथा, व्रत कथा, प्रेम कथा, मनोरंजन कथा, सामाजिक कथा, पौराणिक कथा। इसी तरह श्री मोहनकृष्ण दर भी लोककथा को वैज्ञानिक दृष्टिकोण का देते हुए 'छः' वर्गों विभाजित करते हैं। इन दोनों विद्वानों का वर्गीकरण लगभग एक जैसा है; परन्तु इनका आधार भिन्न-भिन्न है। इसी को आधार बनाकर अनेक विद्वानों ने भी लोककथाओं का वर्गीकरण किया है। जहाँ कुछ इसी प्रकार का वर्गीकरण दिखाई पड़ता है। इन सभी विद्वानों ने किसी न किसी रूप में कथ्य, उद्देश्य, पात्र, क्षेत्र आदि को आधार बनाया है। इससे यह स्पष्ट है कि लोककथाओं का क्षेत्र बड़ा होने के कारण इसे किसी एक दृष्टिकोण के आधार पर वर्गीकृत नहीं किया जा सकता।

इस शोध प्रबंध का तृतीय अध्याय: 'चयनित नेपाली लोककथाओं का हिंदी में अनुवाद' है। इस अध्याय में कुल 29 लोककथाओं का नेपाली से हिंदी में अनुवाद किया गया है। ये लोक कथाएँ अग्रलिखित दो लोककथा संग्रहों से ली गई है। इसमें पहला लोककथा संग्रह पुष्प शर्मा द्वारा संग्रहीत 'गोलसिमल' है, जो उपमा प्रकाशन, कलेबुङ, से वर्ष 2021 को प्रकाशित हुआ है। इस संग्रह में कुल 14 लोककथाएँ हैं, जो निम्नलिखित हैं-

1. ओर्ल न ओर्ल सुनकेशरी मैयाँ (उतरों न उतरों प्रिय सुनकेशरी)
2. स्वर्ग जाने सिँढी (स्वर्ग जाने वाली सीढ़ी)
3. सुम्निमा र पारुहाङ (सुम्निमा और पारुहाङ)
4. रोँगीत र रोँगनू (रोँगीत और रोँगनू)
5. उत्तिस र गुराँसको प्रेम कथा (उत्तिस और गुराँस की प्रेम कथा)

6. गोलसिमल… गोलसिमल (गोलसिमल... गोलसिमल)
7. आतेकको बाँसुरिको धुन (आतेक कि बाँसुरि की धुन
8. पाण्डा किङ्को मोहभङ्ग (पांडा किंग का मोहभंग)
9. सुनौलो रेशमी मजेत्रो (सुनेरी रेशमी मजेत्रो)
10. आँकको रुखको जन्म (आक के वृक्ष के रूप में पुनर्जन्म)
11. बिहेको प्रस्ताव (विवाह का प्रस्ताव)
12. पोशाकधारी राजकुमार- 1 (पक्षीपशाक धारी राजकुमार 1)
13. पोशाकधारी राजकुमार- 2 (पक्षीपोशाक धारी राजकुमार 2)
14. बुढो बाबु फाल्ने थोत्रे डोको (बूढ़े पिता को फेंकने वाला पुराना डोका)

वहीँ दूसरा लोक कथा संग्रह- 'कथा-संग्रह'(दंत्यकथा) है। जिससे ललितजङ्ग सिजापति ने संग्रहीत किया हैं, इसका प्रकाशन बाबू माधवप्रसाद शर्मा, दूधविनायक, वाराणसी से वर्ष 1999 में हुआ। इस 'कथा-संग्रह' में कुल 15 लोककथाएँ हैं, जो इस प्रकार हैं-

1. जिउंदो मानिस (जीवित आदमी)
2. कुक्कुरलाई मासु पैचों (कुत्ता को उधार मांस)
3. धर्म र पाप कहाँ छ (धर्म और पाप कहा है)
4. चार रत्न (चार रत्न)
5. जस्तालई तस्तै (जैसे को वैसा)
6. वित्त-रोगको औषधि (आंतरिक रोग की औषधी)
7. लौभी र छट्टू (लालची और छट्टू)
8. देख्ने अन्धो (देखने वाला अन्धा)

9. निंद्रा साधन, काल भोजन स्त्रिया ताड़न स्वस्ति महाराज! (निंद्रा साधन,काल भोजन स्त्रिया ताड़न स्वस्ति महाराज!)
10. सिञ्चा-धुञ्चा (सींचा-धुंचा)
11. तोरी फुल्यो गाउँ, ज्वाइं मेरो नाऊँ (सरसों फूल गाँव , जमाई मेरा नाम)
12. ज्ञानबाट फाइदा (ज्ञान से लाभ)
13. चट्टू-छट्टू-उपरचट्टू (चट्टू- छट्टू-उपरट्टू)
14. चोर कुन हो (चोर कौन है)
15. सपनाको प्रेम (सपनों का प्रेम)

इस प्रबंध का चतुर्थ अध्याय: ‘चयनित नेपाली लोककथाओं का विश्लेषण’ है। इस अध्याय को ‘छः’ उप-अध्यायों में बाँटा गया है। इसके अंतर्गत में 29 चयनित लोककथाओं का विश्लेषण किया गया है। इस अध्याय का प्रथम उप-अध्याय ‘चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त समाज का विश्लेषण है। जहाँ नेपाली लोककथाओं में नेपाली समाज विभिन्न पक्षों का चित्रण किया गया है। जिन्हें हम निम्नलिखित बिन्दुओं के माध्यम से विश्लेषित किया गया है–

क. नैतिक मूल्य: नैतिक मूल्य को लोककथा की एक प्रमुख विशेषता माना जाता है। जो प्रत्येक लोककथा में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से विद्यमान रहते हैं। चयनित नेपाली लोककथाओं में भी समाज के लिए महत्वपूर्ण नैतिक मूल्यों की शिक्षा दी गई है। जहाँ आदर्शों, सिद्धांतों, शिक्षाओं एवं अच्छाई और बुराई के बीच संघर्ष का वर्णन मिलता है। ‘बूढ़े पिता को फ़ेकने वाला पुराना डोका’ कथा में नैतिक मूल्य को संवेदनशील समाज के महत्वपूर्ण तत्व के रूप में उद्घाटित किया गया है। इस लोककथा में एक बेटे को अपने ही पिता बूढ़े होने पर बोझ लगने लगते है और वह उन्हें पहाड़ से नीचे फेंकने के लिए डोको(लकड़ी ढोने वाली टोकरी) में रख कर अपने बेटे को साथ जाता है; परन्तु जब उसका बेटा

उसी का अनुकरण करते हुए उसे भी बूढ़े होने पर डोको में रख कर फेंकने की बात करता है तो उसे अपनी गलती का एहसास होता है, उसकी आँखे खुल जाती है और उसका हृदय परिवर्तन हो जाता है।

ख. जातिगत भेदभाव: चयनित लोककथाओं में समाज में व्याप्त जातीय भेदभाव का चित्रण दिखाई पड़ता है। जहाँ न केवल मनुष्यों; अपितु पशु-पक्षियों, पेड़-पौधे आदि को एक प्रतीक के रूप में विभिन्न जातियों एवं वर्गों में बंटा हुआ दिखया गया है। जाति प्रथा मानव समाज की एक पुरानी सामाजिक व्यवस्था है। जिसने एक ओर तो समाज को व्यवस्थित किया है वहीं दूसरी ओर असमानता और भेदभाव को बढ़ावा दिया है। 'उत्तिस र गुराँस की प्रेम कथा' में मनुष्य के साथ-साथ पेड़-पौधे और फूलों में भी रंग, रूप के आधार पर भेदभाव इन दो फूलों को आधार बनाकर दिखाया गया है। यहाँ रंग-रूप एवं जातीय अंतर के कारण इनका आपस में विवाह नहीं हो पाता है। यह कथा अप्रत्यक्ष रूप से समाज की जातीय व्यवस्था के यथार्थ को दिखाते हुए मानवेतर समाज में भी उसके विस्तार कल्पना लेखक द्वारा की गई है।

ग. स्त्री की दशा: चयनित लोककथाओं स्त्री का चित्रण विविध रूपों में दिखाई पड़ता है। जहाँ कहीं वह देवी रूप में पूजी जाती है तो कहीं उसको राक्षसी बताकर तबाही मचाते हुए दिखाया गया है। कहीं स्त्री माँ के रूप में वात्सलय से सराबोर तो दूसरी ओर सौतेली माँ के रूप में असंवेदनशील। इन लोककथाओं स्त्री कहीं उपेक्षित है तो कहीं पितृसत्तात्मक समाज की ज्यादतियों की शिकार दिखाई पड़ती हैं।

स्त्री के देवी रूप संदर्भ में 'पारुहाङ और सुम्निमा' कथा को देखा जा सकता है। जहाँ सुम्निमा नामक एक स्त्री, जिसको माता पार्वती का प्रतीक माना गया है। यह एक प्रेम प्रसंग पर आधारित कथा है। इस कथा में सृष्टिकर्ता संसार में सबसे पहले एक युवक और एक युवती का सृजन करते हैं, जिनसे

एक पुत्री का जन्म होता है, जिसका नाम सुम्निमा रखा जाता है। सुम्निमा पूरे संसार में अकेली होने के कारण जीव-जंतुओं के साथ रहती थी। एक दिन जंगल में अचानक उसने पारुहाङ को देखा। सुम्निमा उसके बलिष्ट एवं सुगठित शरीर को देखकर मोहित हो जाती है। नेपाली किरात राई समाज में यह लोक विश्वास प्रचलित है कि यह कथा शिव-पार्वती की प्रेम कथा पर आधारित है। "पारुहाङ और सुम्निमा को शिव-पार्वती का प्रतीक माना जाता है और आज भी किरात समाज में यह प्रचलित लोकविश्वास है कि पारुहाङ और सुम्निमा, शिव और पार्वती के स्वरूप में धरती पर जन्में थे। किरात राई समाज में सुम्निमा को प्रकृतिपुत्री माना गया है और पारुहाङ को शिव। यह समाज इस जोड़े की पूजा अर्चना करते हैं। इस आस्था और विश्वास के प्रतिरूप के कारण लेकसेप में स्थित शिव मंदिर के प्रवेशद्वार की दीवार पर सुम्निमा और पारुहाङ का चित्र बना हुआ है।"[3]

घ. राजनीतिक स्थिति: प्राचीन काल में जब लिखित इतिहास का अभाव था। तब लोककथाएँ ही उस समय की सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों को सुरक्षित करने का माध्यम थी। चयनित लोककथाओं में भी राजा, महाराजा, सेठ और साहूकार आदि की कथाएँ मिलती है। यहाँ राजाओं को आदर्शवादी, न्यायप्रिय रूप में प्रस्तुत किया गया है। 'चार रत्न' कथा में एक राजा अपने कर्तव्य का पालन करते हुए दिखाया गया है। जो एक अच्छे शासक के रूप में हमारे सामने आता है।

ङ आर्थिक स्थिति: लोक कथाएँ केवल समाज की लोक मान्यताओं तथा विश्वास को ही उजागर नहीं करती; बल्कि ये समाज की आर्थिक स्थितियों को भी प्रस्तुत करती हैं। समाज की आर्थिक स्थितियों को लोककथाओं के पात्रों की जीवन शैली, पहनावा, खानपान, रहन-सहन एवं कार्य व्यापार आदि के माध्यम से दर्शाया जाता है। चयनित लोक-कथाओं में कई स्थानों पर आर्थिक विपन्नता के प्रभाव को दिखाया गया है। जैसे 'गोलसिमल' कथा में एक पिता, गाँव में अकाल तथा आर्थिक तंगी के कारण और अपनी पहली पत्नी की मृत्यु के बाद अपनी बेटी गोलसिमल को सौतेली माँ के पास

छोड़ कर पैसे कमाने के लिए परदेश चला जाता है। उसके परदेस जाते ही सौतेली माँ गोलसिमल को जलाकर मार देती है।

इस अध्याय का दूसरा उप-अध्याय 'चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्ति संस्कृति का विश्लेषण' है। संस्कृति एक प्रकार से समाज की आत्मा मानी जाती है, इसमें किसी समाज के रीति-रिवाज, खान पान, रहन-सहन, परम्परा आदि समाहित होते हैं। चयनित लोककथाओं में संस्कृति के विविध रूपों की झलक मिलती है। इन कथाओं के पीछे भी कोई ना कोई मान्यताएं या मिथ अवश्य है। यहाँ मिथ से तात्पर्य एक ऐसे संदर्भ से है जिसके पीछे पूर्ण धारणा या विश्वास का बोध होता है। 'आतेक कि बाँसुरी का धुन' सिक्किम के नेपाली समुदायों में बाँसुरी बजाना अशुभ माना जाता है। इसी लोक विश्वास पर यह कथा आधारित है। जहाँ आतेक नामक लड़का जो एक ग्वाला है। उसे बाँसुरी बजाना बेहद पसंद है; परन्तु उसके द्वारा बाँसुरी बजाने के कारण हिममानव (एक प्रकार का राक्षस) उसे परेशान करने लगता है, क्योंकि उसे भी आतेक की बाँसुरी की धुन सुनना अच्छा लगता था। हिममानव आतेक को बहुत परेशान करने लगा और उसे लगातार बाँसुरी बजाते रहने को कहता है। जिससे आतेक भी परेशान हो जाता है। अंत में उससे छुटकारा पाने के लिए आतेक उस हिममानव को धोखे से जिन्दा जला देता है, उसके बाद आतेक कभी बाँसुरी को हाथ नहीं लगाता है। सिक्किम के नेपाली समुदाय में आज भी यह मान्यता है कि "आज भी सिक्किम के नेपाली समुदाय में सुबह-शाम सीटी बजाना, जोर से चिल्लाना और मुख्य रूप से बाँसुरी बजाना सख्त वर्जित है, यदि किसी ने गलती या संयोगवश बाँसुरी बजाई तो हिममानव उसको परेशान करने लगेगा, ऐसा वहाँ का लोक विश्वास प्रसिद्ध है।"[4]

इस अध्याय का तीसरा उप-अध्याय 'चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त प्रेम का विश्लेषण' है। इन लोककथाओं प्रेम का स्वरूप बहुत ही व्यापक रूप में उभर कर सामने आता है। प्रेम

के विविध रूप स्त्री-पुरुष के परस्पर आकर्षण, माता-पिता का स्नेह, पति-पत्नी का प्रेम तथा भक्त और भगवान के बीच के अध्यात्मिक प्रेम जैसे रूपों में अभिव्यक्त किया गया है। 'रोंगनु और रोंगीत' कथा में दो जल स्रोत रोंगनु और रोंगीत को संसार के सबसे महान प्रेमी जोड़े में से एक माना गया है; लेकिन दोनों एक-दूसरे से दूर थे क्योंकि एक का उद्गम स्थल उत्तरी हिमालय की गोद में था तो दूसरे का पश्चिम हिमालय की गोद में। इसलिए दोनों का मिलना असम्भव था। ये दोनों प्रेमी जोड़े न मिल पाने के कारण हमेशा दु:खी रहते थे। कभी-कभी रोंगनु दूत के रूप में साँप को भेज कर रोंगीत की खबर पूछ लिया करता था। तो वहीं रोंगीत भी पक्षी को भेज कर अपने प्रेमी की हाल-चाल पूछा करती थी।

इस अध्याय का चतुर्थ उप-अध्याय 'चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त धर्म का विश्लेषण' है। जहाँ हिन्दू धर्म के प्रति आस्था का भाव प्रमुख रूप से उभर कर सामने आता है। 'सुम्निमा और पारुहाङ' की कथा में किरात समाज में पारुहाङ और सुम्निमा को शिव और पार्वती का प्रतीक मान कर उनकी पूजा अर्चना करते है, तो वहीं 'स्वर्ग जाने वाली सीढ़ी' कथा में एक दरामदीन नामक गाँव का वर्णन है, जो हर तरह से सम्पन्न गाँव था। इस गाँव की यह सम्पन्नता बघसिंग मंडल नाम के एक महान संत के कई वर्षों की तपस्या एवं भक्ति-भावना का परिणाम था। जिससे प्रसन्न होकर उनके इष्टदेव ने उनको यह वरदान दिया कि उसका गाँव हर तरह से सम्पन्न रहेगा। इसके साथ ही धार्मिक कथाओं में व्यक्ति को लोभ, मोह और अहंकार से दूर रहकर दया, करुणा, सत्य और परोपकार की नैतिक भावना और भारतीय सांकृतिक मूल्य की ओर प्रेरित करती है। इस प्रकार इन लोक कथाओं में भक्ति को केवल ईश्वर-उपासना की एक पद्धति मात्र नहीं मानकर जीवन और समाज को बेहतर बनाने वाली शक्ति के रूप में देखा गया है।

इस अध्याय के पंचम उप-अध्याय में 'चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त जादू-टोना का विश्लेषण' है। जहाँ अलौकिक और चमत्कारी तत्वों को प्रमुखता से दिखाया गया है। जिससे कथा

में रहस्य, रोमांच और रोचकता बनी रहती है। 'सुनेरी रेशमी मजेत्रो' की कथा में एक जादुई खानदानी शाल का वर्णन किया गया है जहाँ माँ अपनी बेटी को उपहार स्वरूप भेंट करते हुए उसके महत्व को समझाती है कि बिना मंत्र के उस शाल को ना छूने के लिए कहती है।

इस अध्याय का छठा उप-अध्याय 'चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त प्रकृति एवं पशु-पक्षी का विश्लेषण' है। इस उप-अध्याय में प्रकृति एवं पशु-पक्षी का चित्रण मुख्य पात्र के रूप में भी हुआ है। जहाँ उनमें मानवीय गुणों को स्थापित किया गया है जिनके माध्यम से पाठको एवं नैतिकता की सीख मिलती है। प्रकृति और मनुष्य का संबंध आत्मा और शरीर की तरह है। प्रकृति से सम्बन्ध रखने वाली लोककथाओं में जीवंतता, प्रतीकात्मकता और नैतिकता का आग्रह हैं। ये लोककथाएँ प्रकृति के संवेदनात्मक, धार्मिक और सांस्कृतिक रूपों को सहेजकर पीढ़ी-दर-पीढ़ी आगे बढ़ाती है।

इस प्रबंध का पंचम अध्याय: 'चयनित नेपाली लोककथाओं के हिंदी अनुवाद की समस्याएँ' है। इस अध्याय को दो उप-अध्यायों में बाँटा गया है। जहाँ नेपाली भाषा से हिंदी भाषा में अनुवाद करने की प्रक्रिया में आने वाली समस्याओं का उद्घाटन किया गया है। इनमें शब्द रूपांतरण की समस्या प्रमुख है जहाँ नेपाली भाषा के शब्द रूप हिंदी से अलग होते हैं। जिससे उनका सीधा शब्दानुवाद करने पर वो शब्द अर्थहीन हो जाते हैं। उदहारण के लिए नेपाली भाषा में 'हो' से तात्पर्य 'हाँ' या 'है' होता है जबकि हिंदी में 'हो' का प्रयोग सहायक क्रिया के रूप में होता है। वहीँ 'ल' वर्ण का भी अर्थ 'ठीक' या 'ठीक है' के रूप में प्रयोग किया जाता है। वहीं हिंदी में 'ल' केवल एक वर्ण है। इस प्रकार के अंतर से अनुवादक को भ्रम होने की संभावना रहती है। अतः इनका सीधा शब्दानुवाद हिंदी में करना व्याकरणिक रूप से उचित नहीं है।

उच्चारण की समस्या: नेपाली भाषा में कुछ ऐसी ध्वनियाँ एवं वर्णो का प्रायोग होता है जिसका हिंदी में लिप्यान्तरण कर पाना कठिन हो जाता है। जैसे- हिन्दी भाषा में ङ, ञ स्वतंत्र रूप से प्रयुक्त किया

जाता है। परंतु नेपाली में किसी व्यक्ति तथा वस्तु आदि के नाम में 'ङ' वर्ण का प्रयोग स्वतंत्र रूप में दिखाई पड़ता है, जैसे पारुहाङ एक लड़के का नाम है। इस नाम में 'ङ' का प्रयोग स्वतंत्र रूप से हुआ है, परन्तु इस नाम को हिन्दी में लिखा जाए तो परुहंग होता है। जो उच्चरण के रूप से अनुवादक के लिए एक चुनौती भरा कार्य होता है। इसी तरह 'ञ' वर्ण का प्रयोग नेपाली भाषा में कुछ अलग प्रकार से होता है। हिंदी में 'ज्ञान' शब्द नेपाली में 'ञ्यान' हो जाता है। इस प्रकार के वर्णभेद, ध्वन्यात्मक असमानता और स्वर परिवर्तन से अनुवाद में समस्याएँ होती है।

अर्थगत असमानताओं की समस्या: हिंदी और नेपाली भाषा में कई शब्द ऐसे हैं, जो उच्चारण की दृष्टि से एक समान लगते हैं; परन्तु उन शब्दों के अर्थ अलग होते हैं। जैसे- नेपाली भाषा में 'नानी' शब्द का अर्थ बच्चों या फिर बेटी को कहा जाता है, वहीं हिंदी में 'नानी' से तात्पर्य माँ की जननी होता है। इस प्रकार अर्थगत असमानताओं से भ्रम की पैदा होती है। अनुवाद करते समय अनुवादक को इस समस्या का सामना करना पड़ता है।

सांस्कृतिक शब्दों की समस्या: नेपाली लोककथाओं को हिंदी में अनूदित करते समय नेपाली संस्कृति के कई शब्द मिलते हैं जिसका हिंदी में सटीक समानार्थी शब्द ढूँढ पाना एक चुनौती हो जाता है क्योंकि नेपाली के सांस्कृतिक शब्दों को जानने के लिए नेपाली संस्कृति के साथ-साथ उसके परिवेश को भी समझना पड़ता है। गुंड्रुक नेपाली समाज की एक पारंपरिक सब्जी है जो मुख्य रूप से सरसों, मुली या पत्तागोभी के पत्तों से बनाई जाती है। इस पारंपरिक नेपाली सब्जी का हिंदी में कोई समानार्थक शब्द नहीं मिलता है। 'चौबन्दी चोलो' (पारंपरिक पोशाक) जिसके लिए हिंदी में कोई समतुल्य शब्द नहीं है। 'कुन्यु' - एक चादर जैसा कपड़ा होता है, जिसे महिलायए कमर पर पहनती है। यह पूर्वोत्तर भारत के अधिकतर राज्यों की पारंपरिक पोशाक भी है जिसे असम में मेखला, अरुणाचल में गाले और मिजोरम में पुआन आदि कहा जाता है। इस पारंपरिक पोशाक की बनावट एक जैसी होती है,

परन्तु इसकी डिज़ाइन अलग होती है। 'कुन्यु' के लिए हिंदी में कोई सटीक एवं समतुल्य शब्द नहीं मिलता है। जिससे इस शब्द को व्याख्यायित करना पड़ता है। जिसके कारण अनुवाद लंबा और जटिल हो जाता है।

भावानुवाद की समस्याएँ: इस अध्याय के अंतर्गत नेपाली से हिंदी में अनुवाद करने के दौरान आए भावानुवाद की समस्याओं का उल्लेख किया गया है। शब्दों में भावों का अभाव: कई बार स्रोत भाषा के शब्द लक्ष्य भाषा में होते हुए भी उसमें वह भाव नहीं मिलता है, जो स्रोत भाषा में होता है। नेपाली भाषा में 'ओर्ल' शब्द का अर्थ होता है 'उतरना', परन्तु हिंदी का यह 'उतरना' शब्द वह भाव नहीं दे पा रहा है जो 'ओर्ल' शब्द नेपाली में दे रहा है। इस प्रकार यह एक चुनौती भरा कार्य हो जाता है।

शब्द का अभाव: नेपाली भाषा से हिंदी भाषा में अनुवाद करते समय कई ऐसे शब्द पाए जाते हैं, जिसका हिंदी में सटीक समतुल्य शब्द नहीं मिलता है, जिसके कारण अनुवादक को मिलते-जुलते शब्द का प्रयोग करना पड़ता है। जैसे- लाडे पल्टिदै – माता-पिता या किसी बड़े को देख कर छोटे बच्चे की तरह व्यहार करना है।

जञ्याक- जुरुक – कोई बैठा हुआ व्यक्ति जल्दी से उठ खड़ा हो जाए।

टोकेसो- इस से मिलता जुलता शब्द अत्याचार हो सकता है।

दाम्लो- गाय के गले की रस्सी।

खोर- जहाँ बकरियों को रखा जाता है।

थन्कयाउदा- किसी भी वस्तु को समेट कर रखना।

गुटुमुतु- कम्बल या किसी कपड़े से खुद को ढक लेना। या फिर सिकुड़कर गोल हो जाना।

कचल्टिएको- इसका भावार्थ पूरी तरह विकसित न होना या आधा कच्चा होता है, जिसका हिंदी में कोई सटीक शब्द नहीं मिलता है।

फुस्रो- किसी व्यक्ति का रुखा-सुखा दिखना।

खस्रो- उबड़ खाबड़ जगह या रुखड़ा को कहते हैं।

मुहावरों एवं लोकोक्तियों के अनुवाद की समस्या: मुहावरों का अर्थ नहीं बल्कि भाव होता है। अगर अनुवादक इन शब्दों का सीधा अर्थ ले लेता है, तो उसका मूल अर्थ पूरी तरह बदल जाता है। इन चनियत नेपाली लोककथाओं में कई ऐसे मुहावरों का प्रयोग हुआ है। जिनका हिंदी में समतुल्य शब्द नहीं मिलते हैं जिसके कारण सार्थक व भावपूर्ण अनुवाद करने में समस्या आती है। उदाहरण के लिए- 'उर्लीरहेको'- इस शब्द का हिंदी में सटीक शब्द तो नहीं मिलता है परन्तु समतुल्य के रूप में उफनता को मान सकते हैं। नेपाली भाषा में इस शब्द का प्रयोग कई प्रकार से होता है। जैसे आमाको माया उर्लीरकोछ- माँ का प्यार उफनता है। इस प्रकार के अनुवाद में समान भाव नहीं आ पाता है जो अनुवादक के लिए एक बड़ी समस्या का कारण बनता है। 'सगरसम्म'- इस शब्द के लिए भी हिंदी में कोई सटीक शब्द नहीं मिलता है, परन्तु समतुल्य के रूप में हम 'आकाश का सिर' कह सकते हैं। इस प्रकार के अनुवाद में समान भाव नहीं आ पाता है जो अनुवादक के लिए एक बड़ी समस्या का कारण है।

'कालले कुत्कुत्याएको' इस मुहावरे का आशय है- मृत्यु के निकट जाना या अशुभ संकेत मिलने का भाव प्रकट होता है, हिंदी में इस प्रकार के भाव से संबंधित मुहावरे नहीं मिलते हैं जिससे अनुवाद करने में कठिनाई आती है। 'नरहे बाँस बबजे बाँसुरी' इस मुहावरे का समतुल्य हिंदी में 'ना रहेगा बाँस ना बजेगी बाँसुरी' को माना जा सकता है अर्थात इस प्रकार के मुहावर का अनुवाद करने में अनुवादक को सहूलियत होती है।

'घिरौला जत्रो नाक भयों' इस प्रकार की लोकोक्ति किसी व्यक्ति की बहुत बड़ी या मोटी नाक का मजाक उड़ाने या हँसी में टिप्पणी करने के लिए कही जाती है तथा किसी की तारीफ करने पर नाक फूल जाना भी मान सकते हैं। परन्तु हिंदी में इस प्रकार की कोई लोकोक्ति नहीं पाई जाती है जो अनुवाद के लिए समस्या का कारण बनती है। 'कसैलाई मरी मरी कसैलाई परिपरी' जिसका भावार्थ होता है कोई अधिक मेहनत करे और कोई आराम से बैठे रहे। इस प्रकार की लोकोक्तियों का हिंदी में अनुवाद करना चुनौती भरा कार्य होता है।

क्रिया और काल के रूप में भाव का अंतर- नेपाली भाषा से हिंदी भाषा में अनुवाद करते समय क्रिया तथा काल के रूप में भाव का सही चयन करना बहुत कठिन हो जाता है क्योंकि अगर हम क्रिया रूप का काल तथा भाव गलत चुनते हैं तो वाक्य में भावनात्मक अर्थ पूरी तरह नहीं आ पाता है।

नेपाली समाज नेपाल से लेकर भारत के विविध भागों तक फैला हुआ है। जहाँ इस समाज की अपनी अलग पहचान, समाज, संस्कृति, परंपरा, रीति-रिवाज, खान-पान, पहनावा-ओढ़ावा और साहित्य है। इसी सामाजिक एवं सांस्कृतिक विविधता के बीच नेपाली भाषा का उद्भव हुआ और समय के साथ यह भाषा निरंतर विकसित हो रही है। विभिन्न राजनैतिक परिवर्तनों, सांस्कृतिक संपर्कों, भौगोलिक परिस्थितियों तथा सामाजिक बदलावों का प्रभाव इसकी शब्द-संपदा, ध्वनि-प्रणाली पर पड़ा है। नेपाली भाषा केवल संचार का माध्यम नहीं, बल्कि नेपाली समाज की सांस्कृतिक पहचान का प्रमुख आधार है। अंततः कहा जा सकता है कि नेपाली समाज और नेपाली भाषा एक-दूसरे के पूरक हैं और दोनों मिलकर सांस्कृतिक चेतना तथा ऐतिहासिक निरंतरता को मजबूती प्रदान करते हैं।

लोक साहित्य में लोककथाओं का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। ये लोककथाएँ केवल मनोरंजन का साधन नहीं; बल्कि समाज के लोक विश्वास, लोक मान्यताएं, लोक अनुभव, भावनाएओं एवं कल्पनाओं का सजीव चित्रण है। यह सदियों से पीढ़ी दर पीढ़ी मौखिक रूप में विकसित होती

चली आ रही हैं। ये लोक कथाएँ किसी एक लेखक या कवि द्वारा नहीं लिखी होती हैं। इन लोककथाओं की उत्पति का स्रोत गाँव, बस्ती, पर्व-त्यौहार आदि में पाया जाता है जिसे हमारे दादी-नानी व पूर्वज कथा के रूप में प्रस्तुत करते हैं। लोककथाएँ किसी भी समाज की सामूहिक स्मृति होती हैं। इनमें समाज की परम्पराओं, रीति-रिवाज, देवी-देवताओं की भक्ति, आराधना, जातीय संबंध, संघर्ष आदि की प्रस्तुति होती है।

चयनित लोककथाओं में प्रकृति एवं पशु-पक्षियों का वर्णन करते हुए मनुष्य और प्रकृति के बीच एक गहरा संबंध दर्शाया गया है। इनमें नैतिक मूल्यों के वे तत्व निहित होते है जो मनुष्य को मनुष्य बनाते है। ये लोक कथाएँ हमारी संस्कृति को जीवित रखने वाली तथा पीढ़ी दर पीढ़ी इसको स्थानांतरित करने वाली होती है। ये लोक कथाएँ हमारे सांस्कृतिक मूल्यों, परम्पराओं और हमारी धार्मिक चेतना से हमारी पहचान कराती है। इन लोक कथाओं में बुराई पर अच्छाई की विजय, जूठ के समक्ष सत्य की सता को स्थापित किया गया है। ये लोककथाएँ जनमानस को यह संदेश देती हैं कि मनुष्य, प्रकृति, पशु-पक्षी और जीव-जन्तु सब हमारा समाज है। इसमें सभी के मंगल की कामना है। इससे ही पूरी दुनिया का संतुलन बना हुआ है। इन लोककथाओं में निहित संदेह साफ़ है कि जब मनुष्य प्रकृति या पशुओं के साथ अन्याय करता है तो वह स्वयं अपने विनाश का कारण बनता हैं।

अनुवाद एक जटिल प्रक्रिया है जो विशेज्ञता मांगती है। यह प्रक्रिया को केवल शब्दों का स्थानान्तरण नहीं है, बल्कि यह दो भाषाओं, संस्कृतियों, लोकभावनाओं और परंपराओं के आदान प्रदान का जरिया है। अनुवाद की प्रक्रिया में स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा में शब्दानुवाद और भावानुवाद की समस्याएँ आती हैं। जब स्रोत भाषा के किसी शब्द का भाषायी समानार्थक लक्ष्य भाषा में नहीं मिलता और उसका अर्थ केवल स्रोत भाषा के अनुभव एवं वाक्य से ही जाना जा सकता है।

शोध के महत्वपूर्ण निष्कर्ष:

1. चयनित लोक कथाएँ एक बेहतर समाज के निर्माण के लिए नैतिक मूल्यों की अनिवार्यता पर बल देती हैं। ये कथाएँ नैतिक मूल्यों से विहीन समाज का चित्रण करते हुए उन्हें पुनः स्थापित करने की कोशिश करती हैं।
2. चयनित लोक कथाओं में समाज में व्याप्त जातिगत भेदभाव को प्रत्यक्ष रूप से नहीं बताकर प्रतीकात्मक रूप से पेड़, फूल या प्रकृति के माध्यम से दिखाया गया है।
3. चयनित लोक कथाओं में समाज में आर्थिक कारणों से उपजे अमीर-गरीब के अंतर का वर्णन मिलता है। यह अंतर राजा, सेठ, साहूकार, किसानों आदि के अकाल के दौरान गाँव से पलायन करते समय के वर्णन में स्पष्टता से दिखाई देता है।
4. चयनित लोक कथाओं में नारी का चित्रण समाज और परिवार के बीच विभिन्न रूपों में हुआ है; लेकिन सबसे अधिक चित्रण समाज में स्त्री के उपेक्षित और पितृसत्तात्मक समाज की शिकार के रूप में हुआ है। हालाँकि सुनकेशरी जैसी नारी का वर्णन भी इन लोककथाओं में मिलता है जो अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करती है।
5. चयनित लोक कथाओं में राजनीति का स्वरूप का वर्णन मिलता है जो वर्तमान समय सा नहीं है; लेकिन आज के पूंजीपति पुराने सेठ-साहूकारों के आधुनिक अवतार हैं। इनमें राजा, सेठ और साहूकार राजनीति के कर्ता-धर्ता हैं। इन लोक कथाओं में राजा के माध्यम से राजव्यवस्था का संचालन, न्याय विधान, दंड विधान, राजा-प्रजा के आपसी सम्बन्ध, राजा का व्यवहार आदि मिश्रित रूप में उजागर होता है।

6. चयनित लोक कथाओं में नेपाली समाज की एक सुदृढ़ सांस्कृतिक परम्परा दिखाई देती है। इनके पहनावे में वैविध्य दिखाई पड़ता है। खानपान सम्बन्धित मान्यताओं का भी कई जगह पर वर्णन है।
7. चयनित लोक कथाओं में प्रेम के उदात स्वरूप का चित्रण सबसे अधिक हुआ है, जिसमें प्रेम में त्याग की भावना, मिलन की उत्सुकता, समर्पण का भाव प्रमुख रूप से वर्णित है।
8. चयनित लोक कथाओं में हिन्दू धर्म के उदात रूप का चित्रण हुआ है। जहाँ जीवों के प्रति दया का भाव, लोक मंगल की भावना, प्रकृति का पूजन, देवताओं का मदद के लिए आने का वर्णन मिलता है।
9. चयनित लोक कथाओं में जादू-टोने का वर्णन विविध रूपों में हुआ है। चूँकि लोककथाएँ मौखिक और कल्पना आधारित होती हैं। अतः जादू-टोने का प्रयोग ग्रहणीय है। इन लोक कथाओं में इनका प्रयोग सकारात्मक और नकारात्मक दोनों रूपों में मिलता है; लेकिन अंत नैतिक मूल्यों की स्थापना से होता है।
10. चयनित लोक कथाओं में मिथकों का प्रयोग हुआ है। ये मिथक पौराणिक, सांस्कृतिक, उत्पति, प्राकृतिक और लौकिक आदि रूपों में हैं।

संदर्भ सूची:

---

[1] डॉ. मणिकुमार शर्मा, गर्खाभाषानाम(एक समीक्षात्मक दृष्टि) भारतीय परिप्रेक्ष्यमा, पृ. 401

[2] बिर्ख खडका डुवर्सेली, नेपाली साहित्य विमर्श, पृ. 70

[3] पुष्प शर्मा ,गोलसिमल, पृ. 45

[4] वही, पृ. 80

परिशिष्ट- 1

संदर्भ ग्रंथ सूची

संदर्भ ग्रंथ सूची

आधार ग्रंथ:

- पुष्प शर्मा, गोलसिमल, उपमा प्रकाशन, कालेबुङ, पश्चिम बंगाल, 2021
- ललितजङ्ग सिजापति, कथा संग्रह ('दन्त्यकथा'), प्रकाशन बाबू माधवप्रसाद शर्मा, दुधविनायक, वाराणसी, 1999

सहायक ग्रंथ :

हिंदी ग्रंथ :

- एन. ई. विश्वनाथ अय्यर, अनुवाद भाषाएं-समस्याएं, दिल्ली, 2008
- कामताप्रसाद गुरु, हिन्दी व्याकरण, लोकभरती प्रकाशन, प्रयागराज, 2023
- कृष्णदेव उपाध्याय लोक-साहित्य की भूमिका, साहित्य भवन, इलाहाबाद, 2019
- कृष्णदेव शर्मा, लोक साहित्य समीक्षा, अशोक प्रकाशन, दिल्ली, 1980
- कृष्णदेव उपाध्याय, लोक संस्कृति की रूपरेखा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2019
- कृष्णदेव उपाध्याय, भारत के लोक साहित्य, साहित्य भवन, इलाहाबाद, 1985
- जी. गोपीनाथ व एस. कंदस्वामी, 'अनुवाद की समस्याएँ', लोकभारती प्रकाशन, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद, 2011
- डेविड के. अजयु, मारा भाषा की लोककथाएँ: अनुवाद और विश्लेषण ('मरा फोह्या' के विशेष संदर्भ में) हिंदी विभाग, मिजोरम विश्वविद्यालय, आइजोल में प्रस्तुत पीएचडी हिंदी का शोध प्रबंध
- देवेन्द्रनाथ शर्मा, दीप्ति शर्मा, भाषाविज्ञान की भूमिका, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 2017

- बिर्ख खडका डुवर्सेली, नेपाली साहित्य विमर्श, साहित्यायन प्रकाशन,ग्रेटर नोएडा (उा प्रा) 2017
- ब्रजकिशोर प्रसाद सिंह, पापुलर हिन्दी व्याकरण,रमेश पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 2015
- भोलानाथ तिवारी, भाषा विज्ञान प्रदेश एवं हिंदी भाषा, किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2016
- रमेश पोखरियाल 'निशंक', एक दिन नेपाल में, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, 2018
- राधेश्याम सिंह, डॉ. पवन कुमार रावत, लोक साहित्य एवं संस्कृति, लोकभारती प्रकाशन, 2024
- रामचन्द्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास, प्रभात पेपरबैक, दिल्ली, 2020
- रामधारी सिंह दिनकर, संस्कृति के चार अध्याय, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, 2023
- रीतारानी पालीवाल, अनुवाद प्रक्रिया एवं परिदृश्य, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2018
- श्याम परमार, भारतीय लोक-साहित्य, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1954
- संतोष एलेक्स, अनुवाद प्रक्रिया एवं व्यावहारिकता, आथर्स प्रेस, नई दिल्ली, 2016
- सत्येद्र, लोक साहित्य विज्ञान, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2023
- हजारीप्रसाद द्विवेदी, हिंदी साहित्य की भूमिका, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1968
- हेतु भरद्वाज, डॉ. रमेश रावत, हिंदी भाषा उद्भव और विकास, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 2021
- श्रीचद्र जैन, लोक-कथा विज्ञान, राजस्थानी ग्रंथागार प्रकाशन, जोधपुर, 2016

नेपाली ग्रंथः

- खेमराज नेपाल, नेपाली लोक साहित्यको रूपरेखा, साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली, 2003
- गोमा देवी शर्मा, भारतीय नेपाली साहित्यको विश्लेषणात्मक इतिहास, गोरखा ज्योति प्रकाशन, 2019
- घनश्याम नेपाली, नेपाली साहित्यको परिचयात्मक इतिहास, उपमा प्रकाशन, 2021
- चूड़ामणि बंधु, नेपाली भाषा को उत्पत्ति, गदंबा प्रकाशन, काठमांडू, 1968
- चूडामणि बन्धु, भाषाविज्ञान, साफा प्रकाशन, ललितपुर, 2077(वि. सं.)
- मणिकुमार शर्मा, गर्खाभाषानाम (एक समीक्षात्मकदृष्टि) भारतीय परिप्रेक्ष्यमा, प्रकाशन गोर्खाभाषा समिति, सिलीगढ़ी, 2020
- सूर्य विक्रमज्वाली, नेपाली भाषा विकास को संक्षिप्त इतिहास, नेपाली साहित्य परिषद, दार्जिलिंग, 1972

अंग्रेजी ग्रंथः

- Barendra Nath Datta, A Hand Book of Folklore Material, Bharat Offset, North East India, Guwahati,1994
- L. L. Ahmad, Comprehensive History of Far East, S. Chand Co. Ltd., Delhi, 1981
- Mona Baker, In other words; A course book on translation, Routledge, Abingdon, England, 2011

कोश:

- डॉ. हरदेव बाहरी, बृहत् शिक्षार्थी अंगेजी- हिंदी शब्दकोश, राजपाल एण्ड संस, दिल्ली, 2011
- धीरेंद्र बर्मा(संपा.), हिंदी साहित्य कोश (भाग- 1 और 2), ज्ञानमण्डल प्रकाशन, वाराणसी, 2000
- नगेंद्र (संपा.), भारतीय साहित्य कोश, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1981
- बैरागी काई ला (अध्यक्ष), नेपाली बृहत् शब्दकोश, नेपाल प्रज्ञा-प्रतिष्ठान कमलादी, काठमांडू, 2009
- रामचंद्र बर्मा (संपा.), मानक हिंदी कोश, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, 1978

पत्रिकाएँ :

- कंचनजंघा, प्रदीप त्रिपाठी(संपा), हिंदी विभाग, सिक्किम विश्वविद्यालय, गंगटोक, सिक्किम
- साहित्य अमृत, लक्ष्मी शंकर वाजपेयी (संपा.), प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली
- समन्वय पूर्वोत्तर, प्रो. बीना शर्मा (प्रधान संपा.), केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा
- निर्माण संस्कृति विशेषांक, अप्रैल 1999, संप.पवन चामलिंग 'किरण', निर्माण प्रकाशन, सिक्किम

परिशिष्ट- 2

शोधार्थी का जीवनवृत्त
शोधार्थी का विवरण

शोधार्थी का जीवनवृत्त

1. नाम	:	**कृतिका विश्वकर्मा**
2. पिता का नाम	:	गणेश विश्वकर्मा
3. माता का नाम	:	विष्णु माया विश्वकर्मा
4. पता	:	कदमानी बिश्वनाथ चरियाली, असम (भारत)
5. जन्मतिथि	:	16.10.1998
6. शैक्षणिक योग्यता	:	a) HSLC (2014) 2nd Div.
		b) HSSLC (2016) 2nd Div.
		c) B.A. (2019) 2nd Div.
		d) M.A. (2021) 1st Div.
7. मोबाइल	:	8415819509
8. ईमेल	:	kritikamzu19@gmail.com
9. भाषा	:	हिंदी, अँग्रेजी, आसामी, नागमिस, नेपाली, न्यिशी
10. प्रकाशन	:	

क) कृतिका विश्वकर्मा एवं प्रो. संजय कुमार, नेपाली लोक साहित्य के हिंदी अनुवाद की समस्याएँ, 'संशोधक' पत्रिका, अंक: 30, मार्च, 2024.

ख) कृतिका विश्वकर्मा एवं प्रो. संजय कुमार, नेपाली लोककथाओं में पूर्वोत्तर भारत की लोक मान्यताओं की झलक (नेपाली लोककथा संग्रह 'गोलसिमल' के विशेष संदर्भ में), 'द्विभाषी राष्ट्र सेवक' पत्रिका, अंक: 08-09, नवम्बर-दिसम्बर, 2024.

11. संगोष्ठी में पत्र वाचन:

(क) नेपाली लोक कथाओं में मानव अधिकार, पूर्वोत्तर पर्वतीय विश्वविद्यालय, शिलांग(मेघालय), साहित्य एवं समाज में मानव अधिकार के विविध परिपेक्ष्य, 31 मार्च से 01 अप्रैल, 2023.

(ख) नेपाली लोक साहित्य में पर्यावरण चेतना, मिज़ोरम विश्वविद्यालय आइजोल (मिज़ोरम) Environmental justice : Representations in Literature, culture and philosophy. During 27-29 February, 2024.

शोधार्थी का विवरण

नाम	:	**कृतिका विश्वकर्मा**
शिक्षा	:	पीएच.डी.
विभाग	:	हिंदी
शोध प्रबंध का शीर्षक	:	**चयनित नेपाली लोककथाओं का हिंदी अनुवाद और विश्लेषण**
प्रवेश शुल्क के भुगतान की तिथि	:	23-08-2021
शोध प्रस्ताव की संस्तुति	:	

1) विभागीय शोध समिति की तिथि : 06-04-2022
2) बी.ओ.एस. की तिथि : 24-05-2022
3) स्कूल बोर्ड की तिथि : 10-06-2022

मिज़ोरम विश्वविद्यालय पंजीयन संख्या : 1900219

पीएच.डी. पंजीयन संख्या : MZU/Ph.D./1801 of 23.08.2021

समयावधि विस्तार पत्र संख्या :

(प्रो. संजय कुमार)
अध्यक्ष, हिंदी विभाग
मिज़ोरम विश्वविद्यालय, आईजोल

शोध प्रबंध का सारांश

ABSTRACT

चयनित नेपाली लोककथाओं का हिंदी अनुवाद और विश्लेषण

CHAYANIT NEPALI LOKKATHAON KA HINDI ANUVAD AUR VISHLESHAN

[**मिजोरम विश्वविद्यालय, आईजोल के हिंदी विषय में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी (पीएच.डी.) की उपाधि हेतु प्रस्तुत शोध प्रबंध का सारांश**]

AN ABSTRACT SUBMITTED IN PARTIAL FULFILLMENT OF THE REQUIRMENTS FOR THE DEGREE OF DOCTOR OF PHILOSOPHY

कृतिका विश्वकर्मा

KRITIKA BISWAKARMA

MZU REGN. NO: 1900219

Ph.D. REGN. NO.: MZU/Ph.D./1801 of 23.08.2021

हिंदी विभाग

मानविकी एवं भाषा संकाय

DEPARTMENT OF HINDI

SCHOOL OF HUMANITIES AND LANGUAGES

दिसंबर, 2025

DECEMBER, 2025

चयनित नेपाली लोककथाओं का हिंदी अनुवाद और विश्लेषण

CHAYANIT NEPALI LOKKATHAON KA HINDI ANUVAD AUR VISHLESHAN

शोधार्थी
कृतिका विश्वकर्मा
हिंदी विभाग

By
KRITIKA BISWAKARMA
DEPARTMENT OF HINDI

शोध निर्देशक
प्रो. संजय कुमार

SUPERVISOR
PROF. SANJAY KUMAR

मिजोरम विश्वविद्यालय, आईजोल के मानविकी एवं भाषा संकाय के अंतर्गत हिंदी विषय में डॉक्टर ऑफ फिलॉसफी (पीएच.डी.) की उपाधि के लिए अपेक्षित आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु प्रस्तुत शोध प्रबंध का सारांश

Submitted in partial fulfillment of the requirement of the Degree of Doctor of Philosophy in Hindi of Mizoram University, Aizawl

विषयानुक्रमणिका

चयनित नेपाली लोककथाओं का हिंदी अनुवाद और विश्लेषण

विषयानुक्रमणिका

	पृष्ठ संख्या
प्रमाण पत्र	**I**
घोषणा पत्र	**II**
प्राक्कथन	**III-VIII**
विषयानुक्रमणिका	**IX-XI**
प्रथम अध्याय: नेपाली समाज और नेपाली भाषा : सामान्य परिचय	**1-22**
(क) नेपाली समाज : सामान्य परिचय	
(ख) नेपाली भाषा : उद्भव और विकास	
द्वितीय अध्याय: लोककथा : स्वरूप विवेचन	**23-61**
(क) लोककथा : परिभाषा और स्वरूप	
(ख) लोककथा : वर्गीकरण	
तृतीय अध्याय: चयनित नेपाली लोककथाओं का हिंदी में अनुवाद	**62-238**
चतुर्थ अध्याय: चयनित नेपाली लोककथाओं का विश्लेषण	**239-285**
(क) चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त समाज का विश्लेषण	
(ख) चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त संस्कृति का विश्लेषण	
(ग) चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त प्रेम का विश्लेषण	
(घ) चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त धर्म का विश्लेषण	
(ङ) चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त जादू-टोना का विश्लेषण	
(च) चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त प्रकृति एवं पशु-पक्षी का विश्लेषण	

पंचम अध्याय: चयनित नेपाली लोककथाओं के हिंदी अनुवाद की समस्याएँ **286-303**

(क) शब्दानुवाद की समस्याएँ

(ख) भावानुवाद की समस्याएँ

उपसंहार **304-321**

परिशिष्ट- 1 **322-326**

संदर्भ ग्रंथ सूची

परिशिष्ट- 2 **327-329**

शोधार्थी का जीवनवृत्त

शोधार्थी का विवरण

शोध प्रबंध का सारांश

शोध प्रबंध का सारांश

लोक-कथा को लोक साहित्य की प्रमुख विधा के रूप में देखा जाता है। अतः इस विधा या लोक साहित्य को समझने से पहले 'लोक' शब्द की सरंचना को समझना अति आवश्यक है। 'लोक' शब्द किसी भावुकता या दैनिक पूर्वाग्रहों से निर्मित कोई सामाजिक-मानवीय विमर्श या प्रलाप नहीं है; बल्कि इसकी उपस्थिति उतनी ही प्राचीन है, जितना की मनुष्य स्वयं। लोक साहित्य के क्षेत्र में 'लोककथा' सबसे महत्वपूर्ण विधा है। इस विधा में जितना सृजन हुआ है शायद ही लोक साहित्य की किसी दूसरी विधा में हुआ होगा। 'लोककथा' शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है- 'लोक' और 'कथा'। कथा में लोक शब्द जुड़ जाने से वह लोककथा की संज्ञा प्राप्त करता है जिससे एक विशेष अर्थ 'जनकथा' का बोध होता है। प्रस्तुत शोध प्रबंध 'चयनित नेपाली लोककथाओं का हिंदी अनुवाद और विश्लेषण' विषय में लोक-कथा के विविध आयामों को समझने का प्रयास किया गया है। अध्ययन की सुविधा के लिए प्रस्तुत शोध प्रबंध को पाँच अध्यायों में बाँटा गया है।

प्रथम अध्याय: 'नेपाली समाज और नेपाली भाषा : सामान्य परिचय' है। इस अध्याय को दो उप-अध्यायों में बाँटा गया है। पहला उप-अध्याय नेपाली समाज का सामान्य परिचय है। जिसमें नेपाली समाज का सामान्य परिचय प्रस्तुत करते हुए नेपाली समाज के खान-पान, वेशभूषा, रहन-सहन, पर्व एवं त्योहार, संस्कृति और सामूहिक जीवन-पद्धति, स्त्रियों की दशा आदि का अवलोकन किया गया है। बदलती हुई परिस्थितियों के कारण इसमें कई बदलाव भी आए हैं। इसमें से कुछ बदलाव सकारात्मक हैं तो कुछ नकारात्मक। नकारात्मक बदलाव से यहाँ तात्पर्य रूढ़िवादी मान्यताओं एवं सोच से है वहीँ सकारात्मक बदलाव में शिक्षा का बड़ा योगदान रहा है। जिससे समाज में एक जागरूकता दिखाई पड़ती है, जिससे नेपाली समाज प्रगतिशील बना है।

दूसरा उप-अध्याय नेपाली भाषा का उद्भव और विकास है। इस अध्याय में नेपाली भाषा के उद्भव एवं विकास की यात्रा को रेखांकित किया गया है। नेपाली भाषा की उत्पत्ति भारोपीय भाषा परिवार से शौरसेनी होते हुए खस, गोर्खा और नेपाल की भाषा बनने की यात्रा तय करती है; परन्तु कुछ विद्वानों में गोर्खा भाषा और नेपाली भाषा की प्राचीनता को लेकर मतभेद दिखाई देता है। गोर्खा भाषा को प्राचीन मानते हुए प्रमुख भाषाविज्ञानी भोलानाथ तिवारी जी लिखते हैं कि- "शासकीय स्तर पर गोरखा भाषा के लिए नेपाली नाम का प्रयोग 1932 के बाद हुआ है।"[1] कुछ विद्वान नेपाली भाषा की निकटता राजस्थानी से भी बताते हैं। सूर्यविक्रम ज्ञवाली इस मत के समर्थक रहे हैं- "प्राचीन खस जाति के साथ नेपाली भाषा का कोई संबंध नहीं है। उनके विचार में राजपूताना (चित्तौड़) के राजपूतों ने नेपाल (गोर्खा) में राज्य बसाकर राजस्थानी भाषा चलाई थी। नेपाली भाषा राजस्थानी से मिलती जुलती है।"[2] इससे यह निष्कर्ष निकलता है, कि नेपाली भाषा भी परिवर्तन की प्रक्रिया में रही है जो मानव समाज के विकास के साथ-साथ निरंतर आगे बढ़ती चली जा रही है।

इस शोध प्रबंध का द्वितीय अध्याय: 'लोककथा : स्वरूप विवेचन' है। इस अध्याय को दो उप-अध्यायों में विभाजित किया गया है। पहला उप-अध्याय 'लोककथा की परिभाषा और स्वरूप' है। इसके अंतर्गत 'लोक' शब्द एवं लोककथाओं की परिभाषाओं का वर्णन करते हुए लोककथा के प्रकार, मौखिक परम्परा और तत्त्व आदि पर विभिन्न विद्वानों के मतानुसार प्रकाश डाला गया है। लोक कथाओं का स्वरूप जनमानस की भाषा, भावनाओं एवं जीवन के अनुभवों से जुड़ा होता है। इनमें काल्पनिक पात्र के माध्यम से मनोरंजन के साथ-साथ सामाजिक मूल्य एवं लोक जीवन की झलक भी दिखाई पड़ती है। जो समाज में आम जनता की आस्था, विश्वास, मान्यताएँ आदि को पीढ़ी दर पीढ़ी मौखिक परम्परा के माध्यम से आगे बढ़ाते रहती है।

इस अध्याय के दूसरे उप-अध्याय लोककथाओं का वर्गीकरण प्रस्तुत किया गया है। जिसमें अनेक विद्वानों द्वारा किए गए लोककथाओं के वर्गीकरण पर प्रकास डाला गया है। इस सम्बन्ध में कृष्णदेव उपाध्याय अपनी पुस्तक 'लोक-साहित्य की भूमिका' में लोक कथाओं को वर्ण्य विषय की दृष्टि से 'छः' वर्गों में वर्गीकृत करते है जो इस प्रकार है- उपदेश कथा, व्रत कथा, प्रेम कथा, मनोरंजन कथा, सामाजिक कथा, पौराणिक कथा। इसी तरह श्री मोहनकृष्ण दर भी लोककथा को वैज्ञानिक दृष्टिकोण का देते हुए 'छः' वर्गों विभाजित करते हैं। इन दोनों विद्वानों का वर्गीकरण लगभग एक जैसा है; परन्तु इनका आधार भिन्न-भिन्न है। इसी को आधार बनाकर अनेक विद्वानों ने भी लोककथाओं का वर्गीकरण किया है। जहाँ कुछ इसी प्रकार का वर्गीकरण दिखाई पड़ता है। इन सभी विद्वानों ने किसी न किसी रूप में कथ्य, उद्देश्य, पात्र, क्षेत्र आदि को आधार बनाया है। इससे यह स्पष्ट है कि लोककथाओं का क्षेत्र बड़ा होने के कारण इसे किसी एक दृष्टिकोण के आधार पर वर्गीकृत नहीं किया जा सकता।

इस शोध प्रबंध का तृतीय अध्याय: 'चयनित नेपाली लोककथाओं का हिंदी में अनुवाद' है। इस अध्याय में कुल 29 लोककथाओं का नेपाली से हिंदी में अनुवाद किया गया है। ये लोक कथाएँ अग्रलिखित दो लोककथा संग्रहों से ली गई है। इसमें पहला लोककथा संग्रह पुष्प शर्मा द्वारा संग्रहीत 'गोलसिमल' है, जो उपमा प्रकाशन, कलेबुङ, से वर्ष 2021 को प्रकाशित हुआ है। इस संग्रह में कुल 14 लोककथाएँ हैं, जो निम्नलिखित हैं-

1. ओर्ल न ओर्ल सुनकेशरी मैयाँ (उतरों न उतरों प्रिय सुनकेशरी)
2. स्वर्ग जाने सिँढी (स्वर्ग जाने वाली सीढ़ी)
3. सुम्निमा र पारुहाङ (सुम्निमा और पारुहाङ)
4. रोँगीत र रोँगनू (रोँगीत और रोँगनू)
5. उत्तिस र गुराँसको प्रेम कथा (उत्तिस और गुराँस की प्रेम कथा)

6. गोलसिमल… गोलसिमल (गोलसिमल... गोलसिमल)
7. आतेकको बाँसुरिको धुन (आतेक कि बाँसुरि की धुन
8. पाण्डा किङ्को मोहभङ्ग (पांडा किंग का मोहभंग)
9. सुनौलो रेशमी मजेत्रो (सुनेरी रेशमी मजेत्रो)
10. आँकको रुखको जन्म (आक के वृक्ष के रूप में पुनर्जन्म)
11. बिहेको प्रस्ताव (विवाह का प्रस्ताव)
12. पोशाकधारी राजकुमार- 1 (पक्षीपशाक धारी राजकुमार 1)
13. पोशाकधारी राजकुमार- 2 (पक्षीपोशाक धारी राजकुमार 2)
14. बुढो बाबु फाल्ने थोत्रे डोको (बूढ़े पिता को फेंकने वाला पुराना डोका)

वहीँ दूसरा लोक कथा संग्रह- ‘कथा-संग्रह’(दंत्यकथा) है। जिससे ललितजङ्ग सिजापति ने संग्रहीत किया हैं, इसका प्रकाशन बाबू माधवप्रसाद शर्मा, दूधविनायक, वाराणसी से वर्ष 1999 में हुआ। इस ‘कथा-संग्रह’ में कुल 15 लोककथाएँ हैं, जो इस प्रकार हैं-

1. जिउंदो मानिस (जीवित आदमी)
2. कुक्कुरलाई मासु पैचों (कुत्ता को उधार मांस)
3. धर्म र पाप कहाँ छ (धर्म और पाप कहा है)
4. चार रत्न (चार रत्न)
5. जस्तालई तस्तै (जैसे को वैसा)
6. वित्त-रोगको औषधि (आंतरिक रोग की औषधी)
7. लौभी र छट्टू (लालची और छट्टू)
8. देख्ने अन्धो (देखने वाला अन्धा)

9. निंद्रा साधन, काल भोजन स्त्रिया ताड़न स्वस्ति महाराज! (निंद्रा साधन,काल भोजन स्त्रिया ताड़न स्वस्ति महाराज!)
10. सिञ्चा-धुञ्चा (सींचा-धुंचा)
11. तोरी फुल्यो गाउँ, ज्वाइं मेरो नाऊँ (सरसों फूल गाँव , जमाई मेरा नाम)
12. ज्ञानबाट फाइदा (ज्ञान से लाभ)
13. चट्टू-छट्टू-उपरचट्टू (चट्टू- छट्टू-उपरट्टू)
14. चोर कुन हो (चोर कौन है)
15. सपनाको प्रेम (सपनों का प्रेम)

इस प्रबंध का चतुर्थ अध्याय: 'चयनित नेपाली लोककथाओं का विश्लेषण' है। इस अध्याय को 'छः' उप-अध्यायों में बाँटा गया है। इसके अंतर्गत में 29 चयनित लोककथाओं का विश्लेषण किया गया है। इस अध्याय का प्रथम उप-अध्याय 'चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त समाज का विश्लेषण है। जहाँ नेपाली लोककथाओं में नेपाली समाज विभिन्न पक्षों का चित्रण किया गया है। जिन्हें हम निम्नलिखित बिन्दुओं के माध्यम से विश्लेषित किया गया है–

क. नैतिक मूल्य: नैतिक मूल्य को लोककथा की एक प्रमुख विशेषता माना जाता है। जो प्रत्येक लोककथा में प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से विद्यमान रहते हैं। चयनित नेपाली लोककथाओं में भी समाज के लिए महत्वपूर्ण नैतिक मूल्यों की शिक्षा दी गई है। जहाँ आदर्शों, सिद्धांतों, शिक्षाओं एवं अच्छाई और बुराई के बीच संघर्ष का वर्णन मिलता है। 'बूढ़े पिता को फ़ेकने वाला पुराना डोका' कथा में नैतिक मूल्य को संवेदनशील समाज के महत्वपूर्ण तत्व के रूप में उद्घाटित किया गया है। इस लोककथा में एक बेटे को अपने ही पिता बूढ़े होने पर बोझ लगने लगते है और वह उन्हें पहाड़ से नीचे फेंकने के लिए डोको(लकड़ी ढोने वाली टोकरी) में रख कर अपने बेटे को साथ जाता है; परन्तु जब उसका बेटा

उसी का अनुकरण करते हुए उसे भी बूढ़े होने पर डोको में रख कर फेंकने की बात करता है तो उसे अपनी गलती का एहसास होता है, उसकी आँखे खुल जाती है और उसका हृदय परिवर्तन हो जाता है।

ख. जातिगत भेदभाव: चयनित लोककथाओं में समाज में व्याप्त जातीय भेदभाव का चित्रण दिखाई पड़ता है। जहाँ न केवल मनुष्यों; अपितु पशु-पक्षियों, पेड़-पौधे आदि को एक प्रतीक के रूप में विभिन्न जातियों एवं वर्गों में बंटा हुआ दिखया गया है। जाति प्रथा मानव समाज की एक पुरानी सामाजिक व्यवस्था है। जिसने एक ओर तो समाज को व्यवस्थित किया है वहीं दूसरी ओर असमानता और भेदभाव को बढ़ावा दिया है। 'उत्तिस र गुराँस की प्रेम कथा' में मनुष्य के साथ-साथ पेड़-पौधे और फूलों में भी रंग, रूप के आधार पर भेदभाव इन दो फूलों को आधार बनाकर दिखाया गया है। यहाँ रंग-रूप एवं जातीय अंतर के कारण इनका आपस में विवाह नहीं हो पाता है। यह कथा अप्रत्यक्ष रूप से समाज की जातीय व्यवस्था के यथार्थ को दिखाते हुए मानवेतर समाज में भी उसके विस्तार कल्पना लेखक द्वारा की गई है।

ग. स्त्री की दशा: चयनित लोककथाओं स्त्री का चित्रण विविध रूपों में दिखाई पड़ता है। जहाँ कहीं वह देवी रूप में पूजी जाती है तो कहीं उसको राक्षसी बताकर तबाही मचाते हुए दिखाया गया है। कहीं स्त्री माँ के रूप में वात्सलय से सराबोर तो दूसरी ओर सौतेली माँ के रूप में असंवेदनशील। इन लोककथाओं स्त्री कहीं उपेक्षित है तो कहीं पितृसत्तात्मक समाज की ज्यादतियों की शिकार दिखाई पड़ती हैं।

स्त्री के देवी रूप संदर्भ में 'पारुहाङ और सुम्निमा' कथा को देखा जा सकता है। जहाँ सुम्निमा नामक एक स्त्री, जिसको माता पार्वती का प्रतीक माना गया है। यह एक प्रेम प्रसंग पर आधारित कथा है। इस कथा में सृष्टिकर्ता संसार में सबसे पहले एक युवक और एक युवती का सृजन करते हैं, जिनसे

एक पुत्री का जन्म होता है, जिसका नाम सुम्निमा रखा जाता है। सुम्निमा पूरे संसार में अकेली होने के कारण जीव-जंतुओं के साथ रहती थी। एक दिन जंगल में अचानक उसने पारुहाङ को देखा। सुम्निमा उसके बलिष्ट एवं सुगठित शरीर को देखकर मोहित हो जाती है। नेपाली किरात राई समाज में यह लोक विश्वास प्रचलित है कि यह कथा शिव-पार्वती की प्रेम कथा पर आधारित है। "पारुहाङ और सुम्निमा को शिव-पार्वती का प्रतीक माना जाता है और आज भी किरात समाज में यह प्रचलित लोकविश्वास है कि पारुहाङ और सुम्निमा, शिव और पार्वती के स्वरूप में धरती पर जन्में थे। किरात राई समाज में सुम्निमा को प्रकृतिपुत्री माना गया है और पारुहाङ को शिव। यह समाज इस जोड़े की पूजा अर्चना करते हैं। इस आस्था और विश्वास के प्रतिरूप के कारण लेकसेप में स्थित शिव मंदिर के प्रवेशद्वार की दीवार पर सुम्निमा और पारुहाङ का चित्र बना हुआ है।"[3]

घ. राजनीतिक स्थिति: प्राचीन काल में जब लिखित इतिहास का अभाव था। तब लोककथाएँ ही उस समय की सामाजिक और राजनीतिक परिस्थितियों को सुरक्षित करने का माध्यम थी। चयनित लोककथाओं में भी राजा, महाराजा, सेठ और साहूकार आदि की कथाएँ मिलती है। यहाँ राजाओं को आदर्शवादी, न्यायप्रिय रूप में प्रस्तुत किया गया है। 'चार रत्न' कथा में एक राजा अपने कर्तव्य का पालन करते हुए दिखाया गया है। जो एक अच्छे शासक के रूप में हमारे सामने आता है।

ङ आर्थिक स्थिति: लोक कथाएँ केवल समाज की लोक मान्यताओं तथा विश्वास को ही उजागर नहीं करती; बल्कि ये समाज की आर्थिक स्थितियों को भी प्रस्तुत करती हैं। समाज की आर्थिक स्थितियों को लोककथाओं के पात्रों की जीवन शैली, पहनावा, खानपान, रहन-सहन एवं कार्य व्यापार आदि के माध्यम से दर्शाया जाता है। चयनित लोक-कथाओं में कई स्थानों पर आर्थिक विपन्नता के प्रभाव को दिखाया गया है। जैसे 'गोलसिमल' कथा में एक पिता, गाँव में अकाल तथा आर्थिक तंगी के कारण और अपनी पहली पत्नी की मृत्यु के बाद अपनी बेटी गोलसिमल को सौतेली माँ के पास

छोड़ कर पैसे कमाने के लिए परदेश चला जाता है। उसके परदेस जाते ही सौतेली माँ गोलसिमल को जलाकर मार देती है।

इस अध्याय का दूसरा उप-अध्याय 'चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्ति संस्कृति का विश्लेषण' है। संस्कृति एक प्रकार से समाज की आत्मा मानी जाती है, इसमें किसी समाज के रीति-रिवाज, खान पान, रहन-सहन, परम्परा आदि समाहित होते हैं। चयनित लोककथाओं में संस्कृति के विविध रूपों की झलक मिलती है। इन कथाओं के पीछे भी कोई ना कोई मान्यताएं या मिथ अवश्य है। यहाँ मिथ से तात्पर्य एक ऐसे संदर्भ से है जिसके पीछे पूर्ण धारणा या विश्वास का बोध होता है। 'आतेक कि बाँसुरी का धुन' सिक्किम के नेपाली समुदायों में बाँसुरी बजाना अशुभ माना जाता है। इसी लोक विश्वास पर यह कथा आधारित है। जहाँ आतेक नामक लड़का जो एक ग्वाला है। उसे बाँसुरी बजाना बेहद पसंद है; परन्तु उसके द्वारा बाँसुरी बजाने के कारण हिममानव (एक प्रकार का राक्षस) उसे परेशान करने लगता है, क्योंकि उसे भी आतेक की बाँसुरी की धुन सुनना अच्छा लगता था। हिममानव आतेक को बहुत परेशान करने लगा और उसे लगातार बाँसुरी बजाते रहने को कहता है। जिससे आतेक भी परेशान हो जाता है। अंत में उससे छुटकारा पाने के लिए आतेक उस हिममानव को धोखे से जिन्दा जला देता है, उसके बाद आतेक कभी बाँसुरी को हाथ नहीं लगाता है। सिक्किम के नेपाली समुदाय में आज भी यह मान्यता है कि "आज भी सिक्किम के नेपाली समुदाय में सुबह-शाम सीटी बजाना, जोर से चिल्लाना और मुख्य रूप से बाँसुरी बजाना सख्त वर्जित है, यदि किसी ने गलती या संयोगवश बाँसुरी बजाई तो हिममानव उसको परेशान करने लगेगा, ऐसा वहाँ का लोक विश्वास प्रसिद्ध है।"[4]

इस अध्याय का तीसरा उप-अध्याय 'चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त प्रेम का विश्लेषण' है। इन लोककथाओं प्रेम का स्वरूप बहुत ही व्यापक रूप में उभर कर सामने आता है। प्रेम

के विविध रूप स्त्री-पुरुष के परस्पर आकर्षण, माता-पिता का स्नेह, पति-पत्नी का प्रेम तथा भक्त और भगवान के बीच के अध्यात्मिक प्रेम जैसे रूपों में अभिव्यक्त किया गया है। 'रोंगनु और रोंगीत' कथा में दो जल स्त्रोत रोंगनु और रोंगीत को संसार के सबसे महान प्रेमी जोड़े में से एक माना गया है; लेकिन दोनों एक-दूसरे से दूर थे क्योंकि एक का उद्गम स्थल उत्तरी हिमालय की गोद में था तो दूसरे का पश्चिम हिमालय की गोद में। इसलिए दोनों का मिलना असम्भव था। ये दोनों प्रेमी जोड़े न मिल पाने के कारण हमेशा दु:खी रहते थे। कभी-कभी रोंगनु दूत के रूप में साँप को भेज कर रोंगीत की खबर पूछ लिया करता था। तो वहीं रोंगीत भी पक्षी को भेज कर अपने प्रेमी की हाल-चाल पूछा करती थी।

इस अध्याय का चतुर्थ उप-अध्याय 'चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त धर्म का विश्लेषण' है। जहाँ हिन्दू धर्म के प्रति आस्था का भाव प्रमुख रूप से उभर कर सामने आता है। 'सुम्निमा और पारुहाङ' की कथा में किरात समाज में पारुहाङ और सुम्निमा को शिव और पार्वती का प्रतीक मान कर उनकी पूजा अर्चना करते है, तो वहीं 'स्वर्ग जाने वाली सीढ़ी' कथा में एक दरामदीन नामक गाँव का वर्णन है, जो हर तरह से सम्पन्न गाँव था। इस गाँव की यह सम्पन्नता बघसिंग मंडल नाम के एक महान संत के कई वर्षों की तपस्या एवं भक्ति-भावना का परिणाम था। जिससे प्रसन्न होकर उनके इष्टदेव ने उनको यह वरदान दिया कि उसका गाँव हर तरह से सम्पन्न रहेगा। इसके साथ ही धार्मिक कथाओं में व्यक्ति को लोभ, मोह और अहंकार से दूर रहकर दया, करुणा, सत्य और परोपकार की नैतिक भावना और भारतीय सांकृतिक मूल्य की ओर प्रेरित करती है। इस प्रकार इन लोक कथाओं में भक्ति को केवल ईश्वर-उपासना की एक पद्धति मात्र नहीं मानकर जीवन और समाज को बेहतर बनाने वाली शक्ति के रूप में देखा गया है।

इस अध्याय के पंचम उप-अध्याय में 'चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त जादू-टोना का विश्लेषण' है। जहाँ अलौकिक और चमत्कारी तत्वों को प्रमुखता से दिखाया गया है। जिससे कथा

में रहस्य, रोमांच और रोचकता बनी रहती है। 'सुनेरी रेशमी मजेत्रो' की कथा में एक जादुई खानदानी शाल का वर्णन किया गया है जहाँ माँ अपनी बेटी को उपहार स्वरूप भेंट करते हुए उसके महत्व को समझाती है कि बिना मंत्र के उस शाल को ना छूने के लिए कहती है।

इस अध्याय का छठा उप-अध्याय 'चयनित नेपाली लोककथाओं में अभिव्यक्त प्रकृति एवं पशु-पक्षी का विश्लेषण' है। इस उप-अध्याय में प्रकृति एवं पशु-पक्षी का चित्रण मुख्य पात्र के रूप में भी हुआ है। जहाँ उनमें मानवीय गुणों को स्थापित किया गया है जिनके माध्यम से पाठको एवं नैतिकता की सीख मिलती है। प्रकृति और मनुष्य का संबंध आत्मा और शरीर की तरह है। प्रकृति से सम्बन्ध रखने वाली लोककथाओं में जीवंतता, प्रतीकात्मकता और नैतिकता का आग्रह हैं। ये लोककथाएँ प्रकृति के संवेदनात्मक, धार्मिक और सांस्कृतिक रूपों को सहेजकर पीढ़ी-दर-पीढ़ी आगे बढ़ाती है।

इस प्रबंध का पंचम अध्याय: 'चयनित नेपाली लोककथाओं के हिंदी अनुवाद की समस्याएँ' है। इस अध्याय को दो उप-अध्यायों में बाँटा गया है। जहाँ नेपाली भाषा से हिंदी भाषा में अनुवाद करने की प्रक्रिया में आने वाली समस्याओं का उद्घाटन किया गया है। इनमें शब्द रूपांतरण की समस्या प्रमुख है जहाँ नेपाली भाषा के शब्द रूप हिंदी से अलग होते हैं। जिससे उनका सीधा शब्दानुवाद करने पर वो शब्द अर्थहीन हो जाते हैं। उदहारण के लिए नेपाली भाषा में 'हो' से तात्पर्य 'हाँ' या 'है' होता है जबकि हिंदी में 'हो' का प्रयोग सहायक क्रिया के रूप में होता है। वहीँ 'ल' वर्ण का भी अर्थ 'ठीक' या 'ठीक है' के रूप में प्रयोग किया जाता है। वहीं हिंदी में 'ल' केवल एक वर्ण है। इस प्रकार के अंतर से अनुवादक को भ्रम होने की संभावना रहती है। अतः इनका सीधा शब्दानुवाद हिंदी में करना व्याकरणिक रूप से उचित नहीं है।

उच्चारण की समस्या: नेपाली भाषा में कुछ ऐसी ध्वनियाँ एवं वर्णो का प्रायोग होता है जिसका हिंदी में लिप्यान्तरण कर पाना कठिन हो जाता है। जैसे- हिन्दी भाषा में ङ, ञ स्वतंत्र रूप से प्रयुक्त किया

जाता है। परंतु नेपाली में किसी व्यक्ति तथा वस्तु आदि के नाम में 'ङ' वर्ण का प्रयोग स्वतंत्र रूप में दिखाई पड़ता है, जैसे पारुहाङ एक लड़के का नाम है। इस नाम में 'ङ' का प्रयोग स्वतंत्र रूप से हुआ है, परन्तु इस नाम को हिन्दी में लिखा जाए तो परुहंग होता है। जो उच्चरण के रूप से अनुवादक के लिए एक चुनौती भरा कार्य होता है। इसी तरह 'ञ' वर्ण का प्रयोग नेपाली भाषा में कुछ अलग प्रकार से होता है। हिंदी में 'ज्ञान' शब्द नेपाली में 'ञ्यान' हो जाता है। इस प्रकार के वर्णभेद, ध्वन्यात्मक असमानता और स्वर परिवर्तन से अनुवाद में समस्याएँ होती है।

अर्थगत असमानताओं की समस्या: हिंदी और नेपाली भाषा में कई शब्द ऐसे हैं, जो उच्चारण की दृष्टि से एक समान लगते हैं; परन्तु उन शब्दों के अर्थ अलग होते हैं। जैसे- नेपाली भाषा में 'नानी' शब्द का अर्थ बच्चों या फिर बेटी को कहा जाता है, वहीं हिंदी में 'नानी' से तात्पर्य माँ की जननी होता है। इस प्रकार अर्थगत असमानताओं से भ्रम की पैदा होती है। अनुवाद करते समय अनुवादक को इस समस्या का सामना करना पड़ता है।

सांस्कृतिक शब्दों की समस्या: नेपाली लोककथाओं को हिंदी में अनूदित करते समय नेपाली संस्कृति के कई शब्द मिलते हैं जिसका हिंदी में सटीक समानार्थी शब्द ढूँढ पाना एक चुनौती हो जाता है क्योंकि नेपाली के सांस्कृतिक शब्दों को जानने के लिए नेपाली संस्कृति के साथ-साथ उसके परिवेश को भी समझना पड़ता है। गुंड्रुक नेपाली समाज की एक पारंपरिक सब्जी है जो मुख्य रूप से सरसों, मुली या पत्तागोभी के पत्तों से बनाई जाती है। इस पारंपरिक नेपाली सब्जी का हिंदी में कोई समानार्थक शब्द नहीं मिलता है। 'चौबन्दी चोलो' (पारंपरिक पोशाक) जिसके लिए हिंदी में कोई समतुल्य शब्द नहीं है। 'कुन्यु' - एक चादर जैसा कपड़ा होता है, जिसे महिलायए कमर पर पहनती है। यह पूर्वोत्तर भारत के अधिकतर राज्यों की पारंपरिक पोशाक भी है जिसे असम में मेखला, अरुणाचल में गाले और मिजोरम में पुआन आदि कहा जाता है। इस पारंपरिक पोशाक की बनावट एक जैसी होती है,

परन्तु इसकी डिज़ाइन अलग होती है। 'कुन्यु' के लिए हिंदी में कोई सटीक एवं समतुल्य शब्द नहीं मिलता है। जिससे इस शब्द को व्याख्यायित करना पड़ता है। जिसके कारण अनुवाद लंबा और जटिल हो जाता है।

भावानुवाद की समस्याएँ: इस अध्याय के अंतर्गत नेपाली से हिंदी में अनुवाद करने के दौरान आए भावानुवाद की समस्याओं का उल्लेख किया गया है। शब्दों में भावों का अभाव: कई बार स्रोत भाषा के शब्द लक्ष्य भाषा में होते हुए भी उसमें वह भाव नहीं मिलता है, जो स्रोत भाषा में होता है। नेपाली भाषा में 'ओर्ल' शब्द का अर्थ होता है 'उतरना', परन्तु हिंदी का यह 'उतरना' शब्द वह भाव नहीं दे पा रहा है जो 'ओर्ल' शब्द नेपाली में दे रहा है। इस प्रकार यह एक चुनौती भरा कार्य हो जाता है।

शब्द का अभाव: नेपाली भाषा से हिंदी भाषा में अनुवाद करते समय कई ऐसे शब्द पाए जाते हैं, जिसका हिंदी में सटीक समतुल्य शब्द नहीं मिलता है, जिसके कारण अनुवादक को मिलते-जुलते शब्द का प्रयोग करना पड़ता है। जैसे- लाडे पल्टिदै – माता-पिता या किसी बड़े को देख कर छोटे बच्चे की तरह व्यहार करना है।

जव्याक- जुरुक – कोई बैठा हुआ व्यक्ति जल्दी से उठ खड़ा हो जाए।

टोकेसो- इस से मिलता जुलता शब्द अत्याचार हो सकता है।

दाम्लो- गाय के गले की रस्सी।

खोर- जहाँ बकरियों को रखा जाता है।

थन्कयाउदा- किसी भी वस्तु को समेट कर रखना।

गुटुमुतु- कम्बल या किसी कपड़े से खुद को ढक लेना। या फिर सिकुड़कर गोल हो जाना।

कचल्टिएको- इसका भावार्थ पूरी तरह विकसित न होना या आधा कच्चा होता है, जिसका हिंदी में कोई सटीक शब्द नहीं मिलता है।

फुस्रो- किसी व्यक्ति का रुखा-सुखा दिखना।

खस्रो- उबड़ खाबड़ जगह या रुखड़ा को कहते हैं।

मुहावरों एवं लोकोक्तियों के अनुवाद की समस्या: मुहावरों का अर्थ नहीं बल्कि भाव होता है। अगर अनुवादक इन शब्दों का सीधा अर्थ ले लेता है, तो उसका मूल अर्थ पूरी तरह बदल जाता है। इन चनियत नेपाली लोककथाओं में कई ऐसे मुहावरों का प्रयोग हुआ है। जिनका हिंदी में समतुल्य शब्द नहीं मिलते हैं जिसके कारण सार्थक व भावपूर्ण अनुवाद करने में समस्या आती है। उदाहरण के लिए- 'उर्लीरहेको'- इस शब्द का हिंदी में सटीक शब्द तो नहीं मिलता है परन्तु समतुल्य के रूप में उफनता को मान सकते हैं। नेपाली भाषा में इस शब्द का प्रयोग कई प्रकार से होता है। जैसे आमाको माया उर्लीरकोछ- माँ का प्यार उफनता है। इस प्रकार के अनुवाद में समान भाव नहीं आ पाता है जो अनुवादक के लिए एक बड़ी समस्या का कारण बनता है। 'सगरसम्म'- इस शब्द के लिए भी हिंदी में कोई सटीक शब्द नहीं मिलता है, परन्तु समतुल्य के रूप में हम 'आकाश का सिर' कह सकते हैं। इस प्रकार के अनुवाद में समान भाव नहीं आ पाता है जो अनुवादक के लिए एक बड़ी समस्या का कारण है।

'कालले कुत्कुत्याएको' इस मुहावरे का आशय है- मृत्यु के निकट जाना या अशुभ संकेत मिलने का भाव प्रकट होता है, हिंदी में इस प्रकार के भाव से संबंधित मुहावरे नहीं मिलते हैं जिससे अनुवाद करने में कठिनाई आती है। 'नरहे बाँस बबजे बाँसुरी' इस मुहावरे का समतुल्य हिंदी में 'ना रहेगा बाँस ना बजेगी बाँसुरी' को माना जा सकता है अर्थात इस प्रकार के मुहावर का अनुवाद करने में अनुवादक को सहूलियत होती है।

'घिरौला जत्रो नाक भयों' इस प्रकार की लोकोक्ति किसी व्यक्ति की बहुत बड़ी या मोटी नाक का मजाक उड़ाने या हँसी में टिप्पणी करने के लिए कही जाती है तथा किसी की तारीफ करने पर नाक फूल जाना भी मान सकते हैं। परन्तु हिंदी में इस प्रकार की कोई लोकोक्ति नहीं पाई जाती है जो अनुवाद के लिए समस्या का कारण बनती है। 'कसैलाई मरी मरी कसैलाई परिपरी' जिसका भावार्थ होता है कोई अधिक मेहनत करे और कोई आराम से बैठे रहे। इस प्रकार की लोकोक्तियों का हिंदी में अनुवाद करना चुनौती भरा कार्य होता है।

क्रिया और काल के रूप में भाव का अंतर- नेपाली भाषा से हिंदी भाषा में अनुवाद करते समय क्रिया तथा काल के रूप में भाव का सही चयन करना बहुत कठिन हो जाता है क्योंकि अगर हम क्रिया रूप का काल तथा भाव गलत चुनते हैं तो वाक्य में भावनात्मक अर्थ पूरी तरह नहीं आ पाता है।

नेपाली समाज नेपाल से लेकर भारत के विविध भागों तक फैला हुआ है। जहाँ इस समाज की अपनी अलग पहचान, समाज, संस्कृति, परंपरा, रीति-रिवाज, खान-पान, पहनावा-ओढ़ावा और साहित्य है। इसी सामाजिक एवं सांस्कृतिक विविधता के बीच नेपाली भाषा का उद्भव हुआ और समय के साथ यह भाषा निरंतर विकसित हो रही है। विभिन्न राजनैतिक परिवर्तनों, सांस्कृतिक संपर्कों, भौगोलिक परिस्थितियों तथा सामाजिक बदलावों का प्रभाव इसकी शब्द-संपदा, ध्वनि-प्रणाली पर पड़ा है। नेपाली भाषा केवल संचार का माध्यम नहीं, बल्कि नेपाली समाज की सांस्कृतिक पहचान का प्रमुख आधार है। अंततः कहा जा सकता है कि नेपाली समाज और नेपाली भाषा एक-दूसरे के पूरक हैं और दोनों मिलकर सांस्कृतिक चेतना तथा ऐतिहासिक निरंतरता को मजबूती प्रदान करते हैं।

लोक साहित्य में लोककथाओं का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। ये लोककथाएँ केवल मनोरंजन का साधन नहीं; बल्कि समाज के लोक विश्वास, लोक मान्यताएं, लोक अनुभव, भावनाएओं एवं कल्पनाओं का सजीव चित्रण है। यह सदियों से पीढ़ी दर पीढ़ी मौखिक रूप में विकसित होती

चली आ रही हैं। ये लोक कथाएँ किसी एक लेखक या कवि द्वारा नहीं लिखी होती हैं। इन लोककथाओं की उत्पति का स्रोत गाँव, बस्ती, पर्व-त्यौहार आदि में पाया जाता है जिसे हमारे दादी-नानी व पूर्वज कथा के रूप में प्रस्तुत करते हैं। लोककथाएँ किसी भी समाज की सामूहिक स्मृति होती हैं। इनमें समाज की परम्पराओं, रीति-रिवाज, देवी-देवताओं की भक्ति, आराधना, जातीय संबंध, संघर्ष आदि की प्रस्तुति होती है।

चयनित लोककथाओं में प्रकृति एवं पशु-पक्षियों का वर्णन करते हुए मनुष्य और प्रकृति के बीच एक गहरा संबंध दर्शाया गया है। इनमें नैतिक मूल्यों के वे तत्व निहित होते है जो मनुष्य को मनुष्य बनाते है। ये लोक कथाएँ हमारी संस्कृति को जीवित रखने वाली तथा पीढ़ी दर पीढ़ी इसको स्थानांतरित करने वाली होती है। ये लोक कथाएँ हमारे सांस्कृतिक मूल्यों, परम्पराओं और हमारी धार्मिक चेतना से हमारी पहचान कराती है। इन लोक कथाओं में बुराई पर अच्छाई की विजय, जूठ के समक्ष सत्य की सता को स्थापित किया गया है। ये लोककथाएँ जनमानस को यह संदेश देती हैं कि मनुष्य, प्रकृति, पशु-पक्षी और जीव-जन्तु सब हमारा समाज है। इसमें सभी के मंगल की कामना है। इससे ही पूरी दुनिया का संतुलन बना हुआ है। इन लोककथाओं में निहित संदेह साफ़ है कि जब मनुष्य प्रकृति या पशुओं के साथ अन्याय करता है तो वह स्वयं अपने विनाश का कारण बनता हैं।

अनुवाद एक जटिल प्रक्रिया है जो विशेज्ञता मांगती है। यह प्रक्रिया को केवल शब्दों का स्थानान्तरण नहीं है, बल्कि यह दो भाषाओं, संस्कृतियों, लोकभावनाओं और परंपराओं के आदान प्रदान का जरिया है। अनुवाद की प्रक्रिया में स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा में शब्दानुवाद और भावानुवाद की समस्याएँ आती हैं। जब स्रोत भाषा के किसी शब्द का भाषायी समानार्थक लक्ष्य भाषा में नहीं मिलता और उसका अर्थ केवल स्रोत भाषा के अनुभव एवं वाक्य से ही जाना जा सकता है।

शोध के महत्वपूर्ण निष्कर्ष:

1. चयनित लोक कथाएँ एक बेहतर समाज के निर्माण के लिए नैतिक मूल्यों की अनिवार्यता पर बल देती हैं। ये कथाएँ नैतिक मूल्यों से विहीन समाज का चित्रण करते हुए उन्हें पुनः स्थापित करने की कोशिश करती हैं।
2. चयनित लोक कथाओं में समाज में व्याप्त जातिगत भेदभाव को प्रत्यक्ष रूप से नहीं बताकर प्रतीकात्मक रूप से पेड़, फूल या प्रकृति के माध्यम से दिखाया गया है।
3. चयनित लोक कथाओं में समाज में आर्थिक कारणों से उपजे अमीर-गरीब के अंतर का वर्णन मिलता है। यह अंतर राजा, सेठ, साहूकार, किसानों आदि के अकाल के दौरान गाँव से पलायन करते समय के वर्णन में स्पष्टता से दिखाई देता है।
4. चयनित लोक कथाओं में नारी का चित्रण समाज और परिवार के बीच विभिन्न रूपों में हुआ है; लेकिन सबसे अधिक चित्रण समाज में स्त्री के उपेक्षित और पितृसत्तात्मक समाज की शिकार के रूप में हुआ है। हालाँकि सुनकेशरी जैसी नारी का वर्णन भी इन लोककथाओं में मिलता है जो अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करती है।
5. चयनित लोक कथाओं में राजनीति का स्वरूप का वर्णन मिलता है जो वर्तमान समय सा नहीं है; लेकिन आज के पूंजीपति पुराने सेठ-साहूकारों के आधुनिक अवतार हैं। इनमें राजा, सेठ और साहूकार राजनीति के कर्ता-धर्ता हैं। इन लोक कथाओं में राजा के माध्यम से राजव्यवस्था का संचालन, न्याय विधान, दंड विधान, राजा-प्रजा के आपसी सम्बन्ध, राजा का व्यवहार आदि मिश्रित रूप में उजागर होता है।

6. चयनित लोक कथाओं में नेपाली समाज की एक सुदृढ़ सांस्कृतिक परम्परा दिखाई देती है। इनके पहनावे में वैविध्य दिखाई पड़ता है। खानपान सम्बन्धित मान्यताओं का भी कई जगह पर वर्णन है।
7. चयनित लोक कथाओं में प्रेम के उदात स्वरूप का चित्रण सबसे अधिक हुआ है, जिसमें प्रेम में त्याग की भावना, मिलन की उत्सुकता, समर्पण का भाव प्रमुख रूप से वर्णित है।
8. चयनित लोक कथाओं में हिन्दू धर्म के उदात रूप का चित्रण हुआ है। जहाँ जीवों के प्रति दया का भाव, लोक मंगल की भावना, प्रकृति का पूजन, देवताओं का मदद के लिए आने का वर्णन मिलता है।
9. चयनित लोक कथाओं में जादू-टोने का वर्णन विविध रूपों में हुआ है। चूँकि लोककथाएँ मौखिक और कल्पना आधरित होती हैं। अतः जादू-टोने का प्रयोग ग्रहणीय है। इन लोक कथाओं में इनका प्रयोग सकारात्मक और नकारात्मक दोनों रूपों में मिलता है; लेकिन अंत नैतिक मूल्यों की स्थापना से होता है।
10. चयनित लोक कथाओं में मिथकों का प्रयोग हुआ है। ये मिथक पौराणिक, सांस्कृतिक, उत्पति, प्राकृतिक और लौकिक आदि रूपों में हैं।

संदर्भ सूची:

---

[1] डॉ. मणिकुमार शर्मा, गर्खाभाषानाम(एक समीक्षात्मक दृष्टि) भारतीय परिप्रेक्ष्यमा, पृ. 401

[2] बिर्ख खडका डुवर्सेली, नेपाली साहित्य विमर्श, पृ. 70

[3] पुष्प शर्मा ,गोलसिमल, पृ. 45

[4] वही, पृ. 80

परिशिष्ट- 1

संदर्भ ग्रंथ सूची

संदर्भ ग्रंथ सूची

आधार ग्रंथ:

- पुष्प शर्मा, गोलसिमल, उपमा प्रकाशन, कालेबुङ, पश्चिम बंगाल, 2021
- ललितजङ्ग सिजापति, कथा संग्रह ('दन्त्यकथा'), प्रकाशन बाबू माधवप्रसाद शर्मा, दुधविनायक, वाराणसी, 1999

सहायक ग्रंथ :

हिंदी ग्रंथ :

- एन. ई. विश्वनाथ अय्यर, अनुवाद भाषाएं-समस्याएं, दिल्ली, 2008
- कामताप्रसाद गुरु, हिन्दी व्याकरण, लोकभरती प्रकाशन, प्रयागराज, 2023
- कृष्णदेव उपाध्याय लोक-साहित्य की भूमिका, साहित्य भवन, इलाहाबाद, 2019
- कृष्णदेव शर्मा, लोक साहित्य समीक्षा, अशोक प्रकाशन, दिल्ली, 1980
- कृष्णदेव उपाध्याय, लोक संस्कृति की रूपरेखा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 2019
- कृष्णदेव उपाध्याय, भारत के लोक साहित्य, साहित्य भवन, इलाहाबाद, 1985
- जी. गोपीनाथ व एस. कंदस्वामी, 'अनुवाद की समस्याएँ', लोकभारती प्रकाशन, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद, 2011
- डेविड के. अजयु, मारा भाषा की लोककथाएँ: अनुवाद और विश्लेषण ('मरा फोह्या' के विशेष संदर्भ में) हिंदी विभाग, मिजोरम विश्वविद्यालय, आइजोल में प्रस्तुत पीएचडी हिंदी का शोध प्रबंध
- देवेन्द्रनाथ शर्मा, दीप्ति शर्मा, भाषाविज्ञान की भूमिका, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 2017

- बिर्ख खडका डुवर्सेली, नेपाली साहित्य विमर्श, साहित्यायन प्रकाशन,ग्रेटर नोएडा (उ। प्र।) 2017
- ब्रजकिशोर प्रसाद सिंह, पापुलर हिन्दी व्याकरण,रमेश पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 2015
- भोलानाथ तिवारी, भाषा विज्ञान प्रदेश एवं हिंदी भाषा, किताबघर प्रकाशन, नयी दिल्ली, 2016
- रमेश पोखरियाल 'निशंक', एक दिन नेपाल में, प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, 2018
- राधेश्याम सिंह, डॉ. पवन कुमार रावत, लोक साहित्य एवं संस्कृति, लोकभारती प्रकाशन, 2024
- रामचन्द्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास, प्रभात पेपरबैक, दिल्ली, 2020
- रामधारी सिंह दिनकर, संस्कृति के चार अध्याय, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, 2023
- रीतारानी पालीवाल, अनुवाद प्रक्रिया एवं परिदृश्य, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2018
- श्याम परमार, भारतीय लोक-साहित्य, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1954
- संतोष एलेक्स, अनुवाद प्रक्रिया एवं व्यावहारिकता, आथर्स प्रेस, नई दिल्ली, 2016
- सत्येद्र, लोक साहित्य विज्ञान, राजस्थानी ग्रन्थागार, जोधपुर, 2023
- हजारीप्रसाद द्विवेदी, हिंदी साहित्य की भूमिका, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1968
- हेतु भरद्वाज, डॉ. रमेश रावत, हिंदी भाषा उद्भव और विकास, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, 2021
- श्रीचद्र जैन, लोक-कथा विज्ञान, राजस्थानी ग्रंथागार प्रकाशन, जोधपुर, 2016

नेपाली ग्रंथः

- खेमराज नेपाल, नेपाली लोक साहित्यको रूपरेखा, साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली, 2003
- गोमा देवी शर्मा, भारतीय नेपाली साहित्यको विश्लेषणात्मक इतिहास, गोरखा ज्योति प्रकाशन, 2019
- घनश्याम नेपाली, नेपाली साहित्यको परिचयात्मक इतिहास, उपमा प्रकाशन, 2021
- चूड़ामणि बंधु, नेपाली भाषा को उत्पत्ति, गदंबा प्रकाशन, काठमांडू, 1968
- चूडामणि बन्धु, भाषाविज्ञान, साफा प्रकाशन, ललितपुर, 2077(वि. सं.)
- मणिकुमार शर्मा, गर्खाभाषानाम (एक समीक्षात्मकदृष्टि) भारतीय परिप्रेक्ष्यमा, प्रकाशन गोर्खाभाषा समिति, सिलीगढ़ी, 2020
- सूर्य विक्रमज्वाली, नेपाली भाषा विकास को संक्षिप्त इतिहास, नेपाली साहित्य परिषद, दार्जिलिंग, 1972

अंग्रेजी ग्रंथः

- Barendra Nath Datta, A Hand Book of Folklore Material, Bharat Offset, North East India, Guwahati,1994
- L. L. Ahmad, Comprehensive History of Far East, S. Chand Co. Ltd., Delhi, 1981
- Mona Baker, In other words; A course book on translation, Routledge, Abingdon, England, 2011

कोश:

- डॉ. हरदेव बाहरी, बृहत् शिक्षार्थी अंगेजी- हिंदी शब्दकोश, राजपाल एण्ड संस, दिल्ली, 2011
- धीरेंद्र बर्मा(संपा.), हिंदी साहित्य कोश (भाग- 1 और 2), ज्ञानमण्डल प्रकाशन, वाराणसी, 2000
- नगेंद्र (संपा.), भारतीय साहित्य कोश, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1981
- रामचंद्र बर्मा (संपा.), मानक हिंदी कोश, हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, 1978

पत्रिकाएँ :

- कंचनजंघा, प्रदीप त्रिपाठी(संपा), हिंदी विभाग, सिक्किम विश्वविद्यालय, गंगटोक, सिक्किम
- साहित्य अमृत, लक्ष्मी शंकर वाजपेयी (संपा.), प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली
- समन्वय पूर्वोत्तर, प्रो. बीना शर्मा (प्रधान संपा.), केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा
- निर्माण संस्कृति विशेषांक, अप्रैल 1999, संप.पवन चामलिंग 'किरण', निर्माण प्रकाशन, सिक्किम